मित्र संवाद

केदारनाथ अग्रवाल और
रामविलास शर्मा के पत्रों का संकलन

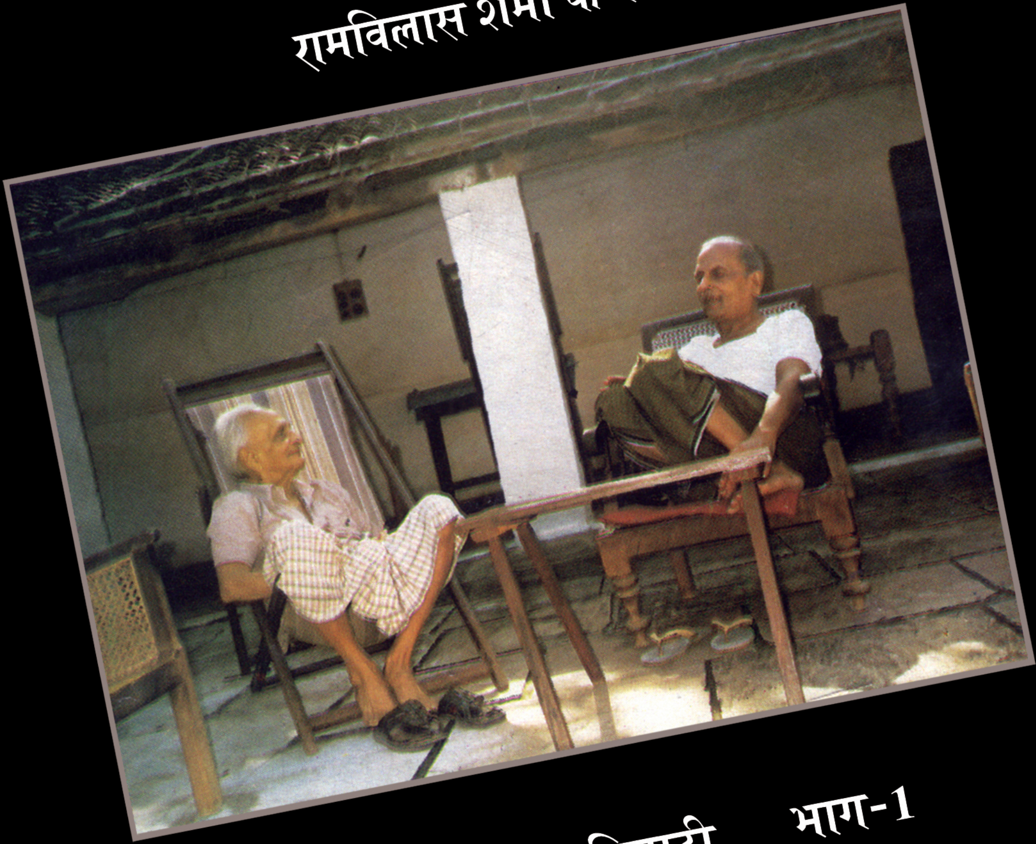

भाग-1

सम्पादक
रामविलास शर्मा ▪ अशोक त्रिपाठी

मित्र संवाद

भाग - एक

केदारनाथ अग्रवाल और
रामविलास शर्मा के पत्रों
का संकलन

मित्र संवाद

भाग - एक

केदारनाथ अग्रवाल और रामविलास शर्मा के पत्रों का संकलन

सम्पादक

रामविलास शर्मा

अशोक त्रिपाठी

साहित्य भंडार

इलाहाबाद 211 003

I S B N : 978-81-7779-220-1

❁

प्रकाशक
साहित्य भंडार
50, चाहचन्द, इलाहाबाद-3
दूरभाष : 2400787, 2402072

❁

स्वत्वाधिकारिणी
डॉ० विजय मोहन शर्मा
ज्योति अग्रवाल

❁

संस्करण
साहित्य भंडार का
प्रथम संस्करण : 2010

❁

आवरण एवं पृष्ठ संयोजन
आर० एस० अग्रवाल

❁

अक्षर-संयोजन
प्रयागराज कम्प्यूटर्स
56/13, मोतीलाल नेहरू रोड,
इलाहाबाद-2

❁

मुद्रक
सुलेख मुद्रणालय
148, विवेकानन्द मार्ग,
इलाहाबाद-3

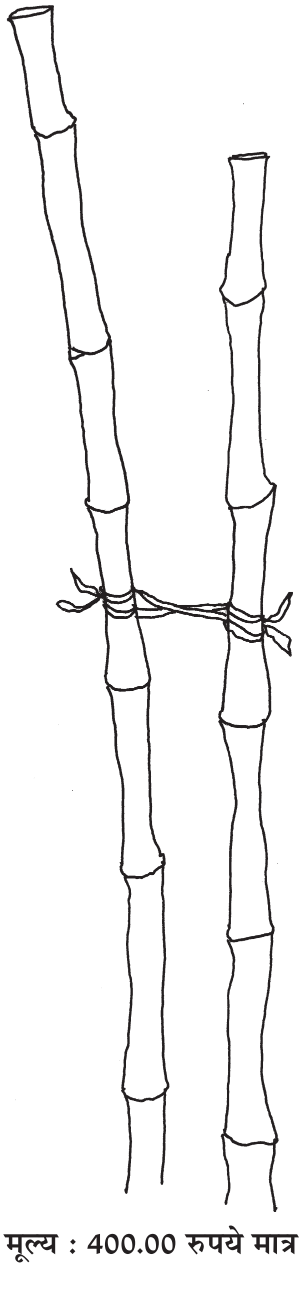

मूल्य : 400.00 रुपये मात्र

प्रकाशकीय

इस संकलन का प्रकाशन 'साहित्य भंडार' के प्रथम संस्करण के रूप में सम्पन्न हो रहा है। केदारजी के उपन्यास 'पतिया' को छोड़कर, उनके शेष समस्त लेखन को प्रकाशित करने का गौरव भी 'साहित्य भंडार' को प्राप्त है। केदारनाथ अग्रवाल रचनावली (सं० डॉ० अशोक त्रिपाठी) का प्रकाशन भी 'साहित्य भंडार' कर रहा है।

एक तरह से केदार-साहित्य का प्रकाशक होने का जो गौरव 'साहित्य-भंडार' को मिल रहा है उसका श्रेय केदार-साहित्य के संकलन-संपादक डॉ० अशोक त्रिपाठी को जाता है उसके लिए 'साहित्य-भंडार' उनका आभारी है। यह गौरव हमें कभी नहीं मिलता यदि केदार जी के सुपुत्र श्री अशोक कुमार अग्रवाल और पुत्रवधू श्रीमती ज्योति अग्रवाल ने सम्पूर्ण केदार-साहित्य के प्रकाशन का स्वत्वाधिकार हमें नहीं दिया होता। हम उनके कृतज्ञ हैं।

भाई आर. एस. अग्रवाल ने इस संकलन को कलात्मक सज्जा प्रदान किया इसके लिए उनका आभार।

सतीशचन्द्र अग्रवाल
विभोर अग्रवाल
2009

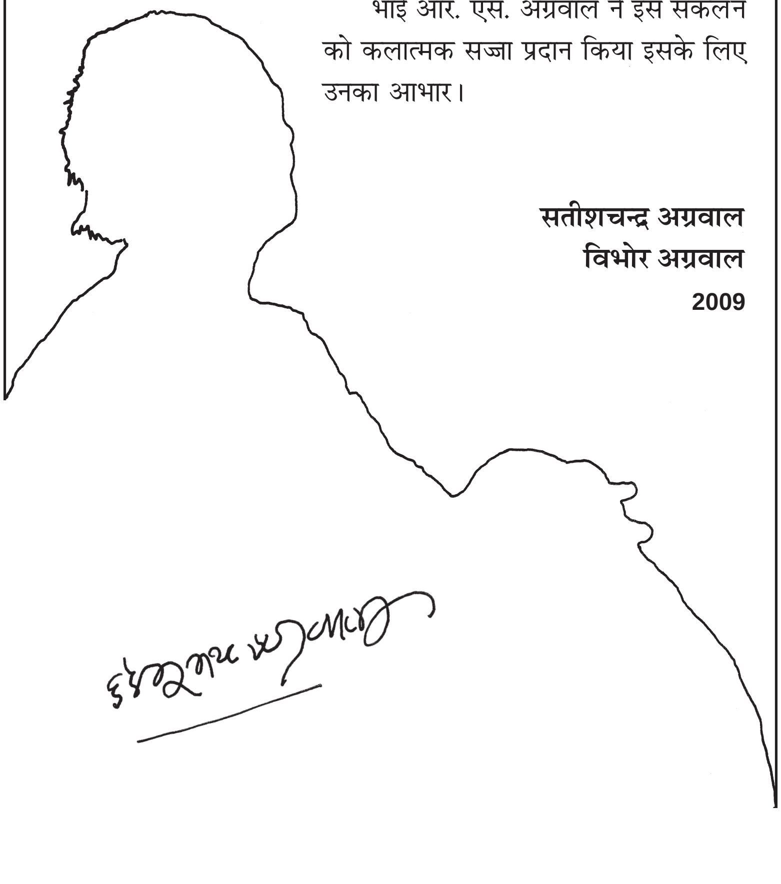

सम्पादन-दृष्टि

प्रस्तुत संकलन को संपादित करते समय पहली और अन्तिम कोशिश यही रही है कि पत्र अपने मजमून के साथ, अपनी प्रस्तुति शैली में भी मूल पत्रों की-सी अनुभूति दें। इसके लिए पुस्तक में एकरूपता के सिद्धान्त की बलि देनी पड़ी है।

अगर पत्र-लेखक ने अपना पता और दिनांक पत्र के दाहिने हिस्से में लिखा है तो पुस्तक में भी दाहिनी ओर, बायीं ओर लिखा है तो बायीं ओर और मध्य में लिखा है तो मध्य में ही दिया गया है। पत्र समाप्त होने पर पत्र-लेखक के हस्ताक्षर में भी यही नीति अपनायी गयी है। यह वैविध्य केदारजी के ही पत्रों में अधिक है, रामविलासजी के पत्रों में केवल अपवाद स्वरूप।

दिनांक और अन्य अंक अगर मूल पत्र में रोमन में हैं तो उन्हें रोमन में और अगर देवनागरी में हैं तो उन्हें देवनागरी में ही दिया गया है। कुछ पत्र लेटर-हेड पर हैं। उनमें अक्सर दिनांक के हिस्से में उन्नीस रोमन में छपा रहता है। रामविलासजी ने समान्यत: देवनागरी अंकों का ही प्रयोग किया है, इस कारण वर्ष उन्होंने देवनागरी में ही दिया है, वैसा ही छापा गया है, जैसे १९५५।

विशेष रूप से केदारजी के पत्रों में, एक ही पत्र में कहीं रोमन अंक का प्रयोग है कहीं देवनागरी का—पुस्तक में भी ऐसा ही दिया गया है।

पत्रों के बीच-बीच में अंग्रेजी के शब्द, वाक्यांश या वाक्य आए हुए हैं उन्हें भी उसी तरह रखा गया है।

कुछ पत्र लेटरहेड पर हैं, कुछ अन्तर्देशीय पत्र, कुछ पोस्टकार्ड पर। जो पत्र लेटरहेड पर हैं, कोशिश की गयी है कि लेटरहेड की मुद्रित इबारत ज्यों की त्यों, उसी शैली में प्रस्तुत हो। हालांकि टाइप की अनुरूपता नहीं हो सकी है—ऐसा तभी हो सकता था जबकि लेटरहेड का ब्लॉक बनवाकर छापा जाता। लेटरहेड में पत्र लेखक के नाम जिस तरह छपे हैं, उसी तरह पुस्तक में भी है। उदाहरण के लिए केदारजी के लेटरहेड में, कुछ में 'केदार' अलग और 'नाथ' अलग छपा है और कुछ में मिलाकर—पुस्तक में भी इसी तरह दिया गया है। कुछ लेटरहेड में बाँदा में अनुस्वार [ं] का प्रयोग है और कुछ में अनुनासिक [ँ] का—इसे भी ज्यों का त्यों दिया गया है।

पत्रों को तिथि-क्रम में संयोजित किया गया है—संवाद शैली में—जिसमें कहीं-कहीं एकालाप भी मिलेगा।

पत्र लिखते समय अक्सर कहीं-कहीं बीच में कुछ शब्द छूट जाते हैं, कहीं शब्द के बीच में वर्ण, कहीं वर्तनी में असावधानीवश त्रुटि रह जाती है, कहीं परसर्गों का प्रयोग छूट जाता है, कहीं अनावश्यक प्रयोग हो जाता है, कहीं क्रिया में लिंग सम्बन्धी भूलें हो जाती हैं, कहीं अनुनासिक की जगह अनुस्वार और अपवाद स्वरूप अनुस्वार की जगह अनुनासिक का प्रयोग हो जाता है तथा अक्सर 'ब' की जगह 'व' का प्रयोग होता है—आदि-आदि। 'मित्र संवाद' भी इसका अपवाद नहीं है। इससे यह निष्कर्ष निकालना निरी मूर्खता होगी कि इन्हें भाषा का ज्ञान नहीं है—फिर भी कोई ऐसा निष्कर्ष निकालता है तो मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी—अगर वह मूर्ख बनने को प्रस्तुत है। ख़ैर! पत्रों में जहाँ भी ऐसा है वहीं ठीक उसकी बगल में बड़े कोष्ठक—[ ]—में उसके संशोधित रूप दे दिये गए हैं। इससे मूल रूप और संशोधितरूप एक साथ देखे जा सकते हैं। इस तरह की कारगुज़ारियाँ मैंने ही की हैं, रामविलासजी ने नाममात्र को की हैं, इसलिए संशोधन के जोम में अगर कहीं शुद्ध को अशुद्ध कर दिया गया हो तो उस अपराध का सेहरा मेरे ही सिर बाँधा जाय।

पत्रों के बीच-बीच में कुछ शब्द या वाक्यांश या वाक्य छोटे कोष्ठक—( )—में हैं। ये सब मूल पत्रों में ही हैं, संशोधन की सामग्री सिर्फ बड़े कोष्ठक में ही है।

कहीं-कहीं तिथि-सम्बन्धी भूलें भी हुई हैं। उन्हें पत्र के सन्दर्भ के आधार पर या आगे-पीछे के पत्रों के आधार पर या फिर डाक की मुहर के आधार पर या उस पत्र का उत्तर देने की तिथि के आधार पर संशोधित करके संशोधित तिथि [ ] के अन्दर दी गयी है।

पत्रों में कहीं-कहीं कुछ संदर्भों को स्पष्ट करने के लिए पाद-टिप्पणियाँ दी गयी हैं। ये टिप्पणियाँ रामविलासजी ने और मैंने लिखी हैं। रामविलासजी का आदेश था कि मैं जहाँ टिप्पणियाँ दूँ उसके अगे अपना नाम दे दूँ, ताकि मेरा 'योगदान' पहचाना जा सके। इसलिए जिन टिप्पणियों के आगे कोई नाम नहीं हैं, वे टिप्पणियाँ रामविलासजी की हैं और जिन टिप्पणियों के आगे [अ० त्रि०] लिखा है, वे मेरी हैं। सम्भव है कुछ आवश्यक टिप्पणियाँ रह गयी हों और अनावश्यक टिप्पणियाँ दे दी गयी हों। काम के दबाव में इसकी पूरी गुंजाइश है क्योंकि पत्रों का टंकण, सामग्री का संशोधन, छपाई आदि सारे काम समानांतर रूप से एक साथ चल रहे थे।

पत्रों में 'ब' के स्थान पर 'व' मिलता है। यह प्रवृत्ति केदारजी के पत्रों में बहुत हैं लेकिन रामविलासजी के पत्रों में अपवाद रूप में है। इनका संशोधित रूप ही दिया गया है क्योंकि अगर मूल और संशोधित दोनों रूप देता तो पत्र पढ़ने के प्रवाह में ये संशोधन 'गति अवरोधक' का काम करते। सिर्फ 'बीवी' का ही मूल और संशोधित रूप दिया गया है—'ब' 'व' की भूलों से सम्बन्धित भूलों के संशोधन में।

इसी तरह अनुनासिक की जगह अनुस्वार का प्रयोग भी प्रचलन में है। पत्र-लेखन में, इनके प्रयोग के सम्बन्ध में भी बहुत सचेतता नहीं बरती जाती। यहाँ भी ऐसा ही है। रामविलासजी ने अनुनासिक [ँ] की जगह अनुनासिक का भी प्रयोग किया है और

अनुस्वार [ं] का भी। लेकिन अधिकतर अनुस्वार का ही प्रयोग किया है। केदारजी ने अनुनासिक की जगह अनुनासिक का प्रयोग अपवाद रूप में ही किया है। एकाध जगह अनुस्वार की जगह अनुनासिक का प्रयोग किया है और जहाँ आवश्यक नहीं है, वहाँ अनुनासिक का प्रयोग किया है। ऐसे अपवाद प्रयोगों का तो संशोधित रूप दिया गया है, पर शेष को जस का तस छापा गया है।

विदेशी शब्दों में नुक्ते [.] वाले शब्दों को केवल मूल रूप में ही छापा गया है—संशोधन नहीं किया गया है। एक ही शब्द में अगर एक जगह नुक्ता है और दूसरी जगह नुक्ता नहीं है तो जहाँ जैसा है उसे वैसा ही जाने दिया गया है।

रामविलासजी योजक चिह्न [-] का प्रयोग लगभग न के बराबर करते हैं जैसे 'बार बार', क्षण भंगुर' आदि। केदारजी कहीं करते हैं—कहीं नहीं। पुस्तक में भी इन्हें ज्यों-का-त्यों दिया गया है—बिना संशोधन के।

'ए' और 'ये' तथा 'ई' और 'यी' के प्रयोगों में दोनों मित्रों ने सावधानी नहीं बरती है। इसे भी संशोधन-रहित छापा गया है।

विरामचिह्नों का प्रयोग केदारजी जितनी ही उदारता से करते हैं, रामविलासजी उतनी ही कंजूसी से—जरूरत से रंचमात्र भी अधिक नहीं। इसे भी एकाध अपवादों को छोड़कर जस-का-तस छापा गया है।

इस तरह 'व'—'ब', अनुस्वार—अनुनासिक, नुक्ता, 'ए'—'ये', 'ई'—'यी', और विराम-चिह्नों में अपवाद रूप में ही संशोधन किया गया है। इनका मूल और संशोधित रूप दोनों एक साथ न देने का एक कारण तो यह है कि उससे प्रवाह में बाधा पड़ती है और दूसरा कारण यह है कि इससे पूरी किताब संशोधन के घावों से लैस दिखाई पड़ती।

पत्रों में 'वसन्त' और 'बसन्त' दोनों रूप हैं। दोनों ही प्रचलन में हैं, इसलिए इन्हें संशोधित नहीं किया है।

रामविलासजी सहायक क्रिया 'गा', 'गे', 'गी' का प्रयोग मुख्य क्रिया से अलग करते हैं, जैसे—जाये गी, हो गा, आयें गे आदि। इस बात को प्रारम्भ में लक्ष्य नहीं कर सका, लेकिन बाद में जब इस पर ध्यान गया तो इस बात की सावधानी बरती गयी और प्रयास यही किया गया कि वह अलग ही रहे। केदारजी ने इनका प्रयोग मिलाकर ही किया है। इसे मिला हुआ ही छापा गया है।

रामविलासजी ने 'आगरा' को 'आगरे' लिखा हैं—इसी रूप में छपा भी है।

सामान्य रूप से 'फरवरी' लिखा जाता है रामविलासजी ने 'फर्वरी' लिखा है—'फर्वरी' ही छापा गया है। रामविलासजी ने 'सुसरे' का प्रयोग किया है और केदारजी ने 'ससुरे' का। इसे भी ज्यों-का-त्यों दिया गया है।

केदारजी ने 'मालूम' को हर जगह 'मालुम' लिखा है और 'तैयार' को 'तयार'। इन्हें मूल रूप में ही दिया गया है।

रामविलासजी २७.२.१९८१ तक के पत्रों में पूर्ण विराम [।] का प्रयोग करते हैं, पर आगे चलकर २७.११.१९८१ के पत्र से लेकर उसके बाद के पत्रों में फुलस्टॉप [.] का प्रयोग करने लगते हैं, हालाँकि ५ जून, १९९१ को लिखी भूमिका में पूर्ण विराम चिह्न का ही प्रयोग करते हैं। पुस्तक में सर्वत्र पूर्ण विराम चिह्न [।] का ही प्रयोग किया गया है।

रामविलासजी के छोटे भाई श्री रामशरण शर्मा 'मुंशी' के पास लिखे हुए कुछ पत्र भी 'मित्र संवाद' में संकलित हैं। लेकिन मुंशीजी के लिखे पत्र इसमें नहीं हैं।[1] इनके उल्लेख यथास्थान कर दिये गए हैं।

कुल मिलाकर, कहने का तात्पर्य यही है कि भरसक कोशिश यही रही है कि इन पत्रों को पढ़ते समय यही लगे कि मूल पत्रों का ही रसास्वादन हो रहा है। पाठक और पत्र-लेखक के बीच संपादक का हस्तक्षेप कम-से-कम हो। वह दाल-भात में मूसरचंद न बने। इस प्रयत्न की पूरी सफलता का दावा तो नहीं करता पर इस ओर निरन्तर सचेत रहा हूँ, इसका दावा ज़रूर करता हूँ। यद्यपि, अतिरिक्त सचेतता, कभी-कभी भयंकर भूलें करवा देती हैं।

रामविलासजी ने अपने १२.९.१९९१ के पत्र में मुझे लिखा कि 'पुस्तक के भीतर या बाहर मेरे नाम के साथ 'डॉ०' मत लगाना।' उनके उस आदेश का पालन करते हुए ही मैंने उनके नाम के साथ 'डॉ०' न लगाने की धृष्टता की है—न चाहते हुए भी।

१७ जुलाई, १९९१ के पत्र में उन्होंने लिखा कि 'पत्र-संग्रह के साथ तुम जो परिश्रम कर रहे हो, पत्र पढ़ते समय तुम्हारी जो प्रतिक्रिया हुई, उस पर अपना वक्तव्य पुस्तक में दे दो।' उनके इस आदेश का अनुपालन भी मैं कर रहा हूँ, लेकिन यहाँ नहीं—पुस्तक के अन्त में ताकि पूरी पुस्तक पढ़ने के बाद आप अपनी 'प्रतिक्रिया' और मेरी 'प्रतिक्रिया' का मिलान कर सकें तथा मेरी प्रतिक्रिया से अपनी प्रतिक्रिया और अपनी प्रतिक्रिया से मेरी प्रतिक्रिया की परख कर सकें।[2]

भूमिका में रामविलासजी ने अपनी और विशेष रूप से केदारजी की हस्तलिपि की विशेषताओं की ओर संकेत किया है। आप उसे चाक्षुष रूप में ग्रहण कर सकें इसलिए मित्रद्वय की हस्तलिपियों के अद्यतन नमूने भी पुस्तक में दिये जा रहे हैं।

विजयदशमी, १९९१ **—अशोक त्रिपाठी**
२२, लाउदर रोड, इलाहाबाद-२११००२

---

1. साहित्य भंडार से प्रकाशित इस संस्करण में 04 पत्र मुंशी जी के भी दिये जा रहे हैं। (अ० त्रि०)
2. साहित्य—भंडार, के इस संस्करण में अपनी प्रतिक्रिया 'मित्र संवाद से गुजरते हुए' शीर्षक से रामविलासजी की भूमिका के बाद पुस्तक के प्रारंभ में ही दे रहा हूँ। इस संस्करण में १९९१ के बाद के पत्रों को भी शामिल कर लिया गया है। (अ० त्रि०)

भूमिका

मित्र संवाद अर्थात् दो मित्रों की बातचीत। दो मित्र हैं केदारनाथ अग्रवाल और इन पंक्तियों का लेखक रामविलास शर्मा। यह बातचीत पत्रों के माध्यम से होती है। लिखने और बोलने में थोड़ा फर्क जरूर होता है पर अपना अंदाजा यह है कि हम दोनों के लिखने और बोलने में यह फर्क कम-से-कम होता है। वैसे भी लोग मित्रों और सगे-सम्बन्धियों को चिट्ठियां बातचीत की शैली में ही लिखते हैं, कोई बाहर का आदमी उनकी बातें सुन रहा है या उनकी चिट्ठियां प्रकाशित हों गी, यह भय उन्हें नहीं होता, इसलिए ज्यादा सावधानी बरतने की जरूरत उन्हें नहीं होती। खुलकर बात करने की आदत ही न हो तो जो बेखुलापन लिखने में हो गा, वही बोलने में हो गा। हर हालत में चिट्ठियों की सामग्री को हम संवाद की संज्ञा दे सकते हैं। औपचारिक और व्यावसायिक पत्रों की बात अलग है।

ऐसा कम होता है कि पते पर जिसका नाम लिखा है और जो पता लिख रहा है, दोनों की चिट्ठियां एक साथ पढ़ने को मिलें। **निराला की साहित्य साधना** के तीसरे खंड में निराला के लिखे पत्र हैं और उन्हें लिखे गए पत्र हैं पर ये एक-दूसरे से जुड़े हुए नहीं हैं। जैसे निराला को लिखे नंददुलारे वाजपेयी के पत्र तो हैं पर वाजपेयी जी को लिखे निराला के पत्र नहीं हैं। कहीं किसी को लिखे निराला के दो-चार पत्र उसके पत्रों से जुड़े हों तो वे अपवाद हैं। इसके विपरीत **पाया पत्र तुम्हारा** में नेमिचंद्र जैन और मुक्तिबोध के पत्र परस्पर संबद्ध हैं और इन्हें संवाद की संज्ञा दी जा सकती है। संवाद लगातार चलता रहे, ऐसा कम होता है। पहली अगस्त, १९५७ से लेकर १८ जून, १९५८ तक मुक्तिबोध के पांच पत्र हैं, नेमिचंद्र जैन का एक भी पत्र नहीं है। कहीं-कहीं समय का लम्बा अंतराल आ जाता है जैसे कि १८ जून, १९५८ के बाद ९ जून, १९६२ तक कोई पत्र नहीं है, न नेमिचंद्र का, न मुक्तिबोध का। दोनों तरफ से पत्र-व्यवहार लगातार जारी रहे, ऐसा कम होता है। जारी रहे तो वह पत्र-व्यवहार सुरक्षित रहे, ऐसा और भी कम होता है। फिर भी **पाया पत्र तुम्हारा** में जितना संवाद बच गया है, वह परम उपयोगी है।

मित्र संवाद में केदार से मेरी बातचीत जुलाई १९३५ में शुरू होती है और नवम्बर, १९४३ तक अकेले मैं ही बोलता रहता हूं। इसका कारण यह है कि इस बीच केदार के लिखे सारे पत्र नष्ट हो गए हैं। जुलाई १९४३ में जब मैं अध्यापन के लिए आगरे गया तब घर का सारा सामान लखनऊ छोड़ आया था। जब दुबारा लखनऊ पहुंचा तब कमरा

बहुत साफ-सुथरा दिखा, सारा 'कूड़ा' बाहर निकाल कर फेंक दिया गया था। दुख तो हुआ पर बहुत ज्यादा नहीं। निराला को म० प्र० द्विवेदी आदि के लिखे पत्र और तब तक के लिखे निराला के पत्र मैं अपने साथ लेता गया था। यह सोचकर कुछ तसल्ली हुई कि ये भी फेंक दिए जाते तो मैं क्या करता।

आगरे में '४३ से '६१ तक बराबर मकान बदलते रहना पड़ा, इस नये-नये घरों में गिरिस्ती जमाने के क्रम में कुछ चिट्ठियां गुम हो गईं पर उनके खोने का मुख्य कारण मेरी असावधानी थी। और ऐसा भी होता है कि जो चीज मैं बहुत सावधानी से रखता हूं, वह बड़ी कठिनाई से मिलती है और कभी तो मिलती ही नहीं है। केदार के पचहत्तरवें जन्मदिवस समारोह पर वहां मित्रों को सुनाने के लिए उनके कुछ पत्र साथ ले गया था। लौटकर उन्हें मैंने बहुत संभाल कर रख लिया था। नतीजा यह कि भूमिका लिखने तक तो वे मिले नहीं। मिलेंगे जरूर लेकिन शायद इस संग्रह के छप जाने के बाद!

केदारनाथ अग्रवाल ने जब से बांदा में वकालत शुरू की, वह एक ही मकान में रहते आए हैं। उनके चाचाजी नामी वकील थे, जब तक वह बांदा में थे, तब तक शायद केदार बगल के मकान में रहते थे। उनके जीवन का अधिकांश समय एक ही मकान में बीता है। पर इससे बड़ी बात यह है कि उनका जीवन बहुत ही नियमबद्ध और व्यवस्थित रहा है। सबेरे उठकर किताबों की धूल झाड़ना उनका अटल नियम है। बैठक में बड़ी-बड़ी कानून की जिल्द बंधी किताबें हैं। उन्हें शायद ही कभी पढ़ते हों। पर उनकी धूल जरूर झाड़ते हैं। उनकी साहित्य की पुस्तकें उनके (बांदा के) मित्रों की आंखों से ओझल ही रहती हैं। बैठक की बगल में एक कोठरी है, इसमें ताला लगा रहता है। चिट्ठी-पत्री सब इसी में रहती हैं और इसमें अशोक त्रिपाठी को छोड़कर औरों का प्रवेश वर्जित है। यहां से मेरे कुछ पत्र अशोक इलाहाबाद उठा ले गये थे, केदार से पूछकर ले गए थे बिना पूछे ले गए थे,[1] यह बात महत्वपूर्ण नहीं है। महत्वपूर्ण बात यह है कि इस संग्रह के प्रकाशन की बात चली, तब उन्होंने पत्रों की फोटो कापी मुझे भेज दी। सन् '३५ से '४४ तक और उसके बाद भी मेरे जो पत्र आप इस संग्रह में देखते हैं, वे बरसों तक उस कोठरी में सुरक्षित बने रहे थे।

सन् '६१ में निराला की मृत्यु के बाद जब मैं उनकी जीवनी लिखने के बारे में सोच रहा था, तब इस बात पर ध्यान गया कि निराला की हालत के बारे में जब तब अपने मित्रों को लिखता रहता था। वे पत्र मिल जायें तो जीवनी के लिए उनका उपयोग किया जा सके गा। केदार ने सूचना पाते ही मेरे सारे पत्र मुझे भेज दिए। इस कारण हमारी मैत्री के प्रारम्भिक दशक के मेरे पत्र आप यहां देखते हैं। यद्यपि इस दशक में केदार ने जो पत्र मुझे लिखे, वे यहां नहीं हैं, पर मेरे पत्रों से आप केदार के बारे में बहुत कुछ

1. पत्र के साथ अन्य सामग्रियाँ मैं पूछकर ही ले गया था। (अ० त्रि०)

जान सकें गे, इसलिए उन्हें दे रहा हूं। इस दशक के बाद के पत्रों में कई जगह संवाद क्रम टूट जाता है। कहीं आप समय का अंतराल देखें गे, कहीं एक साथ केदार के या मेरे ही कई पत्र एक साथ देखें गे। कभी लगे गा दोनों में एक ने कुछ समय तक पत्र लिखा ही नहीं। हो सकता है, उस समय के पत्र मुझसे खो गए हों। अपवाद रूप में ही कहीं आप देखें गे कि केदार बोले चले जा रहे हैं और मैं चुप हूं। हम दोनों में मेरे पत्र ही अधिक सुरक्षित रह पाये हैं। कुछ पत्र डाक की अव्यवस्था से भी खोये हैं। फिर भी इस संकलन में काफी पत्र ऐसे हैं जहां बातचीत का सिलसिला टूटता नहीं है और आप देर तक हमारा संवाद सुन सकते हैं। जहां तक मैं जानता हूं, इस तरह मित्रों का संवाद सुनने का अवसर आपको अन्य किसी पत्र संग्रह में न मिले गा।

संवाद एक ही तरह के दो व्यक्तियों के बीच हों तो सुनने वाले को मजा न आएगा। दोनों व्यक्ति एकदम भिन्न स्वभाव के हों तो संवाद होना ही मुश्किल हो गा, हुआ तो खटपट के अलावा सहानुभूतिपूर्ण विचार विनिमय की गुंजाइश कम हो गी। राग विस्तार के लिए वादी के साथ संवादी स्वर जरूरी हैं; कहीं-कहीं विवादी स्वर झलक दिखा जाए तो उससे राग विस्तार की प्रक्रिया भंग न हो गी। इस पत्र संग्रह में जहां-तहां विवादी स्वर आप सुनें गे पर आयु के साथ ये स्वर धीमे पड़ते गए हैं और कुल मिलाकर राग विस्तार को स्वर सामंजस्य ही बांधे रहता है। हम दोनों मित्र हैं, अपने-अपने व्यक्तित्व की विशेषताओं के साथ। इनमें कुछ का पता मुझे अभी लगा इन पत्रों का संपादन-संकलन करते समय। ऐसा बहुत कम होता है कि केदार ने पत्र पर तारीख, महीना और सन् न लिखा हो। कभी-कभी वह लिखने का समय भी सूचित कर देते हैं। इसके विपरीत मेरे बहुत-से पत्र ऐसे हैं जिनमें तारीख और महीना है, सन् गायब है, कुछ में तारीख, महीना, सन् तीनों गायब हैं। इसलिए सन्, महीना आदि का पता लगाने में मुझे काफी समय खर्च करना पड़ा। आमतौर से आपको ऐसा लगे गा कि केदार फुर्सत में चिट्ठियां लिख रहे हैं, दरअसल ज्यादा फुर्सत मुझे रही है, केदार को फुर्सत का समय निकालना होता था। वह वकील थे, दिन-भर कचहरी करते थे, रात में उन्हें पढ़ने-लिखने का अवकाश मिलता था। मेरे पास अवकाश ही अवकाश था। सन् '३८ से '४३ तक लखनऊ विश्वविद्यालय में दस बजे गए, डेढ़ बजे लौट आए। सबेरे का समय अपना, तीसरे पहर का समय अपना। कुछ दिन तक आगरे में यही क्रम रहा, फिर सबेरे गए, ग्यारह बजे लौट आए, यह क्रम बरसों चला। पर जल्दबाजी के चिह्न मेरे पत्रों में ही ज्यादा मिलें गे। मेरे कुछ पत्र, आमतौर से पोस्टकार्ड, बहुत जल्दी में लिखे गए हैं। साहित्यिक आन्दोलन सम्बन्धी लेखन, पत्र-व्यवहार और भाग-दौड़, यह आपाधापी सन् '४६ के पहले कम थी, सन् '५३ के बाद और कम हो गई। फिर भी पत्र न लिखने की ज्यादा शिकायत केदार की ओर से है। पहले तो आलस्य के कारण पत्र लिखने का समय जल्दी न आता था, बाद को लिखाई-पढ़ाई में व्यस्तता के कारण देर हो जाती थी। पर कभी-कभी केदार भी महीनों तक मौन साध लेते थे। उनकी एक ही पेटेन्ट दलील

थी–तुम पुस्तक लिखने में व्यस्त हो गे, इसलिए डिस्टर्ब करना उचित न समझा। एक ही काम केदार ने जल्दी में किया था, वह था मुझसे दोस्ती करना। मैं उनसे कहता था, जल्दी क्या है, मुझे परख लो, मेरी कमजोरियां पहचान लो, जिससे बाद में दोस्ती न टूटे। पर केदार को अपने सहज बोध का भरोसा था। जैसे उनकी कविता सहज थी, वैसे ही उनकी मैत्री थी।

सन् '३५ में जब उनसे परिचय हुआ, तब वह कानपुर में वकालत पढ़ रहे थे, मैं क्लासवाली पड़ाई पूरी करके रिसर्च में लगा हुआ था। शायद इस कारण मुझमें बड़प्पन का भाव आ गया था। बहुत दिन बाद मैंने इस बात पर ध्यान दिया कि वह उम्र में मुझसे बड़े हैं, बातचीत और पत्र-व्यवहार में मुझे उनके बड़प्पन का ध्यान रखना चाहिए। पर ऐसा कभी हुआ नहीं, अधिक-से-अधिक यह हुआ कि बड़प्पन छुटपन की बात छोड़कर हम लोग बराबरी के स्तर पर आ गए। फिर भी मेरे पत्रों में 'प्रिय केदार' तो बराबर मिले गा, केदार के पत्रों में 'प्रिय रामविलास' एक बार भी नहीं। अधिक-से-अधिक 'प्रिय शर्मा'–वह भी शुरुआती दौर के पत्रों में।[1] वैसे मौका मिले तो मुझे बनाने से कभी चूकते नहीं हैं।

केदार को हास्य-विनोद से सहज प्रेम है। प्रेम ही नहीं, हंसना, प्रसन्न रहना, उनकी सहज वृत्ति है। वह हास्य-विनोद की सामग्री वहां ढूंढ़ लेते हैं जहां कवियों की निगाह कम जाती है। यहां उनके पत्रों का गद्य उनकी कविता से भिन्न है। कविता में एक छोर पर तीखा मारक व्यंग्य है (इसकी अनोखी मिसालें **कहें केदार खरी-खरी** में हैं), दूसरे छोर पर **फूल नहीं रंग बोलते हैं** की दुनिया है। हंसने-हंसाने के लिए कविता में उन्हें कम समय मिलता है। पर यह उनके व्यक्तित्व का बहुत महत्त्वपूर्ण पक्ष है। इस दृष्टि से पत्रों का गद्य उनकी कविता का पूरक है। वह कवि केदारनाथ अग्रवाल का गद्य है, यह तथ्य भुलाकर भी आप उसका आस्वादन कर सकते हैं। और हास्य-विनोद तो उसका एक पक्ष है, बहुत जगह तो वह कविता बन जाता है, छायावादी शब्दावली में रचा हुआ गद्यकाव्य नहीं, यथार्थवादी कविता, ऐसा गद्य जो अपनी गद्य की जमीन नहीं छोड़ता, फिर भी कविता बन जाता है और कहीं-कहीं तो कविता से आगे बढ़ जाता है। केदार जो कुछ भी कविता में कहना चाहते हैं, उसे गद्य में भी कहते हैं और इतने सहज भाव से कहते हैं कि उस अभिव्यक्ति की पूर्णता को कविता नहीं छू पाती। हमेशा ऐसा नहीं होता पर कभी-कभी ऐसा भी होता है।

केदार के गद्य में बहुत-सी भाव दशाएं हैं–'भाव भेद रस भेद अपारा' की उक्ति को चरितार्थ करती हुई। पता लगाना दिलचस्प हो गा कि उनकी कविता में इतनी भाव दशाएं हैं या नहीं। कहीं वह रीझते हैं, कहीं खीझते हैं, कहीं उत्तेजित, कहीं

---

1. कहीं-कहीं 'प्रिय डाक्टर' भी मिलता है। (अ० त्रि०)

स्थितिप्रज्ञ, कहीं दुखी, कहीं प्रसन्न, कहीं किसी व्यक्ति अथवा वृत्ति से तादात्म्य, आपा खोये हुए, बेसंभाल, कहीं एकदम तटस्थ, विवेकशील, तर्क का सूत कातते हुए मन ही मन हंसते हुए। उनकी अनेक मुद्राएं हैं, अनेक भंगिमाएं हैं, मेरे लिए उनकी सबसे प्रिय मुद्रा वह है जब वह मन ही मन हंसते हैं। सजल नयन गदगद गिरा गहवर मन पुलक शरीर—कभी-कभी यह स्थिति भी होती है। विश्वास न हो तो उनका ५ मार्च सन् '६९ का पत्र पढ़कर देख लीजिए। सारंगी उनका प्रिय वाद्य है (बजाते नहीं, सुनते हैं)। अन्य किसी भी वाद्य यंत्र से ज्यादा सारंगी मनुष्य के स्वरों का अनुकरण करती है। केदार का गद्य सारंगी की तरह उनकी सूक्ष्म भावदशाएं ज्यों की त्यों शब्दों में बांध लेता है। यहां बात केवल उनके पत्रों के गद्य की है, उनमें भी केवल मुझे लिखे हुए उनके सबसे अच्छे पत्रों की। (यहां 'केवल' में गर्वोक्ति का आभास हो सकता है; दूसरों को लिखे हुए उनके बहुत कम पत्रों से मैं परिचित हूं।) मेरे पत्र उत्तेजक का काम करते हैं—अनेक प्रकार से। मेरे किसी पत्र से उन्हें क्षोभ हुआ तो यह एक तरह का उत्तेजक हुआ। कहीं किसी दु:ख की गहराई में उन्होंने मेरी आवाज सुन ली और मन थोड़ा भी हल्का हुआ तो यह दूसरी तरह का उत्तेजक हुआ। केदार को सारंगी प्रिय है, मुझे उसमें नाद की गंभीरता नहीं मिलती। केदार के गद्य में सारंगी के स्वरों की सुकुमारता है, वायलिन का नाद गाम्भीर्य और जहां तहां मृदंग की थाप भी। केदार संघर्ष और चुनौतियों के कवि हैं। गद्य में जहां उदात्त स्तर पर उनके स्वर फूटते हैं, वहा. सारंगी की पहुंच नहीं है। 'राम की शक्तिपूजा' की संगीतमय व्यंजना वीणा, वायलिन और मृदंग से सम्भव है, सारंगी से नहीं।

'राम की शक्तिपूजा' को आत्मसात् करने में केदार के सामने कुछ कठिनाइयां रही हैं। उन्हें आप २७-११-५८ के पत्र में देख सकते हैं। प्रश्न उस कविता को आत्मसात् करने का नहीं है, प्रश्न है गद्य में उस कविता के स्तर को छू लेने का। मेरी समझ में जहां-तहां केदार का गद्य 'राम की शक्तिपूजा' के उदात्त स्तर को स्पर्श कर आता है। केदार का मूल स्वर लिरिक कवि का है, वही उनके गद्य का मूल स्वर भी है। कविता में वह बाहर की दुनिया देखते हैं, मन के भीतर झांकते भी रहते हैं। अपने मन के भीतर पैठने की यह क्रिया उनके गद्य में और भी ज्यादा होती है। उनके पत्र आत्मवक्तव्य का श्रेष्ठ साधन हैं। यह आत्माभिव्यक्ति परिवेश से कटी हुई नहीं, दृढ़तापूर्वक उससे जुड़ी है। कवि के व्यक्तित्व-निर्माण की प्रक्रिया का अध्ययन करना हो तो इन पत्रों से ज्यादा अच्छी सामग्री दूसरी जगह न मिले गी। व्यक्ति का मन और उसका परिवेश, इनका परस्पर घात प्रतिघात—यह परिदृश्य है इन पत्रों में। कहीं पारिवारिक परिवेश की झलक है, कहीं (कचहरी केन्द्रित) सामाजिक परिवेश की, सबसे अधिक साहित्यिक परिवेश की। यह बांदा का परिवेश है और बांदा से बाहर व्यापक हिन्दी का परिवेश। यदि कहें, केदार के पत्र एक युग का इतिहास हैं तो अत्युक्ति हो सकती है। परन्तु एक युग के साहित्यिक परिवेश में स्वयं केदार के जीवन का अंतरंग इतिहास उनके पत्र निश्चय ही

हैं। यह परिवेश बदलता रहा है, उसके साथ केदार भी बदलते रहे हैं, सदा उसके अनुरूप नहीं। परिवेश की गिरावट से बचने का प्रयास यहां देखा जा सकता है। कुल मिलाकर केदार का व्यक्तित्व निरन्तर विकसित और परिपक्व होता गया है और हर मंजिल में उनके व्यक्तित्व की अपनी पहचान अपरिवर्तनशील रही है।

केदार के कवि जीवन के आदिकाल से मैं उनके गद्य का प्रशंसक रहा हूं। पद्य की नुक्ताचीनी, गद्य की प्रशंसा बरसों तक–यह व्यापार देखकर केदार ने यह समझा हो कि मुझे उनकी कविता पसंद नहीं है तो इसमें आश्चर्य ही क्या। **केदारनाथ अग्रवाल और प्रगतिशील काव्यधारा** के प्रकाशन के बाद उनका वह भ्रम बहुत कुछ मिट गया है लेकिन शायद पूरी तरह नहीं क्योंकि मैं उनके गद्य का प्रशंसक अब भी हूं। संभव है कि **मित्र संवाद** की यह भूमिका पढ़कर वह पुराना भ्रम बुढ़ापे में उन्हें फिर सताने लगे। अत: मैं घोषित करता हूं कि केदारनाथ अग्रवाल अपने युग के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं और मुझे उनकी कविता बेहद पसन्द है। यह भी कि उनका काफी गद्य मुझे नापसन्द है। जब वह दिनकर की **उर्वशी** को लेकर मुझसे जिरह करने बैठ जाते हैं तब मुझे उनका गद्य बिल्कुल अच्छा नहीं लगता। आप इस मुद्दे पर यों विचार करें, केदार ने जो अच्छी कविताएं लिखी हैं, उनके आस पास नागार्जुन, निराला या किसी अन्य महाकवि की पंक्तियां पहुंच जायें गी पर केदार ने पत्रों में जो बढ़िया गद्य लिखा है, उस तक किस कवि का बढ़िया से बढ़िया गद्य पहुंचता है, विचार करें। ऐसा नहीं है कि हिन्दी में अच्छे गद्य लेखक नहीं है। हैं, और एक से एक बढ़कर हैं। सवाल गद्य के मिज़ाज का है। केदार अपने पत्रों में जिस तरह का गद्य लिखते हैं, उस तरह का गद्य हिन्दी में और किसी ने नहीं लिखा। दरअसल केदार अपने हुनुर से बेखबर हैं। जो सहज है, उसे ऐसा होना भी चाहिए। बहुत से पत्रों में साधारण बातों का उल्लेख मात्र है। सम्भव है, इनका ध्यान आने पर वह सोचते हों, ऐसा इनमें क्या है जो प्रशंसा के योग्य है। मैं भी कहूं गा, ऐसा कुछ खास नहीं है परन्तु केदार जैसे साहित्यकार के जीवन और परिवेश के बारे में हम जितना ही जानें उतना ही थोड़ा है। हां साधारण बातों का उल्लेख पढ़ते-पढ़ते अचानक आप उनके किसी अनूठे उपमान से चौंक पड़ें, यह सम्भव है। आप चाहें तो ऐसे उपमानों की सूची बना लें, फिर देखें, ऐसे अनूठे सहज उपमान कविता में भी कितने हैं। वैसे तो उन्हें अपनी कविताएं बहुत अच्छी लगती हैं और मैं उनकी अपेक्षित तारीफ न करूं तो वह नाराज भी होते हैं पर कभी-कभी आत्मालोचन के मूड में वह कविताओं को बटोरकर उसी जगह रख देते हैं जहां उनकी समझ में उनके पत्र हैं। ऐसे में दोनों का स्थानान्तरण बहुत जरूरी है। कविता जाये तो जाये, पत्रों में रचा हुआ गद्य तो रहे! (देखें २८-८-७४ का पत्र।)

केदार में आस पास की चीजों को देखने और उनका वर्णन करने की अद्‌भुत क्षमता है। निराला से अन्तिम भेंट करके उन्होंने जो अन्तिम पत्र लिखा था, उसमें यह क्षमता देखी जा सकती है। ऐसे पत्रों का ऐतिहासिक महत्व है। वह पुस्तकों के बारे में कम

लिखते हैं, अपने भीतर और आस पास देखकर ही अधिक लिखते हैं। इसके विपरीत मेरे पत्रों में पुस्तक चर्चा बहुत रहती है। मेरी इच्छा रही है कि पढ़ने में जो कुछ मुझे अच्छा लगा है, उसकी जानकारी केदार को भी हो जाये। पर वह काफी पढ़ते हैं; जो पढ़ते हैं, कलाकार के भाव से, सीखते समझते हुए, फालतू चीजें एक तरफ हटाते हुए। मेरे उनके काव्य बोध में अन्तर है, यह आप पत्रों में अनेक जगह देखें गे। उनकी अपनी कविताओं को लेकर मतभेद रहा है। दिनकर, निराला, सूरदास की रचनाओं को लेकर भी मतभेद रहा है कविता से सामाजिक यथार्थ के सम्बन्ध को लेकर, पुरानी साहित्य-परम्पराओं के मूल्यांकन को लेकर, छंद और काव्य शिल्प को लेकर मतभेद रहा है। दो मित्रों के, एक दूसरे की हां में हां मिलाने वालों के, ये पत्र नहीं हैं। जहां भी ऐसे मतभेदों का विवरण है, आज के आलोचकों और कवियों को अपने काम लायक कुछ सामग्री अवश्य मिले गी। पर ये मतभेद गौण हैं। उनसे हमारी मैत्री कभी नहीं डममगायी। जीवन में असह्य दु:ख के क्षण भी आते हैं। ऐसे क्षणों में हम सदा एक-दूसरे के पास रहे हैं। व्यक्तिगत रूप में यह मैत्री मेरे लिए कविता से भी अधिक मूल्यवान है। ये पत्र उस मैत्री के साक्षी दस्तावेज़ हैं।

हम दोनों में एक बात सामान्य है—बीते दिनों के बारे में हम बहुत कम सोचते हैं। क्या कर रहे हैं, आगे क्या करना है, अधिकतर ध्यान उसी पर केन्द्रित रहता है। हमारी मैत्री का लम्बा इतिहास है, इस पर भी ध्यान कम ही जाता है। लगता है, सारे तथ्य सिमट कर गुणात्मक रूप से भावशक्ति में परिवर्तित हो गए हैं—यह भावशक्ति जो रचनात्मक क्षमता का स्रोत है।

इस संग्रह में केदार के कुछ पत्र मेरे भाई मुंशी को लिखे हुए हैं। मुंशी पत्रकार हैं। लोकयुद्ध (फिर जनयुग), हिन्दी टाइम्स जैसे प्रकाशित पत्रों के अलावा वह अनेक हस्तलिखित पत्रों के सम्पादक रहे हैं। हमारे पारिवारिक पत्र **सचेतक** को निकालते उन्हें दस साल हो गए हैं। केदार इसके नियमित पाठक हैं। उनकी कुछ कविताएं सबसे पहले **सचेतक** में छपी हैं। इनमें अपनी मां पर लिखी केदार की कविता विशेष उल्लेखनीय है। मुंशी को लिखे हुए पत्रों में सम्प्रेषण की वेव-लेन्थ दूसरी है, आप पढ़ते ही पहचान लेंगे। मुझसे उपन्यासों की चर्चा शायद ही उन्होंने कभी की हो पर मुंशी के नाम एक पत्र में उन्होंने अपने पढ़े हुए उपन्यासों की चर्चा काफी विस्तार से की है। मुंशी से उपन्यासों की चर्चा और मुझसे नहीं—कारण यह हो सकता है कि मुंशी और केदार दोनों ने उपन्यास शुरू किये, पूरा दोनों में किसी ने नहीं किया।[1] तब इन्हें आपस

1. केदार का 'पतिया' उपन्यास 1985 में प्रकाशित हुआ था। इसके प्रकाशकीय वक्तव्य के अनुसार उनका अधूरा उपन्यास 'बैल बाजी मार ले गये' शीघ्र प्रकाशित होगा—मुंशी का अधूरा उपन्यास 'दीनू की दुनिया' हमारे परिवारिक पत्र 'सचेतक' में छप रहा है; पर जिस समय केदार मुंशी से उपन्यासों की चर्चा कर रहे थे, उस समय उनके उपन्यास अप्रकाशित थे।

में उपन्यासों की चर्चा करनी ही चाहिए। हां, मुंशी के अधूरे उपन्यास का कुछ अंश **सचेतक** में छपा है।

केदार का जीवन जितना ही व्यवस्थित है, उनकी लिखावट उतनी ही बहुआयामी है। उनके अक्षर ज्यामिति के अनेक पैटर्न बनाते चलते हैं। अशोक त्रिपाठी उनकी कविताएं कापियों और डायरियों से खोज-खोजकर संकलित और संपादित करते रहे हैं। वह उनकी हस्तलिपि के विशेषज्ञ हैं। प्रेस के लिए पत्र-संग्रह की कापी तैयार करने की जिम्मेदारी उनकी है। यह काम आसान नहीं है। इतनी बड़ी पांडुलिपि की प्रेस कापी उन्होंने पहले कभी तैयार नहीं की। फिर मेरी लिखावट की अपनी विशेषताएं हैं। आमतौर से साफ-सुथरी होने पर भी कहीं-कहीं अपना लिखा खुद से नहीं पढ़ा जाता। कुछ पत्र अंग्रेजी में हैं, वहां अशोक को और अधिक कठिनाई हो सकती है। हिन्दी से अलग हम लोगों की अंग्रेजी की लिखावट की अपनी विशेषताएं हैं। सुपाठ्य रूप में यह संग्रह आप तक पहुंच जाये, तो इसका श्रेय आप अशोक त्रिपाठी को दें। मैंने पत्रों की फोटो कापी कराके कालक्रमानुसार उन्हें व्यवस्थित कर दिया है, जहां जरूरत समझी, वहां आवश्यक सूचना देने वाली छोटी-छोटी पाद टिप्पणियां लिख दी हैं। अशोक से मैंने कहा है, जरूरत समझो तो अपने नाम से और टिप्पणियां भी लिख सकते हो।

एक बात और। केदार से बातें करते समय कहीं-कहीं मेरी भाषा असंयत हो गई है। इसके लिए पाठकों से मैं क्षमा मांगता हूं।

पहली अप्रैल १९९१ को केदार ने अस्सी पूरे किए। आशा है, साल पूरा होने के पहले वह संग्रह उनके हाथों में हो गा।

सी-३५८, विकासपुरी, **रामविलास शर्मा**

नयी दिल्ली

५ जून, १९९१

पुनश्च :

मित्रों को सुनाने के लिए जो पत्र मैं बांदा ले गया था, सौभाग्य से पुस्तक छपने से पहले ही वे मिल गए। पुराने महारथियों के कुछ पत्रों के साथ मैंने इन्हें संभाल कर रख दिया था।

केदार के गद्य शिल्प के बारे में मुझे और बहुत कुछ लिखना चाहिए पर वह एक भूमिका में सम्भव नहीं है। उसके लिए अलग एक पुस्तक चाहिए। मैं आशा यह करता हूं कि गद्य को भाष्य की जरूरत नहीं है, पाठक उसकी खूबियां खुद ही पहचान लें गे। पत्र पढ़ते समय आप यह न भूलें कि वे प्रकाशित होने के लिए न लिखे गए थे। 'तुम

जानते हो कि मैं किसी अन्य से इस तरह खुलकर बात नहीं करता।' (८-२-५७)। ये पत्र इतने आत्मीयतापूर्ण हैं कि इन्हें प्रकाशित करने में मुझे संकोच होना चाहिए था। केदार का व्यक्तित्व अब अकेले उनका नहीं रहा, कविता के माध्यम से वह उसे हिन्दी जनता को सौंप चुके हैं। कविता में वह खुलकर बोलते हैं, फिर भी जो वहां नहीं कहा, वह यहां है। जिस कारखाने में उनकी कविता ढलती है, उसे आप भीतर से यहां देख सकते हैं। जो सामग्री कविता में नहीं ढाली गई, पर कविता से घटकर नहीं है, वह भी आपको यहां मिले गी। 'सामने नल चल रहा है। बाल्टी भर रही है। पानी बोल रहा है। आंगन के कच्चे कोने में, पहले की कटी, रातरानी ने पत्तियां निकाल दी हैं।' (२३-७-५८)। अदृश्य काल के एक क्षण को उसके पार्थिव परिवेश के साथ लेकर केदार ने अमर कर दिया है।

बहुत साल पहले उन्होंने कहा था, 'सांस का जोर पंक्तियों में आवे, मेरी यह साधना है।' (५-११-४३)। आदमी के सांस लेने की तरह उनकी कविता सहज है; उनके सांस लेने की आवाज आप उनके पत्रों में सुन सकते हैं। जब वह कचहरी से बाहर होते हैं तब उनकी हर सांस कविता होती है। लेकिन सताकर भी कचहरी उन्हें कविता दे जाती है। '११/५ से सुबह की कचहरी हो जाएगी। साढ़े छः बजे सुबह से १ बजे दिन तक। तब तो समझो कि घिर जाऊंगा। चूर-चूर हो जाऊंगा। पर किया [क्या] जाये। पेट को लिए लिए गर्भवती की तरह जिऊंगा। न खा पाऊंगा, न घूम-फिर सकूंगा।' (४-५-६४)। विरोधी परिवेश से लम्बी टक्कर—यह है केदार का जीवन। पर वह इस परिवेश को अपने ऊपर हावी नहीं होने देते। और केवल कचहरी का परिवेश नहीं, साहित्य का परिवेश भी अक्सर उनके प्रतिकूल होता है। वह उससे दूर नहीं भागते, निगाह जमाकर उसे देखते हैं। और यहां भी उनकी प्रतिक्रिया कविता बन जाती है। 'प्रतीक' श्मशान का रंगीन धुआं रहा।' (११-८-८७)। धुआं रंगीन है पर है श्मशान का।

जो अप्रत्याशित है, अनपेक्षित है, पत्र में अकस्मात् वह सामने आकर हमें चौंका देता है। साधारण बातें करते-करते अचानक ऐसे बोल फूटते हैं कि सुनकर हम दंग रह जाते हैं। ऐसे बोल कब कहां सुनने को मिल जायेंगे, आप कुछ कह नहीं सकते। 'मैं तो अपने को खोजता रहा हूं कि कहां हूं और क्या सच है और मैं उसे पकड़कर जी रहा हूं अथवा नहीं। मुझे काठ होकर या रहकर मरने में दुःख होगा। मरो तो इस शान से कि मौत भी ऐसे फूले-फले पेड़ को कंधे पर रखकर चले कि जिधर से निकले रूप-रस और गंध बरस पड़े। हमें यश न चाहिए। हमें चाहिए पूर्ण विकसित मनुष्य की मौत।' (१७-१२-५८)। पूर्ण विकसित मनुष्य की मौत—मानव जीवन का यह सबसे बड़ा दार्शनिक सत्य है। केदार ने उसे अपने अनुभव से, चिन्तन और मनन से प्राप्त किया है।

इति।

शिवकुमार सहाय हिन्दी प्रकाशकों में परम सौभाग्यशाली हैं कि केदारनाथ अग्रवाल की सारी पुस्तकें उन्हीं ने छापी हैं। यह प्रसन्नता की बात है कि यह पत्र संग्रह भी वही छाप रहे हैं। मैं उनके प्रकाशन कार्य की सफलता के लिए मंगल कामना करता हूं।

१८ जून, १९९१ **–रामविलास शर्मा**

‘मित्र संवाद’ से गुज़रते हुए

(एक)[1]

भूमिका में रामविलासजी ने लिखा है ‘प्रेस के लिए पत्र संग्रह की कापी तैयार करने की जिम्मेदारी उनकी [अशोक त्रिपाठी की] है। यह काम आसान नहीं है।’

मुझे लिखे हुए अपने 18-7-91 के पत्र में लिखते हैं–‘पत्र संग्रह के साथ तुम जो परिश्रम कर रहे हो, पत्र पढ़ते समय तुम्हारी जो प्रतिक्रिया हुई, उस पर अपना वक्तव्य पुस्तक में दे दो।’

सबसे पहले ‘यह काम आसान नहीं है’ का खुलासा।

‘यह काम आसान नहीं है।’–पढ़कर शुरू में लगा कि रामविलासजी इसे शायद औपचारिक स्नेहवश लिख गये होंगे। यह कौन-सा मुश्किल काम है! पर ज्यों ही पत्र मैंने प्रेस को दिखाये, मुश्किल शुरू! प्रेस ने कहा कि इसे टाइप करा के दीजिए। मैंने कहा–आप ही व्यवस्था करा दीजिए। उन्होंने हामी भरी और हम निश्चिन्त हो गए। पत्र लेकर मैं चला आया और प्रेस-कॉपी की जगह टंकण-कॉपी तैयार करने में लगा। जो पत्र लेटरहेड और अन्तर्देशीय या सादे कागज पर थे, उन्हें तो वैसे ही तिथि-क्रम में संवाद-शैली में संयोजित किया, पर जो पोस्टकार्ड पर थे, उन्हें अलग-अलग सादे कागज पर इस तरह चस्पा किया कि इबारत भी खराब न हो और वे दोनों तरफ पढ़ लिए जायँ।

टंकण-कॉपी प्रेस[2] मालिक श्री मिश्रीलाल शर्मा को दी गयी। उनके टंकणकर्त्ता ने माफी माँग ली। कहा–मेरे बूते का नहीं है, इसे टाइप करना। मिश्रीलालजी के सुपुत्र रमेशजी ने कहा मैं इसे सीधे कम्पोज कराता हूँ। मैं बड़ा खुश हुआ–सोचा एक बार के संशोधन की मेहनत से निजात मिली। प्रूफ आया। पूरा प्रूफ संशोधन से भर गया–तिल रखने को भी जगह न बची–फिर भी कुछ संशोधन अंकित होने से वंचित रह गये। प्रूफ प्रेस गया। कम्पोज़ीटरों ने भी तोबा कर ली–टंकित कराये बिना काम नहीं होगा। कुछ टंकणकर्त्ताओं से बात की–उन्होंने भी कापी देखकर पनाह माँग ली। अन्त में मेरे मित्र सोमदत्त शर्मा ने बाँह गयी और मुझे उबार लिया–आभारी होना ही पड़ेगा। उन्होंने अपने प्रभाव से एक टाइपिस्ट को तैयार किया। बेचारा तैयार हो गया पर परिणाम वही–

---

1. परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद से प्रकाशित 1991 का संस्करण।
2. शांति मुद्रणालय, दिल्ली।

'नौ दिन चले अढ़ाई कोस'—दिन-भर में 8-10 पेज़ से ज्यादा नहीं कर पाता था। मैं अपने को बड़ा तीसमारखाँ समझता था और टाइपिस्ट पर खीझ रहा था पर कुछ कहने की हिम्मत नहीं कर रहा था कि कहीं उसने भी मना कर दिया तो, सारी प्रेस-कॉपी मुझे हाथ से लिखनी पड़ेगी—पुस्तक तो छपनी ही थी। लेकिन जब संशोधन करने बैठा तो रात को डेढ़-दो बजे तक संशोधन करता और जब पेज गिनता—7-8 पृष्ठ से अधिक नहीं हो पाता था—दिन में चाकरी करता था। रात में ही काम कर पाता था। छुट्टियों में बहुत किचकिचाता था तो 20-22 पृष्ठ निकाल पाता था। कारण यह था कि दोनों मित्रों की 'लिखावट' की जो अपनी 'विशेषताएँ' हैं, [केदारजी की हिन्दी-अंग्रेज़ी दोनों की और रामविलासजी की अंग्रेज़ी की] वही अक्सर मुझे ललकार देती थीं—और मैं उन्हें अनसुनी न कर देने के लिए बाध्य था। एक-एक शब्दों को लेकर घंटों सिर खुजलाना पड़ता था—अंग्रेजी शब्दों के लिए शब्दकोश छानना पड़ता था [इसी काम के लिए मैंने आक्सफोर्ड डिक्शनरी खरीदी]। इस पर भी जब वे ललकारते ही रहते थे तो फिर रामविलासजी की शरण में जाता था। उन्हें पत्र लिखता था। वह तुरन्त पत्र से मेरी पीठ थपथपाते हुए, उबार लेते थे। उन्होंने मुझ नौसिखिये को समुद्र में तैरने के लिए फेंक तो दिया था पर कगार पर खड़े रहकर बराबर कनखियों से ताकते रहते थे कि अगर कहीं डूबने लगूँ तो उबार लें। उनके निर्देशों का अनुपालन करते हुए, समुद्र पार तो कर गया हूँ, पर खूबसूरती से तैरकर या यूँ ही हाथ-पाँव चलाकर, यह तो रामविलासजी और इस पत्र के सुधी पाठक ही बता सकते हैं; क्योंकि मेरी अपनी समझ की सीमाएँ भी तो हैं।

अब मेरी 'प्रतिक्रिया'!

'मित्र संवाद' की प्रेस कॉपी तैयार करने से लेकर मुद्रणादेश देने तक इन पत्रों को कम-से-कम साढ़े तीन बार मैंने पढ़ा। एक बार टंकित प्रतियाँ संशोधित करते समय, दो बार प्रूफ संशोधित करते समय और आधी बार इन पत्रों को टंकण के लिए टंकण-कॉपी तैयार करते समय। पत्रों को संवाद-शैली में तिथिवार संयोजित करते समय अक्सर पत्रों को पढ़ने का लोभ संवरण नहीं कर पाता था। मैं बार-बार अपने को सचेत करता था। [क्योंकि समय कम था और एक निश्चित समय-सीमा के अन्दर ही काम पूरा होना था] पर अपने को रोक नहीं पाता था—मैं क्या करता, ये पत्र ही इतने दिलचस्प हैं। इन पत्रों में मुझे एक नये केदारजी और नये रामविलासजी दिखाई पड़ रहे थे—अपने लेखन से अधिक खुले हुए, अनौपचारिक सहज और प्राणवंत, निजी-पारिवारिक ज़िन्दगी के इन्द्रधनुषी रंगों के साथ दमदमाते हुए, सुख-दुख, हर्ष-विषाद की धूपछाँही में सीना तानकर खिलखिलाते हुए—दुख और विषाद को ठेंगा दिखाकर महाकाल को डपटते हुए, मस्ती से रूट मार्च करते हुए।

'मित्र संवाद' के पत्र महज पत्र नहीं हैं—आज के युग के लिए दुर्लभ, अकुंठ और अनाविल मैत्री के जीवन्त दस्तावेज़ हैं। इन पत्रों से गुज़रना मेरे लिए ब्राह्ममुहूर्त की,

फूलों की ताज़ी ख़ुशबू से भरी, विलम्बित लय में चलने वाली बयार से गुज़रना था। छप्पन वर्षों की परवान चढ़ती मैत्री, हर सोपान पर एक प्रीतिकर ताज़गी से उत्फुल्ल कर देती थी–अन्दर तक सराबोर हो जाता था। पत्र पढ़ते-पढ़ते भावोद्रेक में गला रुँधा है, आँखों में पानी की चादर बुन उठी है और अक्सर कब होठों पर मुस्कराहट खेल गयी–पता ही नहीं चला।

दोनों मित्र-पुरुषों में एक-दूसरे के प्रति इतना अपनापा, एक-दूसरे की एक-एक साँस की अनुभूति करना, मन की आँखों से हर क्रियाकलाप पर नज़र रखना, एक के मन में क्या हो रहा है, बिना कहे ही उसे सुनते रहना, एक की चोट पर दूसरे को उसकी पीड़ा होना, एक-दूसरे के खाने-पीने, सोने-जागने, उठने-बैठने, घूमने-टहलने, रोज़ी-रोज़गार, दवा-दारू, लिखने-पढ़ने, आने-जाने, परिवार के सभी सदस्यों, मित्रों के बारे में लगातार सरोकार रखना, एक-दूसरे की उपलब्धि को अपनी ही उपलब्धि मानना–आज व्यवहार में कहाँ मिलेगा इस लेन-देन वाली संस्कृति में! कुछ उद्धरण देने का मोह मैं छोड़ नहीं पा रहा हूँ–मालकिन [रामविलासजी की पत्नी] को चोट लगने पर केदारजी लिखते हैं–'मालकिन को चोट आई। हमें भी दर्द हुआ।' [8-4-74]

रामविलासजी के हाथ में फ्रैक्चर होने की सूचना अख़बार में पढ़कर केदारजी तड़फड़ा जाते हैं। न पहुँच पाने की बेबसी पर खीझते हुए लिखते हैं–'न पहुंचने पर भी तुम्हारे पास हूं। तुम्हें देख रहा हूं। तुम रात को सो रहे हो, मैं आंखें खोल-खोलकर तुम्हारे हृदय की धड़कनें और उस घायल हृदय की दृढ़ता को देख-सुन रहा हूं। यह न समझो कि कान ही सुनते हैं। आंखें भी ऐसे क्षणों में सुनने लगती हैं। कान तो दिन-भर के कोलाहल से सुन्न पड़ जाते हैं। तुम हंस भी रहे हो। यही ज़ानदार आदमी की सबसे बड़ी पहचान है; तुम मेरी तरह रो नहीं देते.......ज़रूर कहीं-न-कहीं मेरे दिल पर कुछ आक्रांत होकर बैठ गया है और अपनी (दिल की) स्थिरता गवां चुका है। सब घर के लोग परेशान होंगे, व्याकुल होंगे। वह बड़ा घर जैसे स्वयं पट्टी बांधे पड़ा होगा।' (17-3-63)

डाक से 'निराला की साहित्य साधना' पाने पर, केदारजी की आत्मविभोरता–'देखा मेज पर 'निराला की साहित्य साधना' रखी है। बड़ी देर तक बार-बार आदि से अंत तक पन्ने खोल-खोलकर देखता रहा–न जाने क्यों पढ़ कुछ न सका। इतना भावोद्रेक हो गया कि सिवाय मुग्ध होने के कुछ न कर सका। मैं पुस्तक तो इस उद्रेक के कम होने पर पढ़ूंगा ही। अभी तो इसे रातभर बार-बार छुऊंगा-देखूंगा-पलटूंगा और उसी तरह सूंघूंगा जैसे कोई अपने लगाए पेड़ के बेले के फूलों को सूंघता है। बड़ी महक मारते हैं। खुश हूं।....यकीन जानो कि मेरी मनोदशा इस समय वैसी ही है, जैसी एक मां की होती है, जिसने पुत्र को अभी-अभी जन्म दिया है और मुंह देखकर बार-बार चूम लेती है। हालांकि तुमने जनम दिया है; इस पुस्तक को। क्या खूब हूं कि ममता उमड़ पड़ी है।' [1-3-69]

हमारी नयी पीढ़ी इनसे क्या कुछ सबक लेकर अपने मनुष्य होने की प्रतीति करा सकेगी?

बाँदा में बैठकर केदारजी लखनऊ, आगरा, दिल्ली, बनारस में रह रहे रामविलासजी का और इन जगहों पर रहते हुए रामविलासजी बाँदा और मद्रास में रह रहे केदारजी का मुज़रा लेते रहते हैं। जब चाहते हैं दोनों मित्र अपने-अपने हृदय को एक-दूसरे की फ्रीक्वेन्सी पर समस्वरित कर लेते हैं और एन्टिना की दिशा घुमाकर एक-दूसरे को देख-सुन लेते हैं।

स्वर्ण जयन्ती की सीमावधि पार करने वाली मैत्री की इस ऊर्ध्वमुखी यात्रा में, सान्निध्य के अवसर विरल ही हैं—मैत्री की गहराई और विस्तार को देखते हुए लगभग अविश्वसनीय, लेकिन मन के स्तर पर शायद ही कोई ऐसा अभागा दिन होगा जबकि दोनों गले न मिले हों, बतियाये न हों। रामविलासजी ने कई जगह उल्लेख किया है कि जब वे लिखते हैं तो केदारजी बराबर उनके ध्यान में उपस्थित रहते हैं। और केदारजी तो माला की तरह जपते ही रहते हैं कि 'रामविलास ने ही मुझे विवेक दिया—आदमी बनने में मदद की'।

ऐसा नहीं है कि उनकी मित्रता किसी स्वार्थ या 'परस्पर-प्रशंसा' की नीति की उपज है या उसके सहारे जीवंत है। इन पत्रों से आपको इस गिजगिजे-लिजलिजेपन की हवा भी न लगेगी। रामविलासजी साफ-साफ लिखते हैं—'तुम मेरे कहने से कुछ लिखने लगो यह तो अन्याय हो गा, दोनों के साथ। तुम अंचल नहीं हो। मेरी राय एक दोस्त की राय है। उसे सुनो—झगड़ो। करो हमेशा वही जो जंचे। कलाकार की यही परख है।' [8-12-43] केदारजी करते भी यही हैं। रामविलासजी केदारजी के हृदय में किस ऊँचाई पर विद्यमान हैं, हम-आप कल्पना से भी वहाँ नहीं पहुँच सकते, फिर भी वह रामविलासजी की हर बात को आप्तवाक्य मानकर नहीं स्वीकार करते। 'मुक्त छंद' और 'उर्वशी' को लेकर दोनों मित्रों के बीच जो कटाजुज्झ हुई है और रामविलासजी को अन्त में चाहे खीझकर या रीझकर पनाह माँगनी पड़ी, वह इसका दिलचस्प प्रमाण है। मुक्त-छंद वाली बहस तो बहुत ही दिलचस्प दौर से गुज़री, इतनी दिलचस्प कि केदारजी की मुक्त छंद के प्रति आसक्ति देखकर रामविलासजी को उन्हें एक पत्र में 'फ्रीवर्स मेरी जान' सम्बोधित करना पड़ा और 'उर्वशी' पर प्रहार-दर-प्रहार देखकर रामविलासजी ने लिखा 'उर्वशी के बारे में तुमसे आकर ही बातें करूं गा।' [10-5-62]। एक पल में रीझते-से लगते हैं तो दूसरे में खीझते-से।

इस तरह के अनेक प्रसंग हैं। स्वयं केदारजी की कविताओं को लेकर दोनों के बीच जमकर धर्मयुद्ध हुआ है। केदारजी की कविताओं के जितने निर्मम आलोचक रामविलासजी रहे हैं, उतने तो उनके ईर्ष्यालु विरोधी भी नहीं रहे होंगे। लेकिन एक की निर्ममता के पीछे चिकित्सक की सदाशयता है तो दूसरे की निर्ममता के पीछे परपीड़क की रुग्ण तुष्टि।

दोनों मित्रों के बीच कई बार वैचारिक संघर्ष हुआ है और खुशी यह रही है कि जितना ही द्वन्द्व हुआ है, मित्रता की नींव उतनी ही पुख्ता हुई है, उसकी इमारत और बुलन्द हुई है। जहाँ कहीं मौका मिला है, एक दूसरे की जमकर खिंचाई की है, ताने-मेहने भी दिये हैं, शिकवा-शिकायत भी की है—पर अंतर्धारा के रूप में प्यार-ही-प्यार उमड़ता रहा है; जितनी तीखी शिकायत, उतना ही गहरा लाड़; बेतकल्लुफी ऐसी कि फागुन भी शरमा जाये, बड़े-बड़े मुँहफट पानी भरें। गजब यह कि इन सबमें रामविलासजी चार हाथ आगे। पर एक दूसरे के प्रति संवेदनशीलता की मर्यादा यह कि क्या मजाल कि एक दूसरे की कथनी-करनी से किसी के भी मन पर 'दर्पण पर पड़े सांस के निशान' जैसे दाग़ भी पड़ सकें।

दोनों मित्र एक दूसरे की चिन्ता उसी प्रकार करते हैं, जैसे कि कोई माँ अपने बच्चे की चिन्ता करती है। बच्चे को छींक भर आई नहीं माँ छटपटाने लगती है कि कैसे इसे इस तकलीफ़ से उबार लें—वह बच्चे की सारी पीड़ा अपने अन्दर भोगने लगती है। वही व्याकुलता यहाँ भी देखने को मिलती है। केदारजी को मोच आने की ख़बर पाते ही दिल्ली से रामविलासजी पोस्टकार्ड पर दौड़े हुए आते हैं और दवाइयों, सुझावों, हिदायतों की झड़ी लगा देते हैं। लगता है जैसे वे केदारजी को नादान बच्चा समझते हों। एक दूसरे और एक दूसरे की पत्नी की अस्वस्थता की ख़बर मात्र से दोनों मित्र आकुल-व्याकुल हो जाते हैं और तनिक भी सुधार की ख़बर सुनकर आनन्द से विभोर हो जाते हैं—दोनों ही मित्र आस्था और संघर्ष के उपासक जो हैं।

माँ अधिक परेशान न हो, इसलिए समझदार और संवेदनशील पुत्र अपनी तकलीफ़ अक्सर अपनी माँ से छिपाता भी है। यह प्रवृत्ति दोनों ओर दिखाई देती है। ठीक होने पर लिखते हैं—'तुम्हें इसलिए नहीं बताया कि तुम चिन्तित होते।'

वैसे चाहे दोनों लोग महीनों पत्र न लिखें लेकिन जब किसी को किसी तकलीफ़ में महसूस करते हैं तो तुरन्त पत्र लिखते हैं और तब तक लगातार लिखते रहते हैं जब तक कि आश्वस्त नहीं हो जाते कि अब 'सब कुछ ठीक-ठाक' है।

'मित्र-संवाद' में केदारजी के स्वर में रामविलासजी के प्रति आश्वस्तिपरक निर्भरता का स्वर सुनाई पड़ता है। कुछ-कुछ उस तरह की आश्वस्ति कि जैसे कोई अपने सरपरस्त से अपने मन की शंका-आशंका, चिन्ता-दुश्चिन्ता आदि कहकर निश्ंचित भाव से हल्का हो जाता है कि मैंने उन्हें बता दिया, अब वह जानें और उनका काम जाने। इस आश्वस्ति भाव की रक्षा रामविलासजी पूरे अपनापे और सम्मान से करते हैं, बिना बड़प्पन बघारे हुए—बहुत ही सहज आत्मीयता से, प्यार से उनकी शंकाओं, चिन्ताओं का समाधान करते हैं। समाधान मिल जाने पर केदारजी पूरी उत्फुल्लता से, बच्चों की निश्छल ईमानदारी के साथ आभारी होते हैं। यह आभार औपचारिकता का निर्वाह मात्र नहीं होता, मनुष्य होने का सहज और अनिवार्य प्रमाण होता है। बड़ी

दु:खद और चिन्ताजनक स्थिति यह है कि यह कृतज्ञता धीरे-धीरे ग़ायब होती जा रही है और हम धीरे-धीरे मनुष्य न होने की ओर बढ़ रहे हैं।

रामविलासजी के प्रति केदारजी ने अक्सर कृतज्ञता ज्ञापित की है—अपने लेखों में, वक्तव्यों में, साक्षात्कारों में। पहले मैं इसे यूँ ही, मानता था। लेकिन इन पत्रों को पढ़ने के बाद, मैं इस कृतज्ञता के मर्म को समझ सका। सचमुच जिसे कहते हैं अँगुली पकड़कर सिखाना, कुछ-कुछ उसी प्रकार रामविलासजी ने केदारजी की चेतना को विकसित करने के लिए, अतुल जलराशि के नीचे कविता के खिले हुए फूल को हस्तगत करने के लिए, पग-पग पर स्कूलिंग की है और केदारजी ने बार-बार कृतज्ञता ज्ञापित करते हुए उसे आत्मसात् किया है। यह कृतज्ञता आज की काम निकालू चापलूसी का पर्याय नहीं है, हृदय से निकली हुई सच्ची स्वीकारोक्ति है। कौन करता है, किसी के लिए इतना, और कोई करे भी तो कौन कृतज्ञ होना जानता है इस व्यावसायिक संस्कृति के युग में! आज की पीढ़ी अगर इनसे कुछ सीखना चाहेगी, तो ये पत्र उसे पूरी आत्मीयता से सिखाएँगे। .

अपनी प्रिया प्रियम्बद श्रीमती पार्वती देवी को, मद्रास के विजय नर्सिंग होम में, महाकाल से संघर्ष करते हुए देखकर केदारजी बार-बार हिल जाते हैं, ऐसे में रामविलासजी लगातार पत्र में ऐसे-ऐसे उद्धरण बराबर लिखते रहते हैं जिनसे मनुष्य टूटने से अपने को बचा सकता है। वह अपने विवेक से केदारजी को बार-बार सहारा देते हैं, उन्हें ताकत देते हैं, कुछ-कुछ वैसे ही जैसे कृष्ण अर्जुन को उबारते हैं। यहीं रामविलासजी हमें यह भी बताते हैं कि शोक कैसे ऊर्जा में परिवर्तित किया जा सकता है। निराला की 'राम की शक्तिपूजा' और वाल्मीकि के 'शोक: श्लोकत्वमागत:' का हवाला देते हुए वह लिखते हैं—'शोक, प्रेम से अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ शोक, कर्म की ज़बर्दश्त प्रेरणा बन सकता है।' [23-1-86] इसके पहले के एक पत्र में लिखते हैं—'वह [कवि] परिवार का है इसके साथ वह देश का है। देश का ध्यान उसे टूटने से बचाता है।' [22-12-85]

ये पत्र हैं तो सिर्फ दो व्यक्तियों के लेकिन इनमें दुनिया-जहान की बातें मिलेंगी—तटस्थता के साथ नहीं एक गहरे सरोकार के साथ। दुनिया में क्या हो रहा है और मनुष्यता के साथ उसका कैसा रिश्ता बन रहा है—मनुष्य पर उसका क्या प्रभाव पड़ेगा, इस चिन्ता के साथ पड़ोस की घटना से लेकर विश्व के किसी भी कोने में घटने वाली घटना इन्हें उत्तेजित करती है। इन घटनाओं पर इनकी सार्थक टिप्पणियाँ हैं। ईराक पर अमरीका की अगुआई में बहुराष्ट्रीय सेनाओं के आक्रमण से केदारजी के मन में अमरीका की अमानवीय चौधराहट के प्रतीक राष्ट्रपति 'बुश' के प्रति कितनी नफ़रत और कितना गुस्सा है इसके लिए एक शब्द पर्याप्त है और वह है 'बुश' का हिन्दी रूपान्तर 'झाड़ी'। इस सन्दर्भ में केदारजी के 3-4 पत्र हैं और सबमें उन्होंने बुश को 'झाड़ी' ही कहा है। पढ़कर मज़ा आ गया।

वैसे तो दोनों मित्र एक दूसरे से लम्बे पत्रों की ही दरकार रखते हैं। छोटे पत्र मिलते हैं तो सन्तुष्ट नहीं होते—शिकायतें करते हैं। ये शिकायतें बड़ी मज़ेदार हैं। शिकायत भरे पत्र खूब गुदगुदाते हैं। भाषा को एक नयी दीप्ति देते हैं—शैली को एक नया अन्दाज़। रामविलासजी कहते हैं, मुझे 'Quality' के साथ 'Quantity' भी चाहिए। लेकिन जब दोनों मित्र किसी गहन वेदना में होते हैं, तो पत्र तो ज़रूर चाहते हैं, लेकिन सिर्फ दो पंक्तियों का, विस्तार की अपेक्षा नहीं करते।

दोनों प्रकृति के अन्यतम प्रेमी हैं। बहुत कम पत्र ऐसे हैं जिनमें मौसम का, हवा का, बादल का, वर्षा का, गर्मी का, सर्दी का, बसंत का, आस-पास के पेड़-पौधों का, फूलों का, गिलहरी का, बया का, धूप का, चाँदनी का जिक्र न हो और उन पर एक संक्षिप्त लेकिन टिकाऊ टिप्पणी न हो। कुछ पत्रों में तो ज़िक्र से आगे जाकर सुन्दर चित्रण तक मिलता है। गेंदा दोनों को बहुत प्रिय हैं और सरसों तो बारहों मास दोनों के हृदय में सरसराती झूमती रहती है। मौसम की सुघड़ रंगीनी दोनों को बावला बना देती है। नदियाँ इन्हें अंक में भरती हैं और समुद्र इन्हें बेसुध कर देता है। धूप तो दोनों मित्रों के प्राणों में बसती है। आगरा में जब यूक्लिप्टस के पेड़ों वाला मकान छोड़ना पड़ता है तो उसकी कचोट बहुत दिनों तक मन को सालती रहती है। दोनों मित्र प्रकृति की एक-एक हरकत को बड़ी पैनी निगाह से देखते हैं। ओस की बूँदें जब पत्तों से टपकती हैं उस पर रामविलासजी केदारजी को लिखते हैं 'आम के पत्ते, पीपल के पत्ते, बरगद के पत्ते, सबसे ओस की बूंदें टपकने का स्टाइल अलग-अलग था।' [17-12-82]

प्रकृति की ही तरह दोनों मित्रों के मित्रगण भी इनकी ज़िन्दगी के अनिवार्य हिस्से हैं। अमृतलाल नागर, नागार्जुन, शमशेर, नरोत्तम नागर आदि इनके अनेक मित्रों को इन दोनों मित्रों के नज़रिये से देखने का मज़ा ही कुछ और है। नागार्जुनजी के बारे में केदारजी लिखते हैं—उनकी घुमक्कड़ी और हर परिस्थितियों में रच-बस जाने को लक्ष्य करके—नागार्जुन 'हिन्दुस्तान का नक्शा हो गये हैं। हर एक प्रदेश के अंक में हिल रहे हैं। ' [2-2-83]

इन पत्रों में कब, कहाँ, कोई दुर्लभ, सटीक और सीधा लक्ष्य बेध करने वाला कोई वाक्य मिल जाएगा, कहना बड़ा मुश्किल है। भारत में क्रान्ति के भविष्य को लेकर आज की क्रान्तिकारी पार्टियों पर रामविलासजी की यह चपत, हमें सोचने को विवश करती है—

'भारत में क्रान्ति तो हो गी पर जरा देर से। क्रान्तिकारी पार्टियों के केन्द्रीय दफ्तरों में, उनके केन्द्रीय संगठनों में अंग्रेजी चलती है और अंग्रेजी के चलते मजदूरों की पार्टी में मजूदर कभी नेता नहीं बन सकता। सांस्कृतिक क्रान्ति हो गी, तब हर विश्वविद्यालय में एक बड़ा तालाब हो गा जिसमें सैकड़ों कमल खिले हों गे। इसमें और भी देर है।' [24-7-78]

केदारजी मानते हैं—'क्रान्ति भी अतीत के अन्दर से अपनी जड़ें निकालती है और

अंकुरित होकर जो भी है उसी से शाखें फैलाती है। Contradiction के साथ ही क्रान्ति का सौन्दर्य फूटता है—मन मोहता है।' [12-4-76]

उ० प्र० हिन्दी संस्थान पर रा० वि० जी का यह रद्दा बहुत सटीक है—'हिन्दी संस्थान कोई साहित्यिक संस्था नहीं है, इससे उसके पुरस्कार का महत्व हम आर्थिक दृष्टि से आंकते हैं।' [31-7-78]

पाश्चात्य आलोचना पर भी उनकी यह टिप्पणी दिलचस्प है—'पाश्चात्य आलोचना जहां शास्त्र है, वहां दरिद्र है। जहां कवियों के अनुभव प्रस्तुत करती है, वहां वह मनन के योग्य है।' [6-4-78]

पैसे का फूहड़ प्रदर्शन करने वाली दावतों पर भी एक झन्नाटेदार तमाचा—'ब्याह बारात में जाने पर असभ्यता की नुमाइश देखने को मिलती है। जी घिनाता है, हम पैसे वाले हैं, हमारे ठाठ देखो, महिलाओं की चमकदार साड़ियां देखो, दालदा में सना पक्वान्न चखो। भीतर से सब खोखले।' [12-12-88]

इसी संदर्भ में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय पर रामविलासजी की और दिल्ली पर केदारजी की टिप्पणियाँ बड़ी झनाकेदार हैं।

इन टिप्पणियों की ही तरह कब कहाँ चुपके से कोई चीज़ परिभाषित हो जायेगी शायद पहले न वह जानते थे और न हम जान सकते हैं। कला की यह परिभाषा इसी तरह फूट पड़ी है—

'मौत से आदमी की कभी न खत्म होने वाली लड़ाई का नतीज़ा है कला। जो अशाश्वत है, उसे दूसरों के लिए अपेक्षाकृत शाश्वत बनाकर छोड़ जाती है कला—शाश्वत का चित्रण करके नहीं, अशाश्वत को उसी क्षण में हमेशा के लिए बन्दी बना कर।' [रा० वि० 12-5-77]

इन पत्रों में बहुत सारे सन्दर्भ और बहुत सारी टिप्पणियाँ ऐसी हैं, जिन पर इन दोनों मित्रों ने शायद यहाँ पहली और अन्तिम बार प्रस्तुत की हों। जिगर साहब की शायरी पर, उनके कुछ शेरों के साथ केदारजी का चार-चार हाथ करना एक ऐसा ही वाकया है। जिगर की शायरी को इतनी बारीकी से पहचानने और विश्लेषित करने की कोशिश, कविता की विश्लेषण शैली को एक नयी यथार्थपरक रोशनी देती है। दिलचस्प है यह लेखनुमा पत्र [4-3-61]

कीट्स, मिल्टन, वाल्ट ह्विटमैन, कालिदास, भवभूति, वाल्मीकि, कबीर, सूर, तुलसी आदि पर दोनों मित्रों की टिप्पणियाँ, इन कवियों की रचनाओं के कई नये आयाम उद्घाटित करती हैं। ये टिप्पणियाँ साहित्य की अनूठी निधियाँ हैं। सूर के एक छंद को लेकर दोनों मित्रों के बीच जो संवादनुमा विवाद चला, उससे उस छंद के अर्थ-दर-अर्थ खुलते चले गए, उसे एक नयी अर्थ-दीप्ति मिली। कबीर के दो दोहों की जो व्याख्या रामविलासजी ने की है वह कबीर को परखने की एक दूसरी ही कोशिश की

और संकेत करती है। भवभूति के बारे में यह कहना कि 'केवल भवभूति को पढ़ने के लिए संस्कृत सीखनी चाहिए'—वाल्मीकि और कालिदास को ही सर्वश्रेष्ठ मानने वालों के लिए किसी चुनौती से कम नहीं हैं। इसका यह तात्पर्य कदापि नहीं है कि रामविलासजी वाल्मीकि या कालिदास को कमतर आँकते हैं। वाल्मीकि की तो वह बराबर प्रशंसा करते हैं और कालिदास को पढ़ने के लिए केदारजी से कहते हैं 'ससुरे संस्कृत पढ़'।

मैं इन पत्रों के गद्य पर अपनी प्रतिक्रिया नहीं दर्ज़ कर रहा हूँ। रामविलासजी के गद्य पर केदारजी ने अपने पत्रों में कई जगह अपनी राय जाहिर की है। मैं तब लिखूँ जब मैं उससे अलग कुछ कहने की हैसियत रखूँ। केदारजी के गद्य पर स्वयं रामविलासजी ने टिप्पणियाँ की हैं अपने पत्रों में भी और कुछ विस्तार से उनका खुलासा किया है अपनी भूमिका में। लेकिन यहाँ मैं केदारजी के गद्य पर, रामविलासजी की जो प्रतिक्रिया है, उस प्रतिक्रिया पर, केदारजी की जो प्रतिक्रिया है, उस बारे में एक निवेदन ज़रूर करना चाहूँगा।

अपने गद्य की तारीफ केदारजी को पसन्द नहीं है और रामविलासजी हैं कि बार-बार उनके पत्रों के गद्य की तारीफ करते हैं। आज से नहीं—मैत्री और पत्राचार के प्रारम्भिक वर्षों से ही। 31-8-38 के पत्र में ही रामविलासजी केदारजी के गद्य से प्रभावित होकर, इनके प्रकाशन पर बल देते हैं—'तुम्हारा पत्र बहुत सुन्दर था। गद्यकाव्य। गद्य पर सुन्दर आधिपत्य। बाद में ये पत्र प्रकाशित होने चाहिए।' अपनी गद्य-प्रशंसा को केदारजी अपनी कविता को उपेक्षा महसूस करते हैं, तभी तो एक पत्र में लिखते हैं कि पता होता कि मेरे गद्य के आगे मेरी कविता को महत्त्व न मिलेगा तो मैं पत्र ही नहीं लिखता। ख़ैर अब तो ग़लती कर ही बैठे। अभी तक तो केवल रामविलासजी ही प्रशंसा करते थे, अब तो अनगिनत प्रशंसक हो जाएँगे। एक ग़लती तो यह की कि पत्र लिखे—जैसा कि उन्होंने खुद कहा है—और दूसरी ग़लती यह की कि इन पत्रों को छपने दिया—यह मैं कह रहा हूँ।

कविता की प्रशंसा पर खुश होना और गद्य की प्रशंसा पर चिढ़ना! आखिर क्यों? दोनों उन्हीं की संतति हैं। मुझे लगता है चूँकि केदारजी कविता के लिए हाड़-तोड़ किस्म की मेहनत करते हैं, उसके लिए कलकते हैं, उसे बार-बार पकड़ने की कोशिश करते हैं और वह बार-बार फिसल जाती है, पकड़ में कभी-कभी ही आती है—इसलिए इससे उन्हें प्यार की इन्तिहा तक प्यार है—मशक्कत से मिली है न! और गद्य! यह तो अनायास मिल गया है, इसलिए इसे वह इतना महत्त्वपूर्ण नहीं समझ पाते। केदारजी में कविता के लिए इतनी निष्ठा, तड़प और समर्पण है कि उसके सामने प्रिया प्रियंवद तक को महत्त्व नहीं देते, और यही उन्हें अपने गद्य की प्रशंसा पर खिझवाता है। कविता लिखते समय यदि कवि-प्रिया बिना कुछ कहे भी पलंग पर आ विराजती हैं तो केदारजी कहते तो कुछ नहीं पर उन्हें नागवार ज़रूर लगता है और इसकी निरीह,

शिकायत रामविलासजी से करने से नहीं चूकते। हालाँकि एक बार मद्रास से लिखते हैं—'अब गद्य ही गद्य दागूंगा।' पर भविष्यकाल के लिए किया गया यह संकल्प भविष्य की ही प्रतीक्षा में है।

इन दोनों मित्रों के गद्य को पढ़ने के बाद हिन्दी भाषा की अभिव्यक्ति और अभिव्यंजना-क्षमता का एक नया आयाम खुलता है। जो लोग अज्ञानवश या सिर्फ चालाकीवश यह कहते हैं कि हिन्दी अभी समर्थ भाषा नहीं बन सकी है—उनके लिए वैसे तो रामविलासजी का ही अकेला गद्य चुल्लू भर पानी मुहैया करा देता है—बशर्ते की उनमें तनिक भी हया बाकी हो, तो फिर दोनों की सम्मिलित गद्य-शक्ति की चकाचौंध में उनकी क्या स्थिति होनी चाहिए, कल्पना की जा सकती है।

इन पत्रों में लिखित भाषा का व्याकरण पानी भरता नज़र आता है। लगता हम उन्हें पढ़ नहीं रहे हैं, बल्कि सुन रहे हैं। तभी तो केदारजी पत्र लिखते-लिखते चौंककर पूछ बैठते हैं—'सुन रहे हो न?'

उम्र के लिहाज़ से वैसे तो दोनों मित्र बूढ़े हो चले हैं, मित्रता भी पचासा पार करके साठा के नजदीक पहुँच रही है, पर पत्रों में कहीं, इनके बुढ़ापे की झलक तक नहीं मिलती। उसमें तो यौवन की वही छलछलाती उमंग, यौवन का वही उल्लास, उत्फुल्लता, साहस, ज़िन्दादिली, संघर्ष और महाकाल को हड़काए रहने का दबंग स्वर ही गूँजता है। इन पत्रों से हम एक सार्थक और सम्पूर्ण जीवन जीने का रहस्य हस्तामलकवत् कर सकते हैं। ज़िन्दादिली तो इन पत्रों का प्राण है—पढ़िये और मन ही मन गुदगुदी से भीजते रहिये।

मित्रता एक महत्त्वपूर्ण जीवन मूल्य है—इसे हम इन पत्रों से ही प्रमाणित पाते हैं। मित्रता करने के पहले हमें अपने सम्भावित मित्र की कमज़ोरियों से परिचित होना अनिवार्य है। अगर हम उन कमज़ोरियों से भी उतना ही प्यार कर सकें जितनी उसकी अच्छाइयों से तब तो हमें मित्रता का हाथ बढ़ाना चाहिए, अन्यथा हाथ खींचे रहना ही दोनों के हित में है। अपेक्षा मित्रता का दूसरा बड़ा शत्रु है। मित्रता के बीच में इसे कभी नहीं आने देना चाहिए, इसके आते ही मित्रता शत्रुता में तब्दील होने लगती है। ये सारी बातें ये पत्र हमें बताते हैं। इन दोनों मित्रों की मित्रता, केदारजी की कविता के शब्दों को उधार लेकर कहूँ तो कहूँगा कि 'फल के भीतर फल के पके स्वाद' की-सी तृप्ति देती है—मन में बार-बार हुड़क-सी उठती है कि काश मैं भी ऐसी मित्रता जी सकता। हम भले ही ऐसी मित्रता न जी सकें लेकिन मैं अपने को बड़भागी मानता हूँ कि मैं ऐसी मित्रता को जीते देख रहा हूँ और उससे प्रेरित हो रहा हूँ—मनुष्य होने का और मनुष्य होकर जीने का रहस्य मेरे सामने खुल रहा है। मैं अन्दर तक मित्रता-रस से भीज और सीझ रहा हूँ।

दोनों मित्र-पुरुषों में—को बड़ छोट? कहत अपराधू।

दोनों मित्र एक दूसरे को पाकर धन्य हैं और गौरवान्वित हैं—यह इन्हीं की स्वीकारोक्ति है। मैं अपने को इनसे दुगुना भाग्यवान और गौरवान्वित महसूस करता हूँ कि मुझे दोनों गौरव-पुरुषों का अकुंठ स्नेह प्राप्त है। इन्हीं के साथ अगर मैं अग्रज तुल्य, इस यज्ञ के सम्पन्नकर्ता श्री शिवकुमार सहाय के स्नेह को शामिल कर लूँ तो मेरी गर्वोक्ति है कि—मो सम कौन इहाँ बड़भागी?

'मित्र संवाद' जिन-जिनके प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सहयोग से आप तक पहुँच सका, उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित न करना मनुष्यता का अपमान करना होगा। इसके प्रकाशक सहायजी के प्रति कृतज्ञता का कोई तुक नहीं है क्योंकि यह सब तो उन्हीं की माया है। लेकिन इसके मुद्रक शान्ति मुद्रणालय के रमेशजी ने जिस लगन और निष्ठा से अनेक असुविधाओं को सहते हुए इस काम को एक निश्चित समय-सीमा में सम्पन्न किया इसके लिए निश्चय ही मैं उनका आभारी हूँ। इम्पैक्ट के भाई राधेश्यामजी अग्रवाल ने इस पुस्तक के आवरण को अतिरिक्त तवज्जो देकर, अपनी कला से सजाया, सँवारा और सार्थक आकर्षण प्रदान किया—मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ।

इस पुस्तक के सम्पादन-प्रकाशन के दौरान मैं अपने कई मित्रों और सम्बन्धियों के पत्रों का सम्मान नहीं कर सका—इससे उन्हें जो तकलीफ पहुँची होगी, उसके प्रति मैं क्षमा-याचना के साथ कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। पत्नी श्रीमती सावित्री, पुत्र सौरभ और पुत्रियाँ श्रुति व स्मृति के प्रति भी इधर बहुत उपेक्षा बरती है। इनको मिलने वाले समय में से कटौती की है—दशहरे के अवकाश में मेरी प्रतीक्षा ही उनके हाथ लगी—इसलिए इनका ऋणी हूँ।

अन्त मैं यही मंगल कामना है कि इन दोनों श्रेष्ठ मित्र-पुरुषों की स्नेहिल छाया हम सबको आगे आने वाले अनेक वर्षों तक मिलती रहे। दोनों ही मित्रों को कर्मठ और सार्थक अस्सी वर्ष जीने के लिए हार्दिक बधाई और आशीष की आकांक्षा में विनत प्रणाम!

विजयदशमी, 1991, **—अशोक त्रिपाठी**

दो

'मित्र संवाद' का पहला संस्करण अक्टूबर, 1991 में प्रकाशित हुआ था। साहित्य भण्डार, इलाहाबाद से यह नया संस्करण 18 वर्ष बाद जनवरी 2010 में प्रकाशित हो रहा है। 1991 के संस्करण में उस समय उपलब्ध 25.4.1991 तक के पत्र प्रकाशित हैं। इस नये संस्करण में 25.4.1991 के पहले के 28 पत्र और शामिल किये गये हैं जो उस समय उपलब्ध नहीं हो सके थे। इन 28 पत्रों में रामविलासजी के 16 पत्र हैं और केदारजी के 08 पत्र। इनके प्रकाशन से संवाद में कहीं-कहीं जो गतिरोध था उसमें काफी हद तक गतिशीलता आ गयी है। रामशरण शर्मा 'मुंशी' के 04 पत्र हैं। मुंशीजी के इन

04 पत्रों के प्रकाशन से, इनके साथ केदारजी का एकालाप कुछ हद तक संवाद में तब्दील हो गया है।

25.4.1991 के बाद 97 पत्र इसमें और संकलित हैं। इनमें से रामविलासजी के 60 पत्र हैं और केदारजी के 37 पत्र अंतिम पत्र रामविलासजी का है जो 19.7.1991 का लिखा है। केदारजी का अंतिम पत्र 28.7.1998 का है। इसके बाद 20.8.1998 से लेकर 19.7.1999 तक के 06 पत्र केवल रामविलासजी के हैं। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि केदारजी ने पत्र लिखे ही नहीं। केदारजी ने रामविलासजी के सभी पत्रों के जवाब दिये हैं, पर वे उपलब्ध नहीं हो सके।

इस नये संस्करण में एक नया अध्याय 'परिशिष्ट' का जोड़ा गया है। इसमें रामविलासजी और केदारजी के उन पत्रों को संकलित किया गया है, जो 'मित्र संवाद' के 1991 के संस्करण के प्रकाशन के दौरान मेरी शंकाओं के समाधान या स्पष्टीकरण के लिए दोनों मित्रों ने मुझे लिखे थे। मैंने जो पत्र दोनों मित्रों को लिखे थे प्रयास के बावजूद, वे मुझे नहीं मिल सके। इसलिए 'परिशिष्ट' में केवल समाधान या सुझावपरक पत्र ही हैं—शंकापरक नहीं। इन पत्रों की संख्या-22 है—14 रामविलासजी के तथा 08 केदारजी के। इस तरह नये संस्करण में कुल 147 पत्र ऐसे हैं जो 1991 के संस्करण में नहीं थे।

'मित्र संवाद' के इस संस्करण के प्रकाशन के दौरान, दोनों मित्रों के पत्रों को फिर से पढ़ने का मौका मिला। इस पत्रों से दुबारा गुज़रना यह अहसास नहीं देता कि इन्हें तो पहले 3-4 बार पढ़ चुका हूँ। लगा कि जैसे पहली बार पढ़ रहा हूँ। चिर नूतनता की अनुभूति कराने वाले इन पत्रों से गुज़रना अपने आपको एक नयी अनुभूति के साथ आपको आविष्कृत करना भी है। जितना ही हम एक नये रामविलासजी और नये केदारजी को इसमें अनुस्यूत पाते हैं उतना ही अपने को कसने और परखने के लिए एक कसौटी और चुनौती भी पाते हैं। एक ओर जहाँ इन पत्रों में बहुत ही अनमोल-अछूता और अनुभव प्रसूत जीवन और चिंतन का गंभीर निचोड़ मिलेगा, बिना किसी औपचारिक भूमिका के सहज स्फुरण के रूप में, वहीं भाषा की ऐसी रवानगी मिलेगी, ऐसी-ऐसी उपमाएँ, रूपक, मुहावरे, शब्दों की अजब-ग़ज़ब गठन मिलेगी, बिना किसी बनाव-शृंगार के—कि क्या कहने। और ये सब आपको कब कहाँ और कैसे हस्तामलकवत् हो जायेंगे पूर्वानुमान नहीं किया जा सकता। ऐसी बेलौस और अकुंठ भाषा बड़े से बड़े नामीगिरामी गद्यकारों के यहाँ भी नहीं मिलेगी। क्योंकि यह कीमियागीरी का कमाल नहीं है। यह दिमागी पच्चीकारी की भाषा नहीं है—यह दिल की अतल गहराइयों से निकली सहजोन्मेष की भाषा है, अपने ठेठ देसी बनक और ठसक के साथ। यहाँ कुछ उद्धरण दिये जा रहे हैं बिना किसी हस्तक्षेप के, ताकि पाठक अपने तरीके से इनका आस्वाद ग्रहण कर सकें वैसे भी बकौल रामविलासजी 'गद्य को भाष्य की ज़रूरत नहीं है।' कविता और साहित्य पर ये टिप्पणियाँ 'अवस देखिये देखन जोगू' :—

- डियर वकील साहब कविता और तर्क में अंतर है।..........कविता की भाषा इंद्रियों की भाषा है। संगीत और मूर्ति विधान द्वारा कवि वह सब कह देता है जो तर्क द्वारा दार्शनिक नहीं कह सकता। (रा० वि० शर्मा : 25.12.1956)
- सांस का ज़ोर मेरी पंक्तियों में आवे, मेरी यही साधना है।

  (के० ना० अ० 5.12.1943)
- शुद्ध साहित्य की आवाज़ गलत है। इससे न जीवन का कल्याण होता है, न समाज का। फिर जब भौतिक जगत का ही अंश यह मस्तिष्क है तब हमारी विचार और भावधारा भी तो भौतिक जगत की अंश है। मानसिक जगत ऐसी कोई जगह है नहीं। फिर यह कहना कि उस जगत की ही सत्ता की वजह से यह भौतिक जगत स्थित है, सर्वथा भ्रम मूलक है। थोड़े में कहूं तो यही कहूंगा कि पिनक का साहित्य ही शुद्ध साहित्य है।.........वर्णहीन समाज की ओर अग्रसर करने वाला निर्वैयक्तिक साहित्य ही अपनी महत्ता रखता है। शेष साहित्य तो शून्य साहित्य है।

  (के० ना० अ० : 26.8.1947 का पत्र मुंशी को)
- तुम साहित्य में उस प्रक्रिया (आर्थिक प्रक्रिया) को घुमाव-फिराव के साथ रूप बदल कर साहित्यिक रूप में व्यक्त किये जाने की बात लिखते हो। मैं उसे साहित्यिक रूप में नहीं, जीवन के रूप में व्यक्त होने देना चाहता हूं। सम्भवत: यही मतभेद है। बिना ऐसे किये हमारी पिछड़ी जनता हमारे स्तर तक नहीं आ सकती। पहले वह यहां आ जाये फिर आगे बढ़िये। इसलिए आज का साहित्य जीवन को अधिक अपनाये और उसी के अनुरूप हो चाहे उसे साहित्यिकता खोनी ही पड़े, तो मैं लाभ ही लाभ देखता हूं।

  (के० ना० अ० 5: 18.10.1947)
- कविता में तस्वीर बननी चाहिए, सूक्ति काफी नहीं।

  (रा० वि० शर्मा : 17.4.1958)
- नयी कविता की समस्या दूसरे को स्पर्श न कर सकने की समस्या है।

  (के० ना० अग्र० : 24.2.1959)
- अच्छी कविता तभी बनती है, जब कवि उसी में डूब जाता है और आये हुए आषाढ़ी बादल की तरह बरस पड़ता है। मैं इतनी तन्मयता की अवस्था में—योगावस्था में—नहीं रह पाता। यह मेरे व्यक्तित्व की दुर्बलता है। मैंने अपने जीवन को इतने गहरे जा कर आज तक नहीं देखा, जिसका जिक्र तुमने आगरे में इस बार मुझसे किया था।

  याद है न। तुमने कहा था कि अतल में भी फूल खिला पाया जाता है। टनों पानी के बोझ के नीचे। वही फूल है सच्ची सुन्दर कविता।.........मैं वह फूल वाली

कविता नहीं दे पाता। पर निराशा नहीं हूं डियर! लालसा तो वैसी ही कविता लिखने की है। (के० ना० अ० : 13.3.1959)

- साहित्य में सत्य की प्रतिष्ठा होनी चाहिए, चाहे वह मेरे विरुद्ध हो या किसी अन्य के। (के० ना० अ० : 19.1.1970)
- कोई कविता हो वह वरण से पायी जाती है हरण से नहीं।........ यहां तो कविता वाले सोच-विचार से काम नहीं लेते। झट से पालने में पड़े बच्चे की तरह जो भी हाथ में आया मां का स्तन समझ चिचोरने लगते हैं।

  (के० ना० अ० : 29.10.1970)
- विचार भूमि पर निरन्तर रहने वाला व्यक्ति, जहां उसकी फसल चरता है, वहां वह भरपूर चरा भी जाता है। (के० ना० अ० : 10.11.1961)—संदर्भ : जब 'निराला की साहिय साधना' का दूसरा खण्ड पूरा करते-करते रा० विलासजी दुबले हो गये थे।)
- कविता कोई फैशन की नयी आयी साड़ी नहीं है कि जो चाहे देख कर आंख मुलमुलाने लगे। (के० ना० अ० : 14.12.1973)
- नई कविता के प्रवाह में हमारे कवियों की वर्णन क्षमता का ह्रास हुआ है।

  (रा० वि० श० : 6.4.1978)
- क्रांति की तरह कविता सुविचारित योजना और स्वत:स्फूर्त कार्यवाही का परिणाम होती है। इन दोनों का अनुपात हर कविता या क्रांति में एक-सा नहीं रहता।.......कविता अपना मर्म शब्दों के भीतर छिपाये रहती है और उस तक लोग धीरे-धीरे पहुंचते हैं। Never seek to tell thy love. Love never told can be. (रा० वि० श० : 9.11.1982)

कुछ और टिप्पणियाँ :—

केदारजी और रामविलासजी प्रचलित अर्थों में, प्रेम को जिस रूप में जाना समझा जाता है, उस प्रेम को नहीं समझ पाते—ऐसी घोषणा केदारजी करते हैं,पर सच्चाई कुछ और ही नज़र आती है—

'तुम्हारी समझ में प्रेम नहीं आता और मेरी भी समझ में प्रेम नहीं आता।' (के० ना० अ० : 11.4.1944) लेकिन आगे इसी पत्र में लिखते हैं—'आगरा के ताजमहल के संगमरमर पर अपना हाथ फेरना चाहता हूं और मुमताज की शीतलता को गरमाना चाहता हूं।'

केदारजी उन वकीलों में नहीं थे, जो मुवक्किलों को केवल चारा समझते हैं। रा० विलासजी ने पत्र लिखकर बुलाया कि 10 मार्च को शिवमंगल सिंह सुमन आ रहे है, वह भी आ जाएँ। 8.3.1945 को अपनी असहायता इन शब्दों में व्यक्त करते हैं—

'छोड़कर जाता हूं तो मुवक्किल मरता है।' क्योंकि उस दिन एक केस की बहस करनी थी।

- भाषा विज्ञान लिखों चाहे जो लिखो : तुम लिखोगे तो कमाल का। अब फुरसत ही फुरसत है तुम्हें। डटकर काम करोगे। अरे भाई एकाध कविता तो काँख मारो। (के० ना० अ० : 8.3.1956)
- वैज्ञानिक कवि हृदय होते हैं, वरना सूक्ष्मातिसूक्ष्म प्रकृति के स्पन्दनों को ग्रहण ही कैसे कर सकते और उनसे नियमों की खोज़ करते। डरविन क्या सभी वैज्ञानिक ऐसे ही होते हैं। परन्तु सौभाग्य तुम्हारा कि तुम उन लोगों के ग्रन्थ पढ़ लेते हो। हम हैं यहां कि भूसा खाते रहते हैं। (के० ना० अ० : 8.3.1957)
- किसी से मिले भी कि यों ही सटक आये। (के० ना० अ० : 24.3.1957)
- महादेव साहा ने जब केदारजी को रा० विलासजी के 1857 के काम पर कुछ लिखने को कहा तो इन्होंने रा० विलासजी को अपनी असमर्थता बताते हुए लिखा—'विला वजह' 57 के कान में तिनके से कुरेदना होगा।' (18.7.1957)
- नये साल की बधाई लो। इस वक्त सबेरे का सूरज बादलों का लिहाफ ओढ़े अपने आसमानी घर में शायद चाय पी रहा है। वहां कोई पकौड़ी बनाने वाला या मुंगौड़ा बनाने वाला नहीं है; इससे वह केवल चाय पी रहा होगा। अगर बादल जरा भी फटा तो वह फौरन धरती की ओर मुंगौड़ेवाली की दुकान तक आ जाएगा। (के० ना० अ० : 1.1.1958)
- घर में औरतें चूल्हा को गरमाये खुद गरम हो रही हैं। (वही) 1.1.1958 का पूरा पत्र ही भाषा के ऐसे ही टकसाली अंदाज़ से अँटा पड़ा है।
- हिन्दी के प्रकाशक निराला को चाभ बैठे। (के० ना० अ० : 11.8.1958)
- यहां गरमी रानी दिन में धूप की जलेबी बनाने लगी हैं। (के० ना० अ० : 7.5.1958)
- इस समय दीवाल घड़ी में ४.४५ हुआ है। फिर भी बाहर लू लपट मार रही है और जमीन की देह चाट कर पानी सोख रही है। (के० ना० अ० : 22.5.1966)
- गर्मी तो तेज धार की तरह लगती है और खून न बहा कर पसीने- पसीने कर देती है। पानी भी बरसता है तो जैसे मुरदों पर चांदी के गुलाबपाश से गुलाबजल छिड़का जा रहा है। हद्‌ हो गयी मेघराज तुम्हारी दया दक्षिणा। वह भी सरकारी हो गये हैं। (के० ना० अ० : 29.7.1966)
- यहां गरमी ऊंट पर चढ़ गयी है। (के० ना० अ० : 14.5.1969)
- सूरज ने 11 बजे दिन को अपनी मुड़िया निकाली तो हमने धूप लोकी और

कपड़े उतार कर नहाये; पर फिर वही मुंह चोरव्वल और अब भी नजर नहीं आ रहे गरम मिजाज सूर्य। (के० ना० अ० : 3.3.1982)

- दिन गरम होने लगा जैसे तुम्हारे घर का गरम हलवा। (के० ना० अ० : 23.2.1960)
- इधर चुनाव का दमकला दहाड़ रहा है—हटो बचो करके दौड़ रहा है। बांदा बैल को हुरेठता है या बैल उसे। देखो क्या हो।...... दिन तो धूप लपेटकर गरमाता रहता है। (के० ना० अ० : 20.1.1967)
- पंतजी को लखटकिया पुरस्कार मिला। अब सोने की डाल पर सुक बैठेगा। (के० ना० अ० : 1.5.1969)
- मेज पर रखा हुआ तुम्हारा बंद लिफाफा मेरी उंगलियों से खुलने के लिए लालायित पड़ा था। मैंने उसे अपने दिल की तरह खोला। मैंने पढ़ा नहीं—वह खुद ही बोलने लगा। (के० ना० अ० : 13.3.1959)

इस तरह के अनेक अंश इन पत्रों में बिखरे पड़े हैं। विषय-वस्तु के साथ-साथ भाषा की अनेक अर्थगर्मित, भावभरित, बहुरंगी छवियाँ, इन पत्रों में बिना किसी भाषाई पाखंड में सहज-स्वाभाविक रूप में उपलब्ध होती हैं।

ये पत्र हिन्दी साहित्य की अनूठी धरोहर हैं। सूचना-क्रांति के इस दौर में, आज संचार माध्यमों की बाढ़ में पत्र-साहित्य, साहित्य की विलुप्त प्रजाति में तब्दील होने की कगार पर है। ऐसे में इस विलुप्त होती प्रजाति को संरक्षित और प्रसारित करने की नीयत से मित्र-संवाद जैसी नायाब पूँजी को एक नये रूप में, कुछ नये पत्रों के साथ इसे तथा समूचे केदार-साहित्य ('पतिया' को छोड़कर) को फिर से प्रकाशित करने का जो स्तुत्य कार्य साहित्य भंडार के स्वत्वाधिकार श्री सतीष चन्द्र अग्रवाल ने किया है, इसके लिए वह सचमुच बधाई के पात्र हैं।

14 जनवरी, 2009 **अशोक त्रिपाठी**

दिल्ली

मित्र संवाद
भाग-एक

५८, नारियल वाली गली
लखनऊ,
२९-७-३५

प्रिय भाई केदार,

तुम्हारा कार्ड मिला। यथावकाश निराला जी को लेकर पं० शुकदेवबिहारी जी मिश्र के यहां कल सायंकाल गया था। निराला जी के लिखाये लेख पर उन्होंने हस्ताक्षर कर दिए हैं। पहले वाक्य पर उन्होंने आपत्ति की थी कि उनका आपसे कोई व्यक्तिगत परिचय न था। अस्तु, वह सब ठीक हो गया। किस जगह तुम कोशिश कर रहे हो? आशा है, इससे तुम्हारा काम चल जाय गा, साथ में भेज रहा हूँ।

और अपने विषय में लिखना हम सब लोग अच्छी तरह हैं।

तुम्हारा
रामविलास शर्मा

112, Maqboolganj
Lucknow
13-8-35

प्रिय भाई केदार,

तुम्हारा कार्ड मिला। कानपुर में रहकर अपना खर्च चलाने के साधन क्या तुम्हें कुछ मिले हैं? तुमने अपनी पुस्तक की भूमिका लिखने के लिए मुझे लिखा था या निराला जी को। इस समय तुम्हारा वह कार्ड पास नहीं। मेरे लिखने के विषय में तो पूछना अनावश्यक है। कहो गे तो लिख ही दूँगा किन्तु इससे तुम हास्यास्पद तो न बनो गे? तुम्हारी पुस्तक कहाँ से छप रही है, क्या Terms तै हुए हैं, in detail लिखो। ता० ७ को हम निराला जी के यहाँ से उठ आए हैं, ऊपर के पते पर। निराला जी अभी वहीं हैं। अपने हालचाल और लिखना। कोई कविता नई लिखी हो तो भेजना—बस।

तुम्हारा
रामविलास शर्मा

112, Maqboolganj

Lucknow
3-1-36

प्रिय मित्र केदार,

आज बहुत दिनों के संचित आलस्य को हठात् दूर कर तुम्हारा 15-11-35 का पत्र सामने रख तुम्हें उत्तर लिखने बैठा हूँ, अथवा एक नया पत्र लिखूं गा। तुम्हें पत्र लिखने का विचार सदा दिमाग़ में चक्कर मारा करता था, इसलिए तुम समझ सकते हो, इस देरी का कारण मेरी उदासीनता नहीं। प्रत्युत पत्र न लिखने से तुम्हारा मुझे सदा ही ध्यान रहा।

क्या नये वर्ष के लिए तुम्हें बधाई दूँ? पहले तो कुछ ऐसा दिखाई नहीं देता जो नया हो गया हो। ता० की सन् में अलबत्ता परिवर्तन हुआ है और लिखने में बहुधा पुराना सन् लिख जाता है। ठंड पहले की अपेक्षा कुछ अधिक ही पड़ने लगी है। दूसरे यह हमारे वर्ष का आरम्भ नहीं। विद्यार्थियों का वर्ष तो जुलाई या अगस्त से ही शुरू होता है। अथवा हम हिन्दुओं का चैत्र से जो बधाई देने के लिए अधिक उपयुक्त अवसर जान पड़ता है। फिर भी मैं समझता हूँ तुम नये उत्साह से नये प्रोग्राम बना कर काम करना नव वर्षारंभ के लिए न छोड़ते हो गे। यह तो प्रतिदिन प्रति सप्ताह, प्रति मास होना चाहिए।

तुम्हारा पत्र पूरा गद्य-काव्य है। लिखने के पूर्व संलाप, अंतस्तल, अंतर्नाद—आदि में से तो कुछ नहीं पढ़ा था? उसका बहुत-सा भाग Sentimental है—शब्द के निम्न अर्थ में। फिर भी उसके नीचे शायद तुम्हारा स्वच्छ हृदय देख सकता हूँ; तुमने लिखा है—'मैं तो स्वयं साफ हूँ।'—ऐसा विश्वास दिलाने की चेष्टा न करो, किसी को भी। शब्दों में ऐसा कहने से किसी को विश्वास हो गा भी, इसमें सन्देह है। मित्रता करो, मुझसे नहीं, जिस किसी से भी हो सके। 'जिन खोजां तिन पाइयाँ' को चरितार्थ करने का एक ही ढंग है। अपने को थोड़ा-थोड़ा व्यक्त करते हुए, दूसरों को भी जानने की चेष्टा करो। ये दुनियादारी की बातें हैं, पर उस दिन विक्टोरिया पार्क की बातें स्मरण कर विश्वास होता है, उन्हें तुम पहले से ही जानते हो गे। तुमने लिखा है—'न जाने कैसे तुम भी जीवन में समा गए।'—इस पर लिखा। मेरी अच्छाइयों को जानने के पहले धीरे-धीरे मेरी बुराइयों को पहले जान लो, जिससे बाद में उनका ज्ञान होने पर तुम मुझे अपने हृदय से सहसा निकाल न फेंको। सच जानो, एक मनचाहे मित्र की न जाने मुझे कब से कितनी आकांक्षा है, और उसके लिए यथाशक्ति चेष्टा की है। परन्तु अभी तक वह साध जैसी की तैसी बनी है। तुम यदि उसे पूरी कर सके तो इससे अधिक सौभाग्य और क्या हो गा?

बड़े दिन की छुट्टियों में घर चला गया था। दशहरे से मेरी मालकिन यहीं थीं—उन्हें छोड़ने गया था। तुमने अपनी सुखानुभूतियों का जिक्र न कर मुझे ललचा कर ही

छोड़ दिया। यहाँ तुम जब चाहो आ सकते हो, स्वागत के लिए दरवाज़ा सदा खुला है। लालकुवें के पास मेरा मकान है। ऊपर पते वाला। कानपुर मैं स्वयं अभी तो नहीं भविष्य में शायद आ सकूँ, तो लिखूँगा। तुम क्या होस्टल में खोजने पर मिलो गे?

पत्र के साथ थोड़ी-सी कविता भेज दिया करो तो संतोष हो जाया करे। मैं उनका आरम्भ किये देता हूँ–

गीत

देख रे क्षुद्र गान की तरी,
आज निःसीम वेदना-भरी;—

सिहर जड़ जग सागर में बही
लहर पर लहर जहाँ उठ रही
और सौ-सौ फन से फुफकार, साथ
झंझा भी प्रलयंकरी।

अंध खोजती सिंधु का पार
और गुरुतर होता गुरु भार
कौन वह दूर देश अज्ञात, ज्ञान की
परी जहाँ सुंदरी!

तुम्हारा
रामविलास

112, Maqboolganj
Lucknow
12-2-36

प्रिय केदार,

देखो कितने बढ़िया पेपर पर तुम्हें पत्र लिख रहा हूँ। गुलाब के फूल के नीचे उसकी लाजभरी गुलाबी में मैंने तुम्हारा नाम लिखा है। पर तुम कहो गे, कितने दिनों बाद! वास्तव में प्रायः एक महीने बाद। तुम्हारे [तुम्हारा] 15-1-36 का पत्र सामने है। कारण यही, कभी उचित अवकाश न था, कभी टिकक [टिकट] को पैसे न थे। अब भी निब टेढ़ा ही है। पर अधिक विलंब उचित न था। पारकर फाउंटेन पेन से मोती से अक्षर चुनने के बजाय इस पेपर पर मेरा रेडिंक निब और नीले रंग का यह गोदना ही सही। वास्तव में सफेद लिफाफे रहे नहीं, इसलिए प्रिया को पत्र लिखने को दिए मित्र के

तोहफ़े का प्रयोग तुम्हारे लिये।

तुम कहो गे, 'कितनी/ही बातें बनाओ; पर/यहाँ असर नहीं होने का।/अब की वह फटकार लिखूँ....' वास्तव में मुझे कुछ-कुछ भय हो रहा है; इस बार नाराज़ हो न जाने क्या लिखो।

तुमने लिखा है—'जितना एक झलक में जाना जा सकता है, उतना ही जीवन भर में।' यह किन्हीं पुरुषों के लिए सत्य हो सकता है, उनमें से मैं नहीं। मैंने अपने स्टैंडर्ड से तुम्हें लिखा था। यदि तुम उनमें से हो तो गर्व की बात है।

मालकिन के एक और छोटा मालिक होने वाला है, इसी अप्रैल के अन्त तक। घर की परिस्थितियाँ कुछ ऐसी हैं कि इच्छा होने पर भी उन्हें अधिक दिनों तक पास नहीं रख सकता। इसीलिये कुछ सुख के दिन बिता फिर उसी पुराने ढर्रे में पड़ गया हूँ।

बुराई बुराई से भी मिलती है, यह क्या तुम नहीं देखते। मुझे तो दुनिया में संगठित बुराई असंगठित अच्छाई को सताती देख पड़ती है।

मैं सबके पत्र हिफाज़त से रखता हूँ। संपादकों के भी, जिनमें प्राय: सभी से मैं घृणा करता हूं, पत्र मैं रख छोड़ता हूँ, जिससे मौका पड़ने पर ठीक बदला ले सकूँ।

इसी तरह बुराइयां जानते जाओ गे; पत्र तो देर में लिखा ही है। उस बुराई का उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं। यदि एक झलक में मुझे पहचान गए हो, तो क्या बुराइयाँ छिपी रही हों गी।

जनवरी के अन्त में किसी दिन मैं एक पड़ोसी की दाह-क्रिया में कानपुर गया था परन्तु अवकाश न होने और साथ में होने के कारण गंगा के इसी ओर से लौट आया। एक कानपुर के सज्जन से जो यहाँ हैं और साथ गए थे, केवल यह पूछ सका कि डी० ए० वी० कालेज किस ओर है। उन्होंने पश्चिम की ओर उँगली उठाकर कहा, उधर बड़ी दूर। कुछ चिमनियों का धुआँ उधर आकाश को धुँधला कर रहा था। मैंने सोचा वहीं कहीं होस्टल के कमरे में शायद तुम लेटे कोई पुस्तक पढ़ रहे हो गे या किसी का ध्यान कर रहे हो गे।

तुमने लॉ किया है या एम० ए० किया है, मुझे कुछ स्मरण नहीं, लिखना। अनेक कठिनाइयाँ हैं, इधर आना सम्भव नहीं दिखाई देता। परन्तु कभी आऊँ गा अवश्य, यह आशा किया करता हूँ।

दिन रात में क्या क्या करते हो, लिखना। प्रिया के ध्यान से पढ़ने में अधिक बाधा तो नहीं होती? तुम्हारे गीत का दूसरा बंद विशेष सुन्दर लगा। क्या लिख सकता हूँ, पत्र का उत्तर जल्दी देना।

तुम्हारा ही
रामविलाश शर्मा

112, Maqboolganj
Lucknow
3-4-36

प्रिय मित्र बालेंदु[1]

आज इतने दिनों के बाद लिखने बैठा हूँ। शायद परीक्षा समाप्त होने पर तुम घर चले गये हो गे; मैं नहीं जानता, तुम्हें किस पते से यह पत्र भेजूँ गा। तुम्हारा पत्र 9-3-36 का सामने है। रानी ने कैसा परीक्षाफल दिया? मालकिन ने पुत्र रत्न को जन्म दिया है।

माधुरी के मार्च-अप्रैल के अंकों में क्रमशः तुम्हारे लेख और कविता प्रकाशित हो चुके हैं। तुम्हें शायद मालूम हो। मैं माधुरी आफिस मुद्दतों से नहीं गया, न सम्पादकों के दर्शनों की इच्छा होती है। अपने आप तुम्हारी चीजें छप जाने से बड़ी प्रसन्नता का अनुभव हुआ, न जाने से जो Pricks of Conscience होते थे, उनसे पीछा छूटा।

निराला जी कुछ दिन अलाहाबाद रहे; उसके बाद मार्च के अन्त में यहाँ आ गए, तब से यहीं हैं। उनका उपन्यास प्रभावती लखनऊ के सरस्वती पुस्तक भंडार से निकल चुका है। 'निरुपमा' दूसरा लिख रहे हैं; अलाहाबाद शायद लीडर प्रेस में छपे गा। वहीं से उनकी गीतिका भी।

मैं गर्मी की छुट्टियों में यहीं रहूँ गा। जून के आरम्भ में शायद कुछ दिन को घर जाऊँ।

शेष कुशल। अपने और घरवालों की हाल देना।

तुम्हारा लेख मुझे और अनेक मित्रों को यहाँ बहुत पसन्द आया।

बस, तुम्हारा ही
रामविलास शर्मा

११२, मकबूलगंज,
लखनऊ
२४-९-३६

प्रिय मित्र,

तुम्हारा कृपा पत्र मिला। मैं इसे तुम्हारी कृपा ही समझता हूँ क्योंकि किसी पत्र की स्वयं मुझे आशा न थी। धैर्य से प्रतीक्षा करते मैंने भी लिखने का कष्ट न उठाया था। कानपुर तक तुम्हें मेरी कविता याद रही, धन्यवाद। सच तो यह है कि रोटियों और परवर की तरकारी का तुम्हारा स्मरण मुझे उससे अधिक सुख देता है। दुर्भाग्य से आँखों के कष्ट के कारण अब एक महाराज रख लिया है, अब वे आनन्द कहाँ?

---

1. केदारजी शुरू में 'बालेन्दु' उपनाम भी लिखते थे। [अ० त्रि०]

परन्तु अपनी स्मरण शक्ति का एक अद्‌भुत नमूना तुमने अपने पत्र में ही दिया है। तीसरे पेज में श्री बलदुवा का गीत उद्धृत करने की बात कह अपने लेखों की चर्चा छोड़ देते हो। चौथा पन्ना कोरा ही आया इसका अफ़सोस। श्रीमती होमवती का पत्र तुमने अनधिकार मेरे पास भेजा। वह भी चार लाइनों को छोड़ कोरा। पोस्ट आफिस को जो पैसे दिए जायँ उनका पूरा उपयोग होना चाहिए।

मालूम होता है, तुम अपनी कवितायें हमसे जल्दी छपवाओ गे। आशीर्वाद देने के मैं योग्य नहीं। तब तक यहीं से उन्हें मेरा प्रणाम स्वीकार करो।

यह शायद तुम्हारा आखिरी साल Law का है। सोच-समझकर Essay's लिखने पर तुलना। वैसे तो तुम्हारे इस कार्य से मुझे आनंद हो गा ही। सलाह देने से बढ़िया मैं बहुत कम काम कर सकता हूँ, इसमें अपनी ज्ञान गरिमा का मधुर अनुभव होता है, साथ ही हल्दी फिटकरी भी नहीं लगती। सलाह जब लिखने के बजाय मुँह से दी जावे तब तो और भी आनन्द।

'हिन्दी काव्य की कोकिलाएँ' पुस्तक शायद तुमने देखी हो, न देखी हो तो कोशिश करके देख लेना। उसमें एकत्र पंचम स्वर सुन पड़ें गे। चाँद की छ: महीने की फाइलें देखना अत्यन्त लाभदायी हो गा। तुम किस दृष्टिकोण से यह लेख लिखो गे, मैं नहीं जानता। मेरी समझ में उनके भावों का यथासम्भव वैज्ञानिक विश्लेषण हो तो अच्छा। पर्दे के उठने से किसी के कोमल भावों ने सहसा करवट बदली है, तो कोई उन्हें डंके की चोट पर कहती आई है, किसी ने रहस्यवाद द्वारा अपनी भावुकता को प्रकट किया है, अनेकों [अनेक] ने घरेलू अनुभवों की बात कही है। दिनेशनंदिनी के गद्य गीत शायद देखे हों, प्रचण्ड जाग्रति [जागृति] है। सुधा में मीरा मित्रा के गीत विशेष Representative होते हैं। एक में लिखा था–

प्रियतम एक बार बतला दो
कब होगा तेरा सहवास!

कल 'उद्‌गार' मिली। ज़ोर से चिपकाने से तीन पैसे से बैरंग हो गई थी। इस पुस्तक में व्यक्तिगत दु:ख का खुला उल्लेख है, उसके साथ सभी को समवेदना हो गी। मुझे भी है। कवि अपनी कला द्वारा इन्हीं निजी बातों के ऊपर हाबी हो जाता है। इसलिए दुखी आदमी को देख दया आती है। पर दुख की कविता पढ़ने पर आनन्द भी आता है। यहाँ कुछ कविताओं को छोड़ वे इस दुख के ऊपर नहीं उठ सकी हैं। ऐसी Sincere पुस्तक को काव्य आलोचना का विषय बनाना मुझे खटकता है, उसे तो Private circulation के लिए छपाना चाहिए था। परन्तु लेखिका में प्रतिभा है और वह मार्जित हो अच्छी कृतियाँ दे सकती हैं, इसमें संदेह नहीं। मेरी समझ से उन्हें छंद ज्ञान के लिए कोई छोटी पुस्तक पढ़ लेनी चाहिए, छंदों का नाम याद रखने के लिए नहीं, वरन् जो लिखती हैं उसे ठीक लिखने के लिए। वही तब उनकी अधिक सांत्वना करे गा और

आनन्द भी दे गा। कविता की पुस्तकें पढ़ें तो कुछ ही चुनी हुई—सुभद्राकुमारी का 'मुकुल', मैथिलीशरण का जयद्रथवध आदि। आज कल की कविताएँ पढ़ने से उनकी मौलिकता के लोप हो जाने का भय है। भाषा सुधारने के लिए गद्य की पुस्तकें भी पढ़ें। यह सब मैं इसलिए नहीं लिखता कि वे कवयित्री ही बन कर रहें या अन्य महत्त्वाकांक्षाएँ पालें; केवल इसलिए कि जो कार्य करती हैं, अधिक सुचारु ढंग से करें।

पृ० २ पर 'परिचय' कविता मुझे सबसे अच्छी लगी। निर्दोष और सुन्दर। ११—पर ऊषा की 'किरण कलम' मुझे बड़ी अच्छी लगती है। १४—पर आँसुओं से घावों का धोना सुन्दर भाव है। १७—पहेली का Burden बड़ा अच्छा आता है। २८—पर के दो बंद सुन्दर हैं। ३२—शायद इसी के लिए तुमने लिखा है—सुन्दर से भी आगे—हृदय सिन्धु का मोती आँसू, नैन सीप से निकल गया। ३६—पूजा की जून अच्छा मौलिक प्रयोग है। तुम चाहो तो यही बातें आलोचना में भी प्रकाशनार्थ लिख सकता हूँ।

6-10-36

29 सितंबर को निराला जी यहाँ आये। परसों अलहाबाद [इलाहाबाद] गये। वहीं से बनारस जाँय गे। 'गीतिका' और 'निरुपमा' छप गई हैं। मैं परसों से सर्दी जुकाम से अस्वस्थ हूं। इस समय भी जी अच्छा नहीं है। इस पत्र को यहीं समाप्त कर, उत्तर आने पर फिर लिखूँ गा।

तुम्हारा
रामविलास शर्मा

10-10-36

अभी तुम्हारा पत्र मिला। बड़ी ग्लानि हुई। बड़ा गधा हूँ। दिन-भर घर में रहता हूँ। शाम को ६ बजे बाहर निकलता हूँ। टिकट न होने से यह पत्र पड़ा रहा, यद्यपि रोज़ सबेरे उठ कर टिकट लाने की प्रतिज्ञा करता था। आज सबेरे चौबे जब स्कूल गया तो उसने कहा—मैं आज जल्दी डेढ़ बजे आऊँ गा और साइकिल पर जा पो० आ० से टिकट ला दूं गा। अगर वह न लाया तो मैं आज ज़रूर जाकर ले आऊँ गा और यह पत्र तुम्हें कल ज़रूर मिल जाय गा। बस क्षमा करना। बीबी [बीवी] भी नाराज़ है। अधिक नाराज़गी न सह सकूँ गा। निराला जी अलहाबाद हैं।

सॉनेट फिर

विलास

११२, मकबूलगंज
लखनऊ
१८-३-३८

प्रिय केदार,

मैं कल्पना नहीं कर पा रहा, तुम मुझसे कितना नाराज़ हो गे, मुझे कितनी गालियाँ सुनाई हों गी, मुझे कितना नीच समझा हो गा.... ।

जब तुम्हारा पत्र आया था, मैं बीमार था.... ।

बीमारी से उठने पर मैं फिर Thesis में ऐसा जुट गया कि हर रोज़ याद कर भी तुम्हें पत्र लिखने के लिए दिमाग को ठंढा न कर सका। बीच में दो पत्रिकाएँ युनिवर्सिटी में देखने इलाहाबाद भी गया था। वहां नरेन्द्र[1] से मिला और तुम्हारा ज़िक्र भी किया। कुछ झेंप झेंप कर बोल रहा था; शमशेर से मिलना चाहा परन्तु Mr. Dev, painter[2] के यहाँ देर होने से Leader Building[3] लौट आया और न मिल सका। इसका दुख है कि Hindu Boarding दो दफा गया परन्तु पहले से न मालूम होने से मिल न सका। यदि उन्हें पत्र लिखो तो लिख देना, मैं उनसे मिलने के लिए कितना उत्सुक था। बलदुआ[4] को पत्र लिखो तो लिख देना, मैं उनसे मिल कर बहुत प्रसन्न हुआ था और उन्हें याद किया करता हूँ।

Thesis खत्म कर Sidhant[5] को दे दिया है। अब देख कर दे दें तो फिर आखिरी बार छापूँ। क्या पत्र जल्दी दो गे?

तुम्हारा
रामविलास शर्मा

तुम्हारी कविताओं की नरेन्द्र से खूब तारीफ की थी, उसे ऐतबार ही न होता था!

रा० वि०

---

1. मार्च सन् 38 तक नरेन्द्र, शमशेर और केदार कवि रूप में काफी विख्यात हो चुके थे। तीनों आपस में मित्र थे।
2. चित्रकार देव इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अंग्रेजी के अध्यापक थे, बाद को प्रोफेसर हो गये थे।
3. लीडर बिल्डिंग में वाचस्पति पाठक के यहां मैं ठहरा था।
4. बलदुआ केदार के मित्र और उस समय के उदीयमान गद्य लेखक थे।
5. सिद्धान्त लखनऊ विश्वविद्यालय में अंग्रेजी के प्रोफेसर थे।

112, Maqboolganj
Lucknow
31-8-38

प्रिय केदार,

जरा साँस ले कर जल्दी ही मैं तुम्हें पत्र लिखने बैठा हूँ। दो महीने से समझो दौड़ में ही हूं जिससे साँस लेने की फ़ुर्सत नहीं मिली। जुलाई में एक महीने का युनिवर्सिटी में पढ़ाने का काम मिला। उसके बाद ही छः महीने का फिर मिला। दोनों दफ़े अलग अलग क्लासें पढ़ानी थीं। इसलिए Preparations आदि और कॉलेज के काम से व्यस्त हो जाता था। दूसरी बार तो ऐसा हुआ कि शाम को खबर लगी और दूसरे दिन से क्लास लेना पड़ा। इकदम से इसलिए बहुत काम करना पड़ा।

रूपाभ में कविताएँ देखी हों गी। तुम्हारी 'शारदीया' प्रकाश में आ गई। चकल्लस का भाभी अंक निकल गया। अंक–भाभी के ही साथ सार्थक है। देखा कि नहीं? निराला जी का 'देवर का इन्द्रजाल' मज़ेदार है। उच्छृंखल का विज्ञापन भी निकल गया है। दिवाली तक मित्रों का विचार है निकालने का।

अपने हाल लिखो। ख़ूब नाराज़ हो गए हो गे। इस आलस्य से इस समय इतनी आत्मग्लानि हो रही है कि लिख नहीं सकता बस, अन्तिम बार क्षमा करना। कान पकड़ता हूँ, अब देर नहीं हो गी। तुम्हारा पत्र बहुत सुन्दर था। गद्य-काव्य। गद्य पर सुन्दर आधिपत्य। बाद में ये पत्र प्रकाशित होने चाहिए। मुर्गा[1] भेजो।

रामविलास

112, Maqboolganj
Lucknow
6-9-38

.......आप भी क्या मौके से चिट्ठी लिखने बैठे थे जब जवाब आने ही वाला था। और आपकी समझदारी की क्या तारीफ करूँ। समझते हैं कि चिट्ठी पढ़ने की फुर्सत भी न मिले गी। जब कि दो दफ़े तो अभी ही उसे पढ़ गया हूँ....। तुम्हारे पत्रों में भला क्या रिसर्च करूँगा? जितने पुराने पड़ गये हैं, वह तक याद हैं। टेढ़े हर्फ़ों

---

1. केदारजी एक लेख। [अ० त्रि०]

वाले[1] मसूरी में मिले, रेल की पटली की [के] किनारे के....।

पद्य न मिलने से तुम्हारे गद्य-काव्य से ही सन्तोष, पर आगे ऐसी गुस्ताखी न करना। तुम गद्य बहुत सुन्दर लिखते हो, कुछ Discriptive Essays लिख रखो। जब प्रकाशन शुरू हो गा तब धड़ल्ले से! इकदम से हिन्दी संसार को सर पर उठा लें गे (चाहे वह हमें पैरों के नीचे ही कुचलना चाहे) !....

चकल्लस भिजवाने का प्रबन्ध करूँगा। उसी में उच्छृंखल का विज्ञापन है, तुमने उसका नक्कारा न सुना हो तो आश्चर्य क्या जब भाभी अंक ही नहीं देखा। थीसिस खुद छापने का दम नहीं, इसलिए एक साहब के मार्फत कुछ पैसा दे कर छापने के लिए दे रहा हूँ। वाकई, इस बला से आजिज़ आ गया हूँ....।

तुम्हें वकालत में दिलचस्पी है, यह सुन कर प्रसन्नता हुई। यहां तो युनिवर्सिटी जाना भी खलता है। आराम से लेटना, पढ़ना, लिखना, घूमना, सब पर प्रतिबन्ध लगा है। सोचता हूँ, क्या ऐसे ही जीवन गुजारना पड़े गा!....

[रामविलास शर्मा]

112, Maqboolganj, Lucknow
8.11.38

डियर केदार–

तुम्हारा पोस्ट कार्ड मिला। उसका उत्तर लिख रहा हूँ जैसे आज ही मिला हो। नरोत्तम इलाहाबाद है, वहीं रहे गा। उसका पता 259, Shahganj है (या c/o Pathak Leader) लेख और कहानी उसी के पत्ते से भेज दो। उच्छृंखल नवम्बर के अन्त तक निकल जाय गा। 'देवताओं की आत्महत्या' थोड़ी इधर उधर बदल कर दे दी है। आजकल D...d Thesis type कर रहा हूँ। इससे अभी इतना ही।

देर के लिए.... तु०

P. S. Send your things soon to Nagar

रामविलास

---

1. कुछ दिन केदार के दायें हाथ में तकलीफ हो गयी थी। तब वह बायें हाथ से पत्र लिखा करते थे। उन्हीं के टेढ़े हर्फों का ज़िक्र है। जुलाई 1943 में लखनऊ छोड़कर मैं आगरे गया तब मेरी अनुपस्थिति में वे पत्र नष्ट हो गये। प्रोफेसर सिद्धान्त के आदेश से मैं मसूरी गया था। मैं उनके परीक्षा कार्य में सहायता करता था। और वह मेरी थीसिस पढ़वा कर सुनते थे। केदार के पत्र वहाँ भी पहुंचते थे। केदार का घर बांदा के रेलवे स्टेशन के पास है। उनके गद्य-पद्य दोनों में रेल की पटरियों का ज़िक्र रहता था। अमृतलाल नागर लखनऊ से साप्ताहिक 'चकल्लस' निकालते थे और उनके सहयोगी नरोत्तम नागर 'उच्छृंखल' निकालने की योजना बना रहे थे।

259, Shahganj
alld
[20.12.38]

भाई,[1]

पत्र मिला। शर्माजी आ गए हैं। आपकी कसर है। तुरन्त चले आइए। पूरा उच्छृंखल मण्डल जमा हो जाए।

शेष बातें मिलने पर

२५ को जरूर।[2]

तुम्हारा
नरोत्तम

दोस्त–

२३ तक रहें गे। यह तार पाते ही घर से कोर्ट से कर्वी से लीडर प्रेस इलाहाबाद चले आओ।

आज सबेरे यहाँ आया हूँ।

तुम्हारा
रामविलास

मसानीलाल भवन,
सुन्दरबाग–लखनऊ
२६-७-३९

प्रिय केदार,

सब ठीक है। चिंता न करो। तुम्हारा पहला पत्र मिला तो सोच रहा था कि उत्तर लिखूँ कि नरोत्तम का पत्र आया कि वह यहाँ २१ को (शुक्रवार) आ रहा है। मैंने सोचा कि आ जाय तभी उत्तर लिखूं। जब तक वह रहा, लिखने की फुर्सत न मिली। कल जब चला गया, तब तुम्हारा दूसरा कार्ड मिला। मैंने तुम्हें शिवपुरी से एक पत्र लिखा था, सो मिला कि नहीं?

बापू अंक प्रेस की गड़बड़ी से नहीं निकला। उच्छृंखल मासिक के रूप में न हो [कर] अलग अलग पुस्तकें बन कर निकले गा। यानी प्रत्येक पुस्तक एक ही विषय

---

1. कार्ड का ऊपरी हिस्सा नरोत्तम नागर का लिखा है नीचे का मेरा

2. '२५ को जरूर' बड़े अक्षरों में नरोत्तम ने लिखा था।

पर। बापू अंक इस तरह दो भागों में निकले गा। एक Study नरोत्तम ने लिखी है जो खुद एक किताब हो जाय गी। पुस्तक की कीमत १) हो गी। १) प्रवेश फीस देकर स्थायी ग्राहकों को ॥) में मिले गी। सदा की भाँति इस स्कीम से भी नरोत्तम को बड़ी-बड़ी आशाएँ हैं।

मैं एक साल के लिए युनिवर्सिटी में फिर काम कर रहा हूँ। ९ सितम्बर को कुछ किताबों की आलोचना ब्राइडकास्ट करने का निमंत्रण मिला है। शायद अनामिका, युगवाणी, और प्रवासी के गीत पर बोलूँ।

तुम्हारी कुल कविताएँ कितनी हुईं? लिखते रहो ५-६ महीने में रुपया इकट्ठा कर छपायें गे। कुछ नया लिखा हो तो भेजो।

कल पानी खूब बरसा है। आनन्द है।

तु० रामविलास

Telegram : 'Chakallas' Lucknow

CHAKALLAS

(Weekly Magazine)

The only exponent of the lighter vein in Hindi Journalism
with distinction

GOOD HUMOUR IS THE
HEALTH OF THE SOUL
—STANISLAUS
Ref. your letter of 28-7-39
9 P.M.

Masani Lal Bhawan
Sunderbag, Lucknow
13-8-39—8 P.M.

प्रिय केदार,

तुम्हारा पत्र मिला। यहाँ इस क़दर बादल थे कि पत्र ही न लिख सका। अब भी आसमान में छाये ही रहते हैं। शमशेर का पत्र आया था और उसने इलाहाबाद के बारे में भी यही लिखा था।

शायद अपना पत्र तुम खुद पढ़ो तो अब आश्चर्य करो। आख़िर इतना रंजोगम सिर्फ इसलिए कि उच्छृंखल बंद हो गया और वह भी केवल मासिक पत्र के रूप में। नागर का पत्र आया है कि सितम्बर में वह तीन किताबों का सेट निकाल रहा है। कीमत १)

होगी फी किताब १) दे कर मुस्तकिल ग्राहक बनने वालों को फी किताब ॥) [आठ आना] में पड़े गी। मैं समझता था कविता तुम मेरे लिए लिखते हो। पब्लिसिटी का कोई साधन न होने पर ये पत्र तो हैं, इनमें तो लिखा करो गे लेकिन मालूम होता है कि पत्रों में भी तुम्हारा गद्य काव्य समाप्त हो गया। इस पत्र में तुमने वह छायावादी वेदना प्रकट की है कि महादेवी वर्मा भी मात हो जायँ। वाह मर्दे, तेरा लिखना न लिखना अगर एक मासिक पत्र के निकलने न निकलने पर निर्भर है तो तेरा न लिखना ही अच्छा। मेरी खुद की बहुत सी स्कीमें हैं लेकिन अभी नहीं बताऊँ गा। जरा तुम्हारा मूड ठीक हो जाय।

अमृत के यहाँ बैठा हूँ। हजरत हैं नहीं नौकर से कमरा खुलवा लिया है। पास पढ़ीस जी भी हैं। गोमती की तरफ से ऐसी बढ़िया हवा आ रही है कि कुछ गम्भीर लिखना नाममुमकिन मालूम होता है। मैंने एक भी कविता नहीं लिखी। प्रेमचंद पर २ अध्याय लिखे हैं। आजकल खाने कसरत करने और सोने के सिवा और कुछ अच्छा नहीं लगता।

तुमने जो कुछ लिखा हो ज़रूर भेजो। तुम्हारा 'चंदगहना' मालवीय जी (मेरे मित्र) को बेहद पसन्द है। कविता का ज़िक्र छिड़ते ही वह उसका नाम लेते हैं। बुरी तरह उनके दिल में तुमने घर कर लिया है।

मोटे से नहीं मिल सका। आओ तो लखनऊ। बीबी [बीवी] से ही मिलने के बहाने आओ।

तुम्हारा रामविलास शर्मा

आपका [आपकी] चंदगहना मुझे भी बेहद पसन्द है। यहाँ तक कि मैंने 'रूपाभ' में जो कुछ छपा था वह भी देखा। —पढ़ीस[1]

मसानीलाल भवन, सुन्दरबाग,
लखनऊ
[सितम्बर १९३९]

प्रिय केदार,

ऐसा लगता है जैसे अभी कल ही तुम्हारा कार्ड आया है और मैं उसका जवाब लिखने बैठा हूँ। उस पत्र में तुम्हारे हाथ की लिखी तारीख देखो तो अचम्भे में पड़ गया। न जाने कब से कल-कल करते आज सबेरे लिखने बैठा हूँ।

---

1. पं० बलभद्रप्रसाद दीक्षित 'पढ़ीस'—अवधी के क्रान्तिकारी कवि और लेखक। यह अंश पढ़ीस जी ने डॉ० रामविलासजी के इसी पत्र के ऊपर के शेष हिस्से में लिखा था। [अ० त्रि०]

सबेरे उठ कर घूमने जाता हूँ। उसके बाद एक घंटा अखबार पढ़ता हूँ। उसके बाद थोड़ी देर तक कुछ अपना पढ़ना, उसके बाद कालेज का काम। ८ बजे उठ कर—कसरत—नहाना—खाना—सवा दस बजे कालेज। ढाई बजे आकर खाना। कुछ पढ़ना बच्चों को पढ़ाना। फिर सोना। सोकर आध घंटे पढ़ना—घूमना—रात को प्रेमचंद वाली किताब लिखना। आज कल जीवन की बैलगाड़ी इसी गति से चल रही है।

निराला जी साहित्य संमेलन में साहित्य परिषद् के सभापति हुए हैं। मुझसे भी वहां चल कर एक पेपर पढ़ने को कहा है। नरोत्तम भी वहाँ रहे गा। अमृत भी जाय गा। तुम भी आओ तो अच्छा रहे। मैंने सोचा है 'हिन्दी साहित्य और राजनीति' पर बोला जाय—हिन्दुस्तानी राजनीति की कमज़ोरियाँ, क्या साहित्य उससे सहानुभूति रख सकता है? और हि० राजनीति के घातक प्रभाव से अपनी रक्षा कर साहित्य ने राजनीतिज्ञों के चलने के लिए एक स्वतंत्र और आत्म-सम्मान युक्त मार्ग छोड़ दिया है।

कविताएँ ज़रूर भेजो। जितनी भी लिखी हैं। आजकल अमृत का कुछ हाथ माधुरी में है। हो सका तो एक आध दिसम्बर के अंक में जा सकें गी। नवम्बर के अंक से 'हमारे नये साहित्यिक' एक सीरीज़ अमृत शुरू कर रहा है। पहला लेख मैंने 'बलभद्र दीक्षित' पर लिख कर दिया है। सितम्बर वाली में प्रेमचंद पर एक लेख मेरा निकला है। तुम कोई Humorous sketch या लेख माधुरी के लिए भेजो। पैसा भी दिलायेंगे। Sex को खुले रूप में avoid करते हुए। कुछ कुछ जैसे 'अमरूद' था। Reflective-reminiscent—local colouring लेता हुआ। जैसे अक्सर तुम्हारे पत्र होते हैं। उत्तर जल्दी देना।

तु०
रामविलास

112, Maqboolganj
Lucknow
18-10-39

प्रिय श्री केदार दोस्त,

तुम्हारी चिट्ठी मिली। न लिख सकने योग्य रहने पर भी लिखवाने के लिए, लिखने वाले को भी धन्यवाद। थीसिस में फँसा रहने से जल्दी जवाब न दे सका। उम्मीद है दिसम्बर के अन्त तक सब खत्म हो जाय गा। उधर झाँसी आऊँ गा और तुम्हें देखने भी। केन देखने की बड़ी इच्छा है। निराला जी मेरे उस मकान में रहते हैं, जिसमें तुम मुझसे मिले थे; मैं पास के दूसरे मकान में। बीवी-बच्चों के साथ। चौबे मजे में हैं।

तु०
रामविलास

TELE. 'UCHCHHRIKHAL', ALLD.

UCHCHHRINKHAL

(MONTHLY MAGAZINE)

THE ONLY AGRESSIVE PUBLICATION AMONG THE PROGRESSIVE ONES

DEVOTED TO SEX, PSYCHOLOGY AND LITERATURE

Ref. No........ २१-२-४०

कैलाशचंद्र दे लेन—मकबूलगंज

लखनऊ

प्रिय केदार,

सोचते-सोचते कि फुर्सत मिले तो लंबा-सा पत्र लिखूँ—यह दिन आ गया। तुम्हारी दूसरी चिट्ठी भी आ गई। तुम्हें चिट्ठी लिखने की बात रोज़ सोचता ज़रूर था। इधर धर्मपत्नी जी कुछ बीमार हो गई थीं—बच गईं—अब सब ठीक है।

अब भी फुर्सत में नहीं लिख रहा। छुट्टियों के बाद आज कालेज खुला है। खाना खा कर नींद लगी है। इस बसंत में नव जीवन की जागृति निद्रा में होती है। धूल उड़ती है और गर्मी आ रही है। दिन-रात के पहरों में ढूँढ़ने से शायद कहीं वसंत मिले।

नागर कलकत्ते गया था। वहाँ से उसका एक पत्र आया था—मालूम नहीं वह अब वहाँ है या नहीं। मैंने प्रेमचंद पर अपनी किताब लिख ली है और शायद एक महीने में छप जाय गी। तुम्हारा उपन्यास नहीं देखने को मिला। तुम्हारी बहन के विवाह में आने की कोशिश करूँगा यद्यपि उस समय तुम्हें फुर्सत तो क्या हो गी? बहुत दिनों से एक कविता की किताब लिखने की सोच रहा हूँ। शायद मार्च तक खतम कर डालूँ।

मातावृत[1] की Review भेज सकते हो। बांदा का जो हाल हो लिखो।

तु०

रामविलास

अच्छी चिट्ठी लिखो गे तो जवाब जल्दी पाओ गे। हम लोगों ने जो 'Crime'[2] के उपन्यास के बारे में बात की थी, लिखो तो उसके प्रकाशन के बारे में प्रबन्ध कर दूँ गा।

---

1. मातावृत—नरोत्तम नागर की व्यंग्य पुस्तक ।
2. क्राइम सम्बन्धी कोई जासूसी उपन्यास लिखने की योजना थी।

बाल साहित्य संघ

बच्चों को मनोरंजक, राष्ट्रीय और वैज्ञानिक
साहित्य देने की नई योजना

सं०–

K. C. Dey Lane
मकबूलगंज
लखनऊ
२७-५-४०

प्रिय केदार,

जब तक तुम्हारे पहले पत्र के उत्तर की तैयारी कर रहा था तब तक तुमने एक दूसरा और भेज दिया। मैं बहुत दिनों से एक कविता की पुस्तक आरम्भ कर रहा था परन्तु उसके श्री गणेश की शुभघड़ी दूर ही खिसकती जा रही थी। उसका समर्पण बड़ी मुश्किल के बाद अब लिख पाया हूँ। इसलिए आशा है कि अब शीघ्र ही चल निकले गी। इसके कुछ अंश तुम्हें भेजना चाहता था इसीलिए बिलम्ब हुआ। परसों दीक्षित (पढ़ीस) जी की लड़की की शादी थी। बहुत से साहित्यिक और कांग्रेस के कार्यकर्ता पधारे थे। निराला जी भी गए थे।

मेरी प्रेमचंद वाली पुस्तक तो समाप्त कब की हो गई थी परन्तु प्रकाशक महाशय न जाने किस क्षीरसागर में सो गए कि तब से खबर ही न ली। मैं भी कुछ उदासीन-सा पड़ा रहा।

श्रीमती जी एक विवाह में उन्नाव गई हैं जिससे गिरस्ती [गृहस्थी] का यह हाल है कि आँगन में अँगीठी पर दाल चढ़ी है और मेरे हाथों में पसीना चुचुआ रहा है और यों तुम्हें कार्ड मिलते ही पत्र लिख रहा हूँ।

आजकल मैं अपनी उसी कविता पुस्तक 'अवतार' पर जुटा हूँ। यह एक प्रकार का प्रबंध काव्य है पिछले आन्दोलन को लेकर लिख रहा हूँ। गांधी जी अवतार हैं। अभी इसके बारे में और किसी को कुछ न लिखना। इलाहाबाद से आते-जाते लोगों से नरोत्तम का समाचार मिलता है परन्तु पत्र नहीं आया।

यह समर्पण तुम्हारे लिए ही है।

अवतार....
एक सतत संघर्ष,
बंधु उड़ते झंझा से मास-मास दिन वर्ष
वेदना दुख दारिद्र्य शोक में भी अक्लांत,
—नैश निर्धूम लपट जैसे मसान में—

अप्रतिहत चेतना सहन करती कठोर आघात।
कौन वह जीवन से प्रिय जीवन का आदर्श?
क्रुद्ध जब ज्येष्ठ प्रभंजन, स्रस्त पत्र, संत्रस्त
                धरित्री धूलिभरा आकाश
कुसुम बिखरा समीर में गंध,
धूलि में मिल जाता भावी बसंत
                का दूत
पूर्ण कर कौन अमर उल्लास?
अनागत की असंख्य संतति में बन उत्कर्ष
चिरंजीवी हो यह संघर्ष!

बहुत दिनों के बाद कविता लिखनी शुरू की है। पहले से इन पंक्तियों में काफी परिवर्तन जान पड़ना चाहिए यद्यपि मुझे जान नहीं पड़ता। तुम अपनी राय लिखना।

शेष कुशल।

तुम्हारा
रामविलास

कैलाशचंद्र दे लेन—सुन्दरबाग,
लखनऊ
३०-१२-४०

प्रिय केदार,

पत्र मिला। आनन्द हुआ। अपनी-अपनी मुसीबत सबके साथ है। यही देखो, पत्र लिखने के लिए भी कठिनता से समय निकाल पाता हूँ। आज रेडियो पर निराला जी की Talk है। पता नहीं तुम सुनो गे या नहीं।

चौबे आज काशी गया है। एम० ए० के एक पेपर के लिए थीसिस लिख रहा है, उसी के लिए पुस्तकें देखने। 'हंस' वालों से 'प्रेमचंद' पर बातचीत चल रही है। उन्हें पुस्तक भेज दी है। उसी को ठीक करने में इधर लगा हुआ था। ६ जनवरी को भारतेन्दु पर रेडियो से Talk है, कल उसे लिखना है। जनवरी के 'हंस' में शरत् के उपन्यासों पर मेरा एक लेख छप रहा है। पढ़ना। यूरुप के साहित्य का आदि से अध्ययन कर रहा हूँ। उस पर पुस्तक लिखने का विचार है। अपनी रचनाएँ भेजो तो कुछ कविताएँ मैं भी भेजूँगा।

तुम्हारा
रामविलास शर्मा

लखनऊ। सुन्दरबाग–के० सी० डे लेन
१२-७-४१

केदार,

तुम्हारा कार्ड मिला। कई महीने पहले तुम्हें एक चिट्ठी लिखी ती, परन्तु उसका उत्तर न मिला। आलस से फिर न लिखा। [तुम] मुझे भूल सकते हो लेकिन मैं तो तुम्हें सदा याद करता रहता हूँ। भविष्य में मासिक पत्रिकाएँ निकालने के जो आयोजन बना करते हैं, उनमें शेष [शीर्ष] लेखक का स्थान तो तुम्हें ही प्राप्त है। मैं तुम्हारी रचनाएँ पढ़ता रहता हूँ और सचित्र वार, तूफान[1] आदि में भी कुछ देखा था। तुम्हारी कविताओं का Rhythm मुझे अब भी टूटा हूआ मालूम होता है। चौबे[2] अखाड़े जाता है। हिन्दी में एम० ए० कर लिया है। मालवीय जी तुम्हें बहुत याद करते हैं। पुत्र सं० ४ है। आजकल पुरवाई के झोंकों पर सफेद बादल उड़े जाते हैं, पर बरसते नहीं; नाज महंगा है। तुम कुछ Essays क्यों नहीं लिखते? मैंने तुम्हें जो Essays की किताब दी थी, वह पढ़ी या खो दी?

सबको नमस्कार।

तुम्हारा
रामविलास

सुन्दरबाग, लखनऊ
१०-९-४२

प्रिय भाई,

एक पत्र भेजा कोई उत्तर नहीं। अभ्युदय में अपने Rural Sketches क्यों नहीं भेजते। तुम्हारी कविताएँ मैंने नरोत्तम[3] के पास भेज दी हैं। मैंने हंस में वीरेश्वर[4] जी की एक कविता देखी। बहुत पसन्द आई। तुम मुझे उनका पता भेज सकते हो तो भेज दो। उन्हें कविता लिखने के लिए उकसाओ। लखनऊ Radio से 'नये जाविये' (New Angles) कह कर एक प्रोग्राम शुरू हुआ है–once a moth. उसमें नये ढंग की चीजें[5] Broadcast की जाती हैं। तुम मुझे अपनी कोई बढ़िया Rural Sketch या Calender सुन्दरी-सी चीज, या माधुरी में 'अमरूद' सा criticism भेजो। छोटा (4 mts तक का) और सरल, हास्य-व्यंग्य पूर्ण। ज़रूर। अभ्युदय में बराबर लिखो। मैं भी लिखूँ गा।

तु०
रामविलास

---

1. 'सचित्र—वार', 'तूफान' आदि उस समय के साहित्यिक पत्र हों गे।
2. चौबे—मेरे भाई रामस्वरूप।
3. अभ्युदय में कुछ समय के लिए नरोत्तम नागर काम कर रहे थे।
4. वीरेश्वर वकील थे, बांदा में ही रहते थे, कुछ समय तक प्रगतिशील लेखकों के साथ थे।
5. नये ढंग की चीजें—हिन्दू, उर्दू के प्रगतिशील लेखकों की रचनाएं।

१६-९-४२

प्रिय केदार,

पत्र मिला और 'समोसे' भी। 'समोसे' मज़ेदार है। Radio के लिए ठीक हों गे या नहीं, कह नहीं सकता। average listener को पंत नि० [निराला] में उतना interest नहीं जितना हमें। मैं इसे दिखा लूँ गा। न ठीक हुआ तो अभ्युदय को भेज दूँ गा या हंस को। तुम लिखते रहो। कोई ऐसी Skit भेजो जिसमें average educated listener interested हों—व्यंग्य और हास्य लिये—शैली जैसे किसी को कोई चीज़ सुना रहे हो। वीरेश्वर जी ने अब तक कितनी कविताएँ लिखी हैं, और वे कहाँ छपी हैं या मिल सकती हैं। उनसे कहिए कि 'लेखनी दधीची ले कर में' दूसरों के लिए ही है क्या? करवी में निराला जी सख़्त बीमार हैं। पं० रामलाल गर्ग के यहाँ ठहरे हैं। उन्हें देख आ सको और मुझे हाल लिखो तो बड़ा अच्छा हो। मैं भी बाँदा आने की कोशिश कर सकता हूँ। लेकिन तुम उन्हें invariably देख आओ। शेष कुशल।

तु०
रामविलास

१७-९-४२

प्रिय केदार,

आज नरोत्तम का पत्र आया है—निराला जी इलाहाबाद में हैं। मैंने तुम्हें कर्वी[1] जाने के लिए लिखा था, उसकी जरूरत नहीं रही। कद्दू शाह के समोसे[2] नरोत्तम को भेज रहा हूँ। उसे मैटर की ज़रूरत है।

तु०
रामविलास

के० सी० डे लेन—सुन्दरबाग
लखनऊ
२२-९-४२

प्रिय केदार,

मैं नरेन्द्र के लिए एक आधुनिक कविताओं का संग्रह कर रहा हूँ। तुम्हारी और श्री वीरेश्वर की रचनाएँ—सब एक साथ—देखना चाहता हूँ जिससे ठीक चुनाव हो सके। कहो ये कैसे संभव हो? इधर आ तो नहीं रहे हो? अगर आओ तो सब लेते आओ।

---

1. कर्वी में कुछ समय के लिए निराला थे।
2. 'कद्दू शाह के समोसे'—केदार की कोई व्यंग्य रचना।

'रूपाभ' में एक श्री रामदुलारे की कविता चंद्रग्रहण छपी थी। उनका पता क्या तुम्हें मालूम है?

तु०

रामविलास

संग्रह छपने में अभी विलम्ब हो गा ही। अगर नये-नये ढंग की कुछ कविताएँ और लिख सको तो बेजा नहीं। तुम्हारी १० कविताओं तक लेना उचित समझूँ गा।

रा० वि०

११-१-४३

प्रिय केदार,

तुम्हारा लेख पत्र आदि मिले। यहाँ एक बहुत दु:खद घटना हो गई। ८ जनवरी की रात को स्वर्गीय बलभद्र दीक्षित जी[1] के लड़के बुद्धिभद्र का भी देहांत हो गया। खेतों में सर्दी लग जाने से निमोनिया हो गया था। केवल पाँच दिन बीमार रहे। बीमारी की खबर पा कर मैं गया लेकिन विलम्ब से पहुँचा, भेंट न हो सकी। मौखिक सहानुभूति के बदले मैं चाहता हूँ कि उनके मित्र उनके परिवार के लिए कुछ मासिक बचाया करें, परन्तु इसका विज्ञापन न होना चाहिए। यह अपने मित्रों तक ही रहे। उनके परिवार में बुद्धिभद्र तथा कक्कू[2] की विधवा स्त्रियाँ तथा पाँच छोटे बच्चे हैं।

तुम्हारा

रामविलास

Ram Bilas Sharma,
M.A. Ph. D.
Dept. of English
LUCKNOW UNIVERSITY

१०-२-४३

प्रिय केदार,

तुम्हारा पत्र मिला। आश्वासन मिला। किन शब्दों में अपने हृदय के भाव प्रकट करूँ?

---

1. बलभद्र दीक्षित पढ़ीस—अवधी के कवि और हिन्दी के समर्थ गद्य लेखक। बुद्धिभद्र सरोद बजाते थे, कुछ दिन पिता, पढ़ीस जी, के साथ बॉम्बे टाकीज़ में काम कर आये थे। फिर पिता पुत्र लखनऊ के देहाती कार्यक्रम का संचालन करते थे। बुद्धिभद्र ने बच्चों के लिए कुछ अच्छी कहानियां लिखी थीं।
2. कक्कू—पढ़ीस जी।

'साहित्यिकों के परिवारों पर यदि परमात्मा गाज गिराता है तो हम उसे रोकें गे ही।' इस वाक्य को पढ़ा और फिर पढ़ा। अब याद हो गया है।

सच्ची बात यह है कि मुझे तुम पर गुस्सा आ रहा था। मन कहता था—केदार को रुपये के लिए लिखा तो कम्बख़्त सोंठ हो गया। पत्र का उत्तर तो देता।

अब साबित हो गया यह मेरा अहमकपन था। तुमसे ऐसे ही पत्र की आशा थी। रुपये पैसे की बात बाद को। तुम्हारा वह वाक्य नहीं भूलता। इसी Spirit में हिन्दी की विजय है। बिना इसके न हिन्दी है, न हम हैं। तुम मेरे हृदय के बहुत निकट थे। अब उसमें मिल कर एक हो गये हो। मुझे दृढ़ विश्वास है कि जीवन की यह झलक चिरस्थायी हो गी।

'कक्कू' की मृत्यु ने अनेक लेखकों की प्रतिभा को या उनके सोते हुए मनुष्यत्व को जगा दिया है। नरोत्तम ने मुझे इधर इतने सुन्दर पत्र लिखे हैं, जिनकी मैं स्वप्न में भी आशा न करता था। मेरा नरोत्तम से काफी मतभेद था। परन्तु उस तरह के मतभेदों के ऊपर वह मेरे हृदय से आ मिला है—कक्कू की मृत्यु के बाद।

तुम्हारा लेख माधुरी में छप गया है। एक हफ्ते में अंक तुम्हें मिल जाय गा। 'आग आँसू और जीवन की कहानी' तुमने बहुत अच्छा लिखा है। अभ्युदय में तुम्हारी चीजें पढ़ता रहा हूँ, हंस में भी। कहीं-कहीं दृष्टिकोण आदि से थोड़ा-सा असहमत हूँ। परन्तु तुम्हारी चीज़ें मुझे बहुत पसन्द हैं। 'प्रगति अंक' के लिए मैंने एक लेख भेजा है—'हिन्दी में प्रगतिशील साहित्य'। उसमें तुम्हारा उल्लेख है। लोकयुद्ध में हिन्दी कवियों पर लिखा था। उसी का नरोत्तम ने उल्लेख किया था। कटिंग भेज रहा हूँ। वापस कर देना।

आज चुन्नी-उच्चन (बुद्धिभद्र) का छोटा भाई और उसका चचेरा भाई शिवबिहारी यहाँ पर हैं। मैं कालेज नहीं गया। सबेरे से बैठा बातें कर रहा हूँ। मेरा विचार दीक्षित पिता पुत्र पर एक पुस्तक लिखने का है। आशा है, यह मेरी सब पुस्तकों से बढ़िया हो गी।

तुम कविता में 'नारी' पर लिखना कुछ कम कर दो। गाँव देहात पर अधिक लिखो और छंद-बद्ध कविताएँ भी अधिक लिखो। काटो कोटो काटो करवी मुझे बहुत पसंद है। रेखाचित्रों में विषय की गम्भीरता और होना [होनी] चाहिए। अर्थात् कोई विशेष सामाजिक तथ्य सामने रखा जाय। 'लौंग' पसंद है लेकिन जरा हल्की चीज़ है। अभ्युदय में भेज दूँ गा। नये जाविये में जो चीज़ें जाती हैं उनके बारे में अनेक कठिनाइयाँ हैं। इसलिए 'लौंग' न जा सकी तो नाराज़ न होना। और ग्रामीण जीवन को लेकर भी स्केच लिखो। इनका संग्रह युद्ध के बाद जरूर निकले गा। नरेन्द्र और मैं एक प्रगतिशील कविताओं का संग्रह निकालने जा रहे हैं। तुम्हारी कविताओं में ५ से १० तक रहें गी। अपनी पसन्द लिखो। वीरेश्वर की जितनी कविताएँ मिल सकें भेज दो। 'सत्यशूल' कमाल है। उनसे कहो कि 'प्यारे लेखनी सफल कर ले' यह दूसरों के लिए ही लिखा

था! उन्हें अवश्य लिखना चाहिए, न लिखें गे तो मैं बाँदा आ कर उनके यहां धरना दूं गा।

पढ़ीस अंक एक हफ्ते में निकल जाय गा, तब उसे देखो गे ही। पढ़ीस जी की रचनाएँ पढ़कर अपनी राय लिखना।

मैंने कविताएँ लिखना फिर शुरू किया है। गद्य तो लिखता ही हूँ। कहानी-उपन्यास नाटक लिखने का भी इरादा है। निराला जी पर पुस्तक लिखना आरम्भ करने वाला हूँ। भारतेंदु-युग का समर्पण 'श्री केदारनाथ अग्रवाल' को बड़े अक्षरों में छपा है। एक महीने हुए पुस्तक छप गई थी परन्तु अभी बँधी नहीं है।

१७-२-४३

तुम्हें पत्र का पहला पन्ना कब लिखा था। भेजने की अभी तक नौबत नहीं आई। सम्भवत: २४ या ३१ जनवरी के लोकयुद्ध में वह लेख था जिसमें तुम्हारा ज़िक्र था। कहीं खो गया है, नहीं तो कटिंग भेज देता। कविताएँ इधर कई लिखी हैं। क्रमश: देखो गे। आज पढ़ीस अंक भिजवाया है। पहुँच लिखना।

नरेन्द्र के साथ नये कवियों की एक Anthology कर रहा हूँ। तुम्हारी कौन सी कविताएँ हों। anthology progressive verse की हो गी।

अमृतलाल नागर के साथ New Writing के ढंग का एक छामाही [छमाही] प्रकाशन शुरू करूँगा। नये लेखकों की रचनाओं का संकलन—साहित्यिक पत्र, कविताएँ आदि उनमें बहुत कुछ रहे गा। तुम देहाती जीवन के बारे में कुछ Prose pieces तैयार करो। नरेन्द्र की Anthology के लिए अपनी और वीरेश्वर जी की कविताएँ शीघ्र भिजवाओ।

तु०
रामविलास

एक कविता देखो—

चाँदी की झीनी चादर सी
फैली है वन पर चाँदनी।
चाँदी का झूठा पानी है,
झूठी है फीकी चाँदनी।
खेतों पर ओस भरा कुहरा,
कुहरे पर भीगी चाँदनी।
आँखों में कुहरे से आँसू
हँसती है उन पर चाँदनी।

दुख की दुनिया पर बुनती है
माया के सपने चाँदनी।
मीठी मुस्कान बिछाती है
भीगी पलकों पर चाँदनी।
लोहे की हथकड़ियों सा दुख
सपनों की झूठी चाँदनी।
लोहे से दुख को काटे क्या
सपनों की मीठी चाँदनी।
यह चाँद चुराकर लाया है
सूरज से अपनी चाँदनी।
छिप गया चाँद सूरज निकला,
अब कहाँ रही वह चाँदनी?
दुख और कर्म का जीवन यह
वह चार दिनों की चाँदनी।
यह कर्म सूर्य की ज्योति अमर,
वह अंधकार थी चाँदनी।

TELEGRAM : 'CHAKALLAS' LUCKNOW

CHAKALLAS

(WEEKLY MAGAZINE)

The only exponent of the lighter vein in Hindi Journalism with distinction.

GOOD HUMOUR IS THE
HEALTH OF THE SOUL
—STANISLAUS

KHUNKHUN JI ROAD
LUCKNOW

Ref...........

Serrah villa
Cadel Road p.o.
Shivaji Park
Dadar, Bombay
[मई १९४३]

प्रिय केदार,

तुम्हारा पत्र लखनऊ में मिला परन्तु उत्तर यहाँ बम्बई से दे रहा हूँ। तुम्हारा पत्र

मिलने के पहले मैं दो दिन को इलाहाबाद गया था और वहाँ नरोत्तम को लिखे हुए तुम्हारे पत्र से यह जान आया था कि तुम कागज़ पर गोदना गोद कर मुझे भेजने वाले हो।

पहली बात तो यह कि २३, मई को सवा सात बजे लाहौर से कविता में यथार्थवाद पर मेरी बातचीत सुनना है। उसमें तुम्हारा कई जगह और काफ़ी उल्लेख है। आशा है कि २३ मई तक तुम्हें पत्र अवश्य मिल जाय गा।

दूसरी बात—एक दिन लखनऊ में तुम्हें उत्तर लिखने बैठा और तुम्हारा कविताओं वाला पत्र ढूँढ़ा तो मिला नहीं, इसलिए सोचा बम्बई से ही लिखूँ गा। तुम्हारा ख़्याल ग़लत है कि तुम्हारी कविताएँ पसन्द नहीं थीं, इसलिए मैंने जवाब नहीं दिया। असल में तुम्हारी कविताओं के बारे में तुम्हें विस्तार से लिखना चाहता था, इसके लिए अवकाश खोज रहा था, और अवकाश मिल नहीं रहा था, इसीलिए देर पर देर होती गई। और अब भी जैसा चाहता था वैसा लिख नहीं पा रहा हूँ।

तुम्हारी अधिकांश कविताओं में जल्दबाज़ी के चिन्ह विद्यमान रहते हैं। शब्द और गति को सँवारने की ओर ध्यान कम रहता है। तुम्हारी कविताओं की विशेषता उनका संकेत है—शेष आयु का धुआँ उड़ाता आदि में जैसे। परन्तु कुछ कविताओं में इस संकेत का अभाव या उथला संकेत रहता है। 'जैसे नारी तुम गंदी हो' में। दूसरी बात यह है कि 'नारी' को obsession बनाने से बचो। तुम उस पर काफी लिख चुके हो और यद्यपि अभी काफी लिखा जा सकता है, फिर भी समाज की अन्य महत्वपूर्ण समस्याओं की ओर भी ध्यान दो। कुछ दिन हुए कलकत्ता रेडियो से धान काटने पर एक प्रोग्राम विस्तार किया गया था। उसमें धान कटाई से सम्बन्ध रखने वाले गीत स्त्री पुरुषों ने मिल कर बहुत बढ़िया गाए थे। तुमने एक कटुई का गीत लिखा था परन्तु वह गीत किसानों को 'दिया' गया है, उन्हीं के कंठ से नहीं फूट निकला। यहाँ मैं देख रहा हूँ कि गुजराती और मराठी ग्राम गीतों को लेकर बहुत बड़ा काम हो चुका है, उनके ढंग पर, उनसे भाव लेकर मराठी और गुजराती में काफी साहित्य लिखा जा चुका है। हमारे यहाँ इसका अभाव है। तुम ग्रामगीत एकत्र करके उनके भाव आदि लेकर नये गीत लिखो जिनका सम्बन्ध किसान जीवन के विभिन्न पहलुओं से हो। मैंने वीरेश्वर को भी इसके बारे में लिखा है।

मैंने तुम्हें कुछ छंदोबद्ध कविताएँ लिखने की सलाह दी थी। मुक्त छंद लिखने में तुम्हें आसानी होती है, और उसका एक अपना आनन्द भी है लेकिन बहुधा मुक्त छंद की पंक्तियाँ उस तरह जनता के कंठ में नहीं उतरतीं जिस तरह छंदोबद्ध कविताएँ। मैं चाहता हूँ कि तुम्हारी कविता ऐसी भी हो जो साधारण जनता को यों ही याद हो जाय। लोकगीतों के ढंग की कविता छंद में हो गी ही। तुम मुक्त छंद में लिखो परन्तु इसका भी ध्यान रखो।

लोकगीतों के अलावा बाँदा, बुन्देलखण्ड, चित्रकूट आदि पर यथार्थवादी ढंग की

कविताएँ भी हों। तुलसीदास ने चित्रकूट पर वर्षा का वर्णन किया है, परन्तु उससे कौन चित्रकूट को पहचान सके गा! नयी हिन्दी कविता में ऐसे यथार्थ प्रकृति चित्रण की आवश्यकता है जिससे हम अपने देश को पहचान सकें। दिल्ली की शाम, यमुना, अस्पताल आदि पर भी कविताएँ भेज सकते हो। हंस में कविता-भाग का संपादक मैं ही हूँ, यद्यपि अभी हंस निकलना बन्द है, इसलिए कविताएँ यहीं भेजो और लड़ाई के ज़माने में जो महँगी है, गाँवों में जो हाय-हाय मची है, बर्लिन रेडियो लगा कर बाबू जी जो जर्मन की जीत मनाते हैं, इसलिए कि ठाकुरशाही के दुश्मन रूस को जर्मनी ख़त्म करना चाहता है, इन पर भी कविताएँ लिखो। हम लोग अगस्त तक एक छमाही प्रकाशन आरम्भ करने के विचार में हैं। अंग्रेजी के New writing के ढंग का—पुस्तक रूप में (डिमाई); एकांकी, कथा, कविता, आलोचना आदि रचनात्मक साहित्य को लेकर। उसके लिए मसाला एकत्र कर रहा हूँ। चीज़ ऐसी हो जो अन्य प्रान्तों के सामने रखी जा सके और केदार की कविताएँ पढ़ कर लोग कहें कि हाँ, बँगला और मराठी में ऐसी चीज़ नहीं है। क्या अनुभूति की तीव्रता है और कैसी सजीव मुहावरेदार भाषा है!

तुम अपनी कविताएँ बराबर भेजते रहो, हाँ अपने पास उनकी एक कापी भी रख लिया करो। दिल्ली में गिरिजाकुमार का पता लगा सको तो उससे मिलना और उससे भी कविताएँ भिजवाना। तुम आजकल क्या पढ़ रहे हो, यह भी लिखना। बाहरी साहित्य से, विशेष कर आधुनिक साहित्य से सम्पर्क बनाए रखना बहुत ज़रूरी है। तुम महीने में कुछ न कुछ पढ़ा करो ज़रूर—अपनी वकालत के अलावा भी।

निराला जी पर कविता इसी दृष्टिकोण से लिखी गई है। वह छायावादी स्वप्न द्रष्टा हैं, अब वह स्वप्न नहीं रहे। स्वप्नों का वह सौन्दर्य उनके यथार्थ जीवन पर व्यंग्य करता है। यह वैषम्य मैंने व्यक्त करने की चेष्टा की है। परन्तु स्वप्न द्रष्टा होते हुए भी उन्होंने सामाजिक रूढ़ियों के प्रति विद्रोह किया है। उन्होंने ही लिखा था—तुझे बुलाता कृषक अधीर और सिंहों की माँद में आया है आज स्यार। उनके इस विद्रोही भाग से हम लोगों की सहज सहानुभूति है और हम उस परिपाटी को अधिक विकसित करके हम आगे बढ़ाना चाहते हैं। आज जब परिस्थितियों के कारण और स्वार्थी भाइयों के विरोध के कारण वह ध्वस्त और त्रस्त हो गए हैं, तब कौन ऐसा कृतघ्न हो गा जो उनके साथ सहानुभूति प्रकट करना भी अनुचित समझे गा। सहानुभूति प्रकट करना हमारा धर्म है, हमारी कृतज्ञता का प्रकाशन है क्योंकि उन्होंने उस विद्रोही परम्परा को जन्म दिया है जिसके हम अनुयायी हैं। और जब निराला जी ने लिखा था, तुझे बुलाता कृषक अधीर; चूस लिया है उसका सार, हाड़ मात्र ही है, आधार ओ विप्लव के पारावार—तब इस परम्परा का अंत कहाँ हो गा? उस जन राज्य में ही जहाँ कृषक इस तरह आसमान की ओर फिर दुर्बल हाथ न उठाये गा। नये कवियों का सामाजिक आदर्श कौन-सा है? वही जिसका संकेत निराला की कविताओं में मिलता है। वह आज ध्वस्त और व्यथित हैं और तुम और जो भी उस विद्रोह पथ पर बढ़े गा, उसे कठिनाइयों से जूझना हो गा।

उस पथ पर चलने के लिए मर मिटने को लगन चाहिए। इसीलिए तुम जैसों में विश्वास करके मैंने लिखा था कि साथी अपने विद्रोही स्वर को दबाओ मत। तुम्हारे पीछे और नये कवि भी आ रहे हैं। वे उस जनता के राज्य की स्थापना करें गे। सम्भव है कविता में यह सब व्यक्त न हुआ हो, शायद हो न सकता हो। परन्तु मेरा दृष्टिकोण यही था।

ख़ैर, मैंने तो कविता लिखना बन्द ही कर दिया है। तुम और वीरेश्वर और नरेन्द्र बग़ैर: को चाहिए कि आधुनिक बँगला, अंग्रेजी और मराठी आदि भाषाओं के साहित्य को देखते हुए अपनी कविता को ऐसा समृद्ध करो कि हम उनसे दस हाथ आगे ही रहें, पीछे नहीं। मैं चाहता हूँ कि जब कोई मराठी या बंगाली साहित्यिक तुमसे या किसी अन्य हिन्दी कवि से मिले तो कविता के अलावा तुम्हारे अध्ययन, विचार गम्भीरता, चिन्ता, और साहित्यिक संस्कृति से भी प्रभावित हो। अनेक बाधाओं के होते हुए भी तुम्हें और अन्य हिन्दी कवियों को यह सब करना ही हो गा।

बम्बई शहर नये ढंग का सुन्दर है। समुद्र के किनारे बड़ी अच्छी हवा लगती है। मैं अमृत (नागर) के साथ ठहरा हूँ। १५-२० दिन तो हूँ ही पत्र का उत्तर देना।

तुम्हारा
रामविलास

पु० : इस पत्र में कहीं उपदेश या गुरुडम की गंध आये तो मुझे अपना ही समझ कर क्षमा करना। वि०

बलवंत राजपूत कालेज
आगरा।
१८-८-४३

प्रिय केदार,

बहुत लज्जित हूँ कि तुम्हें इतने दिनों से पत्र न लिख सका और इसलिए तुम्हारे सुन्दर पत्रों से वंचित रहा।

आगरे आया और बीमार हो गया। लखनऊ में दो टाक थीं; कमज़ोरी में गया— और कमज़ोर हो गया। अभी recoup नहीं कर पाया।

तुमने शायद आगरा पहले देखा हो गा। अजीब मनहूस जगह है। यहाँ क्यों आ गया? लखनऊ यूनिवर्सिटी की पालिटिक्स की वजह से। फिर वापस जाना चाहता हूँ लेकिन सम्भव नहीं दिखता।

नागरी प्रचारिणी सभा और बेलनगंज की लायब्रेरी में हिन्दी की काफ़ी किताबें हैं लेकिन और विषयों में प्राय: सब कहीं सफाचट्ट है। इस साल तुलसीदास पर एक

किताब लिखने की सोच रहा हूँ। अभी मकान नहीं मिला, न शायद साल भर या लड़ाई भर मिले गा। एक लाज में एक टीचर और स्टूडेंट्स के साथ हूँ। यही गनीमत है।

अपना हाल लिखो। जुलाई का हंस देखा? 'चार भले आदमी' पर अपनी राय लिखना। बंगाल के किसानों के गीत जैसी कोई चीज़ हिन्दी में लिखना पसन्द करो गे? लिख सको तो तुरन्त भेजो। और जो गीतों की स्कीम बनाई थी? किसान जीवन के विभिन्न पहलुओं से सम्बन्ध रखने वाले? वीरेश्वर भाई का क्या हाल है? हंस के लिये उन्होंने मुझे अभी तक कुछ नहीं भेजा। भाई कुछ ज़रूर भिजवाओ।

शिवदान सिंह तीन महीने के लिए पैरोल पर छूटा है। शायद एक आध दिन के लिए आगरे आये। वैसे इलाज़ के लिए उसे कलकत्ते जाना है।

एकांकी अगर लिख सको तो भेजो। 'आगामी कल' खंडवा से निकलता था, फिर निकले गा। उसके लिए Personal Essays लिखो। मैं भी लिखूँ गा। तुमने जैसे कद्दूशाह के समोसे लिखे थे, वैसी चीज़ें भेजना।

आशा है तुम प्रसन्न हो। वीरेश्वर सिंह जी को नमस्कार।

पत्र जल्दी देना।

तुम्हारा
रामविलास

Balwant Rajput College
Agra,
3-9-43

प्रिय केदार,

कार्ड मिला मुद्दत के बाद। मैं सहमत हूँ ज़रूर आऊँगा।

कविताएँ भेजो–एकांकी और स्केच भी लिखो। दुर्भिक्ष, अकाल और बाढ़ पर भी। तुम्हें 'भारतेन्दु युग' मिला या नहीं? वीरेश्वर से पुल्लिग की ही आशा है, लेकिन दादा, कुछ आज की दुनिया पर भी। मैं यहाँ मजे में हूँ। लोकयुद्ध या पीपल्स वार न पढ़ते हो तो मँगाया करो—५) चंदा है साल का। बंबई को अखबार का नाम लिख कर एक कार्ड डाल दो।

तु०
रामविलास

बम्बई से अमृत नागर को भी बुलाओ।

पता : सेरा विला–शिवाजी पार्क Road No. 2, Dadar, Bombay,

और नरोत्तम को भी। वीरेश्वर की कविता मिली।

राजपूत कालेज, आगरा,
१९-१०-४३

प्रिय केदार,

बाँदा नहीं आ सका। आगरे में खाना बहुत ख़राब मिलता है। काम ज़्यादा, तन्दुरस्ती [तन्दुरुस्ती] ख़राब। ज़रूरत पड़ने पर ही सफ़र करता हूँ।

क्या-क्या हुआ बाँदा में?

तुम्हारी दोनों कविताएँ[1] कोयले और धरती है किसान की बहुत पसन्द की गई हैं। और भेजो। वीरेश्वर को भी मनाकर और लिखवाओ और भेजो। छमाही प्रकाशन 'जन-साहित्य' की पूरी तैयारी है। उसके लिए कविताएँ और स्केच, अपने Personal Essays यथा शीघ्र भेजो। २०० पृष्ठों की पुस्तक हो गी। विलम्ब न करना। हिन्दी साहित्य के विरोधियों को नये ख़ून की यह चुनौती हो गी। इसलिए चीज़ें बढ़िया हों।

तुम्हारा
रामविलास

२२-१०-४३

प्रिय केदार,

एक कार्ड लिख चुका हूँ। सभापति तो मैं भी बनना पसंद न करता। १३ ता० तक तुम्हारा जलसा था, १३ को कालेज खुल रहा था, यानी ११ को ही शामिल हो पाता। रेडियो टाक के बाद आने की कोशिश की, लेकिन स्वास्थ्य खराब होने के कारण Cancel करना पड़ा। मुझे खुद सब लोगों से मिलने की बड़ी उत्सुकता थी। लेकिन लाचार था। आगरे में अभी तक मकान नहीं मिला। मेस का खाना[2] खा कर किसी तरह जी रहा हूँ। कविताओं के परिवर्तन को पसन्द किया, धन्यवाद। बड़ा डर रहा था, आगे से भी थोड़े हेर-फेर का बुरा न मानना। अगर उसका मौलिक रूप ज़्यादा अच्छा लगे तो पुस्तक में वही छपाना। १५ नवम्बर को दिल्ली से टाक सुनना और ७ दिसम्बर को भी वहीं से। लखनऊ आओ। मैं शायद २७ को पहुँचूँ गा। हो सके तो वीरेश्वर भाई को भी लाओ और उनसे लिखवाओ नहीं तो तुम गाली खाओ गे। अपने स्वास्थ्य का ख़्याल रखना।

शेष O. K.

तुम्हारा
रामविलास

---

1. ये कवितायें मैं 'हंस' के लिए मंगवाता था। कभी-कभी उनमें से कुछ कम्युनिस्ट पार्टी के साप्ताहिक 'लोकयुद्ध' को भेज देता था।
2. आगरे में राजपूत कालेज के पास बैंक हाउस में मैं छात्रों के साथ रहता था और उन्हीं के साथ खाना खाता था।

Banda
2-11-43

प्रिय शर्मा,

पत्र मिला गया पर लखनऊ न आ सका। क्योंकि फिर से ज्वर महाराज ने चार दिन तक कृपा कर दी थी। आज अभी तक बचा हूँ—शाम की राम जाने। पर विश्वास है कि मरूंगा नहीं। काम काफी करना है।

मेरी पुस्तक तयार है। निराला जी ने कहा था कि वह युग मन्दिर से छपवायेंगे। क्या यह उचित होगा? कुछ Payment हो जाए तो अच्छा है। पर इसकी चरचा नहीं की। यदि तुम कोई प्रकाशक तय करो तो उसे दूँ पर पेमेंट कराना। Dedicate तुम्हें हुई हैं। लाजवाब पुस्तक है दोस्त। तुम्हारे छमाही प्रकाशन[1] के लिए भी कई रचनाएँ (तुकान्त) तयार कर ली हैं। मेरी समझ में वे अपनी ही चीज़ें हैं—खूब हैं। तुम्हें भेजूंगा जैसे ही ताकत आई। स्केच भेजूंगा। एक गांधी पर किसान की दृष्टि से लिखी है। १०० पंक्तियां अतुकांत हैं दूसरी किसान पर है—करीब उतनी ही।

तुम्हारा
केदार

बांदा
११-११-४३

प्रिय शर्मा,

मेरी पुस्तक—पहला कविता संग्रह—तयार [तैयार] है पांडुलिपि के रूप में। तुम्हें देखने को भेजूंगा तुम्हारा उत्तर आते ही। उसकी रूपरेखा देखना।

यह [ये] कई रचनाएँ भेजता हूं—जो अच्छी लगें छमाही प्रकाशन के लिए रख लेना। जो न जँचे उन्हें 'हंस' में न देना क्योंकि दूसरा संग्रह अप्रकाशित कविताओं का निकलवाना चाहता हूँ। इन रचनाओं पर अपनी राय भेजना।

निराला पंत—महादेवी के Sketches ही तयार कर सका हूं—कहो तो भेजूं। उत्तम ही हैं। नई दृष्टि की नई ज़बान है।

कोई प्रकाशक मेरे पहले संग्रह के लिए खोजो। मैं मूल्य लूंगा अवश्य। मुफ्त न दूंगा। यह समझे रहना।

तुम्हारी Talk Radio में सुनूंगा १५-११-४३ को दिल्ली से।

क्या तुम लखनऊ दिवाली में आये थे? मैं नहीं जा सका।

आजकल श्रीमती जी वहीं हैं। अकेला हूं इसी से साहित्य लिख-पढ़ लेता हूं। कुशल है। स्वस्थ तो क्या हूं पर चल फिर लेता हूं।

तुम्हारा
केदार

---

1. छमारी प्रकाशन योजना कार्यान्वित नहीं हुई।

Banda
5-12-43

प्रिय शर्मा,

मैंने तो तुम्हें लम्बा पत्र लिखा और भेजा, तुमने एक छोटा-सा ''टुटुरूं टू'' पोस्टकार्ड ही मेरी ख़िदमत में पेश किया। मै नहीं जानता कि सिवाय साहित्यिक ज़बान में तुम्हें गाली दूं और क्या कहूं। कविताए नहीं अच्छी रहीं जाने भी दो। दोस्त ख़त को तो बसन्त की बहार से भर देते। लिखने वाले साले लिखा ही करते हैं पर बेचारों की दो ही तीन चीज़ें पूरी उतरती हैं। मैं तो कलम पकड़ना सीख रहा हूं। मुझे तुम्हारे [विचार] बिल्कुल बुरे नहीं लगते। हां, इतना ज़रूर कहूंगा कि इन कविताओं को भी एक प्रकार के पाठक बेहद पसंद करते है। मैं उन्ही का कवि हूं—सब का कवि नहीं। दो रचनाएं और भेजता हूं चाहे जिसमें छाप लो, पर राय देना ज़रूर।

रही बात Free Verse की —यह मुझे मेरी जान ही मालूम होती है। जो चाहता हूं वही उन शब्दों में कह लेता हूं—ऐसा नहीं होता कि लिखने कुछ बैठूं और तुकांत के दांव पेंच में पड़कर कुछ दूसरा ही लिख डालूं। मेरा ऐसा अनुभव है कि तुकांत में यही होता है। उसमें मेरी हत्या होती है। Free Verse में मैं पनपता हूं। मुझे तुम्हारी सलाह तुकांत में लिखने की पसन्द है पर ग्राह्य नहीं है। मैं उसे ग्रहण तो तब करूं जब वह मुझे धोखा न दे। वह दग़ाबाज़ है। वह केदार को नहीं साहित्यिक मानव के पुरातन भावों को ही शब्दों के गर्भित अर्थ गौरव से प्रकट करना जानती है। मुझे Free Verse का माध्यम जानदार और ज़ोरदार मिला है। यह पिटा-घिसा नहीं है। न इसमें पंक्ति के अन्तिम भाग का एक-सा अवसान है। यहां प्रवाह है, रोज़ की बोली का सजीव रूप है। शर्मा मेरी राय मानो तो तुम मुझे तुकांत लिखने की यह सलाह न दो। मैं तुम्हारा केदार हूं। वैसे तो मैं मानूंगा ही पर तनिक और सोच लो। लोग गधे होते हैं—हरामज़ादे होते हैं, उन्हें तो तुम जितने घूंट जैसा पानी पिलाओगे वह उतने घूंट वैसा पानी पियेंगे। उनका (की) खुद की रुचि ही क्या है। वह लेखक की कलम के साथ नाचते हैं। ताब भर हो मेरी कलम में मैं तो उन्हें ऊबने न दूंगा। ऐसे तरीके से लिखूंगा जो नई होंगी। मैं पुराना तरीका आने ही नहीं देता। सांस का जोर पंक्तियों में आवे, मेरी यह साधना है। जिन लोगों को तुम कहते हो कि ऊब गये हैं Free Verse से वे लोग ही कौन हैं? तुम्हारे घनचक्कर साहित्यिक होंगे। नए साहित्य की सृष्टि अतुकांत मुक्त छन्दों के प्रवाह में है, मैं यही देख रहा हूं। जब दुनिया वाले तुकांत छन्दों को युगों से घोखते रहने पर भी आज तक नहीं ऊबे तब भला वे इस कुछ काल की अतुकांत Free Verse से कैसे ऊब सकते हैं। वह जब इसी के आदी हो जावेंगे तब इसका स्वागत करेंगे, अभी उनकी सब भावनाओं का प्रकटीकरण नहीं है इसी से इस Free Verse से बिचकते हैं जैसे मेरा बूढ़ा बैल नेता लोगों को देख कर बिचकता है। फिर यह तो Free Verse की

मुठभेड़ है, तुकांत की जीत नहीं हो सकती, नहीं हो सकती। अपनी लम्बी चौड़ी टांगों और मजबूत कलाइयों का पूरा जोर Free Verse गोलमटोल तुकांत के शरीर पर अजमावेगा और ख़ून निकाल लेगा। Free Verse की कविता नए दृष्टिकोण की कविता है। वह केवल कल्पना की परी के उरोजों पर चढ़ी चोली अथवा भावुक नासिका की नाक पर बैठे हुए श्रम बिन्दु का प्रतिबिम्ब नहीं हैं। वह अनगढ़ लोगों के जमात की, टाट पर बैठने वालों की सोहबत में रहने वालों की, ऊबड़-खाबड़ देह की एक मात्र मज़दूरिन है। उसे नफासत की उंगलियां कैसे छू सकती हैं। सभ्य समाज के पोषक उसे कैसे पास बुलाकर निहार सकते हैं। वह साहित्य में 'भदेस[पन]' लाई है किंतु उस 'भदेस [पन]' में ख़ून की लाली है, गरमी है और ताकत है। शर्मा तुम न ऊबो और सालों को ऊबने दो। मैं गाली इससे देता हूं कि वह [वे] तुम्हारा स्वाद बिगाड़ रहे हैं। तुम पूरे 'साधु' (साहित्यिक) होते जा रहे हो यह प्रगति तुम्हें बहका रही है। जानते हो दुनिया उसी की है जिसका हथियार (चाहे वह जिस प्रकार का हो) गहरा घाव करता है। मैं सोचता हूं तुकांत काम कर चुकी। नई दुनिया के बाशिन्दों की [को] वह चीज़ नहीं दे सकती—वह निकम्मी और कायर है। तुम कहोगे संसार की तुकांत कविता ने ही संसार बदला है, रंग जमाया है, ख़ून तक बहाया है। बहुत अंशों में वह सत्य है। किन्तु यह भूतकाल का सत्य है। सत्य मैंने ग़लत कहा भूतकाल का अनुभव मात्र है। जब सम्पूर्ण राज्य व्यवस्था ही उलट-पुलट रही है, हंसिया-हंथौड़ा की हड्डी-पसलियां नव निर्माण कर रही हैं तब क्या यह सम्भव नहीं है कि पुरानी कविता की 'तरकीबें' भी रद्द कर दी जाएं और नई निकाली जाएं। तुकांत कविता एक फल का चाकू जैसी है। अतुकांत Free Verse सौ लाख फलों जैसी है।

दोस्त, तुम यह न सोचना कि मैंने यह सब अपनी कविता के Defence में लिखा है। यह मेरे साथ अन्याय होगा क्योंकि मैं तुम्हारे साथ यह 'कपट' नहीं कर सकता। मैं अपनी कविताओं की कमज़ोरियां मानता हूं—मैं प्रयत्न करता हूं कि ज़ोरदार चीज़ें दूं। तुम्हें कायल कर दूं। पर यह ज़रूर है कि जहां सब उस तरह लिखते हैं, मुझे मेरी तरह ही लिखने दो। मेरा यह Experiment है। इसे बीच में ही न बन्द करने को कहो। यदि सफल हुआ तो हिन्दी का फायदा है। यदि न हुआ तो नुकसान नहीं है। तुम्हारी बात मान जाऊंगा।

शायद तुमने देखा होगा कि छन्द वाली कविता ग्राम्य कंठ से नहीं निकलती। उसमें Free Verse ही रहता है। मैं शहरी गवैयों या गज़ल गाने वालों की बात नहीं कहता न आल्हा या ब्रजवासी गाने वालों की बात कहता हूं। ये कवियों की कृतियों के मौखिक अनुकरण हैं। जब पिसनहारी गाती है, तो सांसे लम्बी-छोटी चलती हैं Free Verse में। खैर.....

कहो, क्या बड़े दिन में इधर आओगे? सख़्त ज़रूरत है तुम्हारी। मैं कोशिश करने पर भी शायद प्रयाग न आ सकूं—यदि तुम न आओगे तो सूचित करने पर फिर मैं ही

प्रयत्न करूंगा। तुमसे मिलना है। नागर ने लिखा है कि तुम प्रयाग आओगे। कृपया मुझे भी इत्तला दो सही-सही। तुम नियत तिथि पर नहीं पहुंचते।

मैं कोई Controversy नहीं raise कर रहा। किन्तु तुमसे अपने विचारों पर प्रकाश चाहता हूं। केवल उनकी कमजोरी या मज़बूती नापना चाहता हूं। मेहरबानी करके मुझे Convince कर दो।

तुम्हारा नाटक[1] पढ़ा। खूब पसन्द आया। उसे एक दिन बड़े दिन में घर में खेल कर देखूंगा। अशोक साहब[2], कुछ कविताएं तो आपकी जमीं।

केदार

८.१२.४३

फ्रीवर्स मेरी जान!

जीते रहो। पत्र पढ़ा। तबियत खुश हुई। उससे भी ज्यादा 'स्वप्नद्रष्टा' कविता से। मैंने हंस में भेज दी है। बहुत सुंदर है, बधाई। तुम्हें इतने से संतोष न हो गा। और सुनो छंद के प्रवाह में गंभीरता है। मंथर गति से चलता हुआ स्वप्न द्रष्टा को खूब कोसता है। क्या सादगी से तुमने उसे गरियाया है। ''जिंदगी की भीड़ में कंधा रगड़ने और चलने से परे हो।'' यह पिसनहारियों की आवाज़ है या केदार की? सिर्फ निराला जी ने इस सादगी से लिखा था–''जब कड़ी मारें पड़ीं दिल हिल गया।'' लेकिन क्या ज़बर्दस्त हथौड़े की चोट है इस लाइन में यार!

यह कविता इसलिये अच्छी है कि कहने का ढंग सादा लेकिन पुरजोश और बात भी कहने लायक है। तुकांत और अतुकांत की–। म्याँ, जिन्ना का गाना भी तुकांत है। लेकिन मैं उसके लिये धेला भी देने को तैयार नहीं हूँ। चूरन वालों का लटका, कोई भी बात तुक की नहीं, जोश नहीं; तुम्हें बंगाल की सब बातों की पूरी जानकारी भी नहीं।

तो फ्रीवर्स मेरी जान! तुम फ्रीवर्स लिखो। पिसनहारियों की तरह स्वर को घटा-बढ़ा कर लिखो। और जिन्ना के गाने मत लिखो। जैसे पहले गीत भेजे थे, वे भी ३/१० ही हैं। इनसे चंदगहना किस भकुए को ज्यादा पसंद न हो गी।

मेरी बात समझो प्यारे! स्वप्नद्रष्टा और जिन्ना का गाना... दोनों तुकांत; लेकिन पहली कविता १०/१० तो दूसरी बेतुकी है। चंदगहना और किसान... दोनों अतुकांत। लेकिन चंदगहना ९/१० है और किसान ४/१०।

एक दूसरे ढंग की तुकांत रचनाएँ कोयले, काटो-काटो करवी है। दोनों ११/१०! क्या समझे?

---

1. जनयुग में प्रकाशित कोई नाटक।
2. मैंने इस नाम से कुछ कविताए लिखी थीं।

तुम कविताएँ ९/१० और ११/१० के बीच की लिखो चाहे तुकांत हों चाहे अतुकांत। तुमसे एक चंदगहना पाने के लिए तुम्हारे वे गीत सब १०-२० जितने हों दे सकता हूँ। और ''काटो-काटो करवी'' में जो किसानपन है 'किसान' में नहीं आ सका।

जानता हूँ कि हमेशा ९/१० या ११/१० नहीं मिल सकते। असंभव है। लेकिन आदर्श वही होना चाहिए। तुम मेरे कहने से कुछ लिखने लगो, यह तो अन्याय हो गा, दोनों के साथ। तुम अंचल नहीं हो।

मेरी राय एक दोस्त की राय है। उसे सुनो; झगड़ो। करो हमेशा वही जो जचे। कलाकार की यही परख है। और समझदार की यह कि औरों की भी सुने।

पहले यह विश्वास कर लो कि ''चंदगहना'' और ''यह धरती है उस किसान की'' जैसी कविताएँ मुझे बेहद पसंद हैं। तुम ख़ूब लिखो। लेकिन ''काटो काटो करवी'' भी उतनी ही पसंद है।

तुकांत लिखने की सलाह का यह मतलब नहीं है कि अतुकांत लिखना छोड़ दो। तुकांत लिखने को क्यों कहा था? इसलिये नहीं कि साहित्यिकों की आलोचना से, ''प्रगतिवाद'' से, प्रभावित हो गया हूँ। वरन् इसलिये कि तुम्हारी रचनाओं का ''भेदसपन'' भदेसी भाइयों की समझ में तब ज़्यादा आ सकता है जब उनके लिये सुगम छंदों की राह से उन तक पहुँचो। क्या तुम समझते हो कि भदेसी भाई जिनके हृदय की बात तुम उन्हीं की बोली में कहते हो, तुम्हारे मुक्त छंद को तुम्हारी तरह पढ़ सकते हैं? मुक्त छंद को पढ़ने के लिए Rhythm का ज्ञान, एक Literary Culture की ज़रूरत होती है। मुक्त छंद भदेस नहीं है, वह एक Literary माध्यम है। भदेसी भाइयों को पढ़ा कर देखो। तुम्हारी बातें किसान हृदय की होती हैं। बोली में वही सरलता होती है। फिर किसान के लिए छंद की रुकावट क्यों हो? उसके लिये ऐसा लिखो कि हल जोतते करवी काटते वह गुनगुना सके। तुम्हारा गीत उसके जीवन को ही न व्यक्त करे, उसे नया जीवन भी दे। मुक्त छंद में भदेसपन पूरा नहीं होता। इसकी एक ही कसौटी मैं जानता हूँ—भदेसी भाइयों को सुनाकर देख लो। जो Intellectuals declassed हो कर उनकी तरफ जा रहे हैं, वे भी तुम्हारे 'काटो काटो करबी' को ही ज़्यादा गुनगुनाते हैं।

केवल Free verse में हम तब लिखें गे जब भदेसी भाइयों को सुनाने की, उन्हें ये कविताएँ सिखाने की ज़रूरत न होगी। केवल तुम किसान से खड़ी बोली में बात कर सकते हो। उसी के ढंग से अपनी बात कह सकते हो। मैं चाहता हूँ, नव शिक्षित और अशिक्षित किसान तुम्हारी कविता पढ़ कर कहे, यह मेरे भाई ने लिखी है। मेरी ही बात कही है। उसे याद कर ले और अपने भाइयों को सुनाये। उसकी राय मेरी राय से बहुत महत्वपूर्ण हो गी।

लेकिन ज़ोर नहीं, ज़ब्र नहीं, कतई नहीं। सिर्फ प्यार। तुम जो कुछ भी लिखो सिर माथे पर।

तु०
रामविलास

Banda
17.12.43

प्रिय शर्मा,

तुमने ऐसा धोखा दिया कि कुछ कहते नहीं बनता। तुम्हें सभापति बनाता। तुम मौका नहीं देखते। अवसर खो देते हो। बेचारा नागर इन्तज़ार करते-करते मर गया। ख़ूब गालियां दी हैं मैंने। रेडियो वाला Programme क्या हुआ, आफत हो गया।

आशा है तुमने College Join कर लिया होगा।

सम्मेलन अच्छा रहा। सब काम सुचारु रूप से समाप्त हो गया।

तुमने ''हंस'' में मेरी कविताएं जो छापी हैं उनमें परिवर्तन कर दिया है। यह बहुत ही अच्छा हुआ। मैं तुम्हें किन शब्दों में धन्यवाद दूं। रेडियो की पत्रिका में तुम्हारा लाहौर का यथार्थवाद पर ब्राडकास्ट छपा है–मेरा उल्लेख है। धन्यवाद। कृपया ''भारतेन्दु युग'' भिजवाना। दिवाली में लखनऊ जाना चाहता हूं। क्या तुम आओगे?

Prose में Sketches लिखना शुरू किया है। ''हंस'' में दूंगा। तुम्हारा भी एक होगा। अभी pts. jot कर लिए हैं। छोटे-छोटे होंगे। वह भी Personal होंगे। राय देना जब छपने पर पढ़ना। योग्य सेवा लिखना।

''निराला'' जी उन्नाव गए। इस बार निराला जी ने मेरी तारीफ के पुल बांध दिए यहां। क्या बात है? मैं इस योग्य तो था नहीं।

बुखार से उठा हूं–कमजोर हूं। नहीं तो और लिखता।

तुम्हारा
केदार

बांदा
१०.२.४४

प्रिय शर्मा,

तुम्हारा [कार्ड] परसों दस बजे मिल गया था। इसी से दो कविताएं नकल करके तुरंत ही तुम्हारे पास भेज रहा हूं–किंतु वही अतुकांत हैं। शायद तुम पसंद करो। बहुत ज़ोरदार तो नहीं है फिर भी नए touches ज़रूर हैं। लिखना कैसी हैं।

दोस्त यदि हो सका तो एक दिन को आगरे आऊंगा २७ के इधर-उधर–अकेले या बहन के साथ। ठहरूंगा तुम्हारे ही पास। केवल तुमसे मिलना है। कहो घर का पता क्या है! जल्दी ही भेजो। क्योंकि मुझे तुम्हारा पत्र मेरठ जाने से पहले ही मिल जाना चाहिए।

शेष कुशल है।

कानपुर में कोई प्रगतिशीलों की बैठक क्राइस्ट चर्च में हो रही है। पत्र आया था। मैंने इन्कार कर दिया है। क्या बात है?

शायद बीबी [बीवी] बच्चे आगरे पहुंच गए हैं इसी से एक पंक्ति के [का] पोस्ट कार्ड भेजा है आपने। मैंने भी सोचा था कि केवल कविताएं भेजूं–कुछ भी और न लिखूं।

इधर कोई Radio Talk नहीं हो रही है?

तुम्हारा ही

केदार

Banda

20.2.44

प्रिय शर्मा,

मैं बांदा से २६.२.४४ को रात को चलूंगा और निश्चित रूप से आगरा २७.२.४४ को तुम्हारे घर पहुंचूंगा। राजा मंडी उतरूंगा। सम्भवत: वहां से तुम्हारा घर निकट ही होगा। "हंस" मिला। कविताएं देखीं। तुम से बात करूंगा। मैं सानंद हूं। निराला जी का पत्र आया है वे सानंद हैं।

तुम्हारा

केदार

Civil Lines, Banda (U.P.)

26.3.44

प्रिय शर्मा,

मैं दौरे से आज ही वापस आया हूं। मनीआर्डर की रसीद से पता चलता है कि तुम्हें ११/- रु० मिल गए हैं। दस्तख़त तो तुम्हारे ही हैं।

'प्रात के शर' के छपाने की बात किताब महल प्रयाग वालों से हो रही थी। वह मुझे रुपया लगा कर, 2/8 Per Page 1000 कापी के भाव से, सौदा तय करना चाहते हैं और मुझे ३३.$\frac{१}{३}$% Royalty देंगे। आज ही मैंने उन्हें सूचित कर दिया है कि यह

असम्भव है। मेरे साले और मित्र मिस्टर सीताराम नैनी वाले मेरी पांडुलिपि मांगते हैं। मैं इन्हें भेजने वाला हूं। वे छपाने का विचार ज़ोर से कर रहे हैं, किन्तु पता नहीं वह बिचक न जायें। मौक़ा आया है भेज कर देखूंगा। तुम्हारी क्या राय है?

निराला जी को भी पत्र भेज रहा हूं कि वह पांडुलिपि ले लें किताब महल वालों से।

तुमसे लाई पुस्तकें पढ़ी हैं, खूब हैं। एक "पाकिस्तान" पर कविता भी लिखी है। उत्तर आने पर ही भेजूंगा।

"तारसप्तक" में तुम्हीं सबसे ऊंचे हो। सब रचनाएं पकी और ए० क्लास हैं। रोज़ पढ़ता हूं। मालकिन को नमस्कार—बच्चों को प्यार।

तुम्हारा
केदार

बांदा
११.४.४४

दोस्त,

मुझे अफसोस है कि अपने चाचा के कारण से मैं प्रयाग उस समय न पहुंच सका जब तुमसे मिल सकता। अब गया और कल ही वापस आया हूं। सब हाल नागर ने मुझे बताया।

मुझे खुशी इस बात की है तुमने उस फिराक को खूब मारा बातों से। मैं होता तो मैं भी दुलत्तियाता [,] वह इसी के योग्य है।

अपना संग्रह "निराला" जी के पास छोड़ आया हूं। नाम "प्रात के शर" रखा है। कैसा है? समर्पित तुम्हें ही किया है—आशा है तुम स्वीकार करोगे। नरेन्द्र की तरह मैंने तीन को एक साथ भवसागर से पार नहीं उतारा।

वीरेश्वर की 'दिल्ली अब भी दूर है' छपाना। खूब मज़े की है। न छपाना तो उसे वापस कर देना ताकि वह कहीं और छप जावे।

तुम्हारा पिछला पत्र इतना सुन्दर है कि मैं बिक गया। अन्तिम वाक्य बार बार याद करता हूं। शर्मा तुमने जादू कर दिया है।

नया कुछ नहीं लिखा, वरना भेजता। तुमने मेरी बेहद तारीफ प्रयाग में कर रखी है। यह क्यों, समझ में नहीं आता।

जनाब अशोक से इस्तेदुआ हुआ है कि ज़रा कलम मनमानी न रगड़ें बल्कि ज़ोरदार करके चलावें।

तुलसीदास पर बहस सुनी [।] खूब अन्त किया तुमने। अब लौं नसानी अब न

नसैहों। यह व्यङ्ग [व्यंग्य] गुलाबराय जी के खूब चिपका। तुम्हारी भी समझ में प्रेम नहीं आता, मेरी भी समझ में नहीं आता।

कुशल से हूं। तुम वीवी [बीवी] बच्चों के साथ हो अथवा अकेले ही डंड पेलते हो।

आगरा के ताजमहल के संगमरमर पर अपना हाथ फेरना चाहता हूं और मुमताज की शीतलता को गरमाना चाहता हूं। न जाने कब और कैसे यह हो सकेगा।

तुम्हारा

केदारनाथ

बांदा

१९.८.४४

प्रिय शर्मा,

आज झाँसी से सम्मेलन का निमंत्रण आया है। उसके देखने से पता चला कि तुम अवश्य ३१.८.४४ को झांसी में होओगे। यदि अनुचित न समझो और अवकाश हो तो एक दिन के लिए बांदा आ जाओ। मैं किसी तरह भी झांसी नहीं पहुंच सकता। कारण मेरा केस २८ से ३१ तक को लगा है। बड़ी मुसीबत है।

''हंस'' मिला। मेरी एक कविता मलखान सिंह सिसौदिया के नाम दे दी है। यह शायद प्रेस की असावधानी होगी।

पत्र शीघ्र ही देना अभी समय पर्याप्त है। आशा है कि तुम यहां आओगे ही। एक कविता बंगाल पर लिखी है। जब आओगे तभी दिखाऊंगा। उम्दा है।

सुमन को पत्र भेजा था–उत्तर नहीं आया। वह तो झांसी आवेगा ही। सूचित करना।

तुम्हारा

केदारनाथ अग्रवाल

Banda

11.9.44

प्रिय शर्मा,

पत्रों के पढ़ने से पता चला कि हैजे की वजह से झांसी में सम्मेलन की मनाही कर दी गई है यह अच्छा नहीं हुआ। कोई दूसरा अवसर देखा जायेगा। अब तुम क्यों झांसी के बहाने बांदा आओगे? न मेरे पत्र का उत्तर ही तुमने दिया। बंगाल पर दो रचनाएं

लिखी हैं उत्तर मिलने पर भेजूंगा। परसों से बुखार आ गया है पर precaution ले रहा हूं।

नागर का उत्तर आया था, उसका जवाब दे रहा हूं।

तुम्हारा
केदार

Banda
15.9.44

प्रिय शर्मा,

तुम्हारे दोनों पोस्ट कार्ड ठीक समय पर आ गये थे किन्तु मैं एक केस में चरखारी गया था इससे उत्तर विलम्ब से दे रहा हूं। माफ करना।

''भूखा बंगाल'' एक अतुकांत मुक्त छंद की रचना भेज रहा हूं। अपनी राय अवश्य लिखना। मैं उत्सुक हूं। पाकिस्तान वाली रचना कहीं रखी है खोजने पर भी नहीं मिली इससे अभी नहीं भेज सकता। वह कोई खास नहीं थी..... Communistic Song था। मिलने पर भेजूंगा।

बांदा आओ और बिना किसी काम के। दशहरे में ही सही। चित्रकूट चलेंगे। घूमेंगे। एक तफरीह होगी। तुमसे बातें होंगी। दृष्टिकोण में परिवर्तन आवेगा।

पुस्तकें नागर ने भेज दी हैं। दाम नहीं लिखा तुमने। लिखना। कुछ और भी Poems की उम्दा पुस्तकें भिजवाओ। मैं चाहता हूं कि उम्दा लिखूं।

वीरेश्वर परेशान हैं बच्चों की बीमारी से। क्या कहूं उनसे?

पुस्तकें जो तुमने कहा था और नागर ने भेजी हैं मैंने पढ़ ली हैं। कुछ तो पहले ही पढ़ चुका हूं।

Review करके भी भेजना है ''हंस'' में। जन प्रकाशन की पुस्तकों की।

सानंद हूं। तुम भी लिखना। मलकिन[1] को नमस्ते। बच्चों को प्यार।

तुम्हारा
केदारनाथ अग्रवाल

---

1. मलकिन—मेरी पत्नी 'मालकिन'।

Kedar Nath Agrawal
B.A. LL.B.

BANDA (U.P.)
विजय दशमी
Dated 26.9.1944

प्रिय शर्मा,

"भूखा बंगाल" कविता भेज ही चुका हूं। पहुंच ही गई होगी।

मेरा [मेरे] कविता संग्रह का प्रकाशन निन्यान्वे फीसदी सम्भव हो गया है। एक आर्टिस्ट भी चित्रित करने को मिल गए हैं। विश्वास है कि संग्रह सुन्दर निकलेगा। प्रकाशक मेरे सम्बन्धी और मित्र नैनी वाले श्री सीताराम जी हैं। उन्हें कला से प्रेम है। उन्होंने स्वयं मुझसे मेरी कविताओं के प्रकाशित होने के बारे में चर्चा की थी। इसी से मैंने अपनी पांडुलिपि उनके पास भेज दी है। आज ही उनका पत्र आया है कि मैं तुम्हारा एक उत्तम चित्र भेजूं क्योंकि वह पुस्तक में जा रहा है। कृपया मेरे खातिर अपना एक हाल का चित्र शीघ्र ही भेज दो ताकि मैं उसे उनके पास भेज दूं। वह Block बनाने बगैरह को दे दें। पुस्तक तुम्हीं को समर्पित है।

मालुम होता है तुम बांदा न आओगे। दिवाली में ही आ जाओ।

बीबी [बीवी] लखनऊ जाने वाली है। तब कहीं फिर कविता और कहानी के पीछे पड़ूंगा। अभी तो वकालत और श्रीमती से घिरा रहता हूं। बच्चों को प्यार। मालकिन को सादर नमस्ते। चौबे कहां है?

पत्र व फोटो भेजो।

तुम्हारा
केदार

6/10/[44]

My Dear Kedar,

Got your [Letters] after coming from Lucknow. Dedication to me wrong. I have already dedicated one to you. This mutual respect quite wrong. Send the mss. [manuscript] to me if possible before sending to press. Take suggestions from as many friends as possible. I offer my self as one.

Yours
Rambilas

Banda
10.10.44

My Dear Sharma

I am in receipt of your two letters, one from LKO and the other from Agra. I must tell you that I am very busy for the whole month and there is no possibility at present that I should join the gathering on 21& 22/10-44 at Lucknow. I express my sincere regret. I hope you will excuse me, I shall send my typed suggestions on जनपद & Failure of Gandhi & Jinna talks.

You know that I had already dedicated the book to you 4 or 5 yrs ago. I can not change that dedication. It is a crime, I think, to dedicate it some other person. And there is no other friend of mine better than you. I can’t throw my book to any and every body. I am not at all afraid of what others will say about our mutual appriciation of each other. It is by the way that I informed you about this dedication. In fact I had teken your permission nearly 5 yrs back. You can't retrach and withdraw it. Do approve and send a copy of your latest photo. Don’t forget you will simply harm me by not sending it. I had sent the message to the man concerned. You will see it before finally it takes to printed form.

Nagar has already seen it. Niralaji will see at Allahabad. Who else is there whom I should show.

Reply soon & send Photo soon.

Yours
Kedar Nath Agrawal

Banda
15.10.44

My Dear Sharma,

Yours tohands, I must tell you that the book if it at all comes out, will be dedicated to you inspite of your strong protest. No question of forfeiture of my rights.

I am going to Cawnpore on 24th and there I shall remain on 25th. I don’t think I shall be at LKO on 28th or 29th. My wife is there with my relation where I used to stay.

Wish you good luck in this Diwali.

Yours
Kedar Nath Agrawal

12/10 [44]

My Dear K,

Since I put my book first, you have forfeited your right. Whom will you dedicate your second book if this is not to be your last? Dedicate this to him. I suggest Vireshwar. I wanted your mss [= manuscripts] only for suggestions re. [= regarding] language & metre. So glad, you are sending it. Lucknow meeting dates are now 28.29.

Can you come? Ram B.

Banda
5.11.44

प्रिय शर्मा,

तुम्हारा पोस्ट कार्ड मिला। उत्तर दे रहा हूं कि तुम्हें लखनऊ से वापस होते ही मिल जावे।

कविता कुछ दिन में भेजूंगा। अभी हरपालपुर Case में जा रहा हूं। लौटने पर लिखूंगा नई ही।

Writers Conference की चहल-पहल लिखूंगा। निर्णय भी। जनपदीय आंदोलन और रेडियो पर क्या हुआ?

लखनऊ गया था। तुम्हारे घर भी गया था। तुम्हारा इन्तज़ार था। कितने दिन लखनऊ रहे?

अब स्वस्थ हूं। कमज़ोर हूं पर चंगा हूं। फोटो की सख़्त ज़रूरत है खिंचवा कर भेजो। No delay please.

तुम्हारा
केदार

Banda
27.11.44

प्रिय शर्मा,

आज ही लखनऊ रेडियो स्टेशन से ३० दिसम्बर के लिए कवि सम्मेलन का निमंत्रण आया है ६०/ मय खरचा वग़ैरह के [।] मैं Contract Form भर कर भेज रहा हूं। तुम्हारी राय हो तो जाऊं। पत्रोत्तर जल्दी देना। अभी तक तुम्हारी फोटो नहीं आई। निमंत्रण गिरजाकुमार माथुर का है। कौन कविता सुनाऊं? लिखना भूलना नहीं। तुम भी आ रहे हो या नहीं। छुट्टी तो रहेगी। एक कविता ''कुहरा'' पर लिखी है। तुम्हें

पसंद आयेगी। झांसी जा रहा हूं—वापस आने पर भेजूंगा। पत्र दो ताकि उसे जवाब में पा सको।

बच्चों को प्यार।

तुम्हारा
केदार

Banda
29.1.45

प्रिय शर्मा,

तुमने आगरे पहुंचते ही मुझे फोटो[1] भेजने का वादा किया था पर जब मैं इतने दिनों तक ऊब कर थक गया और वह नहीं मिला तब यह पत्र हैरान होकर लिख रहा हूं। मैं जानता हूं कि ''निराला'' लिखने में व्यस्त होओगे। पर ज़रा सूट पहन कर फोटोग्राफर के घर तुम चले जाओ और मेरे खातिर एक फोटो खिंचवा आओ। बड़ी इनायत करोगे।

''लोकयुद्ध'' का स्वतंत्रता दिवस अंक देखने को नहीं मिला। पता नहीं मेरी वह कविता छपी या नहीं जिसे लखनऊ में मैंने सुनाया था। तनिक लिखना। २८.१.४५ के अंक में पढ़ीस पर तुम्हारा लेख पढ़ा। खूब अच्छा और चुस्त है। कृपया वह पुस्तक भी भेजवाओ जो मुझे अनुवाद करने को देना चाहते हो। Payment भी करा सको तो अच्छा है। वह सब रुपया मैं पुस्तकों के क्रय में व्यय करूंगा।

''हंस'' का अंक ही नहीं आया महीनों से। किस माह का अंक आखिरकार छप कर निकल चुका है?

मेरी अच्छी ख़बर अख़बार वालों ने ली है। पर और लोगों से कम। मुझे तुम्हारी सलाह प्रिय है। मैं अब न जाऊंगा।

तुम्हारा
केदारनाथ

Banda
13.2.45

प्रिय शर्मा,

पत्र लिख ही चुका हूं, दूसरा फिर लिख रहा हूं क्योंकि तुम्हें होली में चित्रकूट[2]

---

1. केदार अपना कविता संग्रह मुझे समर्पित करना चाहते थे और उसमें मेरा फोटो भी देना चाहते थे। इससे पहले मैं उन्हें 'भारतेंदु युग' समर्पित कर चुका था, इसलिए मेरा आग्रह था, कविता संग्रह मुझे समर्पित न करें।

2. चित्रकूट यात्रा की योजना कार्यान्वित नहीं हुई।

घूमने के लिए निमंत्रण देना है। कृपया तुरन्त उत्तर दो कि कब से कब तक छुट्टी है और किन-किन तारीखों में यहां आ कर घूम सकोगे। निराला जी को भी लिखा है मैंने। तुम भी यदि आओ तो लिख कर मजबूर करो। नागर[1] को भी लिखो। यहां नुमायश चल रही है। २०/२१-२-४५ को कवि सम्मेलन होगा। झा[2] साहब पधारेंगे और १००००/- लेकर Guest House प्रयाग में बनवायेंगे।

तुम्हारा
केदार

पुनश्च—फोटो भेजो।

केदार

Swadeshi Bima Nagar,
Agra 16.2.45

My dear K,

I shall send you the photograph and books for Trans. next week. I am leaving for Allahabad tomorrow to see Niralaji. I had a very disturbing letter from Narottam. Meet me there Sunday morning if possible. Do try to come.

Yours
Ramvilas.

Banda
1.3.45

प्रिय शर्मा,

तुम्हारा पत्र पाकर घबड़ा गया था। उत्तर में निराला जी को तथा नागर को भी जवाब दे दिया था। नागर का उत्तर फिर आ गया है। चिन्ता की बात नहीं रही फिलहाल।

आइन्दा क्या करोगे? कुछ करना चाहिए। प्रकाशकों को approach करना आवश्यक है। उनसे लिखवाओ और Pay कराओ। जहां वह कहें उन्हें रखा जावे।

मैंने अपने प्रकाशक को लिखा है कि वह निराला जी को इस संकट काल में १०१/ दे दें भूमिका के लिए। जब आवश्यकता होगी लिखा ली जावेगी।

---

1 नागर—नरोत्तम नागर।

2. झा साहब-अमरनाथ झा।

प्रकाशक के पत्र का इन्तज़ार है। नागर को भी एक पत्र लिख दिया है। 'लोकयुद्ध' में भी नोट पढ़ा है। ऐसे नोट तो हर पत्र पत्रिका में जाना चाहिए।

माधुरी, सरस्वती आदि आदि में।

तुम्हारे पत्र से कुछ विशेष हाल जानना चाहता हूं निराला जी के बारे में।

तुम्हारा
केदार

Agra
7.3.45

My dear Kedar,

Niralaji is here for a few days. Come this saturday if possible. I have called Suman also. We will go to Surdasa's Runekta[1] on Sat. Do come.

Your
Ramvilas

Banda
8.3.45

प्रिय शर्मा,

तुम्हारा पोस्टकार्ड अभी-अभी ६ बजे शाम को जब मैं कचहरी से आया मिला। तुम नहीं सोच सकते कि मुझे कितनी अपार खुशी हुई यह पढ़ कर कि निराला जी तुम्हारे पास पहुंच गए। मुझे तो ऐसा मालूम हो रहा है जैसे तुमने एक बड़ा समर जीत लिया है। कृपया उन्हें वहां से न जाने देना। उनकी ज़िन्दगी regulate करवाओ और लिखने को कहो। उन्हें किसी वस्तु का अभाव नहीं हो सकता। वह हृदय सम्राट हैं करोड़ों के।

मैं इस शनीचर को तबही पहुंच सकता हूं जब कल रात को चल दूं। कल चलना यों असम्भव है कि जो सेशन मुझे आज करना था वह आज नहीं शुरू हुआ; कल से शुरू होगा वह भी दूसरे पहर से और परसों तक ज़रूर चलना है। मैं इसे छोड़ कर नहीं आ सकता, पर मेरा वही हाल हो रहा है जो बिंधे पक्षी का। भग कर पहुंचना चाहता हूं पर पक्षाघात जो एक तरह का हो गया है। साली वकालत भी बेड़ियों की तरह पैर में पड़ी है। रोटियां क्या देती है मुझे खरीद लिया है। मुझे अपनी गुलामी पर खीझ होती है।

---

1. हम लोग सूरदास का स्थान रुनकता देखने नहीं गए।

ऐसा लगता है जैसे अपने ही जूते अपने सर पर मार कर ख़ून निकाल लूं। छोड़ कर जाता हूं तो मुअक्किल मरता है। नहीं मालूम क्या-क्या मेरे मन में इस समय गुजर रहा है। मैं हूं तो यहां पर तुम्हारे कमरे में मच्छड़ की तरह ही भनभना रहा हूं जब तक दो-तीन दिन न बीत जायेंगे। सुमन से भी मुलाकात हो जाती पर वाह रे अभाग्य!

देखो भाई ३०, ३१ मार्च १ और २ अप्रैल को ईस्टर की छुट्टियां हैं। कृपया या तो यह लिखो कि तुम यहां आ रहे हो चित्रकूट चलने को या मैं ही वहां आऊं। निराला जी भी रहेंगे। कह देना। सुमन को भी लाना है। खूब मिलने का अवसर है। पहले ही से तय करके लिखो ताकि चित्रकूट में खूब बढ़िया इन्जाम [इन्तजाम] कराऊं। धर्मशाला (ऊपरी भाग) ठीक करा लूं। महन्तों से सामान वगैरह का प्रबन्ध करा लूं। भूलना नहीं इसका तय करके जवाब देने में।

तुम्हारे पत्र की दो लाइनें समझ ही में नहीं आतीं। क्या लिखा है, कहां जाओगे? न जाने क्या लिख मारा है। बीच में लिखा है Come if possible बाद में और अन्त में लिखा है Do come. दोनों एक-दूसरे का गला घोंट रहे हैं। मेरा बन्धन बुरा है। वरना उछल कर ट्रेन में बैठ कर आगरे पहुंच जाता और तुम्हारा गला घोंटता।

मैं इस समय इतना प्रसन्न हूं जैसे नई ज़िन्दगी पाई है। वह भी तुम्हारे कारन। पत्र क्या है जान है। निराला जी से मेरा भी कहना वही...।

इधर वीरेश्वर ने दो कविताएं लिखी हैं। खूब हैं। एक होली पर दूसरी हिन्दी उर्दू पर। दूसरी प्रारम्भ होती है—

कोयल ने किया कू
　　कबूतर ने गुटर गूं
अब तुम ही बताओ कि
　　यह हिन्दी है या उर्दू

कुछ ऐसी ही है।

मैंने भी कुछ कलम चलाई है। भेजूंगा। दूसरा पत्र पाओगे तब पढ़ना। उपन्यास भी वकालत ने रोक रखा है। कुछ कम लिखने का कारण श्रीमती जी भी हैं। वह ज़बर नहीं करतीं सिर्फ पलंग पर आ विराजती हैं। कलम भवानी रुक जाती हैं। मेरी तो अजीब छीछालेदर है। तुमही अच्छे हो। अच्छा होता यदि बेब्याहा होता और फटेहाल होता। इस गरीबी अमीरी के खच्चड़पने ने मुझे भी खच्चर बना रखा है। न हिन्दू हूं, न मुसलमान। रामै राखै मोरी लाज।

भाई माफ़ करना ग़ैर हाज़िरी से। ईस्टर का प्रोग्राम लिखो। मैं उसके लिए बेकरार हूं। नरोत्तम को भी लिख रहा हूं। उसका हाल सुना ही होगा। ''अभ्युदय'' इंडियन प्रेस से मालवीय के पास जा रहा है। वह (नागर) वहां न जायेगा। अब उसकी भी रोटी

मारी जायगी। हर तरफ चोट है। पता नहीं वह क्या सोच रहा है। दशा हम सबकी खराब है।

निराला जी को प्रणाम।

सुमन आए तो उसे भी।

तुम्हारा
केदार

पुनश्च–

बांदा से २००००/- प्रयाग गये हैं। झा साहब ले गए हैं इसका चिट्ठा मिलने पर बताऊंगा। यह अन्याय हुआ है। बांदा की जनता और उसके बच्चों के साथ। यहां का डी० ए० वी० स्कूल मोहताज है। एक Govt. High School है। बच्चे कुत्ते से पूंछ हिलाते फिरते हैं। पढ़ाई का प्रबन्ध नहीं है। विश्वविद्यालय में Guest House बना है। राम! राम! यह हैं राव साहब।[1]

केदार

Swadeshi Bima Nagar
Agra
14.3.45

प्रिय केदार,

पत्र तुम्हारा मिला। ब्रज भाषा परिषद् के सिलसिले में निराला जी दिल्ली आए थे। वहाँ से वे यहाँ भी आये लेकिन en route to Allahabad. वे यहाँ मंगल को आए थे, शनिवार को मेरे और सुमन के साथ ग्वालियर गये। मैं कल लौट आया। दो एक दिन में प्रयाग जायँ गे। जुलाई से मेरे यहाँ रहने को कहा है। महादेवी जी ने एक साहित्यकार संसद स्थापित की है। वह नि० जी के [की] पुस्तकों का प्रकाशन करें गी और उन्हें अभी से आर्थिक सहायता कर रही हैं। उसके लिए तुम कम-से-कम ५००/- एकत्र करके महादेवी जी के पास शीघ्र भिजवाओ और निराला जी के जो पत्र तुम्हारे या वहाँ और किसी के पास हों, उन्हें तुरन्त (Registered) मेरे पास भेज दो। उन पर मेरी किताब चल रही है। आशा है प्रसन्न हो गे। नि० जी के पत्र भेजो गे तो लंबी चिट्ठी लिखूँ गा।

रा०

---

1. श्री बालकृष्ण राव—उन दिनों बाँदा के जिलाधीश थे। [अ० त्रि०]

Banda
21.3.45

प्रिय शर्मा,

तुम्हें एक पत्र लिख चुका हूं। दूसरा फिर लिख रहा हूं क्योंकि आज ही नागर का पत्र आया है। वह तुमसे और मुझसे मिल कर यह तय करना [चाहता] है कि वह सिनेमा में जावे या सरस्वती में रहे अथवा दिल्ली जावे। बहुत ज़रूरी है। यदि तुम चित्रकूट आओ तो वह भी यहां आवे। यदि न आओ तो हम दोनों आगरे आवें। जैसा हो फौरन लिखो।

साहित्यकार संसद का विशेष वर्णन लोकयुद्ध में पढ़ लिया है। एक सेशन कर रहा हूं उससे निजात पाते ही कल तक ५००/- का प्रबंध[1] करूंगा और भेजवाऊंगा। मेरी ओर से निश्चिंत रहो। यह बड़ी अच्छी संस्था होनी चाहिए।

शेष खैरियत है। छुट्टियां ३०, ३१, १ व २ तक हैं। इसी से उत्तर की प्रतीक्षा है।

तुम्हारा
केदार

[मार्च, १९४५]

प्रिय शर्मा,

तुम्हारे लिये ये पांच पत्र (निराला जी) के भेज रहा हूं–किन्तु मुझे यह पता नहीं चलता कि तुमने मेरे चित्रकूट के निमंत्रण को स्वीकार किया अथवा नहीं। लिखो तो क्या इरादा है। तुम्हारा पोस्ट कार्ड इतना गुमसुम था कि कुछ हवा ही नहीं मिली तुम सबकी।

न फोटो भेजी तुमने न पुस्तकें भेजीं। मैंने तो समझा था कि निराला जी एकाध दिन को यहां उतरेंगे। किन्तु आज तक कोई पता नहीं चला।

५००/- की बात ठीक है। मैं दो-एक दिन में प्रयत्न करना प्रारम्भ करूंगा। अभी किसी से नहीं कह सका। कृपया एक विशेष विवरण भेजो क्या है और कैसा है। कौन क्या है–कहां है? तब तो लोग देंगे।

उत्तर का प्रार्थी।

तु०
केदार

---

1. ५०० /– का प्रबंध—साहित्यकार संसद के लिए।

Banda
13.4.45

My dear Sharma,

Excuse me for being late in giving you reply. I shall write to you later on in full detail. At present I am very busy with a murder case which is to last for a fortnight. Where is Nagar? Has he gone to Bombay for the job? I am sorry to have failed in seeing you there at Agra as I could not reach there. What news? Where will you go to in Summer Holidays? reply soon.

Yours
Kedar

RAM BILAS SHARMA
M. A. Ph. D.
HEAD OF THE ENGLISH
DEPARTMENT

B. R. COLLEGE
Agra १३.४.१९४५

प्रिय केदार,

निराला जी प्रयाग पहुँच गए हैं। तुम्हारे पत्र मिल गए हैं। आगे आयें तो सुरक्षित रखना। मेरा खयाल है, तुम्हारी किताब मेरे चित्र के बिना ही छपे गी।

कब तक छप रही है? तुम्हें अनुवाद के लिए पुस्तक भिजवाने वाला हूँ। उसके साथ तुम कुछ किताबें खरीदना चाहो तो और भेज दूँ। पहले जो किताबें नरोत्तम ने भेजी थीं पहले उन्हें या तो भेज दो या जो रखना चाहो उनके पैसे भेज दो। इस समय तुम्हें ये किताबें भेज सकता हूँ–

1.	History of the Oct. Revolution	5-0-0
2.	Historical writings of Karl Marx	7-8-0
3.	Lenin on Religion	0-12-0
4.	Stalin—War of Liberation	0-12-0
5.	Stalin on Leninism	1-8-0
6.	Marx—Letters on India	1-0-0
7.	Lenin—To the Rural Poor	0-12-0
8.	Marx & Engle—Historical Materialism	0-10-0
9.	Constitution of the USSR	0-12-0

10.	Soviet Writer looks at the War (Imp. articals from the Soviet Journal War & the working class)	2-0-0
11.	Who Threatens China’s Unity	0-10-0
12.	Landmarks in the Life of Stalin	0-10-0
13.	Critique of China's Destiny	2-0-0
14.	Congress and Communists	0-6-0
15.	They must meet again	0-8-0
16.	The Imperialism alternative	0-3-0
17.	Maker of New China	2-4-0
18.	Yugoslav Partisans	0-14-0
19.	Orel (Defence of Soviet City Illustrated)	2-8-0
20.	Reminiscences of K. Marx	0-8-0
21.	Marx—Wage, Labour and Capital	0-12-0
22.	Stalin Reports (Stalins reports to party)	3-0-0
23.	राहुलजी–सं० पृथ्वी सिंह	2-8-0
24.	Landmarks on the life of stalin	2-0-0
25.	J. Stalin—Biography	0-12-0
26.	Spotlight on Yugoslavia	0-8-0
27.	France fights for freedom	0-10-0
28.	French Peoples Struggle against Hitler	0-8-0
29.	A New Germany in Birth	0-12-0
30.	Polish Conspiracy	0-10-0
31.	Calender	0-8-0
32.	Army of Heroes	5-8-0

बोलो–कितनी की भेज दें। अगर २०/- अडवांस भेजो गे (अगले हफ्ते में) तो बाँदा आकर ख़ुद किताबें दे जाऊँ गा। वीरेश्वर जी तथा अन्य मित्रों से भी बातें करना। लेकिन बीस की शर्त में तुम्हारा आर्डर ही शामिल है, सबके मिला कर नहीं।

उत्तर जल्दी देना।

तुम्हारा
रामविलास

निराला जी पर पुस्तक चल रही है। तु० पो० का० मिल गया।

रा०

Banda
23-4-45

प्रिय शर्मा,

तुम्हारा १३.४.४५ वाला (धोखेवाला) पत्र मिल गया था। धोखेवाला इससे कहता हूं कि खूब स्थूलकाय तो था लेकिन Matter न था सिवाय पुस्तकों की लम्बी सूची के।

शर्मा, तुम्हारे आने की शर्त मुझे मंजूर है। मैं बीस का मनीआर्डर भेज दूंगा लेकिन अगर तुम यहीं आकर लो तो अधिक अच्छा हो। विश्वास तो कर ही सकते हो। मैं इस पर भी तैयार हूं कि M.O. से भेज दूं। जैसा कहो वैसा करूं।

यह विश्वास रखो कि यदि मेरी पुस्तक वहीं से छपेगी जहां गई है, तो तुम्हारा चित्र जब मिलेगा तबही छपेगी वरना छपेगी ही नहीं। कोई खबर इधर हाल में प्रकाशक ने नहीं भेजी। कमलाशंकर चित्र के चक्कर में डाले हैं उन्हें। न बना कर देते है, न छपने पाती है। अगर तुम कहो तो कड़ी चिट्ठी लिखकर पांडुलिपि मँगवा लूं। ऐसी तैसी में गई ऐसी छपाई।

अमृत का ब्याह २९/४ को हो रहा है। मैं नहीं जा सकूंगा। एक केस ऐसा मिल गया।

निराला जी का एक पत्र आया था। उत्तर मैंने दे दिया है। उन्होंने बांदा में रेडियो विरोधी एक कवि सम्मेलन करने को लिखा था। चूंकि यहां सरकारी तौर से दो हो चुके थे इससे अब तीसरा करना अजीर्ण पैदा कर देगा। मैंने फिलहाल अनुचित समझा इसी से उन्हें वैसा उत्तर भेज दिया है।

साहित्यकार संसद के लिए रुपया इकट्ठा करना है। अभी तक व्यक्तियों के पास नहीं पहुंच सका। देखूं कितना उसूल हो सकेगा।

यह जानकर हर्ष हुआ कि "निराला" जी पर पुस्तक चल रही है। कब तक समाप्त करोगे? Chapters के नाम तो बता सकोगे।

इधर कुछ लिखा नहीं गया। वरना भेजता। गद्य का मन चाहता है; अनुवाद करूंगा। तुम्हारी पुस्तकों का इन्तज़ार है।

जो पुस्तकें तुम फायदे की समझो वह बीस की लेते आना। तारीख लिखो कब आ रहे हो।

वीरेश्वर जी चैन से हैं। सलाम कह दिया था। पुस्तकों के मोल लेने का भी ज़िकर कर दिया था। वह न लेगा। बच्चे ख़ैरियत से होंगे ही।

तुम्हारा
केदार

569, Wright Town
Jubbulpore, 5-5-45

My deer K,

I have overstayed here. I have to go to Allahabad & Lucknow. Then if I find time, I shall come to Banda. It is likely. I may have to postpone this visit. Hope you will excuse. Leaving here on 9th.

Yours
Ram Bilas

Banda
19.6.45

प्रिय शर्मा,

इतने दिन तक इन्तज़ार में रहा कि तुम नहीं आये तो पत्र जरूर भेजोगे। मैं चुप यों था कि तुम न जाने कहां हो, किस पते से खत दूं। प्रयाग को लिखा तो वहां से भी सूचना न आई कि तुम कहां हो। नागर भी कहां और किस पते से है मुझे पता नहीं है। शाहगंज २५९ नम्बर के पते से ही लिखा है उसे। उत्तर नहीं आया। शायद उसे पत्र ही नहीं मिलते। मई की सरस्वती देखी ही होगी। सुना है कि खूब ज़हर उगला है आलोचक ने हम पर! अगर कटिंग भेज सको तो अच्छा हो।

शेष कुशल है। कुछ कवितायें लिखी हैं एक नरेन्द्र को भेजी है। दो हंस को। एक आज को।

केदार

mehtab Mahal
Wajirpura Agra
11/7/[45]

प्रिय केदार,

युकलप्टस[1] के पेड़ों वाला सुन्दर मकान बदलना पड़ा–मकान मालिक का तबादला होने से। यहाँ पर तो कब्रें हैं और गधे।

तुम्हारे लिए तस्वीर खिंचवाई। लेकिन अच्छी नहीं आई। फिर ट्राई करूँ गा।

---

1. युकलप्टस के पेड़ों वाला मकान स्वदेशी बीमा नगर आगरा में था।

नरोत्तम फिर अभ्युदय निकाल रहा है। तुम क्या लिख रहे हो? निराला जी के पत्र आये थे। इलाहाबाद में पानी बरसा है और इतना कि जमुना का पानी गंगा में भरने लगा। बाँदा का क्या हाल है? श्रीमान और श्रीमती वीरेश्वर से नमस्ते कहना। यहाँ तो अभी बादलों की राह ही देख रहे हैं। बाकी राजी खुशी–

तुम्हारा
रामविलास

Banda
23-7-45

प्रिय शर्मा,

तुमने यह दुखद समाचार सुनाया कि युकलप्टस के पेड़ों वाला सुन्दर मकान बदलना पड़ा और अब तुम उस जगह पहुंच गये हो जहां कब्रें हैं और गधे हैं। यह भारतीय जीवन के अनुपम प्रतीक हैं।

जब तुम मेरे लिए तसवीर खिंचवाते हो तब अच्छी नहीं आती। आशा है कि तुम झूठ न बोलेगे और न बहाना करोगे। यह Chance ही है कि खराब हो ही जाती है। भई, जैसे हो वैसी ही तो आवेगी। मैं तो वैसी ही एक चाहता हूं। मेरे [मेरी] पुस्तक के चित्रकार ने दगा दिया और अब संग्रह भी रुक गया है। कोई प्रकाशक खोजो तब काम बने। मैं तो किसी हरामज़ादे को नहीं जानता। गाली दे गया माफ़ करना।

मैंने जो लिखा वह 'नया साहित्य' मैं भेज चुका हूं देखोगे ही। तुम्हारा नाम भी है। निराला जी का पत्र आया है। अब पानी बरसा या नहीं?

दोनों श्रीमान-श्रीमती वीरेश्वर से नमस्ते कह दिया है। तुमने क्या लिखा? 'हंस' देखा होगा?

केदार

RAM BILAS SHARMA — B. R. COLLEGE
M. A. Ph. D. — Agra.....194
HEAD OF THE ENGLISH DEPARTMENT

महताब भवन,
वज़ीरपुरा, आगरा
१२-३-४६

प्रिय भाई,

बहुत दिनों से तुम्हारा कोई समाचार नहीं मिला। क्या लिख रहे हो, क्या पढ़ रहो हो? पार्टी का नया साहित्य तुमने क्या-क्या पढ़ा है और वह कैसा लगा?

निराला जी की हालत काफी ख़राब है। रामकृष्ण वहीं जा कर रहें गे और उनकी देखभाल करें गे। इसके लिए मैं मित्रों में धन संग्रह कर रहा हूँ। क्या तुम कुछ भेज सकते हो? भेजना तो यहीं मेरे पते से और उसे अपने तक रखना। यह प्रबन्ध निराला जी से गोप्य रखा जाय गा।

तु०
रामविलास

Kedar Nath Agarwal
B. A. LL.B
Advocate

BANDA (u.p.)
Dated 15-3-1946

प्रिय भाई,

कल ख़त मिला। मेरी जिन्दगी में चौगुनी खुशी आ गई। सोचा था कि लिफाफा है, हालचाल लम्बा लिखा होगा। पर कलम कम ही चली थी। फिर भी कुछ न आने से, कुछ आया यही क्या कम है।

तार से फौरन ही २५/ निराला जी वाले हिसाब में भेज रहा हूं। पहुंच लिखना। अधिक भेजता पर है नहीं। यही मेरी थाती है। इससे छुटकारा पाने में बेहद खुशी हो रही है। मुरदा पैसा जिन्दा हो रहा है इसी कारण से। अपने त्याग से नहीं। यह मेरा कर्तव्य है।

निराला जी की हालत तो लिखते कैसी है। Short Cut न हुआ करो। मुझे चिन्ता हो गई है। लिखो क्या हाल है? प्रयाग से नागर का पत्र भी नहीं आया कि कुछ जान सकूं। तुम बिना हवा के पेड़ जैसे आगरे में गड़े हो। इधर हिलते तक नहीं। इसी से बड़ी बेचैनी रहती है।

एक तो बहुत कम लिखता हूँ। फिर पत्र न आने पर और भी पत्थर हो जाता हूं।

जो कुछ लिखा है वह सब हँस [हंस] व नया साहित्य में देख ही चुके हो। शायद तुम्हे पसन्द नहीं आया वरना मेरी पीठ ठोंकते ही स्याही के अक्षरों से। पर विश्वास है कि उम्दा लगा होगा। बुरा होता तो तुम तड़ाक से कागज़ी चपत जमा देते।

१—'नया साहित्य' में कई बहुत उम्दा लेख थे। डा० मोती चंद का नया था। तुम्हारा आदि काव्य भी। जन नाट्य पर रमेश का। सीपियाई की (पहली) सिनेमा वाली आलोचना। कविताओं में मेरी ही मुझे रुची। सफदर का आल्हा था तो बढ़िया, पर अधिक प्रिय न लगा। वजह न समझ में आई।

२—'नया साहित्य' भी अच्छा है। बहुत तो नहीं पर कुछ कम। आल्हा की सिरीज चली है। उम्दा है। कविताओं में माथुर की कविता 'जनयुगीय' नहीं है। वैसे बढ़िया है। नया साहित्य में जीवन चाहिए। केवल कल्पना नहीं। वीरेश्वर बाज़ी मार ले गए

हैं। 'बोल अरी ओ धरती बोल' भी खूब है। अब की तुम्हारा, 'उष:काल' भाषा का लोहा लंगड़ लेकर पढ़ते-पढ़ते भेजा खौंद देता है। यह डिशकशन भी ज्यादा Scholarly हो गया है। मालूम होता है कि पहले का लिखा धरा था। और भी सामग्री बेहतरीन है।

कुछ चित्तप्रसाद के व अन्य चित्रकारों के powerful sketches (दैनिक जन-जीवन के) निकलवाओ। इसकी कमी महसूस होती है।

कहानियाँ अभी नहीं जँची। वैसे अच्छी हैं।

तीसरा 'नया साहित्य' कब तक छपेगा। शमशेर की चोट कैसी है? अब वह कहाँ हैं? पत्र दिए पर जवाब नहीं आया।

'टीटो का आल्हा' देस की आगा खा गयी हैं। दुख हुआ। कापी देखने को उत्सुक हूं। पांडुलिपि एक दूसरी तो होगी ही।

मजदूर सभा का आल्हा पास है। बड़ा मज़े का है।

यहां peoples age की प्रति लेता हूं। बहुत ही लाजवाब निकल रहा है। Local agency हो गयी है। sale अभी सब १० तक है।

अगिया बैताल तुम्हीं हो न।

किताबें वही पढ़ता हूं जो तुम मुझे पढ़ाना चाहते हो। भई खूब निकलती हैं।

कहो कब बांदा आओगे। मलिकिन कहां हैं? नमस्कार। बच्चे अच्छे होंगे। प्यार। खूब लम्बा पत्र लिखना।

तुम्हारा

केदार

हिन्दी साहित्य सभा

सभापति

श्री बालकृष्ण पांडेय, एम० ए०

मंत्री

श्री रामविलास शर्मा, एम० ए०, पी-एच० डी०

श्री मदनगोपाल मिश्र, एम० एस-सी०

लखनऊ

ता०..............

महताब भवन

वजीरपुरा–आगरा

१९-३-४६

प्रिय केदार,

तुम्हारा पत्र मिला। बुरा न मानो, तुम्हारी कविताओं से तुम्हारे पत्रों में मुझे ज्यादा रस मिलता है। इधर की कविताओं में एक ठहराव महसूस होता है। यानी जहाँ थे, वहाँ से तुम आगे नहीं बढ़ रहे हो। तुम्हारी कविता में जो नये-नये भाव-चित्र देने की

क्षमता है, उसका दायरा संकुचित-सा होता जा रहा है। नये हंस में तुम्हारी 'गुम्मा ईंट' देखी।

'न कच्ची है
न सेवर है
न कोई खोखलापन है'

खूब ठस और सुन्दर है। लेकिन इसी बात को तुम 'कानपुर' और 'कोयलों' में ज़्यादा खूबसूरती से और ज़ोरदार शब्दों में कह चुके हो। अब तुम उसी बात को सिर्फ दोहरा रहे हो। यानी निम्नवर्ग के प्रति तुम्हारी सहानुभूति विभिन्न प्रतीकों से प्रकट हो रही है लेकिन उस अशरीरी सहानुभूति से तुम आगे नहीं बढ़ रहे हो। क्यों, मेरा विचार ग़लत है?

'चन्दगहना', 'काटो काटो करबी' वगैरह में यह सहानुभूति सशरीर है। उस परम्परा को आगे बढ़ाना ज़रूरी है? नये ठोस अनुभव से—जो प्रतिक्रियावादियों के सिर में गुम्मा ईंट जैसे लगे।

आज हिन्दी कविता में आमतौर से एक ठहराव नज़र आ रहा है। कुछ लोग जहाँ थे, वहाँ से पीछे जा रहे हैं, कुछ वहीं पैर टेके हुए हैं। इस ठहराव को जल्द तोड़ना है—अपनी जनता की आज की हालत को समझ कर, उसके नज़दीक जा कर। इसलिए तुम्हें यह लिखा—कागज़ी चपत न समझना।

नये हंस में माचवे और वीरेश्वर की रचनाएँ एक साथ पढ़ने से असली और नकली का फर्क साफ़ दिखाई देता है। माचवे की सहानुभूति गहराई से कविता में नहीं प्रकट हुई, वीरेश्वर की आनबान, पैंतरेबाजी और खम ठोंकना देखते ही बनता है।

'कहाँ के हो महेश, रच रहे नया मसान हो' इस पंक्ति को हिन्दी में वीरेश्वर के सिवा दूसरा कोई न लिख सकता था। मेरी तरफ से बधाई दे देना। अगर उसने दस-पाँच लाइनें और ऐसी लिख दीं तो मुझे उनके दर्शन करने बाँदा आना ही पड़े गा। मुझसे ख़फा तो नहीं हैं?

निराला जी का हाल क्या लिखें? राशन का ज़माना, खाना-पीना अस्त-व्यस्त। कभी साग उबाल कर खा लिया, कभी कुछ। फटे हाल पहले जैसे या बदतर। दिमाग उन्हीं के शब्दों में फुल स्विंग पर है। लेकिन इधर उनकी कविताएँ ज़्यादा साफ और निखरी हुई मिलीं।

मैं इस साल विदेशी भाषाओं से कुछ कविताएँ अनुवाद कर रहा हूँ। गर्मियों में मुलाकात हो गी तो दिखाऊँ गा। लेकिन सब गद्य में हैं।

अपना रुटीन क्या लिखूँ? कालेज का काम, बच्चों को पढ़ाना, कुछ पार्टी के लिए लिखना-पढ़ना, कुछ अपना अध्ययन। साल बीत गया पता ही न चला। डंड बैठक बदस्तूर है। नरोत्तम का पत्र आया है, बीवी [वीवी] के प्रेगनेंट होने से परेशान है।

तुम्हारा
रा० वि०

RAM BILAS SHARMA
M. A. Ph. D.
HEAD OF THE ENGLISH DEPARTMENT

B. R. COLLEGE
Agra....194

महताब-भवन
बजीरपुरा-आगरा
२२-४-४६

प्रिय केदार,

तुम्हारे गालों की सुर्खी और उस पर बालों की सफ़ेदी खूब है। ज़रूर देखने आऊँ गा। लेकिन अभी गाय, भैंस लगती है, फिर भी यह सफ़ेदी क्यों? क्या रात को चिराग़ जल्दी ही गुल हो जाता है?

तुम्हारी आलोचनाओं से अधिकांशतः सहमत हूँ। पत्र बम्बई भेज रहा हूँ। बच्चन के बारे में पार्टी की कोई नीति नहीं है। न इस तरह किताबों के बारे में पार्टी की नीति निर्धारित ही हो सकती है। क्या तुमने हंस में मेरी लिखी आलोचना देखी थी? एक बात साफ है कि 'सतरंगिनी' में पहले से उसकी कविताएँ अच्छी हैं और उनके दृष्टिकोण में भी काफ़ी अन्तर है।

तुम्हारे आल्हा[1] का अन्तिम बन्द ख़ूब ज़ोरदार है। मेरी समझ में आल्हा की ख़ूबी थोड़ी-सी बात को बढ़ाकर और विस्तार से कहने में है। लेकिन तुम्हारी कहानी में बात बहुत बड़ी और कहने को स्थान कम रहा है। इसलिए घटनाओं का स्पष्ट चित्र हृदय पर अंकित नहीं होता, वे द्रुतगति से एक-दूसरे के बाद सपाटा मरती [मारती] चली जाती हैं। तुम्हारी ख़ूबी है Lyricism; उसका मौका तुम्हें आखिर में ही मिला है।

नया-साहित्य[2] में तुम्हारी कविताएँ ख़ूब अच्छी लगीं।

वादा तोड़ने पर तुम्हारी गालियाँ न मिलें, इसलिए आने का अवकाश मिले गा, तभी सूचित करूँ गा। कोशिश करूँ गा कि मई के दूसरे हफ्ते तक ही आऊँ। घी, दूध की सख़्त ज़रूरत है, मैं भी कमज़ोर हो गया हूँ। दोस्तों का प्यार और ख़ातिर ही पहले जैसा स्वास्थ्य दे सकती है।

लेकिन मेरे बाल सफ़ेद नहीं हैं श्रवण समीप भी नहीं। चिन्ता न करना।

वीरेश्वर जी को सप्रेम।

तु०
रामविलास

---

1. आल्हा—बम्बई के नाविक विद्रोह पर।
2. नया साहित्य—बम्बई से प्रकाशित द्वैमासिक।

बांदा
२-५-४६

प्रिय शर्मा,

तुम्हारा पत्र प्राप्त हुआ। यह जानकर खुशी हुई कि मई के द्वितीय सप्ताह में आ रहे हो। मेहरबानी करके सूचित करना कब किस तारीख को आओगे। हां, खूब सामग्री लाना। खूब बातें होंगी।

गरमी खूब पड़ रही है। लेकिन चिन्ता न करना।

आल्हा को तुमने कहीं न कहीं भेज ही दिया होगा। लिखा नहीं। 'नये पत्ते'[1] का प्रकाशन हो गया है। अभी देखने को नहीं मिला। मंगाऊंगा।

बीरू[2] चैन से है। वकालत तो ठप्प ही सी है। बुरा ज़माना है। ख़त देना। प्रोग्राम क्या है?

तुम्हारा ही
केदार

महताब भवन
वजीरपुरा, आगरा
२८-५-[४६]

प्रिय केदार,

बच्ची के टायफाइड ने सब प्रोग्राम फिस कर दिया। फिर सही—'प्राण जाहिं पर बचन न जाई।' आऊँ गा ज़रूर और आने के दो दिन पहले सूचना भी दूँ गा। वीरेश्वर भाई को बन्दे।

तुम्हारा रामविलास

Banda
3-6-46

प्रिय शर्मा,

कृपा कार्ड मिला। जी को शान्ति मिली। मुझे तो ऐसा हो गया था कि तुम कहीं उड़ गये हो इसी से गुमसुम हो गये हो।

यह जान कर दुख हुआ कि बच्ची को Typhoid हो गया है। पूर्ण विश्वास है कि हमारे तुम्हारे प्रेम से वह स्वस्थ हो जायगी।

---

1. नये पत्ते—निराला जी का कविता संग्रह।
2. बीरू—वीरेश्वर सिंह।

'प्राण जाहिं पर वचन न जाहीं' वाली बात खूब कही। धन्यवाद। कृपया १० जून के बाद ही तशरीफ लाओगे। ७-६-४६ को मैं प्रयाग एक बारात में जाऊंगा। शायद ८-६-४६ को वहां से वापस होऊँ। अभी परसों वहाँ से लौटा हूँ। नागर बहुत पूछ रहा था। 29-5-46 को Radio में गया होगा।

तु०
केदार

Banda
15-9-46

प्रिय शर्मा,

यह पत्र इससे भेज रहा हूं कि तुम कहीं यह न सोच बैठना कि केदार मर गया है। अपने ज़िन्दा होने का सबूत है यह छोटा पत्र।

बहुत दिनों से ख़ामोश हो क्या बात है? कुछ लिखो तो मैं कवितायें नई नई भेजूँ। सकुशल हूँ। अपनी हरकतें लिखना।

बच्चों को प्यार।

तुम्हारा ही
केदारनाथ

Banda
7-12-46

प्रिय भाई,

हाल में, मोहर्रम की छुट्टियों में, प्रयाग गया था। वहां प्रिय मुंशी[1] के पास ही ठहरा था। चार दिन वहां रहा किन्तु चारों दिन बहुत बढ़िया बीते। तरह-तरह की बातें हुईं। तुम होते तो तुम से कविता पर अधिक बात करते घबड़ाता पर मुंशी से ख़ूब-खूब बातें हुईं। तमाम कविता पाठ हुआ। मुंशी भी कमाल का लिखता है। मैंने पहली बार कवि मुंशी के दर्शन किये। आगे ख़ूब निकलेगा।

वहाँ कुछ नये लोगों से मुलाकात भी हुई।

तुमसे मिलने की उत्कंठा तीव्रतम है। एक युग हो गया तब मिला था। अब पुन:

1. मुंशी—मेरे छोटे भाई रामशरण कवि और पत्रकार, नरोत्तम नागर के साथ काम कर रहे थे। शीघ्र ही 'लोकयुद्ध' तथा जन प्रकाशन गृह के काम में हाथ बँटाने बम्बई जाने वाले थे।

बात करना चाहता हूँ। इस बार बड़े दिन में चित्रकूट आओ सकुटुम्ब, मैं आमंत्रित करता हूं। ऊपरी शिष्टाचार का निमंत्रण न समझना। दिल से बुलाता हूं। मुंशी और नागर को भी बुला आया हूं। तुम आओगे तो वह भी आवेंगे। लिखो कब रेलवे स्टेशन में तुम्हारा स्वागत करूँ। अब तो काफी टालमटूल कर चुके हो।

हां, तुम्हें यह जान कर बेहद दुख होगा कि वीरेश्वर के सिर में एक बदमाश ने लाठी मार कर बड़ा घाव कर दिया है अतर्रा[1] में, केवल विला बात की बात पर। दवा हो रही है। लाभ है। ख़तरा की घड़ी निकल गयी है।

कोई नये हाल नहीं हैं। बच्चों को प्यार। मलकिन को नमस्ते।–नहीं, लाल सलाम।

तु०
केदार

New Years Day
[1-1-47]

प्रिय केदार,

साथ का ख़त पढ़ कर वीरेश्वर को दे देना। तुम देखो गे कि अब मैं जल्दी-जल्दी ख़तों का जवाब देता हूं। न यकीन हो तो ढेर से ख़त लिख कर देख लो।

दो-तीन रोज़ से यहाँ खूब सर्दी है। आज सबेरे घूमने गये तो ठंढ का हिसाब नहीं था। फिर भी उस पाले की सर्दी में हम सींचे हुए नाज की तरह बदन हरो हो गयो।

अमृतराय से मालूम हुआ था कि तुम्हारा कविता-संग्रह बनारस से निकल रहा है। लेकिन यह तो बहुत धीमी प्रगति है। तुम्हें और वीरेश्वर को साल में कम-से-कम दो किताबें लिखनी चाहिये। हम लोग लेखक हैं और कलम से देश की सेवा करते हैं। हमारी कलम को झख मार कर बैठ न जाना चाहिये। लेकिन तुम्हारी कलम पर यह दावा नहीं कर रहा हूँ–वकील हो, हिम्मत भी कैसे कर सकता हूँ। सवाल हमारे-तुम्हारे और बहुत सों के सामने प्रकाशन का है। इसके लिए हम लोगों को मिल कर कोशिश करनी चाहिये।

मेरा प्रस्ताव यह है। हम लोग कुछ लेखकों की कम्पनी, यूनियन या संघ बनायें। Paper Controller को apply करके काग़ज़ का कोटा लेकर प्रकाशन शुरू करें। काग़ज़ के प्रबन्ध में–और प्रकाशन की आज्ञा लेने में–तुम मदद करो, बाकी इन्तज़ाम मैं कर लूँ गा। बुनियाद डालने के लिए अमृत नागर, मैं, तुम, वीरेश्वर और नरोत्तम हैं। इसके अलावा जिसे चाहो। अपने संगठन को आगे विस्तृत भी कर सकते हैं। कौन-कौन सी

1. बाँदा से लगभग 30 किलोमीटर दूर, बाँदा की तहसील। [अ० त्रि०]

किताबें छापनी हैं, इसकी मैंने योजना बना ली है। लेकिन वह गौण है। पहले Paper Controller से काग़ज़ लेना है और अपना छोटा-सा संगठन बनाना है। तुम इस पर सोच कर लिखो और जल्दी कदम उठाओ।

काफ़ी पूँजीपति नयी संस्थाएँ चला रहे हैं। हम लोगों को काफ़ी देर हो गई है। और देर होने पर घर में ही लिख कर रखने लायक हो जायँ गे।

तु० रामविलास

agra
15-1-47

प्रिय केदार,

इस समय कालेज में बैठे हुए हम तुम्हें ख़त लिख रहे हैं। बहुत ही मनहूस वातावरण है। 80 लड़के इम्तहान दे रहे हैं। यानी मेरी आँख बचा कर बात करने, डेस्क में रखी हुई किताब देखने और जेब से कागज़ निकालने की कोशिश कर रहे हैं। कुछ लोग छत की तरफ देख रहे हैं। कुछ रात की घोटी हुई चीज़ें जल्दी से कागज़ पर उतारने की कोशिश में हैं।

नन्ददुलारे जी का कोई ख़त इधर नहीं आया, उम्मीद है निराला जी का अभिनन्दन विज्ञापित तिथि को हो जाय गा। क्या तुम काशी आओ गे? मुझे भरपूर आशा है कि मैं ख़ुद ज़रूर पहुँचूँ गा। आओ तो वहाँ बातचीत हो।

Wife की तबियत अब ठीक है। खाना पकाने के लिए मिसरानी रख ली है। चौका बर्तन को एक मेहरी लेकिन पहले के Strain से मेरी एक आँख में तकलीफ़ हो गई और १० दिन बीतने पर अभी भी ठीक नहीं हुई। इसलिए तुम्हें और जल्दी ख़त भी न लिख पाया।

मैं समझता था कि तुम्हारा वकील दिमाग कुछ काम करे गा और तुम फौरन क़ाग़ज़ वगैरह का इन्तज़ाम कर सको गे। लेकिन तुम भी निकले साहित्यिक! मैं तुमसे सलाह ले रहा हूँ और तुम उल्टा मुझसे सवाल कर रहे हो।

Paper Controller तो इलाहाबाद में हो गा। सबसे पहले ज़रूरी चीज़ यह है कि हम लोग Publication शुरू करने की अनुमति प्राप्त कर लें। इसके लिए यह ज़रूरी है कि हम लोग एक कम्पनी या अपनी प्रकाशन-संस्था वगैरह बनायें। क्या तुम्हारे साहित्य-परिषद बाँदा को पेपर कोटा मिल सकता है? पता लगाओ।

मैं चाहता हूँ कि तुम कानूनी शब्दावली में अपनी प्रकाशन संस्था का मसौदा बना लो जिसे हम लोग विज्ञापित आदि कर सकें।

शेष कुशल

Remember me to Vireshwar

तु० रामविलास

Banda
3-3-47

प्रिय भाई,

मैं बनारस न पहुँच सका क्योंकि पहुँच ही नहीं सकता था। तुमने निराला जयन्ती देखी ही होगी। हम लोग उससे वंचित रह गये। हिन्दी के अख़बार भी नहीं पढ़ते इससे कुछ विशेष हाल भी नहीं मालूम हो सके।

आज कल हम लोग भी Dull पड़ रहे हैं। 'पारिजात' में चल रही लेखमाला लिख कर शेर मार लिया करता हूँ हालाँकि एक भी मच्छड़ नहीं मरता। कहो तो वह लेख कैसे लगे? इधर क्या लिख रहे हो? मुंशी तो बम्बई पहुँच गया। कोई पत्र नहीं मिल सका।

घर में तो कुशल है। आजकल एकान्तवास है। India Today[1] पढ़ रहा हूँ। Fine—।

नरोत्तम का कोई पत्र नहीं मिला। होली की अबीर।

केदार

गोकुलपुरा–आगरा
१५–३–४७

प्रिय मित्र,

कविता की साध इस पत्र से ही पूरी हो।
पूरी हो तुम्हारे प्रिय मुक्त वर्णवृत्त में।
पढ़ता था पत्र कुछ पुराने जब
देखा एक लम्बा सा Defence मुक्तछंद का
दे रहा हूँ वैसे कुछ पत्र एक संग्रह में।
पत्र हैं निराला के,
स्वयं में खोये हुए,
सधे हुए, मोतियों से अक्षर रचे हुए,
कविवर गंगा के किनारे जहाँ
बैठ कर झरोखे से देखते हैं नीलाकाश!
पत्र हैं कविवर पंत के,
सन्' २६ के, छायावादी प्रत्यूष काल के,

1. इंडिया टुडे—रजनी पामदत्त की प्रसिद्ध पुस्तक।

पत्र और पुष्प जैसे आये जब हिन्दी
के उद्यान में,
कोमलकान्त कवि पंत रुपहले बौर लिये,
महाकवि निराला—एक कान पर शेफाली
दूसरे पर अमल—
कोमल—तनु तरुणी—जुही की कली।
डूबे हुए प्रथम नवयौवन के स्नेह में,
पुलकित हो उठो गे पढ़ कर तुम वह
उत्कट आत्मनिवेदन!
पत्र हैं नरोत्तम के,
सफल जो शास्त्रकार शुतुर्मुर्ग पुराण का,
जीवन की मही में तप कर जो बन गया है
मानव प्रगतिशील!
गोर्की के जीवन का चित्र देख कर जिसे
हो गया था ज्ञान, कैसे स्वर्ग का निर्माण होगा
इसी संसार में।
पत्र हैं अमृत के—अमृतलाल नागर के—
जीवन की नदी में पैठ गया मित्र वह
गहरे में,
मोतियों के साथ ही बघेर लाया ढेर सारी,
गीली रेत!
अपने ही जीवन के कर्दम को अर्पित किया
मुझे—
बाट जोहता है कब खिले इस पंक से....
पंकज साहित्य का!
—इसी समय छोटी बिटिया मेरी—
नाम है सेवा, लोग कहते हैं पप्पन या पपुआ उसे,
पञ्चम में गा रही है राग स्वच्छंदता का।
सुनता हूँ उसे और याद आ जाती है
कविता तुम्हारी मुझे।

वैसी ही स्वाभाविक, बिखरी हुई लड़ियाँ हैं
इस मुक्त काव्य की!
पत्र हैं तुम्हारे भी–
प्रेम भरे, हठ भरे, कहीं-कहीं रोष भरे,
हर जगह जीवन से भरे हुए, बोलते से
अक्षरों में, पंक्तियों में और शब्द-शब्द में!
सोच लो,
गुणात्मक रूप से तो
बहुमूल्य होगा यह पत्र संग्रह,[1]
किन्तु परिमाण में, अभी है अवतार वामन का
दिखाओ चाँद इसे
उठाये बाँह और विस्तृत आकार करे।
'भूतो न भविष्यति'....कह उठें लोग सब,
तब तो तारीफ़ है मेरे संपादन की,
वर्ना तो घास कूड़ा रोज़ छपा करता है।
लेख 'पारिजात' का
एक ही देख पाया
आता है कालिज में
मार ले जाते हैं मित्र लोग!
लेख वह अच्छा था
किन्तु अब खो गया है स्मृति के उस पार!
आशा है प्रसन्न हो।
देर तक रात में लैम्प जले कवि का,
मायाबी मरीचिकाएँ जीवन से दूर हों।
तथास्तु! एवमस्तु! मित्रवर!

तुम्हारा
रामविलास शर्मा

1. पत्र संग्रह—इस समय साहित्यकारों के चुने हुए पत्रों का एक संकलन निकालने की योजना थी, कार्यान्वित नहीं हुई।

RAM BILAS SHARMA — B. R. COLLEGE
M. A. Ph. D. — Agra...194
HEAD OF THE ENGLISH DEPARTMENT

गोकुलपुरा
आगरा
२०-५-४७

प्रिय मित्र,

तुम्हारे आग्रह से भेजा हुआ 'युग की गंगा' संग्रह मिला। प्रथम प्रकाशन के लिए बधाई। किताब का गेटअप मुझे पसन्द आया। छपाई कुछ गहरी ज़रूर हो गई है।

लखनऊ में गोराबादल[1] के एक सम्बन्धी विद्यार्थी योगेन्द्रकुमार मिले थे। शायद तुम से मुलाकात हुई हो, उनसे बाँदा के हाल मिले। गर्मी की छुट्टियों में मेरा बाँदा आने का प्रोग्राम अब भी है। शायद जून के दूसरे पखवारे में आ सकूँ गा। शायद यह ख़बर ग़लत नहीं है कि तुम्हारे यहाँ गाय भी लगती है।

यहाँ से २८ ता० को सिकन्दरा राव जा रहा हूँ। हो सके तो तुम और वीरेश्वर दोनों किसान कानफ्रेंस में आओ।

आज कल मैं एक आलोचना सम्बन्धी पुस्तक से युद्ध कर रहा हूँ। अपनी कविताओं के बारे में तुम्हारी सम्मति सुन कर बड़ा उत्साह हुआ।

बाक़ी जवाब आने पर....

तुम्हारा
रामविलास शर्मा

खिन्नी गली, गोकुलपुरा-आगरा
१९-६-४७

प्रिय केदार,

वीरेश्वर

हमारा प्रोग्राम था तुम्हारे यहाँ आने का जून के दूसरे पखवारे में लेकिन यहाँ दूसरा प्रोग्राम तै हुआ मुंशी की शादी का जो २८ जून को यहीं हो रही है। इस लिए साग्रह निवेदन है कि जनाबमन् तशरीफ लायें। नरोत्तम और निराला जी को भी लिखा है। आओ तो मामला जमे।

तुम्हारा
रामविलास

---

1. गोराबादल—वीरेश्वर सिंह

राज भवन :
१४-७-४७ सैण्डहर्स्ट रोड,
बम्बई ६

प्रिय केदार भैया,

मन की मन में ही रह गयी। सोचा था शादी के मौके पर 'अपनी सहधर्मिणी का ''युग की गंगा'' के लेखक से परिचय करायेंगे, मगर तुमने दग़ा दी। माफ़ करने की कोई गुंजाइश नहीं; मैं छोटा हूँ तो क्या हुआ। मैं मानता हूँ कि इलाहाबाद 'इप्टा' का प्रदर्शन देखने को मिला होगा। मगर, भैया, मेरी शादी में आगरा 'इप्टा' का तमाशा हुआ। भाँवरों के बाद 'इन्टरनेशनल' गाया गया। काश, तुम आ जाते। तुम एक क्या दस युग की गंगा लिख डालो हम तुम्हारे रौब में नहीं आ सकते। दूसरी बात, मैं कौन सा भाड़ झोंकता हूँ। यह तुमने पूछने की तक़लीफ़ भी न की। सच कहता हूँ लिखने के नाम पर, काग़ज़ के पन्ने सफाचट्ट हैं।–मुंशी

Banda
17-7-47

प्रिय मुंशी,

मुझे उतना दुख है जितना तुम्हें भी न होगा क्योंकि मैं तुम्हारी शादी में शरीक न हो सका। इतना सुन्दर अवसर था कि शायद अब इस ज़िन्दगी में कभी न आयेगा।

अगर बाँदा में 'इप्टा' देखने तक ही बात होती तो मैं आगरा को चल देता लेकिन उसे तो मैंने ही यहाँ के वातावरण में जान और हिम्मत डालने को निमंत्रित किया था। मैं ही अगर न रहता तो फिर बड़ी भद्द होती। मुझे नागर ने सब हाल बताया है तुम्हारी शादी का। खूब मज़ा आया उसे सुन कर।

मेरा रोब तो मेरी बीवी नहीं मानती तब तुम और दूसरे लोग क्या मानेंगे। कहती है इन किताबों को बाहर रख कर आया करो। आँखें बहुत फालतू नहीं है। भैया चुप रह जाता हूँ। घर की आग बड़ी बुरी हो सकती है।

तुम सब का केदार कभी भी रोब नहीं गाँठता। वही बुद्धू की तरह चुप रहना जानता है।

बहुत आकुल हूँ कि तुम कभी तो मेरे पास भी पत्र लिख दिया करो। नागर के पास लिखते हो पर वह दूर है इससे पता नहीं चलता। बहुत बड़े पत्र भेजो। क्या लिखा है? ज़रूर लिखो। अब की बार तस्वीर देखी जनयुग में।

सस्नेह केदार

राजभवन सैण्ड हर्स्ट रोड, बम्बई-८
२०-७-४६/[1]

प्रिय केदार भैया,

नागरजी से तो तुमने शादी का हाल सुन लिया मगर शादी में न आकर तुमने हमारा दिल ज़रूर दुखाया। अपनी शादी में मैं निराला, सुमन और श्री अमृतलाल नागर की ग़ैरहाज़िरी बरदाश्त कर सकता था, और की, मगर नागर जी (नरोत्तम प्रसाद) और तुम्हारी ग़ैरहाज़िरी बे-बर्दाश्त थी। नागर जी आ गये थे इससे बड़ी प्रसन्नता हुई। अगर कहीं तुम भी आ जाते।

तुमने अपनी असमर्थता लिखी, जो बहाना नहीं यथार्थ है। 'इप्टा' के समय तुम्हारा वहाँ रहना भी एक Moral ज़िम्मेदारी थी जिसका उल्लंघन नैतिक दृष्टिकोण से अक्षम्य होता। तुम नहीं आये; यह तुमने सही किया। परन्तु, मैं, इन सब कठिनाइयों के बावजूद भी अगर आपकी ग़ैरहाज़िरी महसूस करता हूँ, तो इसमें मेरा भी विशेष दोष नहीं है। मैं अपने मन को समझाता हूँ; वक्त की कठिनाइयों की याद दिलाता हूँ मगर वह ज़िद्दी शैतान बच्चे की तरह उस चीज़ पर मचला-सा है जो उसे नहीं मिली। ज़िद्दी बच्चों की एक ही दवा है—उन्हें रोने दो। समझाने से वे और मचलते हैं। यही दवा मैंने अपने लिये अंगीकार की है। मन आखिर कब तक परेशान होगा। कुछ समय में अपने आप ठीक-ठिकाने हो जायगा।

तुम्हें लम्बा ही नहीं, बहुत-बहुत-लम्बा पत्र लिखा जा सकता है अगर मैं यहाँ की गाथा लिखने बैठूँ। गाथा का कुछ अंश नागर जी के लिये लिखे गये पत्रों में अवश्य है, मगर उसे मैं तुम्हारे पत्रों में नहीं शुरू करूँगा। अगर शुरू करूँगा तो केवल एक शर्त पर, और वह यह कि तुम अपनी, अपने परिवार, अपने whims, achievements और Defeats की गाथा exchange के रूप में हमें लिखो। इसीलिये मैं लम्बा पत्र-अपने मानों में लम्बा-पत्र अभी टाल रहा हूँ।

''मेरा रोब तो मेरी बीबी (बीवी) नहीं मानती तब तुम और दूसरे लोग क्या मानेंगे। कहती है इन किताबों को बाहर रख कर आया करो। आँखें फालतू नहीं हैं। भैया चुप रह जाता हूँ।''

'रोब' शब्द तो मैंने इसलिए लिख दिया था कि पत्र लिखते समय मेरा भ्रातृ-स्नेह बाँध तोड़ कर उमड़ आया था। (ऐसा स्नेह कभी कभी राम बिलास भैया के लिये उमड़ता है, परन्तु पत्रों में नहीं, बल्कि जब हम दोनों अरसे की जुदाई के बाद मिलते हैं। वैसे, मिलने पर ख़यालाती लतियाव-हथियाव भी इतना होता है कि दो दुश्मनों में न होता होगा और यही कारण है कि हम दोनों इतने नज़दीक हैं।) परन्तु उस 'रोब' से जो 'बीबी के रोब' का राज़ खुला वह महत्वपूर्ण है।

---

1. सन् '46 नहीं' 47 है, क्योंकि मुंशीजी की शादी **28** जून 1947 को हुई थी। (अ० त्रि०)

गोया, तुम्हारी बीबी (अब मैं भाभी लिखूँगा) में और तुम्हारी किताबों में सौत-सौत का व्यवहार है, उसी तरह, जैसे प्राय: पार्टी के किसी सदस्य कामरेड के परिवार का पार्टी से सौत-सौत का व्यवहार होता है। मगर मेरे हिसाब से (मुमकिन है आगे मैं राय बदल लूँ—मगर अभी) परिवार और पार्टी में इस तरह का व्यवहार, सदस्य कामरेड के escapism को साबित करता है जो अपने परिवार पर अपने क्रांन्तिकारी होने का 'रौब' (फिर यह शब्द आया—अफ़सोस) डाल कर परिवार के Discipline से escape करता है। भाभी और पुस्तकों के बीच-तुम्हारी आँखें कॉमन हैं, जिन्हें दोनों अपनी अपनी तरफ़ घसीटती हैं। इस रस्साकसी को ख़तम करने के दो उपाय हैं—यानी यातो Highest Common factor निकाल दो—यानी आँखे फोड़ लो (जो राजनीतिक शब्दावली में Chauvianism) होगा जो एक कम्यु० में न होना चाहिये) या आँखों से कहो कि दोनों में समझौता करा दें।

समझौता ज़रूरी इसलिये है कि तब United front बन जायगा। किताबें भी तुम्हारी मदद करेंगी और भाभी भी। मगर किताबों के Laws या तुम्हारी Romantic कवितायें शायद भाभी को पसन्द न आयें इसलिये ऐसी चीज़ें लिखो और उनको सुनाओ जिनमें यथार्थ की ज़िन्दगी का पुट हो। तुम्हारी इस तरह की कवितायें उनके लिये रामायण की चौपाइयाँ बन जायँगी (गो तुम तुलसीदास न बनोगे) और साथ ही ऐसी कविता भी आगे आयंगी जिसमें मध्यवर्गी इन्टलेक्चुअलिज़्म कम होगा, शब्दों और शैली की धरपकड़ कम होगी मगर जीवित और गतिशील ज़िन्दगी की—हर एक की जिन्दगी की—बातें कहीं ज़्यादा होंगी।

साथ ही यह भी ज़रूरी है कि तुम उन्हें ''वकील की बीबी'' की दालान से पकड़कर बाहर की सर्द, दाँत कँपकँपा देने वाली हवा में लाओ और उन्हें उन लोगों की ज़िन्दगी दिखाओ जिनके लिये तुम और तुम्हारे साथियों का दल खून-पसीना एक करता है।

मगर, मैं तो बात ही बात में thesis लिख बैठा। मैं भूल गया था कि मैं छोटा भाई हूँ। अच्छा तो बस।

मैंने तुम्हें पिछले पत्र में ही लिख दिया था कि कुछ नहीं लिखता हूँ। गुन-गुनाने वाले गीत भी बन्द और चटपटी मसालेदार व्यंग-कवितायें भी। कुछ तो इसलिये कि समय पकड़ाई में नहीं आता और कुछ इसलिए कि बुद्धि भी अभी कम है—मैंने कुछ लिखना शुरू नहीं किया। यद्यपि भीतर की चीज़ बाहर के लिये ज़ोर मारती हैं और लिखने के नाम पर वमन की सी दशा हो जाती है। अभी परसों नरसों एक Gloomy, decedent कविता लिखी थी जिसमें कुछ पंक्तियाँ इस तरह की थीं—

मख ठोंक देते हैं नेता
थक कर बैठे हुये, चिलम पीते किसान की
लाँग खोलकर

जिसे मैंने फाड़ डाला। इसी तरह Reactionary Writers पर ताव आने पर एक कविता लिखी थी जिसकी कुछ पंक्तियाँ हैं–

''सड़ी हुई बदबू
मरघट के मुर्दों की
.... जो नहीं जल चुके........
छाई है धरती पर अब भी;
इसीलिये, हम चुनते फिरते हैं ईंधन
जंगल जंगल में...
भटक भटक कर....

मगर इन अधजले-मुर्दों के साथ कुछ लोग ऐसे भी हैं जो कहते तो अपने को प्रगतिशील हैं मगर साथ देते हैं अध-जले मुर्दों का। इनकी भी याद आ गई–

''और साथ ही
इन ज़िन्दा मुर्दों को दफ़नाने को जल्दी,
जिनकी रहती हुई ज़िन्दगी
'मौत-मौत' बस चिल्लाती है;
अंधकार के उस खंडहर में
जहाँ मूतने जा न सके कबरा कुत्ता भी,
हम क़ब्रों के लिये
जगह को नाप रहे हैं।''
–है न बिलकुल वमन की सी दशा!

इसीलिये सोचा है, कुछ दिन अभी कलम को गाड़े ही रखेंगे। अगर उसमें दीमक न लग गया और कुछ ठोस पना रहा तो फिर किसी समय निकालेंगे।

आजकल यहाँ पानी बरस रहा है, मूसलाधार नहीं हल्का-हल्का। इस पर लोग पूछते हैं, ''बीबी का ख़त आया है या नहीं?'' तबियत तो होती है कि कह दूँ कि इन दिनों अलग में ज़्यादा मजा है मगर तब वे शायद यहाँ से मेरे आगरा transfer पर ही तुल जावें। पहला पत्र तो मैंने तब लिखा जब यहाँ वालों ने नाक में दम कर दिया। बीबी भी बेचारी मन में क्या सोचती होगी, ऐसा मरद मिला जिसे कपड़ा पहनने का [की] तमीज़ नही; Romance तो बहुत दूर की चीज़ है।–यहाँ भी दो ही रास्ते हैं। या तो हम रोमान्स सीखें या बीबी को रियलिज़्म सिखायें। और हमारा पलड़ा रियलिज़्म की ही तरफ़ झुकता है। इसलिये सोच लेता हूँ कि पानी बरसने दो और लोगों को पूँछने दो–क्या मालूम रोमान्स की जगह बीबी को नज़ला हो गया हो। अच्छा है दूर है, दवा-ववा लेने न जाना पड़ेगा। लेकिन साथ ही बीबी कभी यह नहीं भाँप सकती कि मैं उसका ऐसा मज़ाक बना सकता हूँ। अगर भाँप जाय तो मेरे मार खा जाने की गुन्जाइश भी है क्योंकि party wholetimes होकर और बम्बई का पानी

पीकर मैं गुणा से भाग हो गया हूँ। और वह आगरे में दूध-घी पाती है। फिर रा० बि० भैया का साथ। अच्छा बस।

– तु० मुंशी।

बांदा
११-८-४७

प्रिय शर्मा,

वीरेश्वर ने एक पत्र में परिषद् की ओर से तुम्हें सितम्बर के लिए बांदा आने का निमंत्रण दिया था। किन्तु अभी तक निरुत्तर हो। कुशल-मंगल है न? मौसम अच्छा नहीं है? इससे चिन्ता हुई। पत्र पाते ही मुझे उत्तर दो कि क्या कारण है?

तुम्हें आना है। यह टालना अच्छा न होगा। तुम्हारी आलोचना पुस्तक समाप्त हुई कि नहीं। तुम पत्रों की एक पुस्तक तयार कर रहे थे। उसका भी क्या हुआ? 'प्रतीक' श्मशान का रंगीन धुआँ रहा। इधर कुछ लिखता हूं पर ज़ोर नहीं पकड़ पाता। गाड़ी चलाए जा रहा हूँ। तेज़ गति नहीं हो पाती।

मेरे एक सम्बन्धी आगरे आ रहे हैं, तबादला होकर। वह आप ही मिलेंगे।

सितम्बर में प्रयाग भी तो आओगे?

योग्य सेवा लिखना।

तु०
केदार

Raj Bhawan
Sandhurst Road
Bombay 4
23-8-[47]

तुम्हारा बढ़िया ख़त मिला। लिफ़ाफे वाला उत्तर तो मौजूदा हालत में मुश्किल है, क्योंकि जो आगरा से लिफ़ाफ़े लाया था वे ख़तम हो गये और पगार मिलने में अभी सात-आठ दिन की देर है, इसलिये दरम्यानी वक़्त में यह पोस्ट कार्ड।

राहुल जी आ गये हैं, वैसे ही विशाल, छोटा मुँह, छोटी आँखे, बड़ी नाक, चौड़ा माथा। अब बाल भी घुटा डाले हैं। एक रोज़ मैंने उन्हें पकड़ कर बातचीत भी की और अपनी शंका का समाधान भी कराया कि अगर यहाँ रह कर मैं ज़्यादा नहीं लिख पाता तो विशेष मेरा दोष नहीं है।–आज़ादी की खुशी में बंबई नाच उठी थी।

राम बिलास भैया का कोई पत्र नहीं आया। उनकी 15 अगस्त वाली कविता मुझे बहुत अच्छी नहीं लगी, तुम्हारी ज्यादा नरम थी।

तु. मुंशी।

केदारनाथ अग्रवाल | बान्दा (यू० पी०)
एडवोकेट | तिथि—26-8-47

प्रिय मुंशी,

तुम्हारा पोस्टकार्ड मिला। बम्बई के हाल सुनकर तुमसे ईर्षा [ईर्ष्या] होती है। तुम वहां हो जहाँ मनुष्य को बड़े भाग्य से स्थान मिलता है।

लिफाफों का पगार न मिलने की बात भी ख़ूब मालूम हुई। इस तरह की तमाम चीज़ें लिखा करो तो मेरे लिए उपन्यास का सजीव मसाला इकट्ठा हो जाय। पर तुम तो इतना इतिवृत्तात्मक पत्र लिख देते हो कि नई दुनिया की हवा भी नहीं मिलती। तुम्हारे जीवन की अजीब रफ्तार है, उसी को जानने-समझने को मैं उत्सुक हूँ। कैसे क्या-क्या किया करते हो? फिर वहाँ तो इतने अच्छे कलाकार भी हैं कि उनका जीवन अति निकट से देख कर मज़ा आ जाता होगा। हमारे शमशेर[1]भाई क्या करते रहते हैं? उनकी ख़बर नहीं मिलती। 'जनयुग' में इस बार उनका नाम देखा कि वह 15 August को नाच रहे थे। काश मैं होता और उनका चित्र खींच लेता। चित्तप्रसाद जी के Posters लाजवाब ही तो होते हैं। ज़रा उनके बारे में भी बहुत ज्यादा (देख देख कर) लिखा करो। ज़ीवन का ज़ोर उन्हीं में उभरा मिलता है। कवियों में रामविलास और चित्रकारों में चित्तप्रसाद दोनों एक ही रफ्तार से आगे बढ़ रहे हैं और दोनों ने ही सही अर्थ में साहित्य और जीवन को समझा है। मुझे तो इतनी खुशी होती है कि छाती फूल कर बहुत चौड़ी हो जाती है। हम सब तो घिघियाते हैं, कविता नहीं करते। पर कुछ लोगों ने हमें सर पर चढ़ा दिया है इससे इतरा रहे हैं। सच मानो यही लगता है कि अब गिरे तब गिरे। कलम को ज़बरदस्ती कान पकड़ कर, खरेदता हूँ तब भी स्याही नहीं उगलती। बड़े-से-बड़े अवसर आते हैं मानसिक प्रक्रिया के व्यक्त करने के किन्तु मूक ही रहती है। बेचारी करे तो क्या करे। जब मेरा दिमाग ही नहीं हाँकता तब वह चले तो कैसे चले। वह तो कहो कि भौतिकवाद के हल की मुठिया पकड़ ली है मैंने और जीवन की परती-धरती को रात-दिन जोते जा रहा हूँ, बीज बोये जा रहा हूँ और हर वक्त ताके जा रहा हूँ, इससे साहित्यिक अकाल से बचा हूँ वरना मैं भी बंगाल के ३५ लाख भूखे मृत व्यक्तियों में एक होता।

तुमने इधर 'शुद्ध साहित्य' की चर्चा 'हंस' में पढ़ी होगी। भाई, यह एक बड़ी बेवकूफी की समस्या पेश की जा रही है। 'प्रतीक' वाले भी इसी का दम भरते हैं। पर मेरी समझ में ख़ाक नहीं आता। मज़ा तो यह है कि प्लैखानोव जैसे बड़े-बड़ों का नाम भी उद्धृत किया जाता है। ऐंगल्स की दुहाई दी जाती है तो लेनिन की। मैं कमर कस कर इन महापुरुषों से हाथपाई कर ही बैठता हूँ और बार-बार इन्हें परास्त करके ज़मीन पर धर पटकता हूँ। वह ज़रा भी उठते हैं तो फिर एक लँगड़ी मार देता हूँ। सच मानो यह

---

1. शमशेर इन दिनों कम्युनिस्ट पार्टी के केन्द्रीय कार्यालय में थे।

'शुद्ध-साहित्य' की आवाज़ ग़लत है। इससे न जीवन का कल्याण होता है न समाज का। फिर जब भौतिक जगत का ही अंश यह मस्तिष्क है तब हमारी विचार और भावधारा भी तो भौतिक जगत की अंश है। मानसिक जगत ऐसी कोई जगह है नहीं। फिर यह कहना कि उस जगत की ही सत्ता की वजह से यह भौतिक जगत स्थित है सर्वथा भ्रममूलक है। थोड़े में कहूँ तो यही कहूँगा कि पिनक का साहित्य ही 'शुद्ध साहित्य' में गिना जाता है। कहो तुम्हारी राय क्या है? अगर सलाह हो तो चाबुक चटकाया जाए।

जहाँ तक मेरी धारणा का सवाल है वह यही है कि वर्णहीन समाज की ओर अग्रसर करने वाला निर्व्यक्तिक [निर्वैयक्तिक] साहित्य ही अपनी महत्ता रखता है। शेष साहित्य तो 'शून्य' साहित्य है।

P. A.[1] में Writers Freedom पर एक लेख माला शुरू हुई है। तुम्हारे भाई साहब ने तो वह हथौड़ा दिया है कि कोई जवाब क्या देगा। विष्णु दे ने उत्तर दिया है पर वह सिवाय मिमियाने के और कुछ नहीं है। मुझे तो कोई भी तथ्य नहीं मिलता उसमें।

राहुल जी के दर्शन हो गए। खूब रहा। मैं तो तरसता ही रहूँगा। तुमने तो बहुत-बहुत बातें की होंगी। कुछ साहित्यिक तथा जीवन सम्बन्धी बातें। मुझे भी लिख कर भेज दो। यह स्मृतियाँ अपने तक ही सीमित न रक्खो, उन्हें मुझे भी देखने दो।

Book News मिली है। जी चाहता है सब पुस्तकें खरीद लूँ पर जेब फटा है इससे दमड़ी भी नहीं टिकती। एक भी उपन्यास पढ़ने को नहीं मिलता। यह कितना ख़राब है।

मेरी कविता कमज़ोर रही, यह मैं नहीं मानता। वह तो एक गीत के रूप में थी। ख़ैर। न छपने से मुझे कोई दुःख नहीं हुआ। न हो ही सकता था।

[केदार][2]

Banda
16.9.47

प्रिय भाई,

मुझे चिन्ता थी कि तुम आगरे न पहुंच पाये होगे ट्रेनों की अनियमितता के कारण। पर पता चला कि आगरे के बाद वह प्रारम्भ होती है। इससे कुछ शान्ति हुई।

---

1. 'पीपुल्स एज', साप्ताहिक।
2. इस पत्र में केदारजी के हस्ताक्षर नहीं हैं। संभव है इसका अंतिम पृष्ठ खो गया हो। [अ० त्रि०]

लिखो, सकुशल पहुंच तो गये। अब तुम्हारा ज्वर कैसा है? हाँ मालकिन का हाल कैसा है? घर में तुम्हारी गैरहाज़िरी में ठीक ही ठाक रहा होगा।

मैं ९.९.४७ को ही रात बांदा पहुंच गया था। पंत से मुलाकात हुई होगी। क्या रहा? रसवाद के बारे में तुम्हारा क्या मत है? सूक्ष्म संकेत दे दो।

मैं रमेश[1] से बिल्कुल सहमत हूँ साहित्य की वर्तमान दिशा के बारे में। तुम्हारा दृष्टिकोण जान नहीं पाया। पर वह सहमत होगा ही।

कमलेश[2] भी ख़ैरियत से घर पहुंच गये होंगे।

भाई, ख़ूब रही कान्फरेन्स[3]। मुंशी का कोई पत्र नहीं आया।

वीरेश्वर ने पत्र लिखा ही होगा आना जरूर और मेरे लिए पुस्तकें जरूर लेते आना। भूल न जाना।

बच्चों को प्यार। सस्नेह
केदार

गोकुल पुरा, आगरा
२०.९.४७

डियर दोस्त

तुम्हारी चिंता बिल्कुल बेकार थी कि मैं आगरे पहूँचा कि नहीं। जिनकी तक़दीर में आगरे रहना लिखा है, उन्हें ज़ंजीर खींचकर कौन रोक सकता है?

ज्वर तो उतर गया है लेकिन, ख़ुमार बाकी है। मालकिन के शरीर में खून की कमी है। दवादारू कर रहा हूँ। पंत जी से मुलाकात हुई। अरविन्द घोष से नई-नई बातें सीखकर आए हैं। 'लोकायतन' खोलें गे जिसमें ज्योतिद्वार, संस्कृति-द्वार, साहित्य द्वार आदि अनेक द्वार हों गे। बुद्धि का प्रवेश सभी में निषिद्ध हो गा। चोबदार अज्ञेय, बच्चन, नरेन्द्र वग़ैरह होंगे ... पंत जी ख़ुद हैड जमादार। उम्मीदवारों में मेरा भी नाम लिख लिया है लेकिन मैं यहीं से काम करना चाहता हूँ।

रस के बारे में—उसके मनोरंजन पक्ष को हम स्वीकार करते हैं लेकिन वह लोकोत्तर आनंद ऐसा है कि उससे सामाजिक संस्कार नहीं बनते, इसे ग़लत मानते हैं। मुझे नहीं मालूम साहित्य की वर्तमान दशा के बारे में रमेश ने क्या कहा था। तुम विस्तार से लिखो, ख़ास तौर से जो तुम ख़ुद सोचते हो तो मैं उस पर राय दूँ। वीरेश्वर से तय हो गया था कि बाँदा नहीं आऊँ गा। हमारी तरफ़ से भेंट-भेंट कहना।

तुम्हारा
रामविलास

---

1. रमेश—रमेश सिन्हा पत्रकार, कम्युनिस्ट पार्टी के कार्यकर्ता।
2. कमलेश—आगरे के साहित्यकार पद्म सिंह शर्मा 'कमलेश'।
3. कान्फ्रेंस—इलाहाबाद में प्रगतिशील हिन्दी लेखकों का सम्मेलन।

केदारनाथ अग्रवाल बाँदा (यू० पी०)
एडवोकेट तिथि 18.10.47

प्रिय शर्मा,

मैं भी इधर घर की झंझटों में फँसा रहा हूँ और अब भी हूँ इससे सुचित्त हो कर तुम्हें पत्र नहीं लिख सका। पोस्टकार्ड मिला था। वह उत्तर का आदेश बराबर देता रहा है पर घर के होहल्ला में उसकी मैं सुनायी ही क्या करता!

कल वीरेश्वर ने तुम्हारा नया लिफाफा पढ़ने को दिया। हाल मालुम हो गये। ख़ुशी तो बेहद हुई कि लाला साहब[1] ठाकुर साहब[2] के बराबर मोटे हो गये! पर जब पुस्तकें छप कर दिखायी दे जायँ तब जानूँ। मुझे तो तुम्हारी कोई भी पुस्तक पढ़ने को आज तक न मिली। न भारतेंदु पर न प्रेमचन्द पर। मोल भी लँ तो कहाँ से? पता ही नहीं मिलता।

तुमने मेरी भूमिका पर कुछ लिखा है। वह सब सही है। मैं अपनी भूमिका में संत-कवियों को Omit कर गया था। एक वाक्य में उन पर कुछ कह गया था। वह ठीक तो था परन्तु मैंने उन्हें जन-कवियों के रूप में व्यक्त नहीं किया। यह मेरी गलती जरूर थी। किन्तु मैंने अभी हाल में एक लेख लिख कर समाप्त किया है। उसमें मैंने उन्हें Mention किया है। यदि तुम यह पढ़ लोगे तो कभी भी मुझे दोष न दोगे। मैं उसे, कहो तो, भेज दूँ। इसलिए कृपया पुस्तक की भूमिका को अधूरी समझ कर इसको मेरी 'ठोंक पीट' का कारण न बना देना।

हाँ तुमने वस्तु जगत की आर्थिक प्रक्रिया के बारे में भी दो एक बातें लिखी हैं। तुम साहित्य में उस प्रक्रिया को घुमाव-फिराव के साथ रूप बदल कर साहित्यिक रूप में व्यक्त किये जाने की बात लिखते हो, मैं उसे साहित्यिक रूप में नहीं, जीवन के रूप में व्यक्त होने देना चाहता हूँ। सम्भवत: यही मतभेद है। बिना ऐसा किये हमारी पिछड़ी जनता हमारे स्तर तक नहीं आ सकती। पहले वह वहाँ आ जाये फिर आगे बढ़िये। इसलिए आज का साहित्य जीवन को अधिक अपनाये और उसी के अधिक अनुरूप हो, चाहे उसे साहित्यिकता खोनी ही पड़े तो मैं लाभ ही लाभ देखता हूँ।

प्रिय मुंशी के पत्र आते हैं। पर ख़ूब नहीं लिखता। शायद व्यस्त रहता है। मैं उसे आजकल कई पत्र लिख चुका हूँ और अब भी लिखूँगा।

तुमने वह पुस्तक नहीं भेजी जो डाक द्वारा भेजने को कहा था। मैं बड़ी ही उत्सुकता से उसकी प्रतीक्षा कर रहा हूँ। वह पुस्तक पढ़ कर शीघ्र ही वापस कर दूँगा। खराब न होने दूँगा। इधर कई प्रतियाँ Soviet Lit. की खरीदी हैं। पढ़ रहा हूँ।

---

1. केदारनाथ अग्रवाल
2. वीरेश्वर सिंह [अ० त्रि०]

यह जान कर दुख हुआ कि मलकिन जी बीमार हैं। गृह-जंजाल कठिन है पर इसी में जीवन भी है। मलकिन की सेवा संसार की सेवा है। ऊब ज़रूर रहे हो प्रकृति के पत्तों में छिप रहने को परन्तु वहाँ भी चैन पाओगे। हम सबके लिए कर्म का क्षेत्र ही है जहाँ मरें और जियें।

मैं तो बार-बार बुला चुका बाँदा आओ। पर तुम आते ही नहीं। तुम्हें दोष नहीं देता, पर लाचारी पर खीझ उठता हूँ। कृपया घर की बीमारी से चिन्तित न होना। योग्य सेवा लिखना। मैं तैयार हूँ ख़िदमत करने को।

हाँ, गोरा बादल अब Revenue Officer हो गये हैं। साधारण Citigen नहीं रहे, अब अफ़सर हो गये हैं और तनखाह पायेंगे और कुर्सी पर बैठ कर माल के मुकदमें फैसल करेंगे। कृपया उन्हें ''खलीसा'' भर के बधाई भेज देना। मैंने अपनी ओर से दे दिया है।

अब मैं ही अकेला यहाँ की साहित्य-परिषद् का सक्रिय सदस्य रह गया। वीरेश्वर से सहयोग तो मिलेगा ही पर अफ़सरी की दुम ज़रा टेढ़ी होती है। सीधा करूँगा पर वह फिर टेढ़ी हो ही जायगी।

सस्नेह
केदार

(कार्ड नं० १)

गोकुलपुरा, आगरा
२७.१०.४७

प्रिय केदार,

छपे हुए 'लेटर पैड' पर तुम्हारा दुपन्नी खत मिला। यह जानकर हर्ष विषाद कुछ न हुआ कि श्रीमान् गोरा बादल रेवेन्यू ऑफीसर हो गये हैं। मेरी तरफ से पीठ पर हाथ रखकर बधाई दे देना। तुमने मेरी कोई पुस्तक अभी तक नहीं पढ़ी—इसमें ज़्यादा नुकसान नहीं हुआ। जब पढ़ने लायक किताबें लिखने लगूँ गा तब तुम तक पहुँच ही जायें गी। तुमने लिखा है कि संत कवियों पर 'एक वाक्य' में कुछ कह गया था। अजी हज़रत, आपकी भूमिका में मध्यकालीन हिन्दी साहित्य के नाम पर सिर्फ रीतिकालीन कविता दिखाई देती है और तुलसी और सूर एक लंबे पैराग्राफ़ में पलायनवादी सिद्ध किये गये हैं। ग़लती तो थी ही; जिस लेख में उसका मार्जन किया है, उसे मेरे पास भेज दो। मैं उसका ज़िक्र करके बैलेन्स बराबर कर दूँ गा। ठोंकने-पीटने लायक तुम नहीं हो। जो कुछ कहूँ गा मुहब्बत से। 'चोली चीर' वाली बात याद है न?

समाज की आर्थिक व्यवस्था और उसका साहित्य पर प्रभाव, इस बारे में मैंने जो कुछ लिखा था, वह शायद साफ नहीं हुआ। इससे मुझे कब इंकार है कि आज का

साहित्य जीवन को अधिक अपनाये और उसी के अधिक अनुरूप हो। लेकिन यह जीवन संश्लिष्ट रूपों में प्रकट होता है। उसे Oversimplify नहीं किया जा सकता।

(शेष दूसरे कार्ड में)

(कार्ड नं० २)

साहित्य को आर्थिक व्यवस्था का सीधा प्रतिबिम्ब समझना हक़ीकत से इन्कार करना है। मिसाल के लिए तुलसीदास ने राजा दशरथ और राजा रामचन्द्र का नाम लिया है; इसलिए तुम उन्हें राजसत्ता का पोषक कह कर ही छोड़ दोगे—लेकिन 'भरत' के चरित्र में उन्होंने जो करुणा भर दी है, उसके मानववादी महत्व को बिल्कुल भूल जाओ गे। तुम यह भी नहीं बता सको गे कि तुलसीदास ने यह क्यों लिखा—'दारिद दसानन दबाई दुनी दीनबन्धु दुरित दहन देखि तुलसी हहाकरी।' दरिद्रता को रावण कहना क्या सिर्फ धार्मिकता है। इस तरह के लेखकों में अपने युग की असंगतियाँ झलकती हैं। तुलसीदास के सामने—समाज का वही ढाँचा था जो—शास्त्रों में लिखा हुआ था लेकिन उनकी सहृदयता बार बार उससे बग़ावत करती थी। इस असंगति को पकड़ना आलोचक का काम है। इसी तरह मिल्टन का शैतान दुर्गुणों से भरा हुआ है फिर भी वह Renaissance के विद्रोह का सबसे बड़ा प्रतीक है। तोल्स्तोय ने धर्म की घूँटी दी थी फिर भी पूँजीवाद के खिलाफ किसानों के असंतोष को प्रकट करने वाला सबसे बड़ा लेखक वही था। रूसो और वोल्टेयर राज्यतंत्र के विरोधी नहीं थे। फिर भी फ्रांसीसी राज्य क्रांति के सबसे बड़े विधायक वही थे। तुम एक पहलू देखते हो, दो विरोधी पहलुओं से मिल कर जो यथार्थ बना है, उसे भूल जाते हो। इति[1]

तुम्हारा
रामविलास

मुख्य-केन्द्र-भवन
हिन्दी-साहित्य-परिषद्
बांदा
४.१२.४७

प्रिय भाई,

तुम्हारी भेजी पुस्तक यथासमय मिल गयी थी। पढ़ रहा हूँ। पहले भी लिख चुका हूँ।

---

1. यह पत्र दो अलग-अलग पोस्टकार्डों पर एक ही साथ एक ही क्रम में लिखा गया था। यह परम्परा आगे भी मिलेगी। [अ० त्रि०].

इधर कई कविताएं लिखी हैं। तुम होते तो तुम्हें सुना कर गालियाँ सुनता। कुछ अच्छी, कुछ ख़राब हैं। पर प्राय: सभी तुकान्त हैं। यही बुरी बात है!!

इस वर्ष राहुल जी ने हमारी परिषद् का सभापति होना स्वीकार कर लिया है। कल स्वीकृति आ गयी है। कृपया लिखो क्या कार्य परिषद् की ओर से सांस्कृतिक क्षेत्र में किया जाय? कुछ तो राय दो।

अब नागर ''हंस'' में आ गया है। पर कब तक रह पावेगा, राम ही जाने।

तुमसे एक कहानी माँगी थी। क्या भेजोगे? संग्रह छपेगा ही। भेज दो तो अच्छा हो।

''नींद के बादल'' को देखा या नहीं? मेरा विकास स्पष्ट हो जाता होगा।

कब आ रहे हो इधर सैर-सपाटे को। क्या बम्बई जाओगे साहित्य सम्मेलन में? लिखना।

तु०
केदारनाथ

मुख्य-केन्द्र-भवन
हिन्दी साहित्य परिषद्
बांदा
४.१२.४७

प्रिय भाई, ![1]

तुम चुप हो। सम्भवत: मुझसे कविता न पा सकने के कारण नाराज हो। ठीक ही है। पर याद रखना, मिलने पर वह कविताएं सुनाऊँगा जो किसी हिन्दी वाले [ने] नहीं लिखीं। इधर कई लिख चुका हूँ। लेख भी तयार किया है। 'हंस' में देखना। 'जनयुग' में तो कविता निकलना बड़े प्रताप की बात होती है। इससे ''हंस'' में ही छपा कर संतोष कर लेता लेता हूँ। एक कविता–मेरी आवाज़–आने को है। हिन्दू-मुस्लिम समस्या पर लाजवाब है। अब नरोत्तम ''हंस'' में ही पहुंच गए हैं। उन्होंने यही लिखा है मेरी कविता के बारे में।

तुम्हारे न लेख पढ़ने को मिलते हैं न कविताएं। क्या किया करते हो? कुछ तो कलम चलाते रहो। कई उपन्यास खरीदे हैं। Soviet Literature के पिछले Volumes भी हैं। इन्हीं में लिप्त रहता हूँ। इधर अनुवाद रुका है।

आगरा से "Don Flows Home to the Sea" आया है। वह भी पढ़ रहा हूँ।

---

1. यह पत्र श्री रामशरण शर्मा 'मुंशी' को बम्बई भेजा गया था। [अ० त्रि०]

अब हमारी परिषद् के सभापति राहुल जी हो गए हैं। मैं मंत्री हूँ। कृपया उनका एक सुन्दर चित्र बंबई के दफ्तर से लेकर भेजवाओ। उसे चित्रकार से बनवाना है।

केदार

गोकुलपुरा , आगरा
९.१२.४७

प्रिय केदार,

कल तुम्हारा कार्ड मिला। 'नींद के बादल' छुप कर उड़ने लगे, यह जान कर ख़ुशी हुई। लेकिन अभी तक हमारे पास नहीं आये। नरोत्तम हंस में पहुँच गया है। अमृत नागर का यहाँ काफी साथ रहा लेकिन आजकल वह लखनऊ में हूँ। वीरेश्वर से अपनी कवितायें भेजने को बहुत कहा लेकिन वह न पसीजा। 'जनयुग' पर बम्बई के ban की बात सुनी होगी। एक महीने के ban से ताक़त आज़माना चाहते हैं जिससे कि अगले हमले की तैयारी कर सकें। विप्लव में शुभकामनायें और 'हंस' में शिवचन्द्र की आलोचना वाले लेख देखे या नहीं। रानी में तुम्हारी गंगा की शुभ आलोचना निकली है। न देखी हो तो कटिंग भेज दूँ। साहित्य परिषद् में जाना इस बात पर निर्भर है कि बड़े दिन की छुट्टियों में वाइफ के पेट का Operation होना है या नहीं। परिषद् के साथ-साथ ग्राम कवि सम्मेलन ज़रूर करना।

बाक़ी कुशल है।

तुम्हारा
रामविलास

केदारनाथ अग्रवाल बान्दा (यू० पी०)
एडवोकेट तिथि 29-12-47

प्रिय शर्मा,

दो कविताएं भेज रहा हूँ। पढ़ना और मेरी ही तरह कंधे में राइफल धरे दौड़-दौड़ कर फिर उसे सीने के पास ला कर आगरे की अपनी छत से ज़ोर-ज़ोर से धाँय-धाँय दागना ताकि काश्मीर के बैरियों के सीने फट-फट जाएं और जनता का काश्मीर जीते। मैं तो इसे लिखते समय यही अनुभव कर रहा था। इंडियन यूनियन का कोई भी सेनानी इतनी वीरता से न लड़ा होगा जितनी वीरता से मैंने लिखते-लिखते और बाद को भी राइफलें चलाने का अनुभव किया है। मन होता है कि टिकट कटा कर वहीं जाऊँ और पल्टन में भरती हो कर बर्बरता के विरुद्ध युद्ध में शामिल हो कर अपनी और अपनी क़लम की जीवन की सबसे बड़ी प्यास बुझा दूँ।

गोरा बादल अब दो वर्ष को मौन धारण करेंगे। फिर साहित्यिक सूर्य बन कर प्रकट होंगे। उन्हें अब तुम भूलने का प्रयत्न करो अर्थात् चिट्ठी चपाती से।

मुंशी कहाँ हैं?

क्या हुआ Operation का? पटने गये अथवा नहीं?

भाई! खूब पढ़ रहा हूँ। कविताएँ बहुत-सी लिखी हैं। मन-पसन्द की हैं। मिलो तो दिखाऊँ। कहाँ तक क़ागज पर अपनी चमड़ी उतार उतार कर भेजूँ।

पुनश्चः श्री चन्द्र [शिवचंद्र] पर तुम्हारा नोट पढ़ा। बढ़िया है। अच्छा मारा। माफ करना मेरे लेख की असंगतियों को। वैसे कैसा जँचा?

तु० केदार

गोकुलपुरा-आगरा
३०-१२-[४७]

प्रिय केदार,

भारत की सूखी धरती पर नींद के बादल ही मँडरायें; उसका रूखापन तो दूर हो। इसके बारे में Apologetic होने की क्या बात है? सपनों के बिना आदमी ज़िन्दा कब रह सकता है? नींद से ज़्यादा जागने के सपनों की ज़रूरत होती है। तुम्हारे नींद के सपनों में मिठास है, कहीं-कहीं बिल्कुल गुड़ की भेली की तरह। उम्मीद है कि जागने के सपने शक्कर जैसे हों गे जो control के भाव ही बिकें गे, decontrol के नाम खुले ब्लैक मार्केट के भाव पर नहीं। यह इसलिये कि नींद के बादलों की छपाई-सफाई दुअन्नी भर लेकिन कीमत बीस आना है।

तु० रामविलास

Banda
20.5.48

प्रिय भाई,

इधर एक लम्बे अर्से से तुम्हारी चिट्ठी नहीं आई। कारण नहीं जानता क्या है? न तुम्हारी रचनायें ही (पद्य) पढ़ने को मिल रही हैं। नागार्जुन की रचनायें बहुत बढ़िया आ रही हैं।

कब कहाँ रहोगे? मैं लखनऊ आना चाहता हूँ दो दिन को। क्या तुम वहाँ जाने वाले हो? यदि आओ तो लिख देना। और अगर न लिखो तो पत्रवाहक से ही कह देना वह लिख देंगे। मिलने पर बातें होंगी।

मुंशी तो बम्बई ही होगा। उसकी पार्टी पर प्रहार हो रहा है इससे वह परेशान होगा ही। मैं भी चिन्तित हूँ।

अब तुम्हारे प्रकाशन का क्या हो रहा है? तुम्हारी पुस्तकें कब तक निकलने वाली हैं?

''हंस'' देखते ही होगे! कुछ राह बता दिया करो। गलत पथ पर तो नहीं चल रहा? कुतुबनुमे का काम कभी-कभी तो कर दिया करो।

यहाँ तो गरमी पड़ रही है। हम सब सूखे जा रहे हैं। पानी न मिले तो खलरी मात्र रह जाय। अन्धड़ बेहद उड़ता है।

बच्चे कैसे हैं? प्यार।

योग्य सेवा लिखना।

तु०
केदार

बांदा
४.६.४८

प्रिय नागर [1] भाई,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं अभी तक अपने कुछ कतल के केसों से अवकाश ही नहीं पा रहा इस हेतु आता ही कैसे।

मैं सोमवार को अथवा मंगल को यहाँ से चलूँगा और बनारस को अवश्य ही पहुंचूँगा। तब तक तुम शर्मा को तथा निराला जी को अवश्य रोके रहना। मेरे साथ इतना अवश्य करना वरना मज़ा किरकिरा हो जायेगा। इससे पहले यों नहीं चलना चाहता क्योंकि अमावस की भीड़ भी तो आ रही है। श्रीमती जी को प्रयाग छोड़ना है।

सबको नमस्कार।

सस्नेह
केदार

४ जुलाई ४८

प्रिय केदार,

हंस मिल गया ना? आखिर कविता समय पर न पहुँची। ख़ैर, अगले अंक में जाय गी।

आजकल श्रीमती जी बच्चों के साथ मायके हैं। इसलिये खीर फल खाकर निबाह

1. श्री नरोत्तम नागर (अ० त्रि०)

करते हैं। अ० बै०[1] की कई कविताएँ लिखी हैं; भेज दीं। मुंशी की चिट्ठी आई है। जिन्दगी के पुराने दिन गुना करता है।

गरमी अभी घनघना रही है।

तुम्हें भारतेन्दु युग और निराला भेज रहे हैं।

उम्मीद है—कलम माँज रहे हो गे।

तुम्हारा
रामविलास

गोकुलपुरा—आगरा
६-१०[५०]

प्रिय केदार,

तुम्हारा ३/१० का कार्ड मिला। जरूर आओ। १७ के पहले-पहले जब भी आ सको, उत्तम है। १८-२५ तक मैं बाहर रहूं ंगा। अपनी कविताएँ लाना। नागर-मुंशी सब ख़ूब मज़े में हैं। मेरे घर का पता—नाले वाली गली (जानकी बाई नागर का मकान) गोकुलपुरा, आगरा है। तारीख समय लिखना, मैं स्टेशन पर मिल जाऊँ गा।

तुम्हारा
रामविलास

8th Oct., 50
लखनऊ

प्रिय केदार भैया,

तुम आ रहे हो? सच?—इससे बढ़ कर खुश खबरी हमारे लिये हो नहीं सकती थी। आज से डेढ़ साल पहले निराला जी से, नरोत्तम से, अगिया बैताल से, एक साथ, बनारस में मुलाक़ात हुई थी। गंगा नदी में बोटिंग हुई, निराला जी ने मुझे और मेरी बीबी को कुछ उपहार देने को कहा (गो, मैं अकेला ही गया था) मैंने माँगा आप कविताएँ लिखिए, तब डाटा। तब से न तो निराला जी के दर्शन हुए, न नरोत्तम से मुलाकात। आगरा में अगिया बैताल के साथ कुछ दिन खूब बनी। दिन भर सोवियत उपन्यासों की चर्चा रहती थी। काश, हम लोग भी उनसे कुछ सीख पाते। Men With A Clear Conscience के कुछ पात्र मानो मेरे दोस्त बन गये हैं, और साथ नहीं छोड़ते। The White Birch की 'मारेका' अपनी मासूमी में इतनी सरल और 'ओजेरोव' अपनी दृढ़ता में इतना बेमिसाल है कि जिन पन्नों में उनका हाल लिखा है

---

1. अ० बै०—अगिया बैताल, मेरा एक उपनाम।

उन्हें चूम लेने की तबियत होती है। Men With A Clear Conscience का मेरा एक दोस्त नाम याद नहीं आ रहा—हाथों से लाचार है। लेकिन जब वह अपनी बन्दूक से नाजियों का निशाना ताकता था तब न जाने उसके हाथों ने कहाँ से ताकत आ जाती थी। आपको मालूम न होगा,—वह कविताएँ भी लिखता था, बहुत अच्छी नहीं, मामूली टूटी-फूटी कविताएँ। उसे कविताओं से प्रेम था। किसी जंगल में पहुँच कर वह अपनी टुकड़ी से अलग हो जाता था और किसी पेड़ के नीचे बैठकर एकान्त में जोर-शोर से मायकोवस्की की कविताएँ गाता था। आप लोगों से दूर रहकर मैं बीमार ज़रूर पड़ा, मगर अस्पताल के डाक्टरों से ज़्यादा (मैं तीन महीने तक अस्पताल में था) इन सोवियत उपन्यासों ने मुझे मदद पहुँचाई। मुझे ज़िन्दा रखने का श्रेय उनको है और मैं उनका आभारी रहूँगा। लखनऊ में अमृत लाल नागर से मुलाकात हुई। उन्होंने फिर उपन्यास के लिये कलम उठाई है। पहला अध्याय मुझे पढ़ कर सुनाया। Dogs Times का Coorespondent एक कुत्ता और बूढ़ी गली—ये दो पहले अध्याय के मुख्य पात्र हैं।

लेकिन मुझे शैलेन्द्र की वह छोटी सी कोठरी नहीं भूलती जिसमें उससे बहत्तरों दफे झपट हुई है, उसकी और उसकी ''बटुये सी दुलहिन'' (बीबी) [बीबी] की झपटें सुनने को मिली हैं, जहाँ उसने हमको रगेदा है और हमने उसे, जहाँ उसने बैठ कर लिखा :

तुम सोवियत रूस पर हमला बोलोगे?

भर देंगे हम आग अगर मुँह खोलोगे।

और जंगखोरों को उस छोटी सी कोठरी में बैठे-बैठे चुनौती दी; जहाँ उसने मुझसे कहा—बातों-बातों में तुम जितनी आलोचना करते हो, उतना लिखते तो.... और ''कठिनाइयाँ'', ''दूसरे कामों में व्यस्त होने'' आदि शब्दों को खड़ाकर हम उसकी मार से बचाव करते रहे। तुम्हें मालूम है? उसके एक नन्हा बच्चा हुआ है—जिसकी ज़िन्दगी की एटमबमधारियों से हिफाजत करने की उसने कसम खाई है। वह उस बच्चे को, उसकी माँ के साथ हर मीटिंग में ले जाता है। तुम उसे खत क्यों नहीं लिखते? वह तो तुमसे शायद मिल चुका है। केदार, शैलेन्द्र वगैरा आपस में खत न लिखें—यह कितना बड़ा नुकसान है।

हम तो किताब-छपाई में ऐसे फँसे कि बस। लेकिन, यह न समझना कि हमने कुछ नहीं लिखा। बताएँ?—बीबी को ख़त लिखे हैं। सब एक दोस्त के पास जमा हैं; लखनऊ में नहीं हैं, नहीं तो आने पर तुम्हें दिखाते। हम ऊँचा साहित्य नहीं लिख सके हैं, लेकिन अपने Men With A clear Conscience के लुंजे दोस्त की तरह चार-छै हरूफ़ गोदा ज़रूर करते हैं। हमें तुम्हारी कविताएँ जोर-जोर से पढ़ने का शौक है। इसीलिए हम टोह में रहते हैं। जिस लम्बी कविता का तुमने जिक्र किया है हमें देखने को नहीं मिली—यहाँ हम तलाश करेंगे। हाँ—दस्तख़तों वाली तुम्हारी कविता (जो छप

चुकी है) उतनी गम्भीर नहीं लगी जितना कि दस्तख़त आन्दोलन गम्भीर है। Pablo Neruda की कविता तुम जितनी अनुवाद कर चुके हो उतनी भेज दो। शायद कुछ सुझाव हमारी अकल में आ जाएँ। पूरी कब खतम कर रहे हो? याद रहे, आखीर वाला हिस्सा कमज़ोर न पड़ने पाये। मैंने सुना है तुम्हारे पास उनकी कविताओं का संग्रह है। तुम आओ तब लेते आना। मैं अपने लिये कई कविताएँ नकल करना चाहता हूँ जो मुझे बहुत पसन्द आई थीं; Stalingrad इत्यादि। तुम मुझे न० स० के दफ्तर में पाओगे। न० स० अब तुम्हें मिलेगा।

तुम लिखना कब तक आ रहे हो, कहाँ ठहरोगे आदि। बतकहाव नहीं, तुमसे मिलने के लिये जरूर उतावलापन है। अपनी कविताएँ, जो लिखी हों, जरूर साथ लाना।

तु. मुं.

Gokulpura, Agra
13.10.50

प्रिय केदार,

तुम्हारा ख़त मिला। तुम जिस रोज़ चाहो, आ जाओ। यहाँ पढ़ने-लिखने की सामग्री पाओ गे। मैं २० तक वापस आ जाऊँ गा। और कहीं जाने का इरादा नहीं है।

तुम्हारा
रामविलास

चन्द्रबली सिंह भी यहीं हैं। २५ तक रहें गे।—रा०

गोकुलपुरा-आगरा
७.८.५१

प्रिय केदार—

तुम्हारा २९/७ का कार्ड मिला। २३/८ को दिल्ली आना मुमकिन न हो गा। मिलने पर कारण बताऊँ गा। आजकल मुंशी यहीं है। वह इस बात से सख़्त नाराज़ हैं कि तुम रेल पर बैठे हुए सीधे निकल जाना चाहते हो। हम दोनों की राय है कि उस दिन तुम यहाँ रुको; यहाँ ठहर कर गपशप के बाद जाना।

तुमने जब कविता लिखना शुरू किया था, तब देहाती जीवन के अनुभवों की पूँजी तुम्हारे पास थी। उसे आगे बढ़ाने की तरफ़ शायद तुमने कभी ध्यान नहीं दिया। दूसरे भाषा और शैली में जो खामियाँ पहले भी थीं, वे और उभर आयी हैं। मेरी राय में तुम्हारे एक हद तक deteriorate होने का यही कारण है।

तु०
रामविलास

गोकुलपुरा–आगरा
१४.९.५१

प्रिय केदार–

तुम्हारा ३१/८ का कार्ड मिला। तुम्हारे कार्ड से मालूम होता है कि उसके पहले भेजा हुआ मेरा कार्ड तुम्हें मिल गया था। तुमने लिखा क्यों नहीं कि तुम्हारे लिये यहाँ उतरना मुमकिन न हो गा। मैंने तुम्हें यहाँ उतरने और ठहरने के लिये लिखा था उसके बाद निश्चिन्त हो गया था। बहरलाल मैं अक्तूबर में किसी वक्त बाँदा आऊँ गा। तब इसकी कमी पूरी कर दूँ गा। तभी तुम्हारी कविता के बारे में बातचीत हो गी। मुंशी तुमसे नाराज़ नहीं है लेकिन अब वह एक लड़की का बाप हो गया है।

उम्मीद है कि तुम सपत्नीक स्वस्थ हो गे।

तुम्हारा
रामविलास

गोकुलपुरा–आगरा
२१.१०.५१

प्रिय केदार–

सारा वक्त मध्य भारत घूमने में निकल गया–उज्जैन, ग्वालियर, भोपाल, रतलाम। २५ ता० को अलीगढ़ जा रहा हूँ। तुम कितनी उत्कंठा से मेरा रास्ता देख रहे हो, मैं जानता हूँ। लेकिन नवंबर में कलकत्ते जाना है और दिसंबर में छुट्टियाँ नहीं हैं। मैं तुमसे यही कह कर माफी मांग सकता हूँ कि देखो घर में बंद नहीं हूँ, काम से ही बराबर इधर-उधर आता जाता रहा हूँ। बाँदा तो मुझे आना ही है, अभी नहीं तो फिर, मुमकिन है, जनवरी में एक हफ्ते की छुट्टियों में। उज्जैन से लौट कर ग्वालियर रुकना था, इसीलिये नहीं आ सका। मुंशी आजकल भरतपुर में है।

तुम्हारा
रामविलास

Gokulpura, Agra
15.5.52

प्रिय केदार–

छोटे हाथों का करतब[1] देखा। नया रंग है; चटक भी है। बधाई।

तुम्हारा
रामविलास शर्मा

---

1. छोटे हाथों का कतरब—हाथों पर केदार की कविता।

आगरा १० जून ५२ की शाम, ५ बजे।

हवा सन्नाटा खींचे है। पसीने से बदन भीग गया है। अस्वाभाविक अँधेरे से ५ का वक़्त आठ का लगता है। धूल और गर्द की आँधियाँ आ चुकीं। ये पानी से भरे बादल हैं जो अपने दबाव से हवा का सांस लेना बन्द कर चुके हैं। ये बरसेंगे और इस धरती को वहाँ तक सींच दें गे जहाँ से हर दरख़्त और सब्ज़े की जड़ों को रस मिले गा–इसमें किसे सन्देह हो सकता है। हम अपने दोस्तों को कैसे भूल सकते हैं जब धूल की आँधयाँ ख़त्म हो चुकी हैं और पानी से भरे हुए नीले बादल बरसने को हैं।

तुम्हारी शायरी हरी रहे, मिलें गे ज़रूर लेकिन कुछ दिन बाद।

केदार के लिए : रामविलास

गोकुलपुरा, आगरा
१५.११.५३

प्रिय केदार–

'नया पथ' में तुम्हारी 'मगनमस्तचोला' पढ़ी, तुम्हें बधाई दी, तुम्हारी छवि को प्यार किया।

प्यारे, आजकल क्या लिख रहे हो? तुमसे मिलने को बेहद उत्सुक हूँ। लेकिन यह भारतेन्दु वाली पुस्तक पूरी नहीं हो रही। वाह, क्या ग़ज़ब का आदमी था। कविवचन सुधा से दिये हुए उद्धरण पढ़ो गे तो खुश हो गे। दस साल में पत्रकार, नाटककार, कवि, इतिहासकार, वह क्या नहीं रहा; और नयी चाल की हिंदी ढालने वाला अलग से।

ठहरो, मैं भी कुछ कविता लिख लूँ फिर बाँदा आऊँ गा और तुम्हें सुनाऊँ गा। और उपन्यास लिखने का विचारखत्म कर दिया क्या?

आज मुंशी आया है। उपन्यास का मसाला इकट्ठा कर रहा है। लेकिन कभी लिखे गा, मुझे अभी सन्देह है। चेखव की कहानियाँ पढ़ी हैं? न कोई कहानी लिखना चाहे तो लिखने लगे। उस्ताद है। उस्ताद ।

बस प्यार। बाकी जगह चार लफ़्ज़ मुंशी के लिए।

तुम्हारा रामविलास

मैंने कहा–

मैं ज़िंदा हूँ। खुरजा, (जि० बुलन्दशहर) में रह रहा हूँ। पता है c/o Kalyan Das Munim, Bari Holi, Khurja। पत्र लिखिये।

आगे हाल यह है कि अनुवाद वग़ैरा में इतना व्यस्त रहता हूँ कि और चीज़ें खटाई में पड़ी हैं। कभी-कभी तो ऐसा लगता है कि दिमाग फोड़ कर चीज़े निकल पड़ेंगी। पर

सोचता हूँ कि मेरी मरज़ी से निकलें तो अच्छा है, नहीं तो जाने शकल-सूरत कैसी हो। सचमुच यह डर भी एक रोड़ा बना हुआ है। मगर, मालूम है?—हमारे खुरजा के विद्यार्थियों ने एक हस्तलिखित पत्रिका निकाली है जिसके लगभग १000 पाठक हैं (१00 नहीं)। उसमें जभी मौक़ा मिला लक़ीरें खींच देता हूँ। उपन्यास का भी सामान इकट्ठा है, कुछ लिखा भी गया है; पर कब पूरा होगा, नहीं कहा जा सकता। कभी खुरजा आओ, यहाँ की खुरचन और घी खिलाऊँ गा। पत्र तो लिखो ही—सविस्तार।

तु०

मुंशी[1]

बाँदा

३.१२.५३

प्रिय मुंशी!

तुम जिन्दा हो, सचमुच यह बहुत दमदार ख़बर है। मैं [मैंने] तो समझा था कि अब तुम्हें न पा सकूँगा, शायद मेरे लिये खो गये हो। अहोभाग्य, कि मेरे लिए तुम फिर प्रकट हो गये। कई बार डाक्टर को ख़त भेज कर तुम्हें खोज़ता रहा, पर कुछ भी पता न लगता था। कहो, पिछले दिन कैसे गुजरे? अब कितनी औलादों के पिता हो? शरमाओ मत, हंस कर जबाव दो। पिता होना कोई गुनाह नहीं है। नई जान को, नन्हा-मुन्ना गुलाब-सा गोल-मटोल बच्चा बुला लेना, बहुत उम्दा होता है। रहने भी दो सन्तति-निरोध को। भारत की सरकार बेकार अड़ंगा डालती है इस फुलवारी के लगाने में। तुम कहोगे बुरा है, बखेड़ा है पैदावार बढ़ाना; ग़रीबी की निशानी है। हाँ, मौजूदा समाज में है—जहाँ एक कमाये, दस खायें। लेकिन सोचो तो कि घर में बीस हाथ—नये-नये जन्म लें और भविष्य सुंदर न हो। होगा, और फिर सुन्दर होगा। हाँ, तो कितनों के पिता हुए? हम वहीं हैं, जहाँ लखनऊ में मिलने के वक्त थे। उस तीसरे स्टेशन से गाड़ी आगे बढ़ी ही नहीं। १२ वर्ष से जहाँ-के-तहाँ रुके खड़े हैं। तुम्हें पता है ही कि डिब्बा बोझा लेकर आगे चलने में असमर्थ है।

बहुत व्यस्त हो अनुवाद में। क्या-क्या अनूदित हो गया? कुछ विवरण तो लिख भेजो। सुन लें हम भी कि कहाँ तक उछाल ले चुके हो।

इधर मैंने कविताएँ लिखी हैं, उम्दा हैं; खूब उम्दा। अगर पत्र लिखोगे तो ज़रूर भेजूंगा पर इस पत्र में नहीं भेजूँगा क्योंकि क्योंकि उन्हें पा लेने पर तुम फिर चुप्पी साध लोगे। यही तो आज के मित्रों का हाल है।

उपन्यास—“Students”—एक रशन नावेल, पढ़ा है [,] कई पढूँगा। रोज रात को

---

1. यह पत्र भी रामविलासजी वाले अंतर्देशीय पर लिखा गया है। (अ० त्रि०)

आँखें फोड़ता हूँ। समय तो ज़रूर ख़राब होता है पर जिस्मानी और रूहानी ताकत भी बला की मिलती है। बढ़िया है यह उपन्यास! इसमें वादिम नाम का चरित्र है। वह ऊंचा गया है। उसने सरजियाई की असली शकल को स्पष्ट रूप से सबके सामने पेश किया और इस कमाल के लिए धन्यवाद है लेखक को। वादिम ने Formalism की भी बखिया उघाड़ी है। मुझे तो वादिम में रामविलास का रूप मिला। वही पैनापन। वही बेलौस वार जिससे हमारे साहित्यिक बंधु घबड़ा गये थे। किन्तु भाई, रूस में इसकी कदर है, हमारे भारत में ईमानदारी का अभी मूल्य नहीं है। यदि पढ़ चुके हो यह उपन्यास तो राय लिखना। ऐसा बढ़िया है कि बस। न भगवतीचरण को सफलता मिली है, न धर्मवीर भारती को। एक ने ''३ वर्ष'' लिखा। बिल्कुल कमजोर, बीमार! दूसरे ने ''गुनाहों का देवता।'' वह भी घृणास्पद। "Students" में १00% यथार्थ है। दुर्बलतायें हैं चरित्रों में। किन्तु वे उपन्यास की बिक्री को बढ़ाने के लिये नहीं। ''बीज'' अमृत राय का उपन्यास है। उसे पढ़ गया हूँ। मौजूदों में यह हमारी सफाई का दावेदार है। इसलिए स्वस्थ है, सबल है और एक कदम आगे है। पिछले दशक के निरूपण में यह सफल है। खामियाँ हैं, पर इसे नीचे नहीं गिरातीं। इधर मैंने लेख भी लिखे हैं। वे ''नई दुनिया'' में छप रहे हैं। पर कहाँ से देख पाओगे।

हाँ, अपनी हस्तलिखित पत्रिका के लिये बहुत बहुत बधाई लो। तुम्हारे हज़ार पाठकों को मेरा राम-राम। कभी आया तो सबसे मिलूँगा। जी देखने को ललक रहा है। यहाँ आओ तो दूध, दही, घी मैं भी (घर का ही बना) खिलाऊँ।

तु० सस्नेह, केदार

Gokulpura, Agra
30-12 [53]

प्रिय केदार–

एक आवश्यक काम से बाहर गया था। इसलिये नहीं आ सका। बुरा न मानना। नये साल के पहले महीने ज़रूर आऊं गा। मकर संक्रान्ति को या वसन्त पञ्चिमी [पंचमी] को।

तुम्हारा
रामविलास

गोकुलपुरा-आगरा
८.१.५४

प्रिय केदार,

तुम्हारा १/१ का कार्ड मिला। इससे स्पष्ट है कि तुम्हें मेरा पत्र नहीं मिला। लेकिन मैंने तुम्हें न आ सकने के बारे में लिखा था और जनवरी में आने का वादा भी किया था।

फरवरी के पहले हफ्ते में वसन्त पंचमी है। निराला जी का जन्मदिन भी हो गा। तभी आऊँ तो कैसा रहे?

तुम्हें कितनी निराशा हुई है, समझ रहा हूँ। प्यारे फर्वरी में आऊं गा और गर्मियों में भी। ब्याज भर दूँ गा।

तुम्हारा

रामविलास

अभी तुम्हारा ७/१ का कार्ड मिला। आना संक्रान्ति ही को चाहता हूँ। लेकिन कालेज week भी है उसमें मेरी duty लगे गी या नहीं, यह अनिश्चित है। इसलिये गोलमाल। संक्रान्ति में आया तो चार दिन रहूँ गा, वर्ना वसन्त पर दो दिन।

रा०

गोकुलपुरा, आगरा

२१.१.५४

प्रिय केदार,

तुम्हारा ११/१ का कार्ड मिला। वसन्त पञ्चिमी [पंचमी] को निश्चित आऊँ गा।

मुंशी का कोई ख़त यहाँ भी नहीं आया।

तुम्हारा

रामविलास

मदीया कटरा,

आगरा,

२४.१.५४

प्रिय केदार,

तुम्हारे पत्र की राह देख रहा हूँ। मेरा पिछला पत्र मिल गया हो गा। ९ फर्वरी को नरोत्तम की बिटिया की शादी है। आओ गे क्या? मैं शनिवार को तूफान से दिल्ली जाने की सोच रहा हूं (यानी ९ फर्वरी को)।

कीट्स की और कविताएं कौन-कौन सी पढ़ीं। उसकी Ode to a Nightingale ज़रा इस दृष्टि से पढ़ो कि वह कितने प्रकार के इन्द्रिय बोध जगाता है। रूप, रस, गंध, स्पर्श, शब्द—सब की चरम परिणति कहां करता है।

अभी मैं चंद्रबली के ससुर को एक पत्र लिख रहा था। वह अब काशी में ही हैं। उसमें एक वाक्य लिख कर मुझे लगा, Time वाली समस्या हल हो गई। वाक्य यह

था : Every thing does not die and nature endures; progress, decay and change are one aspect of nature while unchangeability, duration and eternity are its other aspect. तुम्हें याद हो गा, शायद मैंने Engels का उद्धरण दिया था कि Nature के particles अपरिवर्तनशील हैं (कम-से-कम बौद्धों के तर्कशास्त्र का खंडन करने के लिए New Age में बुद्ध के संदेश पर अपने लेख में मैंने उसे उद्‌धृत किया था)। यदि Nature एक रूप में अपरिवर्तनशील है तो उस रूप में समय भी अनादि, अनंत और अपरिवर्तनशील है। प्रकृति एक अन्य रूप में जहां गतिशील और परिवर्तनशील है, वहाँ समय भी सापेक्ष और इतिहास की सीमाओं के अंतर्गत है। यदि Dialectics के अनुसार प्रकृति गतिशील और अपरिवर्तनशील दोनों है तो उसके duration का माप काल भी सीमित और असीम दोनों होना चाहिये। समय के बारे में यह हुई Dialectics की Unity of Opposites. क्या राय है?

चन्द्रबली ने १९५६ की कविताओं की रिव्यू 'आज' में लिखी है। रूपतंरग के लेखक से कविताएं कम लिखने की शिकायत की है। अगस्त (५६) की अजंता में एक आलोचना छपी है जिसमें और कविताएं लिखने के लिए आग्रह है। कैथावा (इटावा) के एक मित्र ने खेतों की मेंड़ पर 'किसान कवि और उसका पुत्र' पढ़ने की बात लिख कर अपने आलस्य और उदासीनता पर मुझे बेहद लज्जित कर दिया है। और शारदा देवी हैं कि कृपा करने का नाम नहीं लेतीं। कविताएं अनहद नाद की तरह मन में गूंजती रहती हैं। सुनता हूं, प्रसन्न होता हूं, लेकिन शब्दों में बांध नहीं पाता। तरंग है, रूप नहीं। लेकिन छोड़ूं गा नहीं। देखें, कब तक कृपा नहीं करतीं।

पाँच फर्वरी के सबेरे निराला जी के दर्शन करने का विचार है। क्या तुम आओ गे? वैसे एक विचार अभी मन में और उठा है। १८ मार्च को लखनऊ से निराला जी के संस्मरण ब्रॉडकास्ट करना है। सोचता हूं, उधर से इलाहाबाद होता आऊं गा तो यात्रा की कुछ असुविधा बच जाय गी। अपना विचार लिखो।

तुम्हारा—रामविलास

गोकुलपुरा, आगरा
४.२.५४

प्रिय केदार,

७, इतवार को सबेरे ११ बजे पहुँचने का विचार है।

तु० रामविलास

गोकुलपुरा, आगरा
१८.२.[५४]

प्रिय केदार,

तुम्हारा पत्र मिला। फोटो भी। अन्धे के हाथ बटेर की ख़ूब कही। जनाब, इसे कहते हैं आर्ट। मैंने कह कर फोटो खींची थी कि बढ़िया आये गी। वैसे तुम बटेर बनो तो मुझे अन्धा बनने में कोई ऐतराज़ नहीं।

मैंने कौन-सी किताबें भेजने का वादा किया था, भूल गया हूँ, याद दिलाओ।

बाँदा पर एक कविता लिखी है। कल बनारस जा रहा हूँ। लौटने पर भेजूँ गा। आरामकुर्सी पर बैठे हुए मेरा जो फोटो है, (without Railway Time Table) उसकी दो प्रतियाँ और भिजवा सको गे?

तु० राम विलास

Gokulpura, Agra
12.4.54

प्रिय केदार,

निराला जी का स्वास्थ्य गिर रहा है। Blood Pressure भी है; हाथ पैरों में तकलीफ भी। मैं उधर १० मई तक जाऊँ गा। मेरी सिफारिश है कि इस इतवार को चंद घंटों के लिये तुम ज़रूर हो आते और जैसा हो, पत्रों में (जनयुग आदि) लिखो, ज़रूर। उनका पता २१, Sahrarabagh Alld. है।

तुम्हारा-रामविलास

भाई केदार, तुम्हारी चिट्ठी २०/४/५४ की मिली। मैं कविता यत्र तत्र पत्रों में भेज रहा हूं, प्रयाग के पत्रकार और साहित्यकार निराला जी की सेवा से संबंध न रखकर एक-दूसरे पर अर्थारोप छापने-छपाने में मस्त हैं। मुझे तो कुछ समझ में नहीं आता कि आखिर क्या होगा। सुनता हूं कि सरकार रुपये को इसलिए देती है कि वह व्यवस्था से बचे, यह वाञ्छित नहीं क्योंकि महाकवि तो रुपया बांट बहादुर हैं। अपनी सूझ समाचार शीघ्रातिशीघ्र दो। इति

जय गोपाल[1]

1. यह पत्र श्री जयगोपाल मिश्र ने 12.4.54 के डॉ० रामविलासजी के पोस्टकार्ड पर ही ऊपर की शेष जगह में लिखा था। यह पत्र पहले श्री मिश्र के पते पर इलाहाबाद भेजा गया था। श्री मिश्र ने इसे Redirect करके अपनी उपर्युक्त इबारत के साथ बाँदा भेजा था। [अ० त्रि०]

गोकुलपुरा, आगरा
१७.१.५५

प्रिय केदार,

सबेरे छः बजे हैं। लैंप की रोशनी में मैंने तुम्हारी सब कविताएं अभी पढ़ कर खत्म की हैं। सामने 'हंस' के पुराने अंक हैं जब प्रेमचंद उसके संपादक थे। हैदराबाद प्रेमचंद सोसायटी के लिये प्रेमचंद पर एक पुस्तिका लिखनी है। रात को एंगेल्स के नाम मार्क्स का एक ख़त पढ़ते-पढ़ते सोया था जिसे मार्क्स ने कैपिटल के आखिरी पन्नों का प्रूफ देखकर लिखा था : So this volume is finished. It was thanks to you alone that this became possible. I embrace you full of thanks. Greetings, my dear beloved friend. मुझे लेनिन की बात याद आई कि मज़दूर-वर्ग ने मार्क्स और एंगेल्स की दोस्ती का जो नमूना रखा है, उसकी मिसाल दुनिया के इतिहास में नहीं है।

तुम्हारी सबसे बढ़िया कविताएं वह लगीं जहां तुमने जीते-जागते रेखाचित्र दिये हैं जैसे दफा ११० के मुजरिम के, पूंजीपति के बेटे के। उसके बाद बढ़िया लगीं वह कविताएं जहां तुमने प्रकृति के चित्र दिये हैं—धरती पर उतरती धूप के, शिव के जटाजूट पर उतरती गंगा, फूल कटोरों सी मुस्काती [नगरी]! उसके बाद तुम्हारी आह्वान वाली कविताएं हैं जैसे छोटे हाथ।

तुम्हारी कविताओं में सबसे बड़ा गुन यह है कि वह लोक-कला के इतने नज़दीक हैं कि उसका एक अंग सा बन गई हैं। वह जनता द्वारा तुरंत अपनाई जा सकती हैं और उसके जीवन में बहुत बड़ा परिवर्तन ला सकती हैं इसलिये तुम बाबू लोगों की राय की चिन्ता न करके उन्हीं भूमिसुतों के लिये लिखो जिनके तुमने गीत गाये हैं, जिन्होंने बांदा की वकालत में भी तुम्हारे विश्वास को जीवित रखा है।

ये कविताएं लोक-कला हैं, जनता के लिये हैं, इसलिये खूब सावधानी से लिखो। छन्द और भाषा में कहीं कोताही न दिखे। समय की कमी का बहाना किससे करो गे? उनसे जो आज संपत्तिशाली वर्गों की कला पर लोक-कला के विजयी होने की बाट जोह रहे हैं?

'क्रान्ति हो लेकिन पले [पली] हो पायलों में'—विरोधी उपमानों का जोड़ा चमत्कारी है। ऐ दधीचो ठीक न लगा; शब्द दधीचि है न! नाग वाली उपमा भी काफी जोरदार नहीं है। कुल कविता खूब सशक्त है। 'छोटे हाथ' की जितनी तारीफ़ की जाय थोड़ी। तुम्हारे हाथ चूमता हूं। श्रम पर बहुत ही बढ़िया रचना है। खेत का दृश्य—आसमान की ओढ़नी ओढ़े बहुत सुंदर है—सिर्फ़ किसान मेरी निगाह में धरती का पुत्र है, राधा का कृष्ण नहीं। धूप के गीत की फिर दाद देता हूं। Keats ने लिखा था—Poetry should come like leaves to a tree or it had better not come at all.

यह रचना कोंपलों जैसी आप ही फूट निकली है। बधाई! जल्दी-जल्दी हांक किसनवा–तुम्हारे उद्‌बोधन गीतों में सबसे बढ़ कर है। इसमें अगर 'आगामी सन्तति' 'शोषण की प्रत्येक प्रथा का सब तमतोम' जैसे कुछ टुकड़े न हों तो यह हर किसान की जबान पर चढ़ सकता है। तुमने लिखा है–"श्रमजीवी अपने बेटे को, गोठिल हंसिया दे जाता है।" तुम श्रमजीवी वर्ग के कलाकार हो, अपनी लेखनी को कहीं भी गोठिल न होने देना। लेकिन तुम्हें यह सब लिखना बेकार है क्योंकि तुमसे तुम्हारे गुनाह हारे हैं और असफलताओं को हराकर तुमने अपनी सुन्दरता संवारी है।

साढ़े छः बज गया है। अब घूमने जाऊं गा। 'नया पथ' में लेख लिखता रहूं गा। इलाहाबादी दरबों में क्या कोलाहल होता है, इसकी चिन्ता नहीं है।

हां, तुम्हारे और महेन्द्र[1] के अलावा किसी ने कविताएं नहीं भेजीं। उस प्रस्तावित संकलन का क्या हो गा?

तुम्हारा
रामविलास

बांदा
२.२.५५

प्रिय डाक्टर,

पत्र मिला। रोज पढ़ता हूं और उम्दा लिखने का भरसक प्रयास करने की ओर अग्रसर हूं।

हां, मेरी बेटी किरन का ब्याह दिनांक १७/२ को प्रयाग से (२४ हैमिल्टन रोड से)हो रहा है। चाचा के घर से। क्या तुमसे आशा करूं कि तुम इस समय आकर अनुगृहीत करोगे। इच्छा प्रबल है। सुविधा हो तो आ जाना। बंगले का पता लिख ही दिया है ऊपर।

सस्नेह
केदार

पुनश्चः–

महेन्द्र को पत्र लिख रहा हूं। अभी लोग (हमारे कवि भाई) हम सबसे गाल फुलाए बैठे हैं। होगा भी। कभी तो हम पर यकीन करेंगे हमारी ईमानदारी पर।

तु०
केदार

---

1. महेन्द्र—महेन्द्र भटनागर।

बांदा
२९.९.५५

प्रिय डाक्टर,

रतलाम से तुम्हारे लिये वहां के साहित्यिक समारोह में सम्मिलित होने के आमंत्रण पहुंचा होगा। तुम उसे स्वीकार कर लो और कृपा कर वहां चले जाओ। मेरे पास उन लोगों (प्रान गुप्ता) का तार तुम्हें खटखटा कर भेजवाने का आया है। वाह, मैं तुम्हारा कोई समझा जाता हूं। देखो, न जाने पर मेरी नाक कट जावेगी। जाना ज़रूर! बड़े आदमी बन कर घर में ही मेरी तरह न बैठे रह जाना।

शेष खैरियत है।

जनयुग में रचनाएं भेज रहा हूं। कुछ छपी हैं। शायद कुछ छपेंगी। देख ही लोगे।

वे फौजी आर्डर पर लिखी जा रही हैं। कौन कहता है कविता कुछ और होती है और मूड्स पर आती-जाती है। सबको सलाम। बच्चों को प्यार।

सस्नेह तु०
केदार

गोकुलपुरा, आगरा
२.१०.५५

प्रिय केदार,

चलो इस बहाने तुम्हारे दर्शन तो हुए। रतलाम कैसे जाऊं? ग्वालियर वाले एक महीने से बांधे बैंठे हैं और पिछले हफ्ते यहां आ कर फिर पक्का कर गये हैं। तुम हमारे बहुत कुछ हो और इसलिये छोटी-मोटी बातों से तुम्हारी नाक न कटे गी। मैं खूब घूमता हूं, इधर कलकत्ता, प्रयाग, पटना, काशी, लखनऊ, हैदराबाद, भरतपुर, ग्वालियर, अलीगढ़ आदि हो आया हूं पिछले चौमासे में। इसलिये घर बैठे रहने का दोष नहीं लगा सकते। तुम कविताएं आर्डर पर लिखो चाहे हो डिस आर्डर पर, लेकिन लिखो कविताएं ही, अपने को तुलसी और निराला का योग्य शिष्य प्रमाणित करते हुए। और क्या हाल हैं?

तु० रामविलास

Banda
26.12.55
6 P.M.

प्रिय डाक्टर,

आज ही डाक से ''पांडुलिपि'' प्राप्त हुई। देख गया उन कविताओं को जिनको

तुमने लाल रेखाओं में चिह्नित किया है। शायद वे ही अधिक प्रिय हैं। धन्यवाद है दोस्त।

तुम तो दिल्ली से अत्यन्त समीप हो और वहां पहुंचे भी होगे। ख़ूब आनन्द रहा होगा स्वागत-समारोह के समय।

मैं तो पांव बांध कर यहां रुपये चुगने की टोह में रोज न्यायालय के चक्कर काटता हूं। परन्तु एक भी मुअक्किल आजकल नज़र नहीं आता। पता नहीं अब क्या काम करना पड़े। कुछ तो राय दो। वरना धूल फांक कर पेट पालना असम्भव है।

प्रयाग लिख रहा हूं कि पांडुलिपि आ गई है। प्रकाशक चाहे तो मैं उसे भेज दूं। देखो क्या होता है।

इधर कुछ नया नहीं लिख रहे क्या? देखा नहीं मैंने। सुना है कि शुक्ल जी पर तुम्हारी पुस्तक निकली है। रीवा के मेरे मित्र ने लिखा है। वहां पुस्तकालय में पहुंची है।

और सब खैरियत है।

आशा है कि तुम सानंद हो। बच्चों को नये साल का प्यार। तब तक नया साल आ ही जावेगा।

तु० सस्नेह
केदार

गोकुलपुरा, आगरा
९.१.५६

प्रिय केदार,

जब तुम्हारा कार्ड यहां आया तब मैं दिल्ली में जवाहर के यहां तुम्हारा लंबा खत पढ़ रहा था। तुमने लोगों के बारे में ठीक राय जाहिर की है। लेकिन समस्या अब यह है कि ठीक राय वाले लोग रचनात्मक साहित्य में क्या दे रहे हैं। जवाहर बहुत दिन से उपन्यास लिखने की बात कर रहा है लेकिन अभी शायद लिखा कुछ नहीं है। मैं कई साल से कविताएं लिखने की सोच रहा हूं लेकिन मन में बहुत -सी कविताएं रच डालने के बाद भी भाषा और छन्द में उन्हें बांधने की नौबत नहीं आई। स्पष्ट विचार होते तो देर न लगती लेकिन thrill, excitement, अव्यक्त सी संवेदनाओं को प्रकट करने में दिक्कत होती है। हां, एक बार गाड़ी चल निकली तो फिर चल निकले गी। पिछले साल शुक्ल जी पर किताब निकल गई थी। एक लेख-संग्रह भी–''लोक जीवन और साहित्य'' के नाम से, जिसमें माधुरी वाले फिराक संबंधी लेख भी हैं। एक लेख हिन्दी भाषियों की जातीयता पर अश्क के 'संकेत' के लिये लिखा है। 'नया पथ' के लिये

'रीतिकाल' पर भेजा है और New Age को Art as Superstructure. पिछली गर्मियों में कलकत्ते गया था और वहां National Library से भाषा विज्ञान की सामग्री लाया था। लेकिन अभी ''हिन्दी भाषा का विकास'' लिखने की नौबत नहीं आई। फुटकर लेख, पुस्तकों पर सम्मतियां और भूमिकाएं बहुत समय ले जाती हैं। यह सब कम कर रहा हूं, बहुत से दोस्तों को नाराज़ करके।

यह पढ़ कर आश्चर्य और दुख दोनों हुए कि इतने दिन वकालत करने के बाद तुम्हारी स्थिति चिन्ताजनक है, तुम्हें मुवक्किल नहीं मिलते और तुम पेशा बदलने की सोच रहे हो। इस बारे में और विस्तार से लिखो—अब तुम्हारे ऊपर भार कितना है और क्या अब बिल्कुल यह स्थिति आ गई है कि वकालत छोड़ कर और कोई धन्धा अपनाओ। इस विषय में जवाहर को भी लिखो। वह शायद दिल्ली से अनुवाद वगैरह का काम दिला सके।

मैंने तुम्हारी जिन कविताओं में निशान लगा दिये हैं वे मुझे ज़्यादा अच्छी लगीं। तुम बांदा जैसी जगह में वकालत जैसा पेशा करते हुए कविता को ज़िन्दा बनाये हुए हो, यह कम सराहनीय बात नहीं है। तुम्हारी कविताओं में अब भी ताज़गी है, अनूठापन है, उपमानों का चमत्कारी प्रभाव है, तीक्ष्ण और कोमल संवेदनाएं हैं। लेकिन अपनी अनुभूति को बराबर refresh करते रहना ज़रूरी है और भाषा, imagery, छन्द वगैरह पर और मेहनत करना ज़रूरी है। कविता कला है, सुन्दर है। उसके कलात्मक सौन्दर्य पर और ध्यान देना ज़रूरी है। तुम्हारी कविताओं में जहां-तहां शिथिल पंक्तियां, भरती के शब्द, हल्के भाव, जल्दबाज़ी के चिह्न, ये सब दिखाई देते हैं।

इसलिये काव्य रचना को और कठिन साधना के रूप में ग्रहण करो।

स्वागत समारोह का आनन्द लेने के लिये दिल्ली जाना आवश्यक न था। ताज के नगर का अपना महत्व है। फोर्ट के स्वागत में मैं भी शामिल था। बहुत निकट से और देर तक मैं अतिथियों को देख सका। बुल्गानिन की आंखें गहरी नीली हैं, बाल अभी पूरे पके नहीं। रंग खूब सुर्ख और गोरा (सफेद नहीं); देख कर लगता है, आदमी बहुत खूबसूरत है यद्यपि फोटो से यह impression नहीं पड़ता। खुश्चेव और भी स्वस्थ हैं; उक्रैनी जाट हैं पूरे। कामदार टोपी लगाये क्या फब रहे थे! रेल के पुल के नीचे इतनी भीड़ थी कि रेल-पेल में मैं जमीन से उठ-उठ जाता था। जब कि आधी भीड़ अतिथियों के चले जाने के बाद फोर्ट के अन्दर चली गयी थी।

हां, मेरे कविता संग्रह के छपने की बात भी चल रही है। नरेन्द्र शर्मा ने इधर फिर बहुत अच्छी कविताएं लिखी हैं।

तुम्हारा—रामविलास शर्मा

बांदा
१.३. ५६

प्रिय डाक्टर!

''रूप तरंग'' की प्रति प्राप्त हुई। तब से अब तक साथ लिये-लिये जब जहां मौका लगता है, पढ़ता हूं और गुनता हूं एक-एक पंक्ति।

यदि अपनी प्रशंसा न समझो तो कहूंगा कि तुम्हारी यह प्रथम काव्य पुस्तिका काव्य और कला-दोनों की दृष्टि से नये युग के साहित्य में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रखती है। इतनी सबल काव्यमय जीवनानुभूति शायद ही किसी अन्य पुस्तक में मिलेगी। दृष्टिकोण युगान्तरकारी है। यदि आज्ञा हो तो कहूं कि प्रत्येक पंक्ति साहसी के माथे की चमकती रेखा है और प्रत्येक कविता पनघट से लौटती हुई सुन्दरी के सिर पर धरी कनक-कलसी है—जिसमें नीर नहीं रस और राग ही राग भरा है। बधाई स्वीकार हो।

वाह! क्या सर्वांग सुन्दर रचना-क्रम का निर्वाह करते हो कि भाषा में क्लासिकल, रोमांटिक तथा प्रगतिशील तत्वों का एक साथ पूरा-पूरा आनंद मिल जाता है। ''कुहरे के बादल'' की सादगी लामिसाल है। ''चांदनी'' की कलाकारिता अपनी ओर अद्वितीय है। ''अमर सरस्वती'' का स्वर देश की अमर आत्मवाणी की गुंजार है। ''बंजर'' के बजाय ''बज्जर'' का प्रयोग करते तो जान पड़ जाती। परन्तु मेरे बांदा को वह स्थान कहां दोगे। मजदूर पर लिखी कविता लासानी है। निराला वाली की बात करना ही बेकार है। ''श्रेष्ठियों के देवता''—वाह क्या व्यंग [व्यंग्य] है धार धरा! चिदम्बरम् छोटी है परन्तु चित्र अनुपमेय है। ''काल बंध गया है चरणों के छन्दों में''। धन्य है मित्र! ''वंदिनी कोकिला'' कौन हैं ये? मैं नहीं जानता। क्या सरसता है प्रवाह में—''पुरवाई पर उड़ते मेघों से हैं कुन्तल''। ''भ्रूभंगों से शान्त करे सागर की लहरें।'' न भूलेगी यह पंक्ति। ''महाबलिपुरम् का समुद्र तट''—यह ''चिदम्बरम्'' का ही स्वरूप है। देखो न : ''बूढ़े द्रोण अभी तक समर भूमि में धनुष चढ़ाये हैं।'' ''आज़ाद पताका'' की कला ''चांदनी'' की कला ही है। हम लिखते तो इसे चौपट कर देते। तुमने खूब सम्हाला है इस पताका को। फिर देखो यह पंक्ति : तड़प-तड़प कर टूट रही हैं जांघों से मोटी शहतीरें! यह तुम्हीं लिख सकते हो। मैं भी पूछता हूं तुम्हारे ही स्वर में—

क्या होगा ऐसा भी मानव,
कमलपत्र की छाहीं में बैठा गाता हो!

''ऋतुसंहार'' का प्रथमांश अधिक प्रिय है।

धुआं भी तुमने खूब देखा है। ''उठा छान से धुआं, कुंडली खोले फन-सा छाया डसा हुआ-सा गांव''—इत्यादि! कमाल है इस कवित्व को।

''किसान कवि और उसका पुत्र'' अत्यन्त मार्मिक है। पहले भी द्रवित कर चुकी थी।

अभी इतना ही। न लिखता लेकिन कलम न रोक सका। पास होते तो तुम्हें इन्हें सुनाता और तुम्हारा जादू तुम्हें ही दिखाता। पर पारखी बड़े कच्चे हैं। न जाने क्या कहें।

साधारणजन के लिए तो है, परन्तु असाधारण काव्य-प्रतिभा का स्वरूप सर्वसाधारण न पकड़ पायेगा। यह उन लोगों के लिए है जो ४० के पार पहुंच कर गम्भीर हो गये हैं। मैं झूठ तो नहीं कह रहा? तुम जानते हो।

मुंशी चुप हो गए न? बहुत-बहुत प्यार सबको।

तु०
केदार

Banda
2.4.56
जनाब डाक्टर साहब,

२ लिफाफे भेज चुका। अब तक किसी का जवाब नहीं आया। इन्तज़ार रोज करता हूं। शायद कुछ नाराज़गी है क्या? हो सकता है कि पर्चे जांच रहे हो? बहरहाल मुझे भुलाये पड़े हो।

आज Milton वाली भेजी हुई पुस्तक मिली। ऐसी जरूरत ही क्या थी डाक से भेजने की। कोई मैं परीक्षा में तो बैठ नहीं रहा था। यह उतावली नाराजगी ही जाहिर करती है। यह भी सही। गुस्सा भी बरदास्त करूंगा। अब तक तो स्नेह ही पाता रहा हूं।

मगर यकीन रक्खो कि कितनी भी रूठो, बच कर नहीं जा सकते बच्चू।

अचानक आगरे आ टपकूंगा तब दंग रह जाओगे।

''नया पथ'' कल आया है। उसमें दूसरे अंक के ''समालोचक'' पर कुछ खराब नोट है। मैंने तो ''नया पथ'' में लिखना ही बंद कर दिया है क्योंकि उसमें ''कुत्ते'' की उपाधि रहती है।

प्रिय ललित की परीक्षा समाप्त हो गई क्या? कैसे Papers किये हैं यार मेरे ने?

और वीवी [बीबी] बच्चों का क्या हालचाल है जरूर लिखना।

सस्नेह तु०
केदार

बांदा
४.४.५६
१० प्रातः

प्रिय मुंशी,

अभी-अभी तुम्हारा पोस्टकार्ड मिला। यह जान कर कि प्रिय भुवन को किसी ने

धतूरा खिला दिया था बड़ी चिन्ता हुई। मैं समझता हूं कि होली के अवसर पर किसी ने भंग में पिलाया होगा। आखिर ये बच्चे ऐसी चीजों को क्यों पी लेते हैं? खैर। अब यह लिखो कि भुवन ठीक है या नहीं? डाक्टर साहब बड़े परेशान रहे होंगे। काश मैं वहीं होता और ऐसे समय तुम सब लोगों का दुख बांट सकता। मेरा बहुत-बहुत प्यार भुवन को देना और कहना कि वह जल्दी ठीक हो जाये और अब आइन्दा ऐसा न होने पाये। डाक्टर साहब को तथा अपनी भाभी जी को समझा देना, मेरी ओर से।

और बच्चे कैसे हैं? अच्छे तो हैं? सब को मेरा प्यार।

जी हो उठा है कि एक बार फिर अब तुम लोगों से मिलूं। कसमसा कर रह जाता हूं।

मेरी wife की तबियत अब तो ठीक है। कल आखिरी इन्जेक्शन लगा है। परन्तु बूढ़े बाबा बीमार हो गए। अब कुछ ठीक हो रहे हैं।

जैसा समाचार हो देना।

डाक्टर सा० को स्नेह।

तु० केदार

बांदा
८.५.५६

प्रिय डाक्टर,

तुम्हें पत्र लिख रहा हूं कि मैं अपनी प्रिय पुत्री किरन का पति खो बैठा, अभी इसी हफ्ते। यह वज्रपात मुझे ढहा रहा है। रोता हूं। केवल इसलिए पत्र लिख रहा हूं कि तुम्हारी सहानुभूति पा कर शांति पा सकूं। पारसाल ही तो शादी की थी।

अभी भी कमला नेहरू अस्पताल में आपरेशन कराये पड़ी है। ज्वर भी है। अभी आज ही प्रयाग से लौटा हूं। अभी उसे यह दुखद समाचार नहीं बता पाया था। परन्तु हल्का-सा आभास दे आया था।

दामाद जबलपुर में जंगल विभाग में अफसर था। ३/४ दिन के भीतर ही cerebral हैमरेज के कारण मृत्यु हो गई नागपुर की Lunatic Asylum में।

बल और विश्वास से प्रेरित करो कि इस दुख को झेल जाऊं।

तु०
केदार

गोकुलपुरा, आगरा
१६.५.५६

प्रिय केदार,

तुम्हारा कार्ड मिला। पढ़ कर बहुत दुख हुआ। प्रियजन के वियोग के लिए कोई

सांत्वना नहीं है। जब तक हम उन्हें प्यार करते रहते हैं, तब तक वे हमारे लिए मृत नहीं है लेकिन उनका अभाव हृदय को क्लेश देता ही है। मनुष्य का कर्म ही दुख का एकमात्र उपचार है। तुम्हें अपनी पुत्री के स्वास्थ्य की और ध्यान देना चाहिए और उसके भविष्य की चिन्ता करनी चाहिए। इसके लिए धैर्य और परिश्रम दोनों आवश्यक हों गे। ये बड़ी निर्मम चोटें हैं लेकिन इन्हें सहना ही हो गा और हृदय को दृढ़ करना ही हो गा। दुख सहने से तुम्हें अपने और समाज के लिए शक्ति मिले गी–दुख का संभवत: यही एक मात्र गुण है।

आंसू पोंछ डालो। तुम्हारे प्रियजन की स्मृति के साथ मैं भी तुम्हारे पास हूं। मैं तुम्हें हृदय से लगाता हूं और कहता हूं, प्रिय मित्र, तुम्हारे हृदय में शक्ति है, धैर्य है, उससे काम लो। तुम दुख का सामना करने वाले हो, उससे सिहरने वाले नहीं।

तुम्हारा–रामविलास

अजीब आदमी हो। किताब मैंने भिजवाई और कृतज्ञता का प्रकाशन कर रहे हो, प्रकाशक से। हाँ, पढ़ कर राय लिखना । तत्व की बातें तो किताब लिख चुकने पर हाथ लगीं। उन्हें विस्तार से कभी दूसरी किताब में लिखूं गा। आजकल भाषा-विज्ञान की उधेड़बुन में लगा हूं। मुंशी-जवाहर तुम्हारे दोस्त यों ही हैं। मुझे देखो, कितनी जल्दी जवाब देता हूं। आजकल मुंशी का खानदान दिल्ली में ही है, इसलिए बेचारे को कम फ़ुर्सत मिलती है। किरन को ज़रूर पढ़ाओ। यहीं तो तुम्हारी दृढ़ता की परख हो गी। हो सके तो तुम भी एम० ए० कर डालो। फिर प्रौफेसरी ढूँढ़ो–अगर वकालत का अब भी वही हाल हो। तुम्हारे लिए अब दूसरी रूप-तरंग लिखूं गा–वैसी तो नहीं लेकिन कुछ रंग तो हो गा ही।

रामविलास
मदीया कटरा, आगरा, २६.६.५६

R. B. Sharma,
M.A. Ph. D. (Luck.)
HEAD OF THE DEPARTMENT OF ENGLISH
B. R. COLLEGE, AGRA

१२, अशोकनगर
आगरा, २२-८-[५६]

प्रिय केदार,

१५ अगस्त को जब कृष्ण जी तशरीफ लाये तब–

आजु तौ बधाई बाजै मंदिर महर के।

किस-किस को प्रसन्नता हुई?

फूले फिरैं गोपीग्वाल ठहर-ठहर के।

गोपी ग्वालों को तो प्रसन्न होना ही था। किन्तु—

फूली फिरैं धेनु धाम, फूली गोपी अंग-अंग,
फूले-फले तरुवर आनँद लहर के।

देखा? आनंद की लहर में गायों, गोपियों और तरुवरों को—जड़ और जंगम, चर और अचर—दोनों को सूर ने कैसे लपेटा है! और ज़रा इस पंक्ति का मुलाहज़ा हो—

उमँगे जमुन जल, प्रफुलित कुंज-पुंज,
गरजत कारे-भारे जूथ जलधर के।

सौ बार माथा टेको इस पंक्ति के सामने। यहीं तो ब्रजवासी तुलसी से आगे बढ़ गया है। अमृत नागर की शब्दावली में यहां Wordsworth भी फौक्स है। और नतीजा—

नृत्यन मदन फूले-फूले रति अंग-अंग,
मन के मनोज फूले हलधर वर के।

इस कवि ने ज्ञात या अज्ञात में प्रकृति के मर्म में उस अन्ध इच्छाशक्ति का स्पंदन सुना है जो आगे चल कर मनुष्य की चेतना के रूप में विकसित हुई।

सूर का समकालीन फ्रांसीसी कवि Ronsard उजड़ते जंगलों को देख कर कहता है—

Farewell, oaks, fair crown of bravest hill-sides,
Jupiter's trees sprung form old Dadona,
Who first gave men a tree for their delight.

जो इन वृक्षों को काट रहे हैं, उनके लिये कहता है—

a monstrous people
To slaughter so those who had cherished them!

मुझे आश्चर्य और प्रसन्नता इस बात पर हुई कि भूत प्रकृति की अपरिवर्तनशीलता के बारे में मैंने तुम्हें जो Engels की बात लिखी थी वह इसने बहुत पहले पकड़ ली थी; साथ ही डार्विन ने Journal of Researches में जिन Geological changes का वर्णन किया है और जिनकी चर्चा काव्य में टेनीसन ने Maud और In Memoriaw में की है, उन्हें इस महाकवि ने बहुत पहले देख लिया था। कवि और वैज्ञानिक का हृदय (अथवा चेतना) कितनी समान है, देखो। दोनों ही द्रष्टा हैं, युगद्रष्टा ही नहीं, अतीत-अनागत के भी द्रष्टा!

Oh hopless man that trusteth in the auld!
You gods, how true is that philosophy.

(देखो, सचेत विचारक है!)

Which says that all things perish in the end,
And, changing from one form, assume another!

(यह है, सही द्वंद्वात्मक भौतिकवाद। वस्तुएं perish भी करती हैं लेकिन यह perishing की क्रिया भूत का नितान्त अभाव नहीं है।)

Some day Tempe's vale will be a hill,

(Tempe की घाटी का हवाला Keats के Ode on a Grecian Urn के आरंभ में देखो।)

Mount Althos peak will be an open plain;

Neptune (समुद्र) sometime will wave with growing Corn :

(ईर्ष्या होती है, इस पंक्ति के लिखने वाले से!)

Matter endures though form be lost for ever.

मानते हो Ronsard का लोहा! निस्सन्देह Marx और Engels से पहले भी उच्चकोटि के भौतिकवादी विचारक थे।

घर गिरस्ती का कुछ हाल तो ललित[1] से मिल गया होगा। Lady syall में जब wife की premature delivery हुई, तब उनकी ठीक जाँच न हुई और पेट की सफाई न की गई। वह काम परसों Sarojini Naidu Hospital में ऑपरेशन करके पूरा हुआ। हालत ठीक है। आजकल में आ जायँ गी।

ललित को भेज दिया है। विश्वास है Post permanent हो गी और वह जम जायँ गे। सुना है, अतर्रा जलवायु की दृष्टि से भी अच्छा है। बरसात के बाद चित्रकूट देखना है लेकिन सन् ५७ [2] के लिए अभी कलकत्ता जाना चाहता हूँ। तुम्हारी पत्नी, पुत्रादि को सस्नेह

तुम्हारा
रामविलास

मदीया कटरा, आगरा
२८.९.५६

प्रिय केदार,

तुम्हारा और नागा बाबा[3] का संयुक्त कार्ड मिला। लेकिन नागा बाबा के दर्शन अभी तक नहीं हुए। पता नहीं बांदा में अब भी अटके हैं या हमारे पुराने पते से टकरा कर दिल्ली रवाना हो गये! जो ख़बर हो, लिखना।

1. ललित—मेरे बड़े पुत्र।
2. सन् 57 के लिए—सन 57 पर पुस्तक लिखने के लिए।
3. नागा बाबा—नागार्जुन।

चार दिन संगत रही और हर पांचवें घंटे पर मेरी याद! धत् तेरे नागार्जुन की! पांच घंटे तक भूले रहने के बाद एक बार याद आयी तो क्या? चार दिन में कुल जमा सात-आठ बार याद किया हो गा, बस! इससे नागा को तसल्ली हो तो हो, अपन को तो होने से रही! फिर चार दिन की संगत केदार के साथ, और मेरे साथ कुल २४ घंटे की, यानी एक दिन की! वह भी ''संभावना'' है कि आप आगरा होते हुए दिल्ली पहुँचें गे! इस संभावना को क्या शहद लगाकर चाटूं?

हां, यह देख कर प्रसन्नता ज़रूर हुई कि केदार के परिवार के बच्चे और मुंशी मथुराप्रसाद भी मुझे याद कर लेते हैं। और कार्ड के अंत में है—''शेष मिलने पर ही''—। वाह रे आपका शेष मिलन!

प्यारे दोस्त, तुम्हें बिसराये नहीं बैठा। इधर गृहस्थी के झंझटों में फँसा रहा। उनसे इस समय मुक्त हूं, इसलिए उनकी चर्चा करना बेकार है। इधर बालकृष्ण राव ने कई पत्र हंस में लिखने के लिये भेजे। सो ''न दैन्यं न पलायनम्'' शीर्षक से एक छोटा लेख भेज दिया है। इधर कालिदास पढ़ता रहा हूं। एक लेख 'आलोचना' (अब नंददुलारे जी वाजपेयी हैं उसमें) के लिये लिखा है (कालिदास : साहित्य के स्थायी मूल्यों की समस्या।) और एक New Age (Monthly) के लिये भी (कालिदास पर ही)। November के New Age के लिये Slavery in Ancient India पर लिखने का वादा किया है। 'हिन्दी भाषा का विकास' लिखने की नौबत अब आ रही है। कविताएं कई घुमड़ रही हैं; जब बरसें तब जानो। लिखँू गा तो ढेर सारी ही लिखँू गा।

कालिदास में सुरतवाद बहुत है, वर्ना वह भी आदमी था काम का। सोंधी मिट्टी उसे बहुत पसंद है। अप्सराओं की लड़कियां ही उसकी प्रेमिकाएं हैं या उन्हीं में से एक रही होगी। अपने सीमित क्षेत्र में कला की जो पूर्णता उसमें है, वह किसी में नहीं। परिष्कृत इन्द्रिय बोध में सब उसके सामने पानी भरते हैं।

अयं सुजातो नु गिरं तमाल: प्रवाल मादाय सुगन्धि यस्य।
यवाङ्कुरापाण्डु कपोल शोभिं मयावतं स: परिकल्पितस्ते।

पर्वत के समीप तमाल वृक्ष है। उसके सुगन्धित किसलय लेकर राम ने सीता के जौ के अंकुर जैसे पीले गालों के लिय आभूषण रचा था।

किसलय की कोमलता, साथ ही उसका सुगन्धित होना, जौ के अंकुरों का पीतवर्ण और सीता के कपोल। Keats के Eve of st Agnes में अर्द्धनग्न Madeline के वर्णन में Hothouse plants का सा सौन्दर्य है—तरुण कवि की श्रृंगारी कल्पना की अतिशयता। कालिदास के उपर्युक्त छंद में खुली हवा का आनन्द है, कांच के टुकड़ों के रंग-बिरंगेपन के बदले प्रकृति की सुकुमारता संचित है। इसलिये उस महाकवि को सुरतवाद के दलदल से निकाल कर तमाल पत्रों की छाया में पढ़ना आवश्यक है।

तु० रामविलास शर्मा

[३०-९-५६][1]

प्रिय डाक्टर,

वाह तुमने खूब कहा, ''नागा बाबा''। मजा आ गया। दरअसल में नागार्जुन भी एक हीरा आदमी है। ४ दिन रहे वह यहां। घर भर से मिले-जुले। बातें भी हुईं तमाम इधर-उधर की—घर से लेकर साहित्य और राजनीति तक की। मैंने अपना उपन्यास भी सुनाया। उन्होंने कहा जरूर लिखो वरना डंडा मारेंगे। कुछ ही अंश लिख सका था। अतएव अब उसे शुरू कर चुका हूं। लिखने पर भेजूंगा तुम्हें पढ़ने के लिए। विषय है : तीन रास्ते[2]। १ला है एम० एल० ए० रामनाथ [का]। २सरा है बिन्दा का जो ईमानदार आदमी है लेकिन देहात की परिस्थितियों ने उसे मजबूर कर दिया कि बदमाश हो जाये। वह हो गया भ्रष्ट-पथिक। ३सरा है मनमोहन कुमार का। वह एक पत्रकार है। इन्हीं के चरित्रों के सम्पर्क में कथा का विकास होता है और यथार्थ खुलता है। पता नहीं कि लिखने पर कैसा हो और तुम्हें पसन्द आये या नहीं। खैर देखा जायेगा।

जरूर लिखो ''हंस'' के लिए। आज लीडर में तुम्हारे ''संकेत'' वाले लेख की तो C. B. Rao ने तारीफ की है। शीर्षक ''न दैन्यं न पलायनम्'' उम्दा है।

कालिदास सफल कवि है। सुरतवाद निस्संदेह बहुत है उसके काव्य में। लेकिन शान का कवि है—जिसे तुमने सोंधी मिट्टी की महक कहा है। मैं तो संस्कृत नहीं जानता लेकिन अनुवाद से ग्रन्थावली पढ़ते समय उसके श्लोकों के सस्वर पाठ का बहुत मजा ले चुका हूं। मुझमें भी वही मोह है इसलिए मैं सुरतवाद की मिठास में पग जाता था। भाई जान, चीज ही ऐसी है वह। मुझे तो उसकी Classical कला से बहुत कला मिली है। मैंने सीखा है इस महान कवि से थोड़े में बात या भाव को व्यक्त करना, श्रेष्ठ कला सहित। आज तो हिन्दी में बहुत कम नये कवि उसे पढ़ते हैं इसलिए गद्य के गुम्फन में कविता को जन्म दे रहे हैं। शायद काव्य की कला ही लोप होती जा रही है। इस पर भी आलोचक तक इस बात से अवगत नहीं जान पड़ते। वे कहते हैं कि नये मनुष्य की कला का गद्यमय होना अनिवार्य हो गया है। इसलिए हमें उनके प्रति नम्र होना चाहिए। नम्र होने का मैं विरोधी नहीं। किन्तु सही बात बताना [बतानी] ही पड़ेगा [पड़ेगी] इन कवियों को अन्यथा वे भटकते रहेंगे और हमारी पीढ़ी काव्य के नाम पर कुछ न दे पायेगी। मैं भी इस दोष से बचा नहीं। लेकिन प्रयत्नशील हूं—काव्य का वह रूप ग्रहण करने को। मैं चाहूंगा कि कालिदास के ऊपर लिखे तुम्हारे लेखों को देखूं। पाने का प्रयत्न करूंगा।

---

1. मेरे पत्र पर उत्तर देने की तारीख केदार ने लिख दी।
2. अब इसका नामकरण मैंने किया है, 'बैल बाजी मार ले गए'। इसका एक अंश 'साक्षात्कार में छप चुका है। अभी अधूरा है। केदारजी ने पूरा करने का वायदा तो किया था, पर पूरा नहीं कर पाये। [अ० त्रि०]

''हिन्दी भाषा का विकास'' लिखो। जरूर दो यह पुस्तक [1] तुम्हीं कुहासा चीरो। और तो हल्के-फुल्के उड़ते रहते हैं।

कविताएं लिखना न भूलो, मेरा यह विनम्र निवेदन है। तुम बहुत खूब लिखते हो। वह रस कहीं मिल ही नहीं पाता। ''गलते हैं हिम उपल'' वाला स्वर और भाव श्रेष्ठ रुचि का परिचय देता है। काश मैं भी ऐसा लिख पाता।

कीट्स की याद दिला कर तुमने मुझे फिर काव्य लोक में पटक दिया। उपन्यास का भूत उतर रहा है। अब आज शायद ही लिख सकूं एक परिच्छेद। नाम मात्र से ही कविता के रस से नहा गया। तुमने जो उद्धरण दिया है कालिदास का वह लाजवाब है। क्या कहना है। फिर तुम्हारी व्याख्या ने उसे चमका दिया है। हाय रे भाग्य, कि मैं संस्कृत नहीं जान पाता। गधा हूं जो मैंने इसे नहीं पढ़ा। पढ़ता तो रस-विभोर हो लिया करता। तुम बड़भागी हो कि प्रयत्न करने में नहीं चूकते और नयी नयी भाषा सीख कर विश्व के समस्त काव्य का रस लेते जाते हो। भाई, फौलाद हो तन से और मक्खन हो मन से। खूब रस लो। हम तो तुमसे मिल कर ही रसमग्न हो लेंगे।

एक बार [फिर] याद आ गयीं तुम्हारी पंक्तियां : ''गंगा की उर्वर घाटी में, निर्धन जनता ने गाड़ा है अपनी आजादी का झंडा/आजादी की सरिता में कितनी भवरें हैं/ पर अदम्य अन्तर्धारा-सी, इस धरती पर बहती है पावन जन-गंगा।'' क्या दाद दूं तुम्हें इस लिखने पर। पता नहीं कब तुम्हारे काव्य पर कुछ लिख सकूंगा। अधूरा लेख पड़ा है। मैंने छोटे-छोटे छंदों में कुछ लिखा है। एक लम्बी कविता ''मेरा गांव कमासिन'' शुरू हो चुकी है। चाल अच्छी है। देखो कब पूरी हो।

तु० केदारनाथ

नागार्जुन २४ को प्रयाग गये। वहां से वह आगरा-दिल्ली जायेंगे। तुम से जरूर मिलेंगे। वचन दे गये हैं। शायद अब पहुंच गये हों और चले भी गये हों। पत्र प्रयाग से आया था किन्तु कब आगरा जा रहे हैं, यह न लिखा था।

हां,[1]

श्री हरीश, सम्पादक 'मुरलिका' साहित्य-सदन, ४२, पंजाबी मारकेट, बरेली को एकाध रचना जरूर भेज देना। वह पत्र लिखेंगे। बेचारा उत्साही विद्यार्थी है एम० ए० का। यह पत्रिका निकाल रहा है।

केदार

1. यह अंश अंतर्देशीय पत्र के उस भाग में लिखा है जहाँ पत्र भेजने वाले का नाम और पता होता है।
[अ० त्रि०]

बांदा
१९-१०-५६

प्रिय डाक्टर,

''नागा बाबा'' बांदा आये और यहां ४ दिन रह कर फिर प्रयाग चले गये २४-९-५६ को। हम लोगों ने खूब घुल-मिल कर बातें कीं। बार-बार तुम याद आते रहे। काश साथ होते।

बांदा से वापिस जा कर ''नागा बाबा'' ने ''मैंने तुमको पहचाना'' शीर्षक एक लम्बी-सी ९५ पंक्तियों की बड़ी शानदार प्यारी कविता लिखी है। नकल भेजूंगा। उन्होंने बांदा को चमचमा दिया है। हम सब उनके कृतज्ञ हैं। फिर मेरे लिए तो उन्होंने कलम ही तोड़ दी है। इतना गौरव अब शायद मुझे कभी न मिलेगा। कभी-कभी उसे पढ़ कर यह अनुभव करता हूं कि हम जन-कवियों सा इतना अटूट प्रेम शायद ही पिछले कवियों में रहा होगा। फिर इस कविता का स्वर इतना सरल और स्वाभाविक है कि मुग्ध हो गया मैं स्वयं ही अपने इस वर्णन पर? कुछ पंक्तियां हैं।

''श्याम सलिल सरवर है बांदा!
नीलम की घाटी में उजला श्वेत कमल-कानन हैं बांदा!
....
बांदा नहीं, अरे यह तो गंधर्व नगर है!''
....
केनकूल की काली मिट्टी, वह भी तुम हो
कालिंजर का चौड़ा सीना, वह भी तुम हो
ग्राम वधू की दबी हुई कजरारी चितवन, वह भी तुम हो
कुपित कृषक की टेढ़ी भौहें, वह भी तुम हो
खड़ी सुनहली फसलों की छवि-छटा निराली, वह भी तुम हो
लाठी लेकर काल-रात्रि में करता जो उनकी रखवाली वह भी तुम हो।''

आदि–

मेरा ख्याल है कि वह अब तक आगरा पहुंच गये होंगे। उन्होंने कविता जरूर सुनाई होगी। कहो कैसी पसन्द आयी। प्यारे! बड़ा मज़ा रहा। अविस्मरणीय थी हम दोनों की यह भेंट।

लिफाफा नहीं है शाम हो गई है। इसलिए अपने भाव मजबूर होकर P.C. पर लिख रहा हूं।

तु० केदार

बांदा
२७-१०-५६
रात्रि ९ बजे

प्रिय बन्धु!

पोस्टकार्ड मिला। आगरे आने का निमंत्रण स्वीकार है। आ रहा हूं २/११ को सबेरे पहर। यहां से १/११ की शाम की गाड़ी से चलूंगा—रात टूंडला पहुंचूंगा—सबेरे तक आगरा। नागाबाबा को भी आज ही पत्र लिखा है कि वह भी पहुंचें। २ व ३ रुक ४ की किसी समय की एक गाड़ी से चलूंगा। ताकि बांदा ५/११ को किसी समय पहुंच जाऊं। परिस्थितियां तो ऐसी नहीं हैं कि पहुंचूं पर जी नहीं मानता इसलिए चलने को विवश हूं। मिलने पर बातें होंगी। बड़ी रद्दी-रद्दी कविताएं हैं छोटी-छोटी। सब लाऊंगा। उपन्यास भी ३०/४० पेज लिख चुका हूं, लाऊंगा। लम्बी कविता—मेरा गांव—की १०० पंक्तियां हैं, वे भी लाऊंगा। देखना नागा बाबा की तथा अपनी, उन्हीं के सम्बन्ध की लम्बी रचना भी लाऊंगा। मुंशी आ रहे हैं, बड़ी खुशी है। जरूर बुला लो। तुम्हारे बच्चे तो रहेंगे ही। उनसे बातें कभी नहीं हुईं, इस बार जरूर करूंगा।

लिफाफा लिखने की बात भी खूब कही तुमने। अब तो स्वयं आ रहा हूं। जी भर कर कई कापियों के भर जाने तक का मसाला मेरे मुंह से स्वयं सुन लेना। कहो खुश हो न?

तुम्हें भी कविताएं सुनाना [सुनानी] पड़ेगा [पड़ेंगी]। आलोचकपना का बहाना न काम आयेगा। चाहे तो रूप-तरंग से ही सुना देना।

तु०
केदार

बांदा
१३-११-५६

प्रिय डाक्टर,

आगरे से चल कर बांदा पहुंचे बहुत दिन हो गये। पत्र नहीं लिख सका इसका खेद है। आते ही एक कतल केस के करने में जुट गया हूं। समय सरक जाता है। पत्र नहीं लिख पाया। मैं तो प्रिय ललित से वादा कर आया था चिट्ठी देने को। वह भी क्या कहता होगा। माफी मांगता हूं तुम सबसे इस विलम्ब के लिए। गृहस्वामिनी ने कई बार कहा भी तब भी न लिख सका। मुन्ना[1] तो बीमार हो गया आते ही। डाक्टर आते रहे। अब ठीक हुआ है।

---

1. मुन्ना—केदार के पुत्र।

आचार्य शुक्ल वाली पुस्तक पढ़ रहा हूं अकिल पैनी करने को। खूब लिखा है तुमने। भारतेन्दु युग पर—भक्ति का विकास और सूरदास और जायसी पर। शुक्ल जी को तुम्हीं ने परखा है और चमकाया है। मैं इतना अज्ञ था कि अब तक इस महान् हिन्दी आलोचक का बल और पौरुष नहीं देख सका था। गजब की बुद्धि है। मैं उन्हें सस्नेह प्रणाम करता हूं। आशा है कि वह जहां भी होंगे वहां मेरा प्रणाम स्वीकार करेंगे। परन्तु दुनिया ने उन्हें छिपाये रखा स्वार्थवश। तुमने डाक्टर नगेन्द्र पर भी खूब बल्लम मारी है। यह चित्त हो गये हैं। तुलसीदास पर जो लेख है वह अभी पूरा नहीं जमता। मुझे शंकायें हैं। लिखूंगा। समझाना।

लखनऊ Project में आ रहे हो या नहीं। प्रयास करूंगा कि पहुंचूं पर राम ही जाने। मलकिन को रामराम। बच्चों को प्यार। सेवा, शोभा, स्वाती[1] [स्वाति] को बहुत प्यार।

तुम्हारा
केदार

मदीया कटरा आगरा
२१-११-५६

प्रिय केदार,

'समय सरक जाता है।' समय नहीं सरकता; हम सरकते जाते हैं। गति केवल Matter में है और Time duration है, Matter नहीं। क्या Matter का कभी आदि था? आदि था तो अन्त भी हो गा। आदि था तो Matter को जन्म किसने दिया? अगर अनादि है तो जो Energy Consume होती जाती है, उसकी पूर्ति कहां से हो गी। तब क्या अनादि है, अनन्त नहीं। Engels के अनुसार (और यह वैज्ञानिकों की कल्पना भी है) Matter पहले Nebulous Mass थी; Engels का कहना है, उसके भी पहले उसका इतिहास रहा है। अच्छा इतिहास है—जिसका न आदि, न अन्त। लेकिन इस Matter में सबसे सुन्दर हैं—मनुष्य के हृदय की भावनाएं जो फूल के रंग की तरह उड़ जाती हैं। रंग तो किरणों में अन्तर्निहित है; क्या भावसत्ता भी प्रकृति की [के] किन्ही कणों में अन्तर्निहित है? रात को नींद टूट जाती है और उधेड़बुन में पड़ जाता हूं।

ख़ैर मुन्ना की तरफ और ध्यान दिया करो, यानी अपनी बीवी के रूढ़िवाद से लड़ कर। उसकी आदतों की ज़िम्मेदारी तुम पर है और line of least resistance ठीक नहीं। सबेरे-सबेरे नहाना, अंट-संट खाना, अनियमित जीवन बिताना, यह सब बन्द कराओ। कवि हो, मनुष्य के निर्माता हो कि मज़ाक। शुक्ल जी तक तुम्हारा प्रणाम पहुंचा दूँ गा।

तु० रामविलास

---

1. सेवा, शोभा, स्वाति—मेरी पुत्रियाँ।

बांदा,
२३-११-५६,
रात्रि ७ बजे।

प्रिय डाक्टर,

पत्र मिला, अभी शाम जब कचहरी से साढ़े चार बजे लौटा। इसे पढ़ कर चित्त प्रसन्न हो गया। प्रश्न गम्भीर है जो तुमने उठाया है। शायद मेरी मोटी बुद्धि के परे है। इन प्रश्नों पर मनुष्य ने पहले ही बहुत सोचा-विचारा है परन्तु समस्या एक समय के लिए हल-सी हो तो जाती है–मगर आगे फिर ज्यों-की-त्यों जटिलतर बन कर उभर आती है। यह यही सिद्ध करता है कि अभी सत्य की खोज शेष है और सत्य को पाते ही चलना चाहिए।

बोलचाल की भाषा में 'समय सरक जाता है।' वैसे यह स्थापना सही है कि वह सरकता नहीं। समय भी एक diamension[1] है, जो बराबर बना रहता है। उस समय में हम कहां हैं, क्या कर रहे हैं, क्या-क्या हो रहा है–इस सब को उस Dimension में स्थान देने के लिए ही हमने घड़ियां आदि बनाई हैं। तभी तो इतिहास भूतकाल का रूप ले लेता है, वर्तमान सामने आ कर सांसें लेने लगता है और भविष्यत् होने को है यह आभास हमें मिलता रहता है। समय matter नहीं है। न हो ही सकता है। हम सरकते भी हैं तो उसी Dimension में ही रहते हैं। हम भी आखिरकार matter ही तो हैं। matter इस demension से बाहर जा ही नहीं सकता। इससे नतीजा यह निकलता है कि उस dimension में, जिसे हम समय कहते हैं, न कमी होती है, न बढ़ती। इसी से यह भी निष्कर्ष निकलता है कि उस dimension के अन्दर जो कुछ भी है–वह matter हो या energy—उतना ही बना रहता है। यह कहना कि वह matter या energy exhaust हो गया या हो गई या Consume हो गया या हो गई, ग़लत होगा। यह matter न कहीं बाहर से आ सकता है, न बाहर कहीं जा सकता है; न कभी आया है, न गया है। matter था और रहेगा। इसलिए यह आदि-अन्त का (उसके) प्रश्न ही भ्रामक है और सर्वथा अनुचित है। साधारण भाषा में यह भले ही कह लिया जाये कि जिस रूप में matter पहले था (आदि में–समय के dimension के किसी एक बिन्दु पर या बिन्दुओं पर) उस रूप में अब नहीं है। Engles ठीक ही कहते हैं कि matter पहले Nebulous mass थी–उनका यह कहना भी ठीक ही है कि उसका उसके पहले भी इतिहास रहा है। तुम्हारा यह कहना कि यह 'अच्छा इतिहास है–जिसका न आदि है, न अन्त' इस बात को व्यक्त करता है कि तुम 'आदि' और 'अन्त' को इस समय के dimension से परे ले जाना चाहते हो। जो समय के अन्दर है उसका 'आदि', 'अन्त' हो ही नहीं सकता। भले ही उस matter की एक-न-एक दशा का, हम आदि-

1. Dimension

अन्त मान लें। matter तो वही रहेगा, वह चाहे परिवर्तित हो कर जिस रूप में रहे। उसका परिवर्तित रूप भी matter ही होगा।

इसी प्रकार यह प्रश्न है कि matter को जन्म किसने दिया, बड़ा महत्वपूर्ण है। किन्तु जरा सोचो कि जो है—चीज या वस्तु या matter—उसका जन्म कैसा? वह तो पहले से है और सदा रहेगी। matter रहा है और रहेगा। जब हम स्वयं समय के dimension से बाहर नहीं जा सकते और हम स्वयं 'मैटर' हैं तब हम भला यह कैसे जान सकते हैं कि इस dimension के बाहर भी कोई है जो dimension के अन्दर matter को जन्म दे रहा है या देता रहेगा। फिर किसी के बाहर से dimension के अन्दर आने और matter को जन्म देने की कल्पना या विचार भी ग़लत है। इस dimension से बाहर न कुछ है, न हो सकता है। तभी तो 'अनादि' और 'अनन्त' की कल्पना भी न्यायोचित नहीं है। साधारण बोलचाल में कोई भले ही 'अनादि' और 'अनन्त' कह ले। जिस प्रकार dimension का न आदि है न अन्त है और न वह अनादि है, न अनन्त है उसी प्रकार matter का भी न आदि है, न अन्त है, न वह अनादि है और न अनन्त है।

वास्तव में यह दोनों शब्द 'अनादि और अनन्त' हमारी दार्शनिक बुद्धि की असमर्थता की सीमा मात्र व्यक्त करते हैं। हम भले ही प्राप्त तथ्यों के आधार पर, ज्ञान की महती अनुकम्पा के बल पर, जिस समय मनुष्य नहीं थे उस समय के matter की सत्ता के रूप का आभास पा लें किन्तु क्या हमारे लिए यह सम्भव है कि हम पूरे dimension में व्याप्त matter का वह रूप जान लें जो पहले था? नहीं।

प्रश्न उठता है कि क्या dimension कल्पना तो नहीं है। नहीं, कदापि नहीं। वह सत्य ही है। इसी dimension theory के आधार पर तो matter energy की समस्या हल होती है।

अब आओ energy consume होने के प्रश्न पर और उनकी पूर्ति के प्रश्न पर।

जिसे हम-तुम energy consume होना कहते हैं वह तो energy का दूसरे रूप में परिवर्तित हो जाना मात्र प्रतीत होता है। वास्तव में वह energy न समाप्त होती है, न हो सकती है। वह तो रही है और रहेगी। बल्ब में energy consume होती-सी मालूम होती है किन्तु क्या ऐसा होता भी है? नहीं। vacuam में consumption का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। वह energy प्रकाश-तरंग बन कर पुन: कायम रहती है। हमारे हाथ के हिलाने में जो energy consume होती है वह हमारे हाथ के हिलने-डुलने का रूप ले कर उतनी ही energy का रूप ले लेती है। कहीं भी देखो, यही होता पाओगे। अतएव उसकी पूर्ति उसी के consumption के साथ जुड़ी हुई है। इसलिए इस प्रश्न को दूसरी दृष्टि से हल किया जा सकता है। जब हम पत्थर फेंक कर किसी पदार्थ को मारते हैं तब जितनी energy हम पत्थर फेंकने में लगाते हैं उतनी ही energy हम दूसरे पदार्थ को उस पत्थर के टकराने से दे देते हैं। वह स्थानान्तरण कर जाती है। इसे

चाहे consume करना कह लो, चाहे spent करना कह लो।

अब आओ 'हृदय की भावनाओं' पर। क्या भावसत्ता भी प्रकृति के किन्हीं कणों में अन्तर्निहित है? यह प्रश्न गूढ़ है। इस प्रश्न के साथ कई प्रश्न जुड़े हैं। भाव क्या है? कैसे आते हैं? क्यों आते हैं? फिर वह व्यक्त कैसे होते हैं और वे क्या हो जाते हैं व्यक्त हो कर? यह सब प्रश्न matter और energy से ही सम्बन्धित है। matter और energy के ही रूप भाव हैं, विचार हैं।

अब सोचते-सोचते आगे नहीं बढ़ पा रहा। इसलिए यहीं पर यह विचार-चिन्तन समाप्त करता हूं। जब तुम मेरी इन बातों पर पत्र, विस्तार से लिखोगे तो मैं पुनः सोच-विचार करूंगा। यदि चुप्पी मार गये तो फिर जड़ हो जाऊंगा। अतएव यह सिलसिला आगे चलाओ। चिन्तन का अवसर दो। समझाओ और समझो। तुम पंडित हो, मैं पोंगा। फिर भी बहस में साथ दूंगा।

शुक्ल जी वाली तुम्हारी आलोचना की किताब पढ़ गया। केवल अन्तिम चैप्टर रह गया है। पूरी पुस्तक ख़ूब है। बधाई लो। तुमने जो निष्कर्ष निकाले हैं वह ही हमारी [हमारे] प्रगतिशील साहित्य के लिए सत्य हैं। इस पुस्तक के द्वारा भ्रमों और भ्रान्तियों का दूर होना लाजिमी है। जिन-जिन के विचारों को तुमने ढहाया है वह वास्तव में इसी लायक थे। साहित्य में इस प्रकार [के] चिन्तन की परम्परा की बहुत आवश्यकता है। सही दृष्टिकोणों का प्रतिपादन होना ज़रूरी है। डाक्टर हजारीप्रसाद द्विवेदी की कलम ने जो काम किया है वह उनकी चिन्तन की कमज़ोरी ही जाहिर करता है। मौलिक विवेचन करना कोई आसान नहीं है। वह समय देकर सोचें-विचारें तब तो सही लिख सकते हैं, वरना इधर का उधर रख देने से साहित्य का इतिहास नहीं बन सकता। शुक्ल जी इस कदर सही सोचते थे मैंने इसी पुस्तक से जाना। उनके विचारों में जो असंगतियां हैं वह भी तुमने जगह-जगह दिखाई हैं। इसलिए यह कहना कि तुम पक्षपात से काम ले रहे हो, सर्वथा अन्याय करना है तुम्हारे साथ। जिस शैली में यह लिख सके हो उसका जादू सिर पर चढ़ कर बोलता है। सच बात तो यह है कि इस तरह का मौलिक आलोचनात्मक चिन्तन कोई आलोचक कर ही नहीं सके। स्पष्ट विचार कर पाना परिश्रम और चिन्तन चाहता है। टके सेर भाजी बेचने वाले भला उस तह तक कैसे जा सकते हैं।

तुम्हारी 'रूप-तरंग' के ६२वें पेज तक पहुंच गया हूं। प्रत्येक कविता पर उसी पेज में मैने तुम्हारी कला-कविता पर अपने विचार व्यक्त कर दिए हैं। अब इन रचनाओं की खूवियां [ख़ूबियाँ] सामने आ गई हैं। पूरा पाठ कर लेने पर, हरेक पर लिख लेने पर, लेख बद्ध करूंगा। गर्व है कि तह तक पहुंचा हूं और अब कह सकता हूं कि तुम काव्य-क्षेत्र में भी अमर रहोगे। यह रचनाएं किसी स्वतंत्र देश के साहित्य में सर्वोपरि स्थान पाने की अधिकारिणी हैं। मुझे कहीं-कहीं कमजोरियां भी मिली हैं। उनका भी उल्लेख मैंने पृष्ठों पर कर दिया है।

तु० केदार

R. B. Sharma
M. A., Ph. D. (Luck.)
HEAD OF THE DEPARTMENT OF ENGLISH
B. R. COLLEGE, AGRA.

6-12-1956

प्रिय केदार,

शाम की बदली है। फुहार भी पड़ रही है। Keats की कविताएं तुम्हारे पास हैं या नहीं? 1817 के संग्रह में उसने अपने भाइयों पर एक Sonnet लिखा है। साधारण बातों को कविता में बांधने में एक ही है–Wordsworth की तरह गांवों में या पहाड़ों पर जा कर नहीं, शहर के कमरे में fire place के पास। न पढ़ी हो तो पढ़ना। ज़रूर, इस तरह की ज़्यादा कविताएं उसने नहीं लिखीं लेकिन गतिशील क्षणों को पत्थर पर टाँक दिया है उस कवि ने।

विज्ञान वाले कहते हैं कि matter की गति को नापने का नाम है–Time. कितनी देर यह गति रही–यह है काल। किन्तु यदि matter अनादि और अविनाशी है जैसा कि Engels ने माना है तो समय भी–matter का duration भी–अनादि और अनन्त है।

Nature के सम्बन्ध में एक स्थापना यह है :

"Nature is a whole, moving in narrow circles and remaining immutable."

दूसरी स्थापना यह है : "Nature also has its history in time, the celestial bodies, like the organic species...coming into being and passing away...(Anti Duhring का पहला अध्याय)

एंगेल्स ने पहली स्थापना का खंडन किया है, दूसरे का समर्थन। अब बताओ, Nature has history in time, तो प्रकृति अनादि कैसे हुई? अगर celestialbodies और organic being का passing away निश्चित है तो Tempest में Shakespeare की यह उक्ति ठीक नहीं है क्या?

The great globle it self,
Yea, all which it inherit, shall dissolve
And, like this in substantial pageant faded,
Leave not rack behind.

और Prospro कहता है :

"my old brain is troubled." अपना भी वही हाल है यद्यपि brain उतना old नहीं है।

तुमने Time को Eternal dimension माना है। इस dimension की व्याख्या तो करो, प्यारे। इसके लिए तुमने लिखा है, न आदि है, न अन्त है; न वह अनादि है न अनन्त है। आदि भी नहीं हैं; फिर भी अनादि नहीं है,—यह कैसे समझ में आये?

तुम कहते हो Energy, Cunsume नहीं होती। जब सूर्य ठंढा हो जाय गा, धरती जीवहीन हो जाय गी—तब वह Energy परिवर्तित हो कर कहां स्थित हो गी?

इस विषय पर कुछ और पढ़ कर एकाध लेख-वेख लिखूँ गा तब तुम्हें विचार के लिए भेजूं गा। अच्छा, अब पकौड़ियां आ रही हैं। पहली तुम्हारे नाम की—गप्।

रा० वि०

बांदा
९-१२-५६
रात्रि साढ़े सात बजे

प्रिय डाक्टर,

जनाब आपको मालूम होना चाहिए कि Keats का काव्यसंग्रह मेरे पास नहीं है। आपने यह गुस्ताखी की है कि मुझे कविता लिख कर नहीं भेजी। तड़प कर रह गया। जल्दी भेजो वरना सब मज़ा चला जायेगा। यदि हो सके तो उसका संग्रह वहां के किसी पुस्तक भंडार से मेरे नाम बी० पी० भेजवा दो। मैं छुड़ा लूंगा। भूल न करना। अपने सामने ही भिजवा दो। तुम्हें मेरी कसम। पकौड़ी खाते ही न रह जाना। वरना बुरा होगा।

एक कविता लिखी है ताजमहल पर। पत्र के अन्तिम पृष्ठ पर है। पढ़ो और कस कर उसकी आलोचना करो। पर चाहे जो भी कहो चीज़ अच्छी ख़ासी बन गयी है।

एंगेल्स का कहना मुझे सही प्रतीत होता है कि प्रकृति का भी समय के अन्तर्गत एक इतिहास है। इस कथन का तात्पर्य यह कभी नहीं होता कि वही प्रकृति उसी रूप में सतत बनी रहेगी। हो सकता है कि यह न रहे—कोई [किसी] दूसरे रूप में रहे। फिर कभी ऐसा ही रूप ग्रहण कर ले। यह क्रम तो निरन्तर होता रहेगा।

जब मैं समय को न अनादि कहता हूं—न अनन्त कहता हूं तब मेरा मतलब होता है कि उसका आदि से आदि क्षण भी अपने से पहले से ही रह चुका होता है। इसीलिए समय के किसी छोर की कल्पना करना तर्कसंगत नहीं होगा। तभी तो मैं उसे अनन्त भी नहीं मानता। हो सकता है कि जो आदि क्षण है वही अंत क्षण भी हो। यहां आदि और अन्त एक ही बिन्दु पर मिले होते हैं। इसीलिए अनादि और अनन्त की कल्पना ही असंगत है क्योंकि जिसका आदि है वह अनादि कैसे और जिसका अन्त है वह अनन्त कैसे? अतएव समय आदि और अन्त से परे होकर भी आदि और अनन्त नहीं कहा जा सकता। वैसे तो प्रतीत तो यही होता है कि जिसका आदि नहीं है वह अनादि है और

जिसका अन्त नहीं है वह अनन्त है। किन्तु मुश्किल यह है कि उस समय के Dimension के अन्दर समय है, आदि और अन्त के रूप में नहीं, न अनादि और अनन्त के रूप में। समय सत्तात्मक है। सत्ता के आदि और अन्त का प्रश्न ही नहीं उठता–जब प्रश्न ही नहीं उठता तब अनादि और अनन्त की बात सोचना भी गलत जान पड़ती है।

समय को मैंने eternal dimension कहा है। इस dimension की व्याख्या नहीं–अनुभूति होती है। यदि व्याख्या ही करना चाहो तो कह सकते हो कि समय वह है जिसके अन्दर सब कुछ होता रहा है, होता रहेगा, और हो रहा है। समय तो स्पेस के साथ ही जुड़ा है। समय और स्पेस का एक ही dimension है।

Engergy consume नहीं होती। यह ठीक है। सूर्य ठंढा पड़ जायेगा–मगर वह energy space & time के dimension में कहीं-न-कहीं विराजती रहेगी। पृथ्वी ठंडी पड़ जायेगी तो क्या इस पृथ्वी के अलावा अन्यत्र कोई नक्षत्र या ग्रह है ही नहीं? हैं तो।

शेक्सपियर की उक्ति एक हद तक ठीक ही है। यह दुनिया न रहेगी। मगर पदार्थ रहेगा शक्ति–रहेगी ही। शेक्सपियर इस गोल दुनिया के नष्ट होने की बात कह रहे हैं मगर उससे पदार्थ और शक्ति के सर्वनाश होकर न रहने की बात नहीं कह रहे। Prospero का काल कथन दार्शनिकों का कथन नहीं–हम जैसों का कथन है। बस। स्पेस समाप्त हुई–कलम भी रुकती है।

केदार

ताजमहल

शिल्प-कला की कोमल कृति यह ताजमहल है
कभी नहीं मुरझाने वाला श्वेत कमल है
निर्मल नक्षत्रों की छवि से भी निर्मल है
चन्द्रोदय लगता इसके आगे धूमिल है

आंखों से उमंड़ा (उमड़ा] यह मानव-मन का जल है
करुणा-सागर का उज्ज्वल-सा यह बादल है
पत्थर हो कर भी सदियों से यह विह्वल है
विह्वल हो कर भी यह सुन्दर मुख-मुण्डल है

ऐसा लगता है जैसे यह अभी बना है
प्रस्तर के उर से प्रकटित, सस्मित सपना है

अविनश्वर यह ताजमहल नश्वर प्रस्तर का
मूर्तिमान अक्षुण्य [अक्षुण्ण] प्रेम है अभ्यंतर का

वे शिल्पी जो इसे बना कर चले गये हैं
नहीं लौट सकते हैं ऐसे छले गये हैं
उन्हें आज भी हम लखते हैं रीढ़ झुकाये
अपने कंधों पर अपना ही ताज उठाये

इसीलिए यह यमुना नीली–श्याम गगन है
ताजमहल की छाया में भी सांवरपन है
ओस और आंसू का भू पर गीलापन है
और मनुष्यों के सनेह में पीलापन है

२६–११–५६
रात्रि, ११ बजे

केदार

R. B. Sharma,
M. A., Ph. D. (Luck.) 195
HEAD OF THE DEPARTMENT OF ENGLISH
B. R. COLLEGE, AGRA.

To my brothers

Small, busy flames play through the fresh laid coals,[1]
And their faint crackings o'er our silence creep[2]
Like whispers of the household gods that keep
A gentle empire o'er our fraternal souls.[3]
And while, for rhymes, I search around the poles,

---

1. हाल के कोयलों के जलने में भी कविता है। संवेदना चाहिए।
2. *Silence* पर *crack lings* को *creep* करना—सूक्ष्म *sensations* की इति है।
3 ये तीन भाई थे—मातृहीन, पितृहीन; कवि *Keats* इनमें सबसे बड़ा था।

Your eyes are fixed, as in poetic sleep,[1]
Upon the love so voluble and deep,[2]
That age at fall of night our cane candales.
This is your birthday Tom,[3] and I rejoice.
That thus it passes smoothly, quietly.
Many such eves of gently, whisp'ring noise
May we together pass, and calmly try[4]
What are this world's true joys[5],—eve the great voice,[6]
From its fair face, shall bid our spirits fly.

Nov. 18, 1816

—John Keats

इसे लिखते समय Keats २१ वर्ष का था। इसके टक्कर की दो Sonnets उसने और लिखी है। वे तुम पुस्तक में पढ़ो गे, जिन पर निशान लगा कर, पुस्तक सोमवार को भेज दूँ गा।

तुम्हारी कविता सुन्दर है लेकिन बराबर नहीं उतरी। पहली पंक्ति गद्य है। श्वेत कमल की उपमा सुन्दर है लेकिन निर्मल नक्षत्रों की चर्चा से कमल की image बहुत जल्दी ओझल हो जाती है—चन्द्रोदय, नक्षत्र, कमल—तीनों के एक साथ आने से पाठक किसी भी image पर जम नहीं पाता। चन्द्रोदय वाली image पर पूरा बन्द होना चाहिए। दूसरे बन्द में—मानव मन का जल और करुणा-सागर का बादल एक ही बात कहते हैं। पत्थर की विह्वलता सुन्दर है लेकिन बाद वाली पंक्ति बहुत कमज़ोर है—विह्वल हो कर भी मुखमंडल सुन्दर होना—यह बात स्पष्ट नहीं हुई। तीसरा बन्द अभी—बना है—उसकी ताज़गी की अनुभूति। सुन्दर। पत्थर में सपना। ठीक। तीसरी पंक्ति व्याख्यात्मक है; चौथी अनावश्यक टिप्पणी। इस बन्द में केवल उसकी ताज़गी

1 *Poetic sleep* में आंखें खुली रखने का वर्णन *Keats* ने कई जगह किया है। वातावरण की *intense awarensess* में और *sensations* खो गये हैं।

2 यह उनकी परस्पर काव्य चर्चा है।

3. यह सबसे छोटा भाई था जिसकी *Consumption* से मृत्यु हुई और जिसकी परिचर्या कवि ने की थी।

4. कवि की यह आशा अपूर्ण रही; *Tome* की मृत्यु हुई और *George* अमरीका चला गया।

5. वह जीना चाहता था; मृत्यु अभी दूर लगती थी।

6. मृत्यु आये गी, मालूम था; कितनी जल्दी यह पता न था। *Joy* पर विषाद की छाया यहां भी पड़ रही है।

और प्रस्तर के सस्मित सपने पर मन जमाना था। तीसरा बन्द–शिल्पियों को किसने छला है? क्या ताज का सौन्दर्य उन्हीं का हृदय सौन्दर्य नहीं है? फिर ताज उन पर भार रूप क्यों है? चौथा बन्द बिल्कुल अस्पष्ट है। यह दुख, किसका, किसके लिए, ताज से उसका सम्बन्ध; चन्द्रोदय और सस्मित सपने से ताज का सम्बन्ध–यह सब कविता के किसी संकेत द्वारा नहीं जाना जा सकता। अन्तिम पंक्ति–पीलापन? क्या निर्जीव प्रेम से अर्थ है? साधारण मनुष्यों का प्रेम निर्जीव क्यों? इसके सिवा नीली यमुना, श्याम गगन, छाया के साँवरपन के साथ पीलापन colour harmony भंग कर देता है। कविता से यह अनुमान तो होता है कि तुमने क्या अनुभव किया है लेकिन वह अनुभूति mature होकर symmetrical नहीं हो पाई। श्वेत कमल, करुणा सागर का उज्ज्वल बादल, विह्वल प्रस्तर, सस्मित स्वप्न–इन images पर और ध्यान केन्द्रित होना चाहिए–यानी कविता में उनके लिए और भी space और time चाहिये। और कविता के दोनों भागों में inner harmony आवश्यक है जिससे सम्पूर्ण रचना मन में गूंजती रहे। जिस समय हम कविता लिखते हैं आवेश में रहते हैं। हम कविता नहीं देखते, वह भावचित्र देखते हैं जो हमारे मन में है। लेकिन पाठक तो वह नहीं देखता। वह कलाकृति के रूप को देख कर ही भाव चित्र तक पहुँच सकता है।

१५-१२-५६ तुम्हारा रामविलास

बांदा
२०-१२-५६

मेरे प्यारे दोस्त रामविलास,

लिफाफा मिला। तबियत खुश हो गई कि तुमने मेरी ताजमहल कविता को इतने गौर से पढ़ा। तुम्हारे पत्र में जान और जादू दोनों हैं।

मैं तुम्हारी आलोचना से प्रभावित अवश्य हुआ हूं लेकिन सहमत नहीं हूं [कि] पहले स्टैन्जा की पहली लाइन गद्द [गद्य] है। यह सही है मैंने ताज को कमल कहा है और उस कमल की छवि को नक्षत्रों की छवि से निर्मल बताया है। चन्द्रोदय को मैंने उस कमल की छवि से धूमिल दिखाया है ताकि चांदनी के खुलाव की ओर इशारा हो सके और उस कमल का खुलाव भी व्यक्त हो सके। इस स्टैन्जा में कमल ही कमल है न, न नक्षत्र है न चन्द्रोदय है। यदि मैं पूरा स्टैन्जा कमल से ही भर देता तो उसमें अलंकारों की छटा जरूर आ जाती मगर वह कैसा कमल है यह न व्यक्त हो पाता। यह ताज धरती का कमल है और इसकी खूबी यही है कि यह आकाश के तारों की छवि से अधिक सुन्दर छवि का है और यह चन्द्रोदय को भी मात करता है। पाठक को इस बात की अनुभूति प्राप्त करने में कोई प्रयास नहीं करना पड़ेगा।

दूसरे स्टैन्जा की पहली लाइन में मैंने ताज को मानव मन का उमड़ा जल कहा है। जल तरल होता है और इसकी तरलता ताज में लानी थी। ताज स्वयं तरल नहीं है [।]

आंसू सुन्दर होता है। और हृदय से निकल कर हृदय को व्यक्त करता है। इसलिए ताज को आंसू कह कर मैंने हृदय से निकाल कर बाहर रखे जाने को व्यक्त किया है। फिर मैंने आंसू की तुलना में इस ताज को बड़े आकार का देख कर उसकी बड़ाई व्यक्त करने के लिए करुणा के सागर का हवाला दिया है। किन्तु वह सागर भी तरल है इसलिए उसे बादल बना कर ताज के संगमरमर का रूप देने के लिए उज्ज्वल कह दिया है। तीसरी लाइन में ताज के पत्थर पने की ओर इशारा है लेकिन वह पत्थर साधारण पत्थर नहीं विह्वल होने वाला पत्थर है। इसीलिए इस विह्वलता को सजीव करने के लिए और रूप देने के लिए मैंने उसे मुख मंडल कहा और उस विह्वल मुख मंडल को सुन्दर बताया। सुन्दरता क्षणिक होती है इसलिए मैंने उसे सदियों से कायम बता कर स्थायित्व बना [प्रदान] दिया [किया]। तुम्हारा यह कहना कि आंसू भी जल है और बादल भी जल है इसलिए मेरी कविता लचर है मुझे ग़लत मालूम होता है। मेरे अनुसार जल और बादल में दो दशाओं का अन्तर है जिसे बिसार कर दोनों को एक नहीं माना जा सकता है।

पहले और दूसरे स्टैन्जा में पारस्परिक सम्बन्ध है। पहला स्टैन्जा केवल सौन्दर्य को व्यक्त करता है और वह सौन्दर्य असाधारण सौन्दर्य है और दो सो रही आत्माओं के कारण करुणा जनित हो गया है। बस इसी लिए 'कमल' के बाद ही जल और सागर की बात लानी पड़ी। कमल भी तो जल-जात कहलाता है।

दूसरे स्टैन्जा की आखिरी पंक्ति का अन्त सुन्दर मुख मंडल में होता है जिसे सब देखते रह जाते हैं और कभी नहीं अघाते। इस देखने में कुछ-न-कुछ नयापन निरन्तर मिलता रहता है। अतएव तीसरे स्टैन्जा की पहली लाइन में मुझे यह दिखाना जरूरी हो गया कि ताज अभी बना है और तुमने इस कहने से उसकी ताज़गी की अनुभूति पाई है। तुम कह सकते हो कि मैंने पहली पंक्ति में ताज को अभी बना कहा है फिर दूसरी पंक्ति में मैंने उसे पत्थर के हृदय से प्रगटित होना कहा है जो सर्वथा असंगत मालूम होता है। लेकिन बात यह है कि जब ताज बन कर खड़ा हो गया तब के उसके सौन्दर्य को व्यक्त करने के लिए मैंने उसे पत्थर के हृदय से निकाल कर बाहर रखा हुआ दिखा दिया है। और उसको सपने का रूप देकर उसके इस सौन्दर्य को और भी अनुपमेय बना दिया है कि उसमें लेशमात्र भी मनुष्य के विकार का आरोप तक न हो सके। इसीलिए ताज सस्मित सपना हो गया है। तीसरी लाइन व्याख्यात्मक मालूम होती है लेकिन यह व्याख्या अगली पंक्ति का आधार है। तुम कहोगे कि हज़रत सपना बना कर ताज को तुमने पत्थर क्यों बना दिया? मैं कहूंगा कि जनाब मन मेरी ऐसी ही अनुभूति है और यही ताज सपना हो कर भी पत्थर बना रहता है और ग़ायब नहीं होता। अतएव सपने को अविनश्वर ताज कह कर पत्थर की नश्वरता के समक्ष मैंने सौन्दर्य बोध कराया है। यही नहीं मैंने उसे प्रेम का सहारा देकर अक्षुण्ण कर दिया है।

चौथे स्टैन्जा में मैंने उन शिल्पियों की बात कही है जिन्होंने ताज बनाया। मैं उन्हें

धन्यवाद नहीं देना चाहता था बल्कि यह बात कहना चाहता था कि वे लोग ऐसी सुन्दर इमारत बना कर मर गये और जीवित न रह सके। मृत्यु के द्वारा छले जाने की बात इसी हेतु मैंने कही है। मृत्यु का नाम अवश्य मैंने नहीं लिया लेकिन ध्वनि उसे व्यक्त कर देती है। यहां पर मैंने उन शिल्पियों के शोषित होने की ओर संकेत भी नहीं किया। मैंने उनके कन्धों पर ताज का होना दिखाया है और उसे उनका ही ताज बना कर व्यक्त किया है तभी तो मैंने अपना—शब्द लिख दिया है। ताज के नीचे उन शिल्पियों को रीढ़ झुकाये होने वाली बात केवल इस ध्येय से कही गयी है कि वे लोग ताज को त्यागने के पक्ष में नहीं हैं बल्कि उस पत्थर के बोझिल सौन्दर्य को इतना प्यार करते हैं कि अपनी रीढ़ झुक जाने पर भी उठाये रहते हैं और सदियों से उठाये हुए हैं। इसमें उनका प्रेम ही व्यक्त होता है। यह स्टैन्जा उन्हीं के प्रेम का प्रमाण है।

पांचवें स्टैन्जा पर तुम्हें बहुत आपत्ति है। मुझे बिल्कुल नहीं है [।] यह सच है कि वे लोग रीढ़ झुकाये हुये सदियों से ताज के नीचे खड़े दिखते हैं और उनके कन्धों पर उनका अपना बनाया हुआ ताज अक्षुण्ण सौन्दर्य का प्रतीक हो कर खड़ा है फिर भला यह दृश्य सुन्दर हो कर भी क्यों न करुणा जनक हो। इसी समस्त दृश्य की करुणा से प्रभावित होकर मैंने यह पांचवां स्टैन्जा लिखा है कि यमुना इसे देख कर नीली हो गई है, आसमान श्याम हो गया है, ताज की छाया स्वयं भी सांवली है और धरती ओस और आंसुओं से गीली है। पीलापन मनुष्य के उस दुर्बल प्रेम को व्यक्त करता है जो ताज के इर्द-गिर्द रहने वाले अपने जीवन में अनुभव करते रहते हैं। इस स्टैन्जा की परिसमाप्ति इसी में होती है कि एक ओर ताज का अमर सौन्दर्य और प्रेम है तो दूसरी ओर जन-साधारण के प्रेम का पीलापन है।

जहां तक कि रंगों के हारमोनी का प्रश्न है वहां तक तुम चाहे जो कह लो लेकिन मेरा उद्देश्य रंगों के प्रकाशन का नहीं था बल्कि यह उद्देश्य को व्यक्त करना था। अब अगर तुम्हें इस पर भी कोई आपत्ति हो तो साफ-साफ लिखो। मैं समझता हूं कि यह मेरी बड़ी अच्छी कविता है।

सस्नेह तु० केदार

बांदा
२१-१२-५६
११ बजे

प्रिय डाक्टर,

कल एक लिफाफा भेज चुका हूं। आज अभी पुस्तक मिली। बेहद खुशी हुई। अनेकानेक धन्यवाद। परन्तु यह V.P.P. नहीं थी। क्या कारण है। अन्दर देखा तो तुम्हारा हस्ताक्षर देखने को मिला। व्यर्थ ही मैंने तुम्हें यह दण्ड दिया। ख़ैर, इस लिखने के लिए मुझे क्षमा करोगे।

तु० सस्नेह
केदार

मदीया कटरा, आगरा
२५-१२-५६

प्रिय वकील साहब,

ईसामसीह के जनम लेने में तीन घंटे बाकी हैं। वैसे सुना है वह आज तशरीफ न लाए थे। यह दिन रोमन जनता की होली (Saturnalia) का पर्व है। काली स्याही सूख गई है, सो लाल से कागज रँग रहा हूं।

तुम मेरी आलोचना से सहमत नहीं हो? कोई मुज़ायका नहीं। ऐसे दोस्त जो हर बात से सहमत हों, बेज़ायका हो जाते हैं। मेरे पास अपनी आलोचना की कोई कापी नहीं, इसलिए तुम्हारी दलीलों को सामने रख कर ही जिरह करूंगा।

मैंने कविता का पहला बन्द पढ़ा और तुम्हारी दलीलें भी। ताज धरती का कमल है नक्षत्रों से भी सुन्दर है, चन्द्रोदय को भी मात करता है। अगर किसी को तर्क से उसकी खूबसूरती का कायल करना हो तो तुम्हारी वकालत सही है। लेकिन डियर वकील साहब, कविता और तर्क में अन्तर है। आप मेरी कल्पना के सामने ऐसा भव्य चित्र खड़ा कीजिए कि मैं उसमें डूब जाऊं। मुझे चाहिये सूक्ष्म इंद्रिय बोध, सुन्दर मूर्ति विधान, कमल या चन्द्रोदय का ऐसा रूपक जिसमें मन कुछ क्षणों को डूब कर रह जाय। शेली की Sky Lark में अनेक उपमाएं हैं लेकिन दृष्टि हर एक पर ठहरती चलती है :

Like a poet hidden
In the light of thought
Singing hymns unbidden.
Till the world is wrought,
To silent hopes and fears it heeded not,

तुम्हारे तर्क में कोई कमज़ोरी नहीं है, कमज़ोरी है मूर्ति विधान में। कविता की भाषा इंद्रियों की भाषा है। संगीत और मूर्ति विधान द्वारा कवि वह सब कह देता है जो तर्क द्वारा दार्शनिक कह नहीं सकता। मेरी आपत्ति यह है कि तुम्हारी कविता में किसी Image पर ध्यान ठहरता नहीं, इसलिए कविता Suggestive न हो कर अभिधात्मक कथन बन गई है।

दूसरा बन्द। आंसू भी करुण, करुणासागर का बादल भी करुण। इसलिए आंसू का उपमान निरर्थक। तुम्हारा तर्क कमज़ोर है, प्यारे यहां पर। वैसे करुणा-सागर के उज्ज्वल बादल की उपमा सार्थक है। बादल के बाद उसके अचानक पत्थर बन जाने से कल्पना को धक्का ज़रूर लगता है। फिर भी विह्वल पत्थर–अच्छा खयाल है। लेकिन मुखमंडल? 'विह्वलता को सजीव करने और रूप देने के लिए उसे मैंने मुखमंडल कहा।' अरे साहब जो विह्वल है, वह सजीव तो होगा ही, निर्जीव कब विह्वल होता है? इसके सिवा आंसू, बादल, पत्थर, मुखमंडल–यहां भी एक बन्द में चार images ताबड़तोड़ आ गई हैं।।

तीसरा बन्द। जिन तर्कों की कल्पना करके तुमने उत्तर दिए हैं, उनकी चर्चा अनावश्यक है। 'अभी बना है' में ताज़गी की अनुभूति पुनः स्वीकार है। तीसरी पंक्ति व्याख्यात्मक है, आप भी मानते हैं। 'अक्षुण्ण प्रेम' कहने पर 'अविनश्वर' कहना अनावश्यक हो जाता है। इसलिए तीसरी पंक्ति को चौथी का आधार कहना—ग़लत।

चौथा बन्द। साहब अजब दलील है। शिल्पी मर भी गए हैं और आप उन्हें रीढ़ झुकाये देखते भी हैं! क्या आपने उनके प्रेत देखे थे? रीढ़ झुकने के कारण क्या हैं? अतिशय भार से ही रीढ़ झुकती है। क्या यह सौन्दर्य की अतिशयता प्रकट करने के लिए है? रीढ़ झुकने में साफ शोषण की ओर संकेत मिलता है, भले ही वह तुम्हें अभीष्ट न हो।

पांचवां बन्द। रीढ़ झुकाए ताज उठाए मानवों का दृश्य तुम्हें करुणाजनक लगता है। क्यों? ताज भी अमर। उसे उठाने वाले भी अमर। और अगर मर गए तो ग़म क्या, ऐसी निशानी तो छोड़ गए। इस बन्द में जिस करुणा की ओर संकेत है उसका कोई भी कारण समझ में नहीं आता। यहां तुम्हारी कविता आजकल के अधिकांश कवियों की तरह incoherent और अस्पष्ट हो गई है। ताज के इर्द-गिर्द रहने वालों का प्रेम दुर्बल और पीला क्यों है? फिर तुम्हारी कविता के 'मनुष्य' ताज के इर्द-गिर्द के मनुष्य कैसे हो गए? तुमने ताज के अमर सौन्दर्य और प्रेम से 'जन-साधारण के प्रेम का पीलापन' contrast किया है। आश्चर्य है! तुम्हें जनसाधारण का प्रेम दुर्बल और पीला क्यों जान पड़ा, समझ में नहीं आया। जिन शिल्पियों ने ताज बनाया, उन्होंने क्या जनसाधारण के हृदय के सौन्दर्य बोध को ही नहीं आंका?

तुम्हारी बड़ी अच्छी कविता मेरी समझ में छोटे हाथों वाली, धूप धरा पर उतरी वाली है। जो छाप मन पर छोड़ना चाहता हो, सारी कविता उसी की प्रत्येक रेखा को सँवारने में सफल होती है।

तुमने अपना पहला पत्र जिसमें कविता भेजी थी ११ बजे समाप्त किया था, मैं भी इसे १० बजे समाप्त कर रहा हूं।

तुम्हारा

रामविलास

कीट्स की कविताएं वी० पी० [वी० पी० पी०] से इसलिए नहीं भेजी कि उन्हें पढ़ते समय मुझे भी याद कर लिया करो। शोभा के गले में फोड़ा हो गया था, आपरेशन के बाद अब ठीक है।

[दिसम्बर का अन्तिम सप्ताह, १९५६]

प्यारे दोस्त,

पत्र मिला। इस बार का विवेचन बहुत खूब है। अब तुम्हारी आलोचना से पूर्णतया

सहमत हूं। मालूम हो गया कि तुम काव्य के सिद्ध पारखी हो। सच मानो झूठ नहीं कहता, तुम्हारी इस कसौटी पर कस कर मेरी 'ताजमहल' की कविता अब अच्छी हो गयी है। अपनी राय अवश्य देना। इस बार का प्रयास सन्तुष्ट तो कर ही देगा।

कुछ और भी स्फुट छंद भेज रहा हूं। उन्हें भी देखना। निर्मम होकर विवेचन करो, मुझे बल और विवेक मिलेगा। तुम ठीक ही लिखते हो कि तर्क काव्य नहीं है। मेरी वकालत तुम्हारे सामने न चल सकी, यह मेरे हित में ही है। तुम जीते मैं हार कर भी न हारा क्योंकि नई कविता लिखने का मार्ग खुला।

कीट्स की पुस्तक लगभग रोज पढ़ता हूं। रोज़ तुम्हें याद करता हूं। बड़ा प्रभावपूर्ण काव्य है। इसकी शक्ति लाजवाब है। बायरन पर इसका सानेट गजब का है। राग मूर्तिमान हो जाते हैं। कहीं कुछ अनकहा नहीं रह जाता।

"Through the dark robe off amber rays prevail
And like fair veins in sable marble flow."

'शान्ति' पर भी उसका Sonnet खूब है। देखो न "Soothing with placid brow our late distress" तुमने भी कहा है—भ्रूभंगों से सागर के शान्त करने की बात अपनी 'वंदिनी कोकिला' कविता में।

कीट्स का वह सानेट जो उसने Blue पर लिखा है। पढ़ते-पढ़ते नील में डूब गया। रंगों का इतना चतुर चितेरा शायद ही कोई दूसरा हो।

तुम्हारी भेजी पुस्तक-कीट्स के संग्रह पर—पर मैंने यह चार पंक्तियां लिखी हैं।

साथी की यह भेंट मुझे साथी-सी भाती
कविताओं से भरी हुई है जिसकी छाती
मैं साथी को इस पुस्तक से हृदय लगाता
अपनी छाती को छंदों का निलय बनाता

२१-१२-५६

छुट्टी के दिन हैं। काव्य है और मैं हूं। सब भूला हूं।

नये साल की बधाई।

तु० केदार

बिटिया का आपरेशन[1] हो चुका था—अब तो वह ठीक होगी। मैंने ललित की चिट्ठी में फोटो भेजे थे। मिली होगी।

केदार

---

1. मझली बेटी सेवा का अपेन्डिसाइटिस का ऑपरेशन।

ताजमहल

हरियाली का श्याम सरोवर सदियों से फैला है भू पर
श्वेत कमल-सा खिला हुआ यह ताजमहल है उसके ऊपर
नील गगन को छू कर भी यह नहीं हुआ है नीला अब तक
अमल धवल यह खड़ा हुआ है भूतल पर गर्वीला अब तक

नभ का चांद निकल कर, बढ़ कर, जग को कर देता है निर्मल
फिर भी क्रमशः घट कर वह तो हो जाता है पूरा ओझल
लेकिन ऐसा चांद नहीं यह अपना प्यारा ताजमहल है
अमर यशस्वी सदा चमकने वाला छवि का चांद विमल है

यह मानव के मन से उमंड़ा मानव की आंखों का जल है
इस करुणा की शिल्प-कला से पत्थर भी हो गया विकल है
हम यह आंसू देख रहे हैं आंखों में ही आंसू ला कर
ताजमहल में लीन हुए हम ताजमहल को सम्मुख पा कर

यह हमको ऐसा लगता है इस क्षण जैसे अभी बना है
प्रस्तर के उर से यह प्रकटित जैसे अति सस्मित सपना है
इस सपने की सुन्दरता पर न्यौछावर तन मन अपना है
इस सपने की छाया-छवि को अवलोकन करते रहना है

वे शिल्पी हैं धन्य जिन्होंने प्रस्तर में यह कमल खिलाया
कभी न घटने, सतत् चमकने वाला छवि का चांद उगाया
पत्थर को भी अश्रु बनाकर हम जैसा ही विकल बनाया
पत्थर से सस्मित सपने की बांकी झांकी को प्रकटाया।

दिसम्बर १९५६

'रूप-तरंग' को छन्दों से प्रभावित हो कर

१. मंद्र मृदन्गम् के स्वर से छंदों के स्वर हैं
स्वर से कूजित कविताओं के बिम्बाधर हैं
बिम्बाधर पर चित्रांकित अवनी अंबर हैं
अवनी-अम्बर के अधिकारी राग अमर हैं

२२-१२-५६

२. निर्झर-सी छंदों की बाहें राग रचित हैं
बाहों से लिपटी कविताएं भाव-भरित हैं
कविताओं में उपमाओं के कुंज-कलित हैं
उन कुंजों में जन-जीवन के गीत ध्वनित हैं

२२-१२-५६

3. 'रूप-तरंग' को पढ़ते-पढ़ते

सोया है संसार, निशा रवि पर फैली है
केवल एक दिया है मेरा–जो जगता है
जिसकी लघु लौ नहीं हुई किंचित मैली है,
जिसको छू कर अंधियारा गलने लगता है
मैं भी अपने दीपक का साथी–एकाकी,
नैनों को खोले कविता पुस्तक पढ़ता हूं,
और निरखता हूं वाणी की बांकी झांकी
'पद-पद' पर मैं पुष्प सदृश प्रतिपल चढ़ता हूं
होता है कल्याण, सुबह मेरी होती है
तमसावृत जीवन की जड़ता खोती है

४. मरकत पातों की श्यामलता को सरसाए
सूर्यातप में पेड़ खड़े छवि-क्षीर नहाये
मुझको प्यारे लगते हैं मेरे भ्राता से,
नाता जोड़े हैं मेरी धरती माता से॥

२५-१२-५६

सॉनेट

जड़ीभूत काठिन्य भूमि का बदल गया है हरियाली में
हरियाली को अंग लगा सुस्पंदित हैं तरु-लतिकाएं
श्यामलता की इस पुल्कन से मदविह्वल हैं दिवस-दिशाएं
मुग्ध, मगन-मन नव दिन का है नीलम की निर्मल प्याली में
राग-मुखर झरने झरते हैं तरु पातों की वाचाली में
हरियाली संगीत-ध्वनित है, रस राजित हैं स्वर शाखाएं
शाखाओं पर आभूषित हैं पुष्पों की मंजुल मालाएं
वासंती रंगों की होली विस्तारित है बनमाली में

मेरे मन में व्याप गई है तरु-लतिकाओं की श्यामलता
मेरा भी अस्तित्व ध्वनित है तरु-पातों की मृदु-ध्वनियों में
मैं भी जी भर खेल रहा हूं फूलों के रंगों की होली
इसीलिए तो अब आई है, मेरे भावों में कोमलता
रंगों को आकार मिला है मेरी कविता की कलियों में
चमक उठी है रंग बिरंगी ललित कला की चूनर-चोली।

२८-१२-५६

R. B. Sharma
M. A., Ph. D. 9-1-1957
HEAD OF THE DEPARTMENT OF ENGLISH
B. R. COLLEGE AGRA

प्रिय केदार,

साल-भर कविताएं लिखो, कविताओं में डूबे रहो। नये वर्ष के साथ तुम्हारा आत्मीयता से भरा पत्र और केदारपन से भरी कविताएं मिलीं। धन्यवाद।

मैं दो दिन के लिए अलीगढ़ गया था। आज कई दिन बाद आसमान खुला है। तब तुम्हें धूप और हवा की तेज़ी और ताज़गी के बीच यह पत्र लिख रहा हूं। कीट्स की पुस्तक पर जो तुमने चार पंक्तियां लिखी हैं, उससे अपनी छाती दूनी हो गई। पुस्तक भेजना सार्थक हो गा, मैं पहले ही जानता था। 'छाती' और 'थाती' के भदेसपन के साथ 'निलय' जमा नहीं प्यारे। वैसे तुम्हारी पंक्तियां ख़ूब ज़ोर से बोल रही हैं। 'लगता' में 'हूं' और जोड़ा जाय तो पूरी क्रिया बने। खैर, यह छोटी-सी बात है। 'ताजमहल' वाली कविता बिल्कुल बदल गई है और संवेदनाओं की दृष्टि से बड़ी मधुर बन पड़ी है। हरियाली और श्वेत कमल की Harmony सुन्दर है। दूसरी पंक्ति में 'हुआ' और 'है' एक-दूसरे से बिछुड़ कर दूर जा पड़े हैं। 'अमल धवल' का टुकड़ा मुझे कुछ छायावादियों का संस्कृत गर्भितपन लिए लगता है। तीसरे बन्द के आंसूवाद से मैं प्रभावित नहीं हूं। मुझे न ताज में करुणा दिखाई देती है न उसे देखते हुए आंखों में कभी आंसू आये। लेकिन यह तो अपनी संवेदनाओं का अन्तर है। तुम्हारा बन्द सुन्दर है। 'प्रकटित' और 'प्रकटाया' प्रयोग मुझे खटकते हैं 'अति सस्मित' में 'अति' अनावश्यक लगता है। 'सपने की छाया-छवि' में डबल लक्षणा भी अनावश्यक लगती है।

अन्तिम बन्द में कमल चांद, आंसू और सपने की images दोहरायी गयी हैं। इनमें यदि इतना परस्पर भेद न होता तो कविता के अन्दर जबर्दस्त Harmony पैदा होती है। फिर भी अन्तर दे कर हम ऊपर इन images से परिचित हो चुके हैं, इसलिए उनका

एक साथ आना कुछ विशेष खटकता नहीं है। अस्तु अब यह कविता तुम्हारे संग्रह में उच्च स्थान प्राप्त करे गी, इसमें सन्देह नहीं।

'रूपतरंग' पर पहले बन्द की पहली पंक्ति बहुत अच्छी है यद्यपि अत्युक्तिपूर्ण है। 'कूजित बिम्बाधर' बहुत अच्छा टुकड़ा नहीं, 'कूजित कंठ' तो समझ में आता है। अन्तिम दो पंक्तियों में images अस्पष्ट हो गई हैं।

दूसरा बन्द निर्दोष है। भावभरित चल जाता है। निर्झर, लिपटी कविताएं (लिपटी से मैं लताओं का चित्र देखता हूँ), उपमाओं के कुञ्ज, कुञ्जों में ध्वनित गीत–तुम देखो गे images में कितनी Harmony और उस पूरे बन्द में गूंजते रहने की कितनी क्षमता है। बधाई। लेकिन यह न समझना कि मैं तुम्हारी विषय-वस्तु–यानी अपनी तारीफ़–से भी पूरी तरह सहमत हूं।

'सोया है संसार' आदि पंक्तियां....। तुम्हें स्नेह चुंबन। अबे वकील, ज़रा देख। तू कहां डूबा है? ताजमहल देख कर या 'रूपतरंग' पढ़ते हुए। श्रीमान् अभी जितना कविता से प्रभावित होना सीखे हो, उतना शिल्प से नहीं। तुम जिस तरह दाद देते हो, मैं चाहूं तो भी तुम्हें उचित–और समुचित–दाद नहीं दे सकता। इतना ही कहूंगा, तुम जैसा कवि मित्र एकान्त में दिया जलाये मेरी कविताएं पढ़े (और अपनी रसिकप्रिया से दिए की रक्षा करता हुआ उसकी जोत जगाये रहे) और अपने अनुभव को कविता के सांचे में यों अप्रयास ढाल भी दे, इससे, मुझे सदा प्रेरणा मिले गी और मैं अपने आलस्य को अँधेरे की तरह तुम्हारे दिये से जला कर और नयी कविताएं लिखूं गा, अवश्य लिखूं गा, तुम्हारे लिए लिखूं गा।

अब नुक्स देखो। दूसरी पंक्ति–'जो जगता' है। दो जकार टकराते हैं। तीसरी पंक्ति–'हुई' और 'है' में फासला है। मैली के साथ 'किंचित' फिट नहीं है। 'पुष्प सदृश' के बाद 'सुबह' शब्द हल्का पड़ता है, विशेष कर जब बाद को 'तमसावृत्त जीवन की जड़ता' जैसा टुकड़ा आ रहा हो लेकिन ये बहुत मामूली नुक्स है। दर्पन पर साँस के निशान जैसे।

'मरकत पातों' आदि पंक्तियों में प्रकृति के रंगों के साथ तुमने उसका जीवन-स्पन्दन भी सुना है। (By the way, 'आलोचना' नं० १८ में कालिदास पर मेरा लेख छप गया है। कहीं से ले कर पढ़ना। उसमें इस जीवन-स्पंदन की मैंने चर्चा की है।) इस बन्द में केवल क्षीर और भ्राता दो शब्द अनुपयुक्त लगे।

तुम्हारी सॉनेट की पहली पंक्ति लाजवाब है। 'मरकत पातों' वाले बन्द की छवि ने यहां विस्तार और गम्भीरता पाई है। मनुष्य पशु और वनस्पतियों के जीवन में एक तार कहीं समान रूप से गूंजता है, इसमें सन्देह नहीं। लगता है, हम तुम दोनों उसे साथ ही सुन रहे हैं। तुम्हारे भावों में अब कोमलता आ रही है? अरे, चट्टानों में जब युग की गंगा बही थी, तब भी कोमलता थी। 'और सरसों की न पूछो....'। लेकिन तुम्हारी

ललित कला ने रंग-बिरंगी चूनर-चोली पहनना कब से शुरू कर दिया? सॉनेट के पहले हरियाली और संगीत का राज्य है। दूसरे हिस्से में 'फूलों के रंगों की होली' अचानक आ जाती है और इसीलिए 'चूनर-चोली' वाली ललित कला की कल्पना पहली पंक्ति की उदात्त अभिव्यंजना से बहुत दूर जा पड़ती है। शब्दों के प्रयोग में 'दिवस दिशाएं', 'वाचाली', 'संगीत ध्वनित', 'रसराजित', 'विस्तारित' और 'वनमाली', चिन्त्य लगते हैं। लेकिन ये सब तुम्हारी हरियाली में डूबे हुए हैं, यह फिर कहूंगा। कविता की भाषा हमें निराला जी के शब्दों में और मांजनी चाहिये, इतनी कि साधारण पाठकों के कंठ में बस जाय और वे उसे गुनगुनाते रहें। लेकिन मैं जानता हूं, यह सब करना कितना कठिन है। तुम्हारी प्रतिभा निखर कर स्वयं तुम्हें सिद्ध कवि बनाये गी। मेरी बातें 'पर उपदेश कुसल बहुतेरे' कोटि की हैं (मेरी अपनी आलोचक दृष्टि के सामने)।

कीट्स की Odes पढ़ो। Eve of St. Mark, Eve of St. Agnes, Lamia, Hyperion और Revised Version of Hyperion (Hyperion A Dream) Fancy, Bands of Passion of Mirth. पढ़ो। हर पत्र में एक कविता की चर्चा करना। मैं फिर अपनी [अपने] Comments भेजूं गा।

शोभा का ऑपरेशन हो गया था। अब वह बिल्कुल चंगी है। फोटो मिल गये हैं। इस समय शाम के पांच बजे हैं। अंधेरा छा गया है। आसमान में बादल दौड़ रहे हैं। चौके में बर्तनों की खनखन हो रही है। एक मित्र घूमने के लिए बुला कर पत्र लिखने का तार तोड़ रहे हैं, कुर्सी पर जमे बैठे हुए 'आलोचना' और 'युग चेतना' के पन्ने पलट रहे हैं? मेज पर टेबल लैंप जल रहा है, तुम्हारे दिये जैसा रोमांटिक तो नहीं लेकिन पत्र लिखने के लिए काफी प्रकाश देता हुआ। बस, प्यार। शेष फिर मिलने पर।

तु० रामविलास

बांदा
१-२-५७
प्रिय डाक्टर,

पत्र मिला। कल ही प्रयाग से भाई की शादी से वापिस आया हूं। नरोत्तम की बिटिया की शादी में चलने का प्रयास कर रहा हूं पर जज सा० मुकदमा मुल्तवी नहीं कर रहे क्योंकि इधर १० दिन तक पहले ही उनसे अपने केस मुल्तवी करा चुका था। उम्मेद कम ही है।

कीट्स के Hyperion का प्रथम Stanza खूब जमता है। उसके आगे नहीं बढ़ पाता। उसका अनुवाद कर चुका हूं। अब आज रात फिर पढ़ूंगा तब Ode to a Nigtingale [nightingale] पर अपने भाव व्यक्त करूंगा।

तुम्हारी इतनी स्पष्ट पहुंच है यह समय और प्रकृति पर कि मज़ा आ गया। बात

सवा सोलह आने की है। यही Dialectics की Unity of apposites है।

'आज' तो यहां पढ़ने को नसीब ही नहीं होता। मैं तो स्वयं तुम्हें नयी कविताएं लिखने को कहता रहता हूं। पर तुम हो कि टस से मस नहीं होते। लेकिन मैं तुम्हें क्षमा करता रहता हूं क्योंकि अन्य जरूरी काम भी तो तुम करते ही हो।

मैं इस बार अब प्रयाग न आ सकूंगा। तुम मार्च में Talk दे रहे हो तभी लखनऊ से बांदा होते हुए प्रयाग चले जाना। फिर मुलाक़ात हो जायेगी। अभी नाहक प्रयाग जा रहे हो नरोत्तम की बिटिया के ब्याह में जाना भी तो ज़रूरी है। लखनऊ से गाड़ी बांदा को सीधी चली आती है।

यह पोस्टकार्ड फिलहाल इसलिए लिख रहा हूं कि तुम परेशान होओगे पत्र न मिलने के कारण। कल या परसों फिर लम्बा-सा पत्र लिखूंगा। और मज़े में हूं।

बच्चों को प्यार।

तु० केदार

Agra
6-2-(57)

प्रिय केदार,

कार्ड मिला।

आज कल पत्नी अस्वस्थ हैं। इसलिए दिल्ली जाने का विचार छोड़ दिया है। तुम्हारे लम्बे पत्र की प्रतीक्षा में....

रामविलास

बांदा
८-२-५७
रात्रि ९ बजे
प्यारे दोस्त,

लम्बा ख़त देर से लिखने के लिए माफ़ी चाहता हूं, हालां कि मैंने कोई गुनाह नहीं किया। बहरहाल तबियत करती है कि क्षमा मांगो इसीलिए मांग रहा हूं।

मैंने Keats की कुछ पंक्तियों का अनुवाद किया है। वे "I stood Tiptoe upon a little Hill" की 127 लगायत 130 पंक्तियां हैं। लो देखो :

कविता की गम्भीर पंक्ति के शान्त विभव के सुस्पंदन में
हम निहारते हैं लहराते देवदार का पेड़ मेरु पर
और कथानक जब रूपायित हो जाता है सुन्दरता से

हम अनुभव करते हैं रक्षित हुए किसी हाथर्नोकुंज का
लेकिन जब वह अपने चित्रित पंख पसारे आगे चलता
उसके मनमोहक आलेखन में आत्मा अपनी खोती है।

अब Hyperion का प्रथम स्टैन्ज़ा मेरे अनुवाद में इस प्रकार उतरा है। यह भी पढ़ो।

गिरि-गह्वर के गहन-छांह-छाये विषाद में
पूरा डूबा, दूर प्रात की स्वस्थ श्वास से,
दूर प्रखर मध्याह्न-ताप–संध्या-तारा से,
शिलाखंड-सा जड़ बैठा था श्वेत-केश शनि
निज निवास के अनालाप-सा वाणी-वंचित;
वन-पर-वन सिर के समीप थे घन-पर-घन-से।
जीवन भी ऐसा अक्षम था जैसा अक्षम
ग्रीष्म-दिवस में हो कि हटाये नहीं बीज लघु
पंखिल शाद्वल के शरीर को धीमे छू कर
उपरत पात पड़ा था भू पर जहां गिरा था।
निर्झर भी निःस्वन बहता था वहीं निकट से
अधिकाधिक जड़-जठर रूप धर तम-सा फैला,
निज देवत्व-पतन, पीड़न के कटु कारण से।
जल की परी घिरी नरकुल के बीच अकेली
ओठों पर तर्जनी हिमानी धरे खड़ी थी।

कहो, डियर! कैसा रहा यह अंग्रेजी कविता का हिन्दी रूप? पसन्द आया अथवा नहीं। हो सकता है कि अन्याय हुआ हो कीट्स के साथ। फिर भी उसकी आत्मा का स्वर हिन्दी के छन्दों में बोलने तो लगा ही है। अपनी निष्पक्ष राय जरूर देना, बिना रू-रियायत के। अगर पसन्द आये तो पीठ भी ठ़ोक देना।

अब एक (शेली की) कविता का अनुवाद भी देखो–

कर्ण प्रिय कोमल स्वरों के पतन पर भी
गीत का संगीत स्मृति में गूंजता है।
नैन-प्रिय मनहर सुमन के निधन पर भी
सरस सौरभ सांस में नित घूमता है॥
रम्य-रूप गुलाब के अवसान पर भी
रूप शय्या पर पंखुरियां राजती हैं।

प्रेमिका के त्याग पर–प्रस्थान पर भी
प्रेम को सुधियां प्रिया की पालती हैं॥

अब लो मेरी कविताओं की बानगी।

१. हम लघु दीपों के समान ही जले ज्योति ले
और ज्योति से ज्योति मिला कर रहे जागते
क्षण-क्षण के संशय-सम्भ्रम जो मिले सामने
पराभूत हो कर वे हम से रहे भागते
अमा-निशा के अंधकार के अन्तराल में
हम सस्मित स्वप्नों की सुषमा रहे पालते
बुझने के पहले प्रयाण करने से पहले
शुभागमन हम सूर्योदय का रहे साजते

२०-१२-५६

२. हम उन लहरों के समान हैं जो आती हैं
गोल बांध कर नाच-नाच कर जो गाती हैं
गीतों की धन्वा-ध्वनियों सी लहराती हैं
सावन के झूलों की पेंगें हो जाती हैं
मूंगे मोती की सौगातें जो लाती हैं
तट को दे कर तट पर ही जो सो जाती हैं
तट को तन की निर्मलता से धो जाती हैं
कोई जीत नहीं पाता है खो जाती हैं

२०-१२-५६

३. हिम से हत, संकुचित प्रकृति अब फूली।
रूप-राग-रस-गंध-भार भर झूली॥
रंगों से अभिभूत हुई चट्टानें।
जड़ता में जागीं जीवन की तानें॥
नभ में भी आलोक-नील गहराया।
सागर ने संगीत तरंगित गाया॥
आठ रूप शिव के, समाधि को त्यागे।
मृन्मय अवनी के अंगों में जागे॥

वासंतिक वैभव यौवन पर आया।
काव्य-कला का कृती वेश मनभाया॥

१५.१.५७

हमीरपुर गया था। बेतवा के खड़े कगार पर ऊपर फूली सरसों देख कर आठ पंक्तियां लिख सका हूं। वे ये हैं।

४. संतत होते प्रखर कोर के संस्पर्शों से
काट रही है दृढ़ कगार को जल की धारा॥
सांसे लेता हुआ समीरण प्रश्वासों से
तोड़ रहा है कण-कण का संसर्ग-सहारा।
फूले खेतों से फिर भी फूली है छाती
सरसों को उसने–सरसों ने उसे संवारा।
देख रहा हूं उसे देखकर मैं अपने को
भूल रहा हूं अन्तकाल का मैं अंधियारा।

१८-१-५७

इससे पहले रात को ट्रेन में घने अंधेरे में यह सरसों मुझे दिखी थी। उसी का वर्णन सुनो।

५. अंधकार-आकार अकायिक का आच्छादन,
सूक्ष्म, तरल, पार्थिव तत्वों पर आरोपित है।
ज्ञान-गम्य, आलोक-विलोकित छवि की सत्ता,
केवल सांसों में सुधियों में परिपोषित है॥
हरे पात की परी प्रतनु तन पीली सरसों
ओझल हो कर भी गोचर है ऐसे तम में।
आवेगों में संवेदों में वह जीवित है,
अक्षय है उसकी सुन्दरता कालक्रम में॥

१४-१-५७

यह तब लिखी थी जब कानपुर जा रहा था 'आलोचना' का वह अंक खरीदने जिसमें तुम्हारा बढ़िया लेख कालिदास पर छपा था।

कहो, अब तो ख़ुश हो मेरी मेहनत से। अगर दोष हों तो उन्हें लिखो। मैं फिर सुधारूं। वरना डियर! मुझ बेवकूफ व्यक्ति के इस किये पर थोड़ी वाह वाह ज़रूर दे दो। वह भी किसी मजमें में नहीं, केवल अपने पत्र में चुपके से। वही काफी होगी प्रेरणा के रूप में।

तुम्हारा लेख इतना जम कर और उभर कर आया है कि पढ़ कर अक्किल ठिकाने हो गयी, मेरी नहीं—तमाम पोंगों की। मैं तो तुम्हारा दोस्त हूं न। मुझ में तो वह पहले ही से थी। तुम्हारी खूबी यही है कि जो लिखते हो, वह आंखों से लिखते हो, दिल से लिखते हो, दिमाग से लिखते हो और उसे सबेरे के लाल सूरज की तरह तपा कर—अंगार बना कर घने-से-घने वनों के ऊपर फेंक देते हो। अधकचरे लोग ही तो वे वन हैं।

'क्षीरोद वेले व सफेन पुञ्ज' बार-बार गूंजती है। साथ ही में निराला की यह पंक्ति भी :—

'अशिव उपलाकार मंगल द्रवित जल नीहार'

काश एक ऐसी पंक्ति मैं भी लिख पाता? पर भाई, ऐसे पारखी भी तो कम ही हैं जैसे तुम हो। सब लोग तो 'रपट-पड़े की हर गंगा' में रहते हैं। कौन टोता है कला की उभरी हुई नसों को। वे तो सिर के कुंचित कुंतल देख कर ही झूम जाते हैं। सच मानो डियर! कविता को गले वही लगा पाते हैं जो साधक हैं। शेष लोग तो उसकी फूहड़ आकृति के जनाजे लिये डोलते रहते हैं और समझते हैं कि प्यार कर रहे—प्यार पा रहे हैं।

तुम्हारी मलकिन की बीमारी की बात पढ़ कर गम हुआ लेकिन मुझे विश्वास है कि वह उस बीमारी को एक लात मार कर रफू-चक्कर कर देंगी। उनकी-सी मेहनत की स्त्री बीमारी से भी पानी भरवा लेगी। पर भाई, उनसे मेरी यह राय न जाहिर करना, वरना न अच्छी लगी तो ख़तरा मुझे भी है। मैं उनके शीघ्र अच्छे होने की बात जानने का अभिलाषी हूं।

मेरी बीबी [बीवी]—साहबा अभी प्रयाग ही हैं। न जाने कब आयेंगी। कमी महसूस हो रही है। सच पूछो तो उन्हीं को प्यार करने का मन हो रहा है। न कविता छूटेगी, न वह छूटेंगी। पर इस स्पष्ट कथन को बुरा न मान कर यह समझ लेना कि मुझे भी बसन्त आ गया है। शायद इन्हीं तरह के क्षणों में मैंने उन पर पिछली कविताएं लिखी थीं।

तुम जानते हो कि मैं किसी अन्य से इस तरह खुल कर बात नहीं करता। तुम्हीं हो जिससे दिल अपना राज कह देता है।

कविताएं ज़रूर लिखो। कलम चलाओ और भेजो। वह अच्छी हों या बुरी। इसकी फिकर न करो। तुम ख़राब लिखोगे ही नहीं। अच्छा है कि तुम्हें चारों तरफ से लोग-बाग कह-सुन रहे हैं। तुम हो कि बर्फ की तरह जम जाते हो और हिमालय की चोटी पर ही पड़े रहते हो। मियां, नीचे भी उतरो। जरा हमारे पोखर का गंदला पानी भी बन लो और गांव की स्त्रियों के आंचलों में भी लहरा लो। न हो तो उसमें तैरती हुई बत्तखों के पंख ही सहला लो। बड़ा मज़ा आयेगा। अगर चुप ही बैठे रहोगे तो गूंगे

हो जाओगे। देवी सरस्वती बुलाने से नहीं, जबरदस्ती घसीट कर लाने से आती हैं। तुम उनके लिए पूजा में बैठे-बैठे थक जाओगे और वे न आयेंगी। पूजा छोड़ कर पकड़ लाओ। बस।

तु० केदार

R. B. Sharma
M. A., Ph. D. (Luck.)
HEAD OF THE DEPARTMENT OF ENGLISH
B. R. COLLEGE, AGRA.

27-2-1957

प्रिय केदार,

देखता हूं कि, तुम्हारे पहले पत्र पर ८/२ की तारीख पड़ी है। अब २२/२ का कार्ड भी आ गया। उधर मैंने जल्दी-जल्दी पत्र डाले थे; इधर तुमने बाज़ी मार ली।

इस महीने कोर्स खतम कराने में लगा था—कुछ अपना, कुछ दूसरों का। आज शिवरात्रि की छुट्टी है, फिर भी सबेरे ढाई घंटे पढ़ा आया। अब कार्य समाप्त है। और जुलाई तक छुट्टी समझो। तुम्हें फुर्सत से लिखना चाहता था; इसीलिए विलम्ब हुआ। तुमसे नाराज़ भी होकर रूठना या पत्र न लिखना मेरे स्वभाव के विपरीत हो गा। नाराज़ तो नहीं था लेकिन याद दिलाने से हो गया हूं। तुम जितने उम्दा आदमी हो, उतने उम्दा कवि अभी नहीं हो। इसका कारण शायद धैर्य की कमी है जो मेरी समझ में नहीं आता क्योंकि तुम्हारा जीवन धैर्यहीन का जीवन नहीं है। शायद तुम्हें कविता में डूबने और चन्द्रगहना[1] जाने का समय कम मिलता है। जो हो। मैं यह कहने से बाज़ न आऊं गा कि अभी तुम्हें अपना शिल्प सँवारना है।

तुम्हारे दो गीत गोपेश ने मांगे हैं। ज़रूर भेजो। अपनों को आजकल कविता से सरोकार कम है। कविता पढ़ने और उसकी नुक्ताचीनी का भार ग़ैरों ने उठाया है।

इधर विकासवाद पर और पुस्तकें पढ़ीं। लगता है, हर वैज्ञानिक कवि हृदय होता है। डारबिन ने पांच साल तक बीगल जहाज़ पर विश्वभ्रमण किया था और परा-पौधों के सम्बन्ध में सामग्री एकत्र की थी। उसकी वर्णन करने की क्षमता अद्‌भुत है। ब्राजील के वनों और वहां स्पेन से आये निवासियों के जीवन के वर्णन में उसने कवि और कथाकार की कला का परिचय दिया है।

चार्ल्स लैंब के पत्र पढ़ते हुए उसकी वीरता पर बड़ी श्रद्धा हुई। उसकी बहन अर्द्ध

---

1. चन्द्रगहना बाँदा की तहसील कर्वी का एक गाँव। यहाँ केदारजी कुछ दिन रहे और 'चन्द्रगहना से लौटती बेर' कविता लिखी। [अ० त्रि०]

विक्षिप्त और अर्ध मृत सी थी लेकिन उसके निबन्धों में इस ट्रैजेडी की छाया भी नहीं पड़ने पाई। भाषा पर उसका अधिकार शेक्सपियर जैसा है। हकलाता भी था, शराब भी बहुत पीता था, क्या करे, जन्म भर क्वाँरा भी तो रहा था!

Tiptoe का अनुवाद सुन्दर है, केवल सुस्पंदन का 'सु' भर्ती का लगता है। Hyperion का अनुवाद बहुत ही सुन्दर हुआ है। तुमने Keats का घनत्व उतार लिया है जो अत्यन्त कठिन है। गहन छांह, स्वस्थ श्वास। (यहां घनश्याम अस्थाना आ गये, तुम्हारी कविताएं उन्हें भी सुनाईं; Keats का अनुवाद बहुत पसन्द किया।) अनालाप-सा वाणी वंचित और अन्तिम दो पंक्तियों में भाषा की नयी परख दिखाई देती है।

शेली के अनुवाद में काफी मार्दव है। पहले बन्द में 'कर्णप्रिय' कर्णकटु लगा। बाकी पंक्तियां सुघर हैं। अन्तिम पंक्ति में शब्दों का सम्बन्ध उलट-पलट गया है। प्रिय की सुधियां प्रेम (को) पालती हैं (प्रेम को पालने का मुहावरा जमा नहीं) के बदले– प्रेम को सुधियां प्रिया की पालती हैं। इस पंक्ति को छोड़ कर शेष में शेली के भाव ही नहीं, उसका संगीत भी खींच लिया है तुमने।

तुम्हारी पहली कविता का भाव सौन्दर्य उत्कृष्ट है। लघु दीपों के समान जीवन की सार्थकता सूर्योदय को लाने में दिखला कर तुमने मानव जीवन में अपनी सहज आस्था प्रकट की है। लेकिन तुम्हारी पहली कुछ कविताओं की तरह यहां भी अधूरी क्रियायें हैं–ले (लेकर), उल्टी क्रियाएं–रहे जागते (जागते रहे थे); रहे भागते; सुषमा रहे पालते (सुषमा पालने का टुकड़ा फिर नहीं जंचा), रहे साजते। भाषा की इस कमज़ोरी से तुम्हारे भावों के [की] सरसों गोहवा बन कर रह [गई] गये हैं [है]।

दूसरी कविता की पहली दो पंक्तियां कितनी साफ उतरी हैं। बाद की दो पंक्तियां भी सुन्दर हैं, केवल धन्वाध्वनियों में कुछ अनावश्यक घनत्व है। अन्तिम दोनों पंक्तियां कुछ और सबल होतीं तो कविता और चमक जाती। अभी उठान जितना अच्छा है उतना अवसान नहीं। तीसरी कविता बहुत बढ़िया है। कालिदास में जीवन के जिस स्पन्दन की बात लिखी थी, वही यहां है। 'आठ रूप शिव के' लिख कर तुमने कालिदास की याद भी दिला दी है। वासंतिक की जगह वासन्ती शायद ज़यादा अच्छा होता। अन्तिम पंक्ति कमज़ोर, कुछ अस्पष्ट और वासंती वैभव से असंबद्ध लगी। इतनी सुन्दर कविता एक पंक्ति की कमज़ोरी से मास्टर पीस होते होते रही जा रही है। इसके विपरीत चौथी कविता की अन्तिम पंक्ति बहुत ज़ोरदार है। 'संस्पर्श' में कोमलता है, प्रखरता नहीं, इसलिए अप्रयुक्त है। छठी पंक्ति में सरसों की आवृत्ति से घनत्व की कमी हो गई है। तुम्हारी पांचवीं कविता में 'अकायिक' और 'कालक्रम' (जिसे 'कालक्क्रम' के रूप में पढ़ना है) को छोड़ कर बाकी सब कुछ सुन्दर है। इसमें और कविताओं की तरलता तो नहीं है; उसके बदले अन्धकार की गहराई और उसी के अनुकूल शब्द चयन भी है। 'अशिव उपलाकार मंगल' की गूंज इस कविता में है। और मुझे वह गूंज विशेष प्रिय है।

आजकल भाषा विज्ञान के उधेड़बुन में हूं। कविताएं भी ख़ूब आ रही हैं। अमूर्त भावों के संकेत टाँक लेता हूं। फुर्सत से शब्दों में उतारूं गा। सरस्वती को बुलाने के बारे में तुम्हारी सलाह दुरुस्त है। लेकिन मुझे विश्वास है, तार मिलने पर वह स्वयं सितार पर उतर आयें गी। मामला पक रहा है, थोड़ा धैर्य और धारण करो।

अपनी सरसों का जोड़ीदार Walt Whitman का Dandelion देखो,

Simple & fresh & fair from winter's close emerging.
As if no artifice of fashion, business, politics had ever been,
Forth from its sunny nook of shelter'd grass-innocent golden
calm as the dawn,
The spring's first dandelion shows its face.

यह कविता सत्तर साल के Whitman ने लिखी थी—अपनी आयु के समान पूर्ण। भाव और शब्द किस सहज डोर से बँधे हैं। और प्रकृति का वही स्पन्दन जो कालिदास ने सुना था, यहां भी है।

अब तो तुम्हारी धर्मपत्नी आ गई हों गी? तुम पर बसन्त कब नहीं रहता, यह कहना कठिन है। पत्नी को प्यार करते हो, इसीलिए तुम्हारी कविताओं में चांद कम रहता है, सरसों ज्यादा।

अब झुटपुटा होने आया, खेतों में घूमने जा रहा हूं। ललित से कह दिया है। कुछ दिन में अर्ज़ी भेज दें गे।

तु० रामविलास

बांदा
८-३-५७
४ : २५ P.M.

प्रिय डाक्टर!

सबसे प्रथम तुम इस बात की बधाई लो कि तुमने अपने दोस्त के लिए Walt Whitman की एक अति उत्तम कविता Dandelion भेजी। वह तो इतनी प्यारी लगी कि हृदय पर छा गई। याद हो गयी। उसका अनुवाद करूंगा तब भेजूंगा। किया तो है पर वह सहज स्वभाव नहीं आ पाया। फिर प्रयत्नशील हूं। काश मैं भी इतना प्यारा स्वर कविता को दे पाता। यकीन करो कि यह भी उन्हीं कविताओं में एक है जो मेरे लिए आदर्श हैं। पर कठिन ही नहीं, कठिनतर है इस तरह लिखना। हर पत्र में ऐसी ही कविता भेज कर मुझे मरने से बचाये रहा करो।

तुम सही कहते हो कि मैं अपनी पत्नी को प्यार करता हूं तभी मुझमें चांद कम

रहता है सरसों अधिक। लेकिन याद रहे कि मैंने Shelly की चांद वाली कविता का पहले ही अनुवाद किया था। उसे देखो, वह यह है :–

क्या तुम नभ पर चलते-चलते
संगी-साथी बिना विचरते,
अवनी अपलक नित्य निरखते,
घटते, बढ़ते और बदलते
प्यार न पा कर पियराये हो,
शून्य नैन-से पथराये हो?

१२-८-५६

शायद यहां भी क्रियाएं अधूरी होंगी? हैं न? मैं नहीं जान पाता।

डब्लू० एस० लैंडर की एक कविता पढ़ी थी। उसका अनुवाद लो, यह है–

विदाई

लड़ा नहीं मैं, अपनी मैंने जोट न पायी
पुण्य प्रकृति ही, ललित कला ही मुझ को भायी
जीवन-अग्नि जलाई–मैंने देह तपायी
बन्द हुई वह अग्नि, बुझी, दो मुझे बिदाई।

१२-८-५६

एक चीनी कविता का यह अनुवाद देखो–

कटैयों का गीत

हमारे नगरों के चहुं ओर
सिपाही लड़ते हैं झकझोर
उमड़ता रहता है रणरोर
तड़पती जनता है सब ओर
हमें दुख भारी है!

हृदय में आता एक विचार
गलाएं युद्धों के औजार
बनायें खेती के लिए
काम में लाएं कृषक-कमार
इसी की बारी है!

करोड़ों लोगों में हो चाह
हिलोरें लेता हो उत्साह
कुमारी धरती का हो ब्याह
बैल हल खींचे भरे उछाह
जुताई जारी हो!

खेत में उपजे अन्न अपार
कटाई का आये त्यौहार
मगन मन नाचे सुख-संसार
गीत का उमंड़े [उमड़े] पारावार
सुहागिन नारी हो!

अब आओ मेरी कमज़ोरियों पर। मैं व्याकरण का कच्चा हूं, यह शत-प्रतिशत सही है। मगर रहे जागते आदि क्रियाएं अधूरी [उलटी] हैं यह मैं अब भी नहीं समझ पाता। तुम कहते हो इसलिए ठीक ही कहते होगे, माने लेता हूं। परन्तु प्रयत्नशील होकर भी शायद यह भाषा की कमज़ोरी मुझसे दूर न हो सकेगी। चन्द्रगहना तो स्वप्न हो गया। न वह फुरसत है, न वह अवसर। फिर भी उसकी याद से ही झूम उठता हूं। इधर खेतों पर घूमने गया हूं। अपने फेफड़ों में नयी ताजी हवा भरने तथा वहां Dandelion को जोर से पढ़ने। गीत गोपेश को भेज दिये हैं।

'सुस्पंदन' का 'सु' भरती का है ही। यह उसी तरह है जैसे किसी ३० विद्यार्थीगण के [की] कक्षा में आजकल ६० विद्यार्थी आ जायें। तुम्हें Hyperion का अनुवाद पसन्द आया, यह तो मेरे जीवन की बड़ी भारी सफलता की खुशी है।

शैली की कविता के अनुवाद में 'कर्णप्रिय' हटाये नहीं हटता। वह तो कोई राम ही हटायेगा, जिसे सीता पाना है। मैं मज़बूर हूं। शायद तुम्हारे पत्र में उल्ट [उलट] गयी। यहां कापी में यही है कि 'प्रेम को सुधियां प्रिया की पालती हैं।' पालती हैं कोई अच्छा शब्द नहीं है। जैसे कोई कुत्ता पाल लिया हो। फिर भी इतना बुरा नहीं है यह अंश। 'धन्वा-ध्वनियों' से मैंने चित्र खींचा था तथा लहरों के स्वर के घनत्व का भी।

जो कविता मास्टरपीस होते होते रह गयी वह फिर सुधारूंगा। 'कालक्रम' जैसे पंडित लोग पढ़ते हैं वैसे ही यहां उच्चरित होता है। मैं क्या जानूं कि वह भी वे लोग गलत करते हैं। 'अकायिक' का मोह मुझसे हटाये नहीं हटता। इसलिए अभी न निकाल सकूंगा। जब उसकी भावानुभूति हृदय से हट जायेगी तभी उसे हटा पाऊंगा।

भाषा विज्ञान लिखो चाहे जो लिखो, तुम लिखोगे कमाल का। अब फुरसत ही फुरसत है तुम्हें। डटकर काम करोगे। अरे भाई एकाध कविता तो कांख मारो।

वैज्ञानिक कवि हृदय होते हैं वरना सूक्ष्मातिसूक्ष्म प्रकृति के, स्पंदनों को ग्रहण ही कैसे कर सकते और उनसे नियमों की खोज करते। डारबिन ही क्या सभी वैज्ञानिक ऐसे ही होते हैं। परन्तु सौभाग्य तुम्हारा है कि तुम उन लोगों के ग्रन्थ पढ़ लेते हो। हम हैं कि यहां भूसा खाते रहते हैं। काश, मैं भी आगरा होता तो तुम्हारे साथ उन स्थलों के सुन्दर वर्णनों को सुनता।

लैम्ब की भाषा का क्या कहना है। भला उसकी समता मैं करूंगा। कभी नहीं। यह कोई defeatist mentality से नहीं कह रहा वरन् अपने संस्कारों को देख कर ही कह रहा हूं। हम तो मूर्ख के मूर्ख हैं। कविता हिला देती है, लिख देते हैं। पंडित होते तो भाषा को कस देते, जाल फेंक कर मगरमच्छ भी मार लेते। ख़ैर, जाने भी दो। तुम्हारी सलाह मान कर कविताएं माजूंगा।

अब बीवी कैसी हैं? बच्चों को प्यार।

तु० केदार

R. B. Sharma
M. A., Ph. D. (Luck.)
HEAD OF THE DEPARTMENT OF ENGLISH
B. R. COLLEGE, AGRA.

१३-३-१९५७

प्रिय Dandelion

Whitman की वह कविता उसके संग्रह में मुझे सबसे अच्छी लगी। उसकी अधिकांश कविताएं अच्छी कम और सिलपट ज्यादा होती हैं। तुम्हारी धूप धरा पर उतरी, कोयले, छोटे हाथों और चन्दगहना [चन्द्रगहना] वाली कविताएं मेरी निगाह में Dandelion स्तर की हैं।

तुम्हारा चीनी कविता का अनुवाद बहुत साफ उतरा है। 'चहुँ ओर' चल जाता है। हर बन्द की अन्तिम पंक्ति बराबर निखरती गई है और अन्त में 'सुहागिन नारी हो' ने सादगी के साथ कविता को तारसप्तक पर पहुँचा दिया है।

शेली के अनुवाद में 'पियराये' ठेठ है; लेकिन 'शून्य' के तत्सम से पटरी नहीं बैठती। लैण्डर वाली कविता का शब्द चयन निर्दोष है। उम्दा अनुवाद है।

'रहे जागते' में inversion है यानी 'जागते रहे' की जगह 'रहे जागते' तुकबंदी की सुविधा के लिए किया गया है। इससे कविता की सहज सुन्दरता में बट्टा लगता है। प्रयत्नशील होने पर व्याकरण की कमज़ोरियां दूर न हो ंगी, लचर बात है। देखो Lander और चीनी कविता के अनुवाद कितने सटीक उतरे हैं। क्रिया के बारे में इतना ही सोच लिया करो कि गद्य में लिखते तो क्रिया का रूप क्या यही होता। मैं गद्य से

पूरी वाक्य रचना मिलाने को नहीं कहता, केवल क्रिया के रूप के मिलने की सलाह दे रहा है [हूं]। थोड़ा सा ध्यान देने से तुम्हारा कवि दस फुट और ऊंचा उठ जाय गा। तुम जब inspired हो कर लिखते हो तो अच्छों-अच्छों से अच्छा लिखते हो। Lamb की क्या हस्ती है? हां, कवियों को थोड़ा विज्ञान अवश्य पढ़ना चाहिए। इससे उनका दृष्टिकोण निखरे गा और विशद भी हो गा।

Whitman के संग्रह में John Burroughts की एक उक्ति थोरो के बारे में है : "He improves with age—in fact requires age to take off a little of his asperity, and fully ripen him." इस वाक्य का पहला टुकड़ा छोड़ कर शेष सम्भवत: मुझ पर भी लागू होता है। इसलिए कविता कांख कर नहीं निर्झर की तरह शिलाएं तोड़ कर निकले गी। धैर्य धरो। Whitman की कुछ पंक्तियां और पढ़ो–A Prairie Sunset कई बार पढ़ना।

Shot gold, maroon, violet, dazzling silver, emerald, fawn,
The earth's whole amplitude & Nature's multiform power
consign'd for once to colors;
The light, the general air possess'd by them—colours till
now unknown.
No limit, confine—not the western sky alone—the high
meridian—North, South, all,
Pure luminous colour fighting the silent shadows to the last.

तु० रामविलास

बांदा
२४-३-५७
रात्रि १० बजे

प्रिय डाक्टर,

तुमने जो दो कविताएं Walt Whitman की भेजीं थीं उनके मेरे अनुवाद भी पढ़ लो। वे ये हैं–

१. 'शीत के पलायन पर
ऐसा वह स्वच्छ, सरल सुघर हुआ
जैसे वह फैशन, व्यवसाय, राजनीति के उपाय से नहीं छुआ,
अपने ही ताप-तपे शस्य-श्याम कोने से
निर्विकार, निष्कलंक, हेमवर्ण ऊषा-सा
इस बसन्त का प्रथम प्रसून खिला डैन्डेलियन।'

२. ‘स्वर्ण, लोहित, बैंजनी, हीरक, हरा, मृगदेहिया
ये रंग हैं, इनसे विपुल विस्तार भू का रंग गया है
और बहु आकार धारी तेज धारी यह प्रकृति भी रंग गयी है;
यह उजाला, यह पवन भी अब इन्हीं से रंग गया है,
वे अनेकों [अनेक] रंग अब तक जो अजाने ही रहे हैं
अब प्रकट हो कर असीमित हो गये हैं,
नहीं केवल पश्चिमी आकाश में ही
अपितु उत्तर और दक्खिन, सब कहीं,
वह मध्य नभ में छा गये हैं;
मूक छायाएं जहां भी जो बची हैं
शुद्ध भास्वर रंग उनसे अब वहां पर
प्राणपण से लड़ रहे हैं।’

पता नहीं मैं कहां तक इन अनुवादों में मूल का भाव और स्वर भर सका हूं। तुम लिखो कि मेरा यह प्रयास कहां तक मूल कविताओं को हिन्दी में अवतरित कर सका है। इसमें शक नहीं कि मूल रचनाएं बड़ी बढ़िया रचनाएं हैं। पर बधाई तुम्हें भी देता हूं कि तुमने इन्हें परखा और मुझे भेजा ताकि मैं तुम्हारे साथ इनका आनन्द उठा सकूं। मैं इन्हें बार-बार पढ़ता हूं और इन पर मुग्ध हूं।

लो अब मेरी एक छोटी-सी कविता भी पढ़ लो। यह पढ़ कर हंसना नहीं क्योंकि हंसना मना है। परन्तु अपनी आलोचक दृष्टि से देख कर विवेचन करते हुए मुझे अपनी राय जरूर भेजना।

बछड़ा

पशु है तो क्या हुआ!
मेरा ही बेटा है
आंखों में काजल लगाये हुए बछड़ा
धूप में खड़ा,
मुझ से भी होगा तगड़ा,
देखना बड़ा!
जायेगा खेतों को हल लिये अकड़ा,
मेरा ही बेटा है बछड़ा!!

७-३-५७

लो अब दूसरी चार पंक्तियां देखो–

वन-वन से वायु ले विभिन्न गंध आती है
तन-मन में श्वास में, सनेह में समाती है
वन-वन के फूलों से मह-मह महकाती है।
और मुझे गंधों से बांध-बांध जाती है

निराला जी पर कुछ पंक्तियां लिखी हैं। देखो वे ये हैं–

मान व अपमान के हलाहल को पान किया।
नीचे रह, ऊंची कर कविता को प्रान दिया॥
जीवन में गंध-गान-छंद प्रवहमान किया।
तुमने स्वर लहरदार जन-मन में तान दिया॥
पत्थर को तोड़ रही नारी के साथ जिये।
मंहगू के साथ रहे, मंहगू का हाथ लिये॥
खेतों को हंसियों से काटते किसान हुए।
मोरों के पंख खोल नाचते विहान हुए॥

२७-२-५७

अब चौथी कविता भी पढ़ लो। यह भी शायद कुछ-कुछ पसन्द आये।

मैं नहीं लचा

कंटक जो आये हैं पांव के तले।
मैंने वे बार-बार बिल्कुल कुचले॥
कोई भी एक नहीं घात से बचा।
संकट सब सबल लचे, मैं नहीं लचा॥

सामने पहाड़ मिले रोकते खड़े।
हो गये–निहार उन्हें–रोंगटे खड़े॥
मैंने भी मल्ल युद्ध मेरु से लड़े।
जीता मैं, हार गये वे बड़े-बड़े॥

मेघ ने, निदाघ ने मुझे नहीं तजा।
कान के समीप मृत्यु-ढोल भी बजा॥
किन्तु मैं निदाघ, मेघ, मृत्यु से कढ़ा।
नाचता हुआ प्रसून-पंथ में बढ़ा॥

२६-२-५७

'मोची' भी कविता में आ गया है। लो उसे भी देख लो।

घिसे, चले, मर चुके तलों को मैं निकालता
जीने वाले जानदार मैं तले डालता
सी कर, पालिश से चमका कर मैं उबारता
जूतों से बाबू लोगों की धज संवारता
मैं पथ की पटरी पर बैठा कला बेचता
जूतों के चलने में सब का भला देखता
मैं तो उस ऊंची आत्मा को नहीं जानता
मानव जिसकी ऊंचाई के गुन बखानता।

२२-२-५७

अब कस कर अपनी टिप्पणी दो इन पर। मैं ध्यान से सुनूंगा और सीखूंगा। मुझे विश्वास है कि इनमें व्याकरण के अनुसार ही क्रियायें पूरी-पूरी व्यक्त हुई होंगी।

हां, उस दिन। १८/३ को तुम्हारे संस्मरण[1] सुने लखनऊ रेडियो से। करीब-करीब वही थे जो तुमने अपनी पुस्तक में दे रखे हैं। मैंने दिन को वह पुस्तक दुबारा पढ़ ली थी। उद्धरण कविताओं के और देते तो अच्छा होता। आखिर कितने दिन लखनऊ में रहे? कैसा है वहां का रंग-ढंग? किसी से मिले भी कि यों ही सटक आये?

ललित का आवेदन पत्र आ गया है। वह मेरे पास सुभीते से रक्खा है। कालेज के मंत्री फिर एक दिन आये थे। पूछ गये हैं। मैंने उन्हें बता दिया है कि वह आ गया है। वह उसे मई में लेंगे। वादा तो यही किया है कि वह अवश्य कर देंगे। हम सबके बहुत शुभेच्छु हैं। मुझे भी सौ फीसदी विश्वास है कि ललित काम से लग जायेंगे।

अब बीमारी का क्या हाल है? अस्पताल जाना छूटा अथवा नहीं? कुछ तो समाचार दो इस सम्बन्ध में। मेरी बीबी [बीवी] पूछ रही है।

लड़कियां तो अब ठीक हैं। उनको प्यार।

बच्चों के इम्तहान हो रहे होंगे।

मुन्ना की परीक्षा प्रारम्भ हो गयी है। देखो क्या होता है।

३/४ को प्रयाग से Radio पर, गोष्ठी में भाग लेने जा रहा हूं। यह प्रथम अवसर है अपने राम को कवि सम्मेलन में भाग लेने का। इसे कृपा कहूं अथवा दुर्भाग्य। तुम शायद ही सुन सको क्योंकि प्रोग्राम ९-४५ P.M. से शुरू होता है। हां, वहां बनारसी गहरेबाज़ कवियों से भेंट होगी—यही आकर्षण है।

---

1. निराला जी के संस्मरण।

कब आ रहे हो इधर? छुट्टी तो है ही। कोई पुस्तक लिख रहे होगे? फिर कोई कविता भेजो। ज़रूर।

सस्नेह तु०
केदार

मदीया कटरा, आगरा
२३-४-५७

प्रिय केदार,

तुम्हारे पत्र का यह उत्तर नहीं है। आज कल परीक्षा कार्य में व्यस्त हूं। ४-६ दिन में फुर्सत पाने पर तुम्हें विस्तार से लिखूं गा। तब तक इसी से सन्तोष करो कि मैं तुम्हें भूला नहीं हूं। मुंशी मथुराप्रसाद के वाचनालय पुस्तकालय[1] की ओर से नये वर्ष की बधाई और शुभकामनाएं प्राप्त हुई हैं। मिलें तो मेरी ओर से हार्दिक धन्यवाद दे देना।

तु०
रामविलास

बांदा
२४-४-५७
रात्रि ८ बजे, गरम कमरे के अन्दर बैठ कर
रेडियो की संगीत-लहरी में नहाया हुआ
पसीने के [की] बूंदों से अलंकृत हो कर
प्रिय डाक्टर,

पोस्टकार्ड अभी मेरे छोटे भाई ने दिया। पढ़ कर प्रसन्न हो गया। दिन-भर धूप में तपने के बाद इस बचकानी चिट्ठी ने वही काम किया जो एक सावनी घटा करती है—यानी प्यार से इसने नहला दिया। मैं तो राह ही देखता रह गया तुम्हारे यहां आने की। तुम लखनऊ आए थे—फिर झांसी से भी तुम्हारा एक वक्तव्य छपा था। ख्याल यही था—हालांकि वह गलत निकला—कि तुम शायद मेरे नगर भी आओगे। परन्तु तुम्हें आगरा लौट जाने की जल्दी थी इसलिए नहीं आ सके। कोई बात नहीं है।

इधर केवल सरकार को ले कर खूब उछल कूद की ख़बरें छप रहीं हैं। कभी-कभी पार्टी के प्रमुख व्यक्ति ऐसे वक्तव्य दे देते हैं कि लोग भड़क जाते हैं। ज़रा धीरज

---

1. बांदा की एक संस्था। अब इसका नाम नागरी प्रचारक पुस्तकालय, बांदा है। इसमें एक कक्ष का नाम 'केदार कक्ष' भी है। [अ० त्रि०]

के साथ काम करने की ज़रूरत है। आज का अजय घोष का बयान पढ़ कर तसकीन हुआ कि उन्होंने वैसे वक्तव्य देने वालों के कान उमेठे हैं। यही attitude इस वक्त कारगर साबित होगा। मेरा यही विचार है। हमारे वे ख़्याल ग़लत निकले कि इस बार ख़ुश्चेव के कारण पार्टी पीछे ढकिल जायेगी। पार्टी तो ऊपर उभरी है। दरअसल में इस दिशा में सम्हल कर काम करना जरूरी है। ख़ैर, यह तो हमारी धारणा है। पता नहीं कि बड़े लोग क्या सोचते हैं।

अपने पिछले पत्र का विस्तृत उत्तर मिलने की आशा लगाए बैठा हूं। जी न माना इसलिए यह दूसरा लम्बा पत्र भी लिख कर भेजे दे रहा हूं कि इसका भी जवाब दोगे। कुछ कविताएं लिखीं हैं। वे भी नीचे दे रहा हूं। पढ़ कर टिप्पणी लिख भेजना।

दिन के दिए

आज अभी आंखों से
पर्वतीय निर्जन के धुंध-भरे घेरे में
कैद खड़े पेड़ों के मौन पड़े डेरे में
पात हीन डालों के आखिरी किनारों पर
पीत पगे फूलों के आरसी-कपोलों पर
दिन में ही जगर मगर दीप जले देखे हैं।

१-४-५७

यह कविता मैंने प्रयाग जाते समय रेल के डिब्बे में उस समय लिखी थी जब मानिकपुर १ स्टेशन रह गया था और मैंने मानिकपुर की पहाड़ियों पर मौन खड़े नंगे पेड़ों की डालों के आखिरी किनारों पर ये फूल देखे थे। हम डिब्बे में ही रस सिक्त हो गए थे। कहो, कैसी रही यह छोटी-सी कविता? Dandelion से किसी क़दर कम नहीं है। बल्कि कुछ ऊंची ही है।

अभी १३-४-५७ को खजुराहो गया था। उसे देख कर भी एक कविता लिख सका हूं। लो उसे भी पढ़ो।

खजुराहो के मन्दिर

चंदेलों के कला-प्रेम की देन देवताओं के मंदिर,
बने हुए अब भी अनिंद्य जो खड़े हुए हैं खजुराहो में,
याद दिलाते हैं हमको उस गये समय की
जब पुरुषों ने उमड़-उमड़ रोमांचित हो कर समुद्र-सा
कुच-कटाक्ष वैभव-विलास की कला-केलि की कामिनियों को
बाहुपाश में बांध लिया था
और भोग-सम्भोग सुरा का सरस पान कर

देश-काल को—जरा-मरण को भुला दिया था!
चले गए वे काम-कंठ आभरण पुरुष-जन;
चली गयीं वे रूप-दीप-दीपित बालाएं;
लुप्त हुईं वह मदन-महोत्सव की लीलाएं;
शेष नहीं रह गयीं हृदय की वह स्वर ध्वनियां!
किंतु मूर्तियां पुरुष-जनों की–
और मूर्तियां कामिनियों की
ज्यों-की-त्यों निस्पंद खड़ी हैं उसी तरह से
देव मंदिरों की दीवारों पर विलास के हाव-भाव से।
काल नहीं कर सका उन्हें खंडित कृपाण से,
किन्तु किसी दुर्द्धर मनुष्य ने
गदा मार कर कहीं-कहीं पर तनिक-तनिक-सा तोड़ दिया है
और आज तक इसीलिए वे उसे कोसती हैं क्षण-प्रतिक्षण!
नर हैं तो आजानबाहु, उन्नत ललाट
रागानुराग-रंजित शरीर हैं!
तिय हैं तो आकुलित-केश, पटु नटी-वेश,
कामातुर मद विह्वल अधीर हैं
सदियों से पुरुषों की जांघों पर बैठी करती विहार हैं;
इन्हें नहीं संकोच-शील है या कि लाज है,
यह मनोज के मन:लोक के नर-नारी हैं,
आदिकाल से इसी मोद के अधिकारी हैं;
चाहे हम-तुम कहें इन्हें : यह व्यभिचारी हैं।

मुझे पहली बार प्रयाग से रेडियो कवि-सम्मेलन में बुलाया गया था। ३/४ को था। मैंने केवल 'दिन के दिए' व एक अन्य ६ पंक्तियों की कविताएं सुनाई थीं। पहले तो उस Hostile वातावरण में–परिमलियों के बीच–मुझे घुटन मालुम हो रही थी। परन्तु फिर जब मैंने जम कर सुना दिया और वाह-वाह हुई तो उनके मुंह देख कर खुश हो गया। वे चेहरे पत्थर के पुराने से हो गए थे। मज़ा तो यह था कि P. C. Gupta व भैरवप्रसाद गुप्त और २/३ साथी बिना बुलाए ही वहां मेरे कविता पाठ तक बैठे रहे। फिर चले गए। उनकी उपस्थिति भी मेरे लिए प्रोत्साहन का काम कर रही थी। मैं उनका अवश्य ही कृतज्ञ हूं। अज्ञेय महोदय भी थे। उनसे मैंने नमस्कार मारी पर चेहरा–उनका-विकृत हो गया; मगर जवाब देना इस सभ्यता का तकाजा था इसीलिए उन्होंने बरफ के ठंढे गिलास से अपना मुंह निकाल उसका उत्तर दिया। फिर न बोले एक शब्द। और उन बड़े 'भारती' का हाल सुनो। यार मेरा जान कर भी अनजान बना

रहा। देख कर भी आंख मूंदे रहा। मैंने उन्हें देखा उनके अन्दर जा कर उनकी परेशानी पहचानी। वह जूनियर कवि थे इसलिए मैंने अपना सलाम नहीं दिया। भला वह कैसे इस अ-कवि को नमस्कार करते। मैं इसे समझ कर ख़ूब खुश हुआ। वाह रे घमंड-घटोत्कच! वैसे तो हमें सब दोष देते रहे हैं कि हम बड़े बदतमीज हैं। पर इन सियारों को कोई नहीं कहता। बहरहाल, मजमें में मैंने उनके धुएं देखे थे। नयी चीज थी मेरी। ताजा रंग था। पंत जी ने भी प्रशंसा की। परन्तु बड़ी छोटी थी। यही शिकायत थी सबको। परन्तु तुम जानते हो कि मैं देर तक पढ़ता तो उखड़ जाता। कविताएं लम्बी नहीं जमतीं जब तक कि निराला का-सा पाठ करना न आता हो। वह तो मेरे वश का नहीं है। न आदत ही है।

मेरी 'लोक और अलोक' का संस्करण छप ही गया होगा अब तो। परन्तु कुछ समाचार नहीं मिला। प्रति तो भेजूंगा ही मिलते ही।

मैंने Leave of Grass प्रयाग में खरीद लिया है। उम्दा है। साधारण जन की जबान में कविताएं निकली हैं। मार्मिक हैं। जड़ाऊ काम नहीं है इनमें। सादगी और सफाई के साथ हृदय धड़कता है। तुमने अधिकांश को सपाट कहा है। हो सकता है ठीक हो तुम्हारा यह विश्लेषण। पर अभी मैं कुछ नहीं कह सकता। मुझे तो वह बहा ले जाता है अपने बहाव में।

मुंशी का पत्र आया था। मैंने जवाब दे दिया है। शायद Walt Whitman की कविताओं का अनुवाद छापने के क्रम पर विचार हो रहा है वहां। वही श्री चंद्रबली के अनुवाद को। मैंने लिखा है कि ज़रूर छापो।

बांदा के गदर के गीत मांगे हैं पर यहां तो पत्थर गदरा जाते हैं। गीत मिलते ही नहीं। बहुत पूछता हूं पर कोई नहीं बताता कि कहां पड़े हैं। खोज जारी है।

घर में सब मजे में हैं। तुम सब लोग मज़े में होंगे। बेटियों को प्यार। बेटों को सलाम। तुम दोनों को नमस्कार। ललित का ख्याल है। सेक्रेटरी महोदय से फिर बात कर ली है। मई में दरखास्त दे दूंगा। विज्ञान के स्नातकों की भी आवश्यकता है। कोई हो तो लिखना।

सस्नेह तु० केदार

R. B. Sharma — १२, अशोक नगर
M. A., Ph. D. (Luck) — आगरा
HEAD OF THE DEPARTMENT OF ENGLISH — १६-५-१९५७
B. R. COLLEGE, AGRA

प्रिय केदार,

बहुत दिनों के बाद फुर्सत से तुम्हें चिट्ठी लिखने बैठा हूं। इस बीच बनारस,

लखनऊ, इलाहाबाद और आगरे की कापियां जांचीं। सूर जयन्ती पर मथुरा में भाषण दिया और १०, मई को '५७ के विप्लव पर आगरे में सरकारी-कम-सार्वजनिक समारोह में भाषण दिया। सन् '५७ के इतिहास पर काफी सामग्री एकत्र कर ली है; और कर रहा हूं।

पहले सूर का दिव्य दर्शन देखो। रात का चित्र है। कल्पना के रंगों में सूर की संवेदनाओं ने ढल कर ज्योति के पत्र पर कैसा अमर चित्र आंका है—वर्ण-वर्ण, रेखा-रेखा सजीव है, सारा चित्र इतना सर्वांग-सम्पूर्ण मानो द्रष्टा के सामने मंत्र के प्रज्वलित [प्रज्जवलित] अक्षर स्वत: अवतरित हुए हों—

अरुझी कुंडल लट, बेसरि सौं पीत पट, बनमाल
बीच आनि उरझे हैं दोउ जन।
प्राननि सौं प्रान, नैन नैननि अंटकि रहे, चटकीली
छबि देखि लपटात स्याम घन।
होड़ा-होड़ी नृत्य करैं, रीझि-रीझि अंक भरैं,
ता-ता 'थेई-थेई' उछटत हैं हरखि मन।
सूरदास प्रभु प्यारी, मंडली जुवति भारी, नारि कौ
आँचल लै-लै पोंछत हैं स्रमकन।

Walt Whitman ने तो एक Dandelion की पूर्णता ही उतारी थी—यहां तो कुंडल में उलझी हुई लट से लेकर नारि के अंचल से स्रमकन पोंछने तक हर detail dandelion सी पूर्ण है और उन सब details से मिल कर बने हुए पूरे चित्र की पूर्णता-भव्यता का क्या कहना! उल्लास का ऐसा चित्र और कहीं देखा है? कृष्ण के कुंडलों में राधिका की लट, राधा की बेसर में कृष्ण का पीत पट उलझे [उलझा] हैं [है]। नृत्य घनीभूत है न! बनमाल में दोनों ही उलझ गए हैं। होड़ करके नाचते हैं। सामन्ती निषेधों की बेड़ियां पैरों में नहीं हैं, इसलिए प्राक् सामन्ती समाज की स्वच्छंदता के ताल पर नाच रहे हैं। प्राणों से प्राण, नैनों से नैनों का मिलना—रवीन्द्रनाथ-निराला की प्रेम सम्बन्धी तल्लीनता सूर ने पहले ही देख ली है। रीझ-रीझ कर अंक भरना; ताता थेई-थेई उछटत पर जब मृदंग पर थाप पड़े तब नाद की नसेनी पर मन सुन्न महल पर पहुंच जाय। मंडली-जुवति है; अनेक नाचने वाले हैं। सामूहिक उल्लास है। फिर समग्र क्रिया की पूर्ति के फलस्वरूप आंचल से स्रमकन पोंछना—रस निष्पत्ति की पराकाष्ठा है!

अब मंगाओ नागरी प्रचारिणी सभा से सूरसागर। संक्षिप्त से काम न चलेगा। Walt Whitman के भी Complete works ही लेना चाहिए था। Selection करने वाले प्राय: चुगद होते हैं।

पहली अप्रैल को लिखी हुई तुम्हारी कविता 'दिन के दिए' खूब गठी हुई ('दो मृदुल दलदार वृत्ताकार' की तरह) हैं। धुंध में कैद पेड़ों की पातहीन डालों पर दीप

जलते हुई देखे–तुम्हारी आंखों को स्नेह चुंबन भेजता हूं। क्या पहली अप्रैल[1] थी, इसलिए कविता इतनी अच्छी बन पड़ी? तुम्हारी गर्वोक्ति सही है–Dandelion से किसी कदर कम नहीं है। लेकिन कुछ ऊंची ही है? धत्! कुछ ऊंची–और बहुत ऊंची–तो 'अरुझी कुंडल लट' ही है।

खजुराहो पर तुम्हारा लेक्चर रोचक है। चित्र तुम्हारी टिप्पणियों के नीचे दब गये हैं। 'मृदुल दलदार' के बदले बातुल शिथिल भार दल आये हैं।

इन्हें नहीं संकोच-शील है या कि लाज है। एक बात के लिए शील, संकोच और लाज–तीन शब्द! और शैथिल्य का प्रमाण–या कि! तोबा! तुम्हारे दृष्टिकोण में भी पंत-यशपाल की प्रौढ़ा अधीरा वाला भाव है। व्यभिचारी तो थे ही साले Perversity—विकृतियों–की भरमार है। फिर भी कलाकारों ने मूर्तियों को ख़ूब गढ़ा है जिसमें चन्देलों के बाप का इजारा नहीं। हमारे शिल्पी थे वे।

'वे चेहरे पत्थर के पुराने से हो गये थे।' परिमलियों का यह गद्य-वर्णन खजुराहो के पद्यवर्णन से कितना ताजा है। परिमलिये वैसे ही घुटनवादी हैं। उनमें तुम्हें घुटन लगी हो तो आश्चर्य नहीं। अज्ञेय का चेहरा वैसे ही विकृत रहता है। तुम्हें देख कर और विकृत होना उसका प्रकृत गुण मानना चाहिए। बरफ के ठंढे गिलास से उन्होंने मुंह खूब निकाला–बरफ से भी ज़्यादा ठंढा। घमंड-घटोत्कच की धर्मवीरता को तुमने धुआं कर दिया–बधाई।

कविता लम्बी भी जमती है और बिना निराला के कंठ स्वर के भी। असल में बहुत गठी हुई कविता को तुरन्त ग्रहण करना कठिन होता है। इसलिए तुरन्त दाद देने वालों से मुझे डर लगता है। चलो, रेडियो पर तुम्हारा कविता पाठ तो हुआ।

Whitman में बहाव खूब है लेकिन गहराई जहां-तहां ही है। भर्ती की बातें बहुत हैं।

हां, मैंने मकान बदल लिया है। ऊपर दिया हुआ पता नोट कर लेना और सब चैन है।

तु०
रामविलास

बांदा
२६-६-५७
प्रिय डाक्टर,

पोस्टकार्ड मिला। बहुत बहुत प्यार। इधर तो कविता बाई कहीं सैर सपाटे को चली गयी हैं वरना आतीं ज़रूर। इस वक्त तो उनके बगैर केवल ठूंठ हूं।

---

1. पहली अप्रैल केदारजी का जन्म दिन है। [अ० त्रि०]

शरद[1] ने संग्रह छाप लिया। भेजने को पता लिख दिया है। पहुंचे या न पहुंचे तो लिखना। मैंने भी अभी तक एक भी प्रति नहीं पायी। पत्र आया है कि भेज रहे हैं। देखो कब तक आता है।

मुरली मनोहर[2], बरौनी उचौनी, मुंगेर को जरा सलाह-मशविरा दे दिया करो। टाल न जाया करो। बेचारे बड़े उत्साही युवक हैं। तुम्हें देवता मानते हैं। तुम्हारी कलम के कायल हैं। उन्हें खुल कर राय दिया करो कि वह क्या पढ़ें तथा किस तरह आगे बढ़ें। मेरे एक मित्र श्री केसनीप्रसाद चौरसिया,[3] १२९/२८, ईदगाह, रामबाग, इलाहाबाद भी तुमसे पत्र व्यवहार करके जन्म सफल करना चाहते हैं। उनका पत्र आये तो उत्तर दे देना। सहृदयता से वह साहित्य के एम. ए. हैं। अब साहित्य-सृजन के क्षेत्र में कलम घिसना चाहते हैं।

अतर्रा से अभी तक पत्र नहीं आया। बारात कर आये होगे। तु०

ललित को स्नेह। केदार

१२, अशोक नगर, आगरा,

१७-७-५७

प्रिय केदार,

तुम्हारे साथ के कारण लखनऊ की गर्मी में बरसात का आनन्द आया। उसके बाद दिल्ली जा कर P.P.H. से ५७ पर प्रकाशित होने वाली पुस्तक की पाण्डुलिपि देखी। दो-तीन लेख अच्छे हैं। कल यहां के Archaeology department की Library देखने गये। कई काम की किताबें हैं। लौटते में भीग गये।

आजकल कविता से दूर इतिहास के वीराने में हूं। साहित्य-सन्देश भाषा विज्ञान-अंक निकाल रहा है। उसके लिए लिपि-समस्या पर एक लेख लिखा है।

ललित का प्रबन्ध वहां न हुआ हो तो निस्संकोच लिखना। सोच रहा हूं, किसी विषय को लेकर M. A. में भर्ती करा दूं।

श्रीमती केदार को सप्रेम। तुम्हारा—रामविलास

---

1. ओंकार शरद।
2. डॉ० मुरलीमनोहर प्रसाद, सिंह, संप्रति-दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रोफेसर।
3. प्रयाग विश्वविद्यालय में हिन्दी के प्राध्यापक थे, बाद में आत्महत्या कर ली। [अ० त्रि०]

बांदा
१८-७-५७
५ बजे शाम
प्रिय डाक्टर,

पोस्टकार्ड अभी-अभी कचहरी से आने के बाद दफ्तर की मेज पर एकाकी मौन धारण किये हुए मिला। तुम्हारा नाम देख कर चट से पढ़ गया पर यह इतना छोटा है कि चट खत्म हो गया फिर भी कुछ तो हर्ष हुआ ही। तुमने भी बरसते बादलों की तरह शकल दिखा कर, बूंदा-बांदी मात्र कर दी।

लखनऊ की भेंट भी याद रहेगी। खूब मिले। मजा आ गया। वहां का आनन्द याद रहेगा।

डट कर पुस्तक लिख डालो। महादेव साहा ने भी तुम्हारे '५७ के काम के बारे में अपने पत्र में जिक्र किया है। मुझे भी कुछ लिखने को कहा है। पर मैं सामग्री के अभाव में लिख ही क्या सकता हूं। विला वजह ५७ सन् के कान में तिनके से कुरेदना होगा—मेरा प्रयास। यह काम मेरे लिए कठिन है।

भाषा विज्ञान पर तुम्हारा लेख देखने को लालायित रहूंगा। मिल सका तो देखूंगा। एक अंक तो भेजवा ही सकते हो। अभी ही एक पत्र फिर मंत्री महोदय को लिख कर उनके कान हिला रहा हूं। जवाब आने पर उत्तर दूंगा। वह फ्लू के शिकार हो गये थे। सुना है कि अब अच्छे हो गये हैं।

मेरी पुस्तक—लोक और आलोक—ओंकार शरद, २, मिन्टो रोड, इलाहाबाद ने भेजी या नहीं? छप गयी। देखी हो तो राय देना। न देखी हो तो एक पोस्टकार्ड उसे भेजने को लिख देना। मैंने लिख दिया है। श्रीमती केदार तुम्हारा सप्रेम सुन कर फूल सी खिल उठीं। इधर कुछ नहीं लिख सका।

तु० केदार

बांदा
२६-८-५७
प्रिय डाक्टर,

प्रिय ललित अतर्रा गये। मंत्री महोदय कल यहां थे। उनसे डाट कर मैंने कह दिया है कि उसकी हिन्दी की पोस्ट में स्थायी नियुक्ति कर दें—प्रस्ताव पास करके। कोई रुकावट नहीं हो सकती। ताकि वह परीक्षा एम. ए. की अंग्रेजी में दे सके। फिर लेक्चरर की पोस्ट में हो जायेगा। हिन्दी का एक अध्यापक पहले ही से है। इसलिए हिन्दी में वह Lecturer नहीं हो सकेगा। मुझे विश्वास है कि वह ऐसा कर देंगे। एक दिन अतर्रा जाऊंगा इसी काम के लिए।

'विराम चिह्न' मिला। नाम तो समाप्ति का द्योतक है। 'अर्द्ध विराम' प्रगति का द्योतक होता—वह अच्छा होता। यदि विराम चिह्न से तात्पर्य है कि वे लोक [लोग] रुकें जो गड़बड़ कर रहे हैं, तो ठीक है। परन्तु बोध ऐसा होता नहीं। पुस्तक के नाम के बारे में यही आपत्ति है। यदि कुछ तर्क दे सको तो मुझे भी लिखना ताकि मेरा भ्रम दूर हो।

ललित से तुम्हारे घर के हाल ज्ञात हुए थे। परन्तु तुम हिम्मती हो। सब बरदास्त कर लेते हो। आशा है कि अब Wife घर में आ गयी होंगी। वह अच्छी हो गयी होंगी।

जलवायु की दृष्टि से अतर्रा अवश्य अच्छा है। ललित ने वहां के वातावरण के बारे में लिखा होगा। वह अभी तो मंत्री महोदय के साथ ही रहते हैं।

मेरे घर में चैन-चान है। मैं ही कुछ-न-कुछ ख़राब रहता हूं। कभी कुछ, कभी कुछ तकलीफ हो जाती है। सब ठीक हो जायेगा।

अगर कलकत्ता न जाना तो इधर आ जाना। कलकत्ता जाने से मैं तुम्हें रोकता नहीं। वह काम ज़रूरी है।

सूर की रचना पढ़कर आनन्द प्राप्त हो गया। मुझे 'नृत्यत मदन फूले' वाला पूरा बन्द बहुत अच्छा लगा। 'मन के मनोज फूले हलधर वर के' यह पंक्ति तो लाजवाब है। ऊपर का सा वर्णन तो सभी लोग करते हैं। 'मन के मनोज' फूलने में सारी खूबी है। 'गरजत कारे भारे जूथ जलधर के' पंक्ति अच्छी है। परन्तु पहले की अन्य पंक्तियों से सम्बन्ध [सम्बद्ध] हो कर निकल पड़ी है। काव्य की विशेषता नहीं है। तुम माथा टेकने को कहते हो तो किये देता हूं। पर मैं तो 'मन के मनोज' वाली पंक्ति पर माथा टेकता हूं। कहो, कैसी रही?

रोन्सार्ड की रचना बढ़िया है। खूब है। जहां समुद्र है वहां फसल लहरायेगी। यह भाव गजब का है। यह उसकी तीव्र अनुभूति का परिचायक है। भाव भूमि पर पहुंच कर वैज्ञानिक, वैचारिक, कवि तथा तार्किक—सब एक स्वर से कुहुक उठते हैं, कोयल जैसे।

आशा है कि तुम भी अब चैन से होओगे।

मिल्टन का संग्रह ललित दे गया है। पढ़ना शुरू किया है। देखो क्या रहता है?

तु० सस्नेह केदार

R. B. Sharma
M. A., Ph. D. (Luck) — १२, अशोक नगर,
HEAD OF THE DEPARTMENT OF ENGLISH — आगरा,
B. R. COLLEGE, AGRA — ३-९-१९५७

प्रिय केदार,

'विराम चिह्न' समाप्ति का ही द्योतक है। लेकिन किसकी समाप्ति का? मित्रों और

संपादकों के आग्रह पर लेख लिखने का। सुसरे न कविता लिखने देते हैं न मनचाहे विषयों पर आलोचना। अब विचार यह है कि जम कर कविताएं लिखें और कुछ अन्य प्रकार की पुस्तकें—भाषाविज्ञान आदि पर। लेकिन मैं तो नाम अर्ध [अर्द्ध] विराम रखना चाहता था क्योंकि उसी (,) की तरह लेख भी छोटे थे। लेकिन मित्रों ने Full stop ही पसन्द किया? अब देखिये, वकील साहब, आपकी आपत्ति की मैंने रस निष्पत्ति कर दी।

तुम अभी मदन-मनोज के कवि हो। 'गरजत कारे भारे जूथ जलधर के' वह भी यमुना से श्याम जल पर! धरती से आकाश तक प्रकृति पुलकित है और उसके [उसकी] पुलक फूट पड़े हैं [पड़ी है] उसकी सघनता में। सूर ने बादलों की फोटू नहीं खींची, कृष्ण जन्म पर गोपी-ग्वालों-गायों और तुम्हारे नृत्यत मदन के साथ उन्हें भी यमुना के जल पर पुलकित दिखलाया है। सावन-भादों से अधिक प्रकृति को कभी रोमांचित देखा है? और तुम कहते हो—काव्य की विशेषता नहीं है। मालूम होता है, दिल की सरसों सूख गई है।

खुशी का बात है, तुम Milton पढ़ रहे हो। मेरे प्रिय कवियों में से है। Keats भी उसे बहुत प्यार करता था। Paradise Lost की III BK के आरम्भ में Light पर उसकी पंक्तियों में वैदिक ऋचाओं का ओज देखना। उसने अपनी एक मृत पत्नी पर एक Sonnet लिखी है। उसकी प्रतीक-व्यंजना भी अनूठी है। इधर पत्नी को Blood Pressure से कुछ परेशानी थी। अब ठीक है। दो तीन दिन के लिए मुंशी आये थे। कल गये।

ललित का पत्र आया है कि उन्हें वहां अस्थायी तौर पर रख रहे हैं। इसलिए मैंने लौट आने को लिख दिया है। फिर देखा जाय गा। तुम अपने प्रयत्नों की इस असफलता से चिन्तित न होना। जैसा कि शिवजी ने गौरा-पार्वती से कहा था—यह तो संसार है!

तुम्हारा रामविलास

बांदा
५-९-५७
शाम ५ बजे।

प्रिय डाक्टर,

मैं अपनी किरन को लेने दिल्ली अचानक चला गया। यहां से ३१/८ को गया था। वहां से ३/९ की शाम को चला। वहां मिला जवाहर चौधरी, वीरेन्द्र त्रिपाठी से। तब मुंशी न थे। मगर २/९ को शाम को वह मुझे घर पर मिल गये। उनसे तुम्हारी Wife की हालत मालूम हुई। जान कर बड़ा अफसोस हुआ। आख़िरकार, परेशानी तो बहुत ही हुई होगी अब और भी होगी। मालुम हुआ था कि वह अब अच्छी हो जायेंगी। भाई

मुझे समाचार देते रहना कि अब वह कैसी हैं। मेरे लिए जो आदेश हो देना। मैं बाहर नहीं हूं। ईश्वर में विश्वास नहीं करता फिर भी कहता हूं कि हे ईश्वर उन्हें जल्दी अच्छा कर दे। मेरी ओर से उन्हें शक्ति और साहस देना कि वह कष्ट झेल कर उठ बैठें। मुझे किरन को और उसके बच्चों को ले कर आना था इसलिए आगरे नहीं आया। अकेला होता तो ज़रूर पहुंचता चाहे दूसरी ट्रेन से लौट आता। फिर किरन के बच्चे को बुखार भी आ गया था।

यहां आने पर ललित के कालिज का हाल मिला। अब तुमने उसे बुला लिया। वह चले भी गये। फिर भी मैं तिलमिला गया हूं इस प्रकार के व्यवहार से—स्कूल के मंत्री के व्यवहार से। धत्तेरे की। मुझे तो कचहरी में रह कर बहुत तजुर्बा था ऐसे लोगों का। फिर भी मैने न जाने क्यों उनकी बातों का विश्वास कर लिया। नाहक बेचारे ललित को आगरे से बुला भेजा—खर्च कराया। उसका आगरा ही रहना अच्छा था। इस आवागमन का मुझे बड़ा ही मार्मिक दु:ख है। बहुत चोट लगी है। अभी ही मंत्री को पत्र भेजा है।

....

................................[1]

'उमंगे जमुन-जल, प्रफुलित कुंज-पुंज, गरजत कारे भारे जूथ जलधर के।' यह पंक्ति तुम्हें खूब भायी है। वैसे बढ़िया है। लेकिन जो मानी तुम इसमें भरना चाहते हो वह नहीं है। 'उमंगे जमुन-जल' और 'गरजत' वाले टुकड़े दूर जा पड़े हैं। यह नहीं है कि वह जमुना के जल पर झुक कर गरज रहे हैं—मोहित हो कर या अन्य भाव से, किसी हर्षातिरेक में। फिर भी जिस दृष्टि से तुमने भाव ग्रहण किया है वह सचमुच उत्तम है। मैं तो इसे तब ग्रहण ही नहीं कर सका था। वह तो मुंशी ने दिल्ली में ही मुझे बता दिया था। आज अभी पत्र भी मिला। सूर को चाहिए था कि वह जलधरों को झुके हुए दिखाते व उनके बिम्बों से जमुना को दुगुनी प्रसन्न दिखाते। शायद सूर वह भूल गए थे। जितनी पैनी दृष्टि से तुम मेरी रचनाओं की आलोचना कर सकते हो उतनी ही पैनी दृष्टि से सूर को भी कसो। शायद तुम स्वयं सूर से अधिक अर्थ ग्रहण कर सके हो। चाहे जितना कहो मैं मान नही सकता। दिल की सरसों न सूखी है—न सूखेगी। वह तो सावन-भादों में भी बादलों और बिजलियों के बीच अब भी लहरा रही है।

मैंने इधर ब्राउनिंग खरीदा है। Modern Poetry की कई पुस्तकें खरीदी हैं। बहुत-सी सामग्री है, मन भरने के लिए।

मिल्टन का III book पहले ही आज पढ़ूंगा। वह ललित की पुस्तक है। उसे भेज दूंगा। मुझे उससे कह देना कि वह भिजवा दे।

वाह रे मेरे शिवजी! तुम्हारी यह सीख सिर माथे है कि 'यह संसार है।'

---

1. पत्र में यह स्थान इसी तरह रिक्त है। [अ० त्रि०]

मेरी समझ में 'नृत्यन मदन फूले'—वाली दोनों पंक्तियां अब भी हृदय हर लेती हैं। यह बात नहीं है कि मैं मदनाकुल हूं। तुम कह सकते हो ऐसा मगर बात यह नहीं है। वास्तव में यह पंक्ति बढ़िया गई है। देखो न इसकी गठन को। सामीप्य का और अन्तंग [अंतरंगता] का इतना प्रिय वर्णन कहीं न मिलेगा। भाई, मैंने तो नहीं पढ़ा। तुम जानो तो ठीक है।

अच्छा हुआ कि अब तुम कुछ लिखने की सोच रहे हो। जरूर लिखो मेरे शिवजी महाराज! कभी तो तप करके गणेश जन्मोत्सव मनाओ। केवल कह कर रह जाते हो। मुंशी भी तुम्हारी कही बात दिल्ली में सुना रहे थे। वह भी एक ही आदमी हैं। न जाने कब कुछ करके दिखायेंगे। ख़ैर। सबको स्नेह।

तु० केदार

१२, अशोक नगर, आगरा
१२-९-५७

डियर वकील साहब,

दिल्ली का रास्ता आगरा हो कर है क्या? टूंडले से कानपुर गये हो तो भी लिख देते, मैं टूंडले आ कर मिल लेता। खैर। कभी चित्रकूट चलो गे? मैंने देखा नहीं है, देखने की इच्छा है। तुम्हारी कचहरी कब बन्द होती है यदि कभी बन्द होती भी हो तो?

मेरी पत्नी अब अच्छी हैं। चलती-फिरती हैं, घर का कामकाज भी थोड़ा बहुत करने लगी हैं। महीने भर में—आशा है—ठीक ठाक हो जायं गी। तुम्हारी चिट्ठी सुन कर वह बहुत प्रसन्न हुईं, मुझसे उसे 'सिहार के' रख देने को कहा। देखो, तुम्हारा गद्य काव्य स्त्रियों को भी अच्छा लगता है।

ललित के चले आने पर तुम्हें बिल्कुल परेशान न होना चाहिए। मुझे अपने एक झांसी के मित्र से उस कालेज का हाल मालूम हुआ। वहां प्रिंसिपल महोदय सर्वेसर्वा हैं। मंत्री महोदय ने अपनी सीमाएं तुम्हें न बता कर तुम्हारे अनुरोध की रक्षा करने का प्रयत्न किया। शिवजी कहते हैं—सुनो पार्वती—यह भी संसार है।

एक लेख 'आलोचना' के लिए लिखना है। एक कलकत्ते के 'सुप्रभात' के लिए। एक 'हिन्दुस्तान' के लिए। एक आगे-पीछे राजस्थान के 'विकास' के लिए। ये वे लेख हैं जिनसे बच नहीं सकता। और बहुत से मंसूख कर दिए। इस महीने सबको निबटा दूं गा। अब की दशहरे की छुट्टियों में यहीं रहने का इरादा है जिससे सन् '५७ वाली पुस्तक शुरू हो जाय। संभवतः ८ अक्टूबर को ग्वालियर जाऊं गा वहां शरदुत्सव [शरदोत्सव] के लिए दूसरा बुलावा भी है। जौनपुर कालेज के साहित्य परिषद में बुलाया था, नहीं गया। 'नयापथ' में यशपाल ने मेरी दिव्य दृष्टि के दर्शन किए हैं।

चंद्रबली ने 'रूपतरंग' पर लेख लिख ही डाला है जो 'आज' में छपे गा; तुम्हें उसकी कटिंग भेजने को कहूं गा।

तुमने लिखा है—सूर को चाहिए था कि वह जलधरों को झुके हुए दिखाते, उनके बिम्बों से जमुना को दुगुनी प्रसन्न दिखाते, शायद सूर वह भूल गये थे।

तुम यह भूल गए हो कि इस समय जमुना और जलधर—दोनों ही आपा खोये—एक तीसरे ही आनन्द में मग्न हैं। यह वही आनन्द है जिसने धेनु, गोपी, ग्वाल, अंकुरित पुन्य, मदन और मनोज सभी को एक डोर में बांध दिया है। उसी डोर में जमुना और जलधर भी बंधे हैं। फिर जलधरों को क्या पड़ी है जो जमुना पर झुकें; वहां तो जमुना ही—रात्रि को लैंप बुझाती हुई कवि-पत्नी की तरह—उमंग रही हैं। और यह बताओ, 'कारे भारे जूथ' आकाश में मील-भर ऊपर उड़ें गे कि जमुना पर झुके हों गे? जमुना और जलधरों की श्यामता के साथ कुंज पुंजों की हरीतिमा कैसी मिल गई है; साथ में इसकी कल्पना भी कर लो। सूर कवि हैं, टीकाकार नहीं! तुम मेरे पत्र की टीका उसके पद में ढूंढ़ते हो, सो कैसे मिले? लेकिन बीजरूप में सारा सौन्दर्य घनीभूत है, मैंने अपनी तरफ से कुछ नहीं जोड़ा।

और मिल्टन कितना पढ़ा?

तुम्हारा
रामविलास

बांदा
१३-९-५७

जनाबमन,

राम के आगे विलास लगा कर अब हर-हर महादेव यानी शिव बनने की साध पूरी कर रहे हो। कर लो, ऐसी भी क्या बात है। मगर याद रखो कि पहले जड़ जटाजूट बांधो, फिर कोपीन धारो, फिर कमंडल गहो, और भूत-प्रेतों की जमात जोड़ो तब जा कर कहीं उस शिव का रूप बना पाओगे। यह तो बहुत सादी-सी बातें हैं जिन्हें तुम कर भी सकते हो। लेकिन जब शिलाखंड पर नंगधड़ंग बैठ कर बनावटी आंख मुंदौवल करना [करनी] पड़ेगा [पड़ेगी] और वह भी बरसों तक तब सारी साध काफूर हो जायेगी। मियां, जब इन्द्र महाराज का सारा 'मालखाना' तपस्या भंग करने आयेगा तब बरबस ललचा कर टप्प से निहार दोगे। याद रक्खो कि इस शिव के रूप में कुछ नहीं रक्खा। तुम तो सूर्यवंशी राम हो। राम ने विलास न किया था—दूसरे शब्दों में कुल की रीति के विपरीत आचरण करते थे, तभी तो सीता हरण हुआ और जब फिर मिलीं भी तो राम उन्हें न रख सके—तुमने राम के आगे पुरुषत्व का चिह्न 'विलास' लगा कर उनके पुल्लिंग होने का सबूत तो दे दिया। बधाई है हजरत आपको। इसीलिए मुहम्मद साहब के पुंसकत्व की याद करके तुम्हें जनाबमन सम्बोधित कर रहा हूं।

पर डर है कि इस असमय के परिहास को कोई दूसरा न पढ़ ले और मुझे और तुम्हें दोनों को पक्का बदमाश न समझ ले। इसीलिए जितना कहा, कम कहा, उसी को ज्यादा समझ लेना।

तुम्हारी मालकन को मेरा गद्य काव्य पसन्द आया। मेरा अहोभाग्य। यह जान कर खुशी हुई कि अब अच्छी हो रही हैं। जरा गिरस्ती की चक्की में उन्हें फिर जल्दी न जोत देना। बीमारी के बाद तो बीमार की लोग सेवा खूब करते हैं। तुम्हें चाहिए कि तुम अपना शैवासन त्याग कर, तप-भंग करके उनकी ओर उन्मुख हो कर सहज स्वभाव से उनका ताप हरो। भगवन आप तो बरफ पर बैठे रह कर भी मदन महाराज तथा रति के कुसुमों से आहत होते रहते हैं। मैं केवल याद दिला रहा हूं कि दुर्बल को न सताइये।

इधर ख़ूब लिखने जा रहे हो। ज़रूर लिखो। यशपाल साहब को जवाब की ज़रूरत है। वह कब्ज के मरीज हो गए हैं शायद! न जमाल गोटा सही, हल्की सनाय की फंकी करा दो न।

चन्द्रबली का लेख देखने की लालसा है। रूपतरंग पर मैं भी लिखूंगा। तब से अधूरा पड़ा है मेरा लेख।

चित्रकूट चाहे जब जाओ। चल दूंगा। दशहरे में सही। वैसे कचहरी तो सदा चालू रहती है। चंचला जो है। फिर बूढ़ों की घरैतन भी तो है। क्यों न सदा दरवाजा खोले बैठी रहे।

मिल्टन का पाठ रुक-रुक जाता है। कभी किसी वजह से कभी कचहरी के काम की वजह से। जी भर कर रस नहीं ले पाता, तन्मयता से। बहुत बखेड़े घेरे रहते हैं। फिर भी समय निकाल कर पढ़ता ही रहता हूं। अभी इस काबिल नहीं हूं कि उसके सम्बन्ध में कुछ लिख भेजूं। उसमें अभी मन नहीं भीजा। देखो वह कब हृदय को छू ले। यह जरूर लिखना कि कितना-कितना अंश अवश्य पढ़ लूं।

बस तु० केदार

१२, अशोक नगर,
आगरा
२६-९-५७

प्रिय केदार,

इस बार पोस्टकार्ड से ही काम चले गा। इधर हफ्ते-भर से अमृत नागर यहां हैं। खूब गप्पें लगती हैं और ख़ूब घुमाई होती है। इसलिए तुम्हें पहले न लिख पाया। सब राजी-खुशी हैं। एक दिन हम लोग सिकन्दरा गए; वहां हवा खाई, छाया में लेटे हुए फरीदी से ग़ज़लें सुनीं। फिर कैलास चले और कागज़ की नावें जमुना मैया में प्रवाहित कीं। दोपहर को ११ बजे चले थे; शाम को छः बजे घर पहुँचे। कल पोइया घाट गए थे।

लेकिन तांगे पर। टीले पर खड़े हो कर जमुना का दृश्य देखा। सामने १०-१२ मील पर सिकन्दरा दिखाई देता है; बायें ७-८ मील पर किला और ताज। विशाल क्षितिज को जमुना शिथिल प्रत्यंचा की तरह दो भागों में बांट देती है। रास्ते में बाजरे, सनई के खेत और जोते सन्याये भूरे खेत जो अभी खाली पड़े हैं—सभी ने मन हरा कर दिया।

रामविलास

बांदा
२२-१०-५७

जी, सम्पादक जी महाराज,

जै आलो़'चना की!

'समालोचक' निकलने जा रहा है। आलोचक जब सम पर पहुंचता है तो वह सिर के बल चलने लगता है। तभी तो वह दूसरों को सही चलते-फिरते देखता है। ख़ुद धीमे चलने लगता है। देहात में सिर के बल चलने को 'बीछी' चलना भी कहते हैं। हां, अगर बिच्छू की चाल चले तो ज़रूर कहीं-न-कहीं ज़हर चढ़ेगा। लेकिन कुछ भी हो, यह तो मानना ही पड़ेगा कि हमारे रामविलास का कवि अपने आलोचक से मात खा गया। बेचारा कवि, पहलवान से कैसे जीत सकता था। मुझे उस हारे कवि के प्रति बहुत हमदर्दी है और इस जीते हुए आलोचक के प्रति उसकी ताकत पर नाज़ है। ऐसा संजोग कहीं न मिलेगा जैसा तुममें मिलता है : एक साथ कवि और आलोचक। मुंशी ने लिखा था कि अब तुम कविताएं लिखने पर जुट जाओगे पर वादा कुछ था और हुआ कुछ। चन्द्रबली ने लिखा था कि मैं तुम्हें मजबूर करूं कि तुम कविताएं लिखो और जवाब दो परन्तु इतनी दूर हूं कि सिवाय काले अक्षरों के द्वारा तुम्हें उकसाऊं और कोई चारा मेरे पास नहीं है।

चन्द्रबली का लेख—जो उसने भेजा था—'आज' में पढ़ा। वह तुम पर था। दो लेख थे। तुमने पढ़े ही होंगे। तारीफ हो गई है इसी से सन्न बैठे हो और एक लाइन भी ख़त भेज कर, नहीं पढ़वाते।

'जै आलोचना' में जो ल पर ओ की मात्रा उस पर apostrophe लगा है। उस ल में ऊ की मात्रा भी लगी है, चाहे तो 'ओ' को लोप समझना और 'ऊ' को लगा देखना। भूखे में आलू-चना अच्छा लगता है।

मैंने 'हंस' में कमलेश्वर का 'एक सड़क सत्तावन गलियां' पढ़ा। मुझे बेहद पसन्द आया है। यथार्थ और जीवन दोनों गले मिल कर तमाम तरह से चल फिर कर सामने आ जाते हैं। चरित्र बिगड़-बिगड़ कर बनते चले जाते हैं और सबसे खूबी तो यह है कि इस उपन्यास के युवक-लेखक ने बड़ी संजीदगी से शब्दों पर आधिपत्य रख कर + कथानक पर आधिपत्य रख कर, जीवन को अंकित किया है। पहले ज़रूर कथानक पर

वर्णन का भार महसूस होता है। शुरू के पृष्ठों में यही कमी खलती है। बक़ीया तो बहुत उम्दा चला है।

कविताएं जो 'हंस' में हैं, वह सब अच्छी नहीं हैं। दुष्यंत की सूझ बढ़िया है। यह प्रयोग नहीं, जीवन का स्वर है जो बोल उठा है। बड़ी प्रिय लगी। वंशीधर पंडा की बुंदेली कविताएं गेय हैं, मगर इस बार सिर पर चढ़ कर नहीं बोलतीं। गजानन मुक्तिबोध आदि की रचनाएं मेरे पल्ले नहीं पड़ीं। न जाने क्यों जब कविताएं बड़ी बात करने लगती हैं तब वह अपनी सहज सुन्दरता और आत्मप्रियता खो देती हैं। मुझे यही दोष इन रचनाओं में दिखता है। वैसे वे बड़े कलाकारों की कृतियां हैं, ज़रूर उम्दा होंगी। मेरी मोटी अक्ल पर कुछ भी असर नहीं पड़ता। केदारनाथ सिंह की रचना समझ में आती है परन्तु वह पास आ कर, गले से लग कर नहीं बैठती। जैसे वह कोई बड़ी चीज हो जो मुझ से अलग खड़ी रहती है। इस बार श्रीकांत वर्मा की कविता अपना स्वभाव-गुण त्याग कर सयानी बन कर सामने आई है। यह उसकी कमज़ोरी है कि वह बड़ी बनती है जबकि बड़ी नहीं बन सकती अभी। 'हंस' अभी पूरा नहीं पढ़ सका।

बस, तु० केदार

समालोचक

हिन्दी का प्रतिनिधि आलोचनात्मक मासिक पत्र

प्रधान सम्पादक— १२, अशोक नगर
डा० रामविलास शर्मा, एम.ए., पी-एच., डी. आगरा
सह-सम्पादक
राजनाथ शर्मा, एम.ए., विश्वम्भरनाथ उपाध्याय, एम.ए.
क्रमांक................ दिनांक २८-१०-१९५७

प्रिय कविवर,

कहो तो शुभकामनाओं में छाप दूं तुम्हारा पत्र, 'समालोचक' के पहले ही अंक में। अरे म्यां, धूम मची हुई [है] धूम। दुश्मनों के हौसले पस्त हैं और सभी स्वस्थ दिल-दिमाग के लेखक-पाठक आनन्द विह्वल हैं। आयी समझ में लाला जी? और एक तुम हो जो आलू चने तौल रहे हो। अजी यह समालोचक है, समालोचक जिस नाम से चन्द्रधर शर्मा गुलेरी ने अपना पत्र निकाला था। यहां टोने-टटके [टोटके] वाले मनौतियां मना रहे हैं : एक अंक के बाद बन्द हो जाय; सम्पादकों में लड़ाई हो जाय; सह सम्पादकों में हमारा नाम चला जाय। शायद तुम्हें पता नहीं कि इधर 'संकीर्णतावाद' के ख़िलाफ संघर्ष के दौर में अज्ञेय भारती एण्ड कं० ने कितने पांव पसारे हैं। इसीलिए शुभकामनाओं से हमारा दफ्तर तुपा पड़ा है। अरे बाबू लिखने की तैयारी करो, पढ़-पढ़ा

कर होश्यारी से, चलतू काम के लिए तो और भी हैं। पहला अंक सौन्दर्य शास्त्र पर होगा, २०० पृ० का; निराला जी की जन्मतिथि को उत्सव-उल्लास के साथ निकले गा।

अबे क्या कहता है, मेरा कवि मात खा गया? मेरा कवि कोई वकील सुसरा है जो आलोचक से हार जाय गा? अभी तो कविता समझ में आने लगी है लेकिन नया सुर फूटते ज़रा देर लगती है। ज़रा जाड़, पड़ने दे, रौ में आया तो ढेर-सी लिख दूं गा।

हंस में अभी आस्था वाले लेख पढ़े हैं। चौहान के लेख पर एक अभिलेख नीरज की दर्शना को भेजा है; यशपाल की रामचरित चर्चा पर एक आलोचना को; रूसी संस्कृत [संस्कृति] पर एक हरि सिंह स्मारक ग्रंथ को।

और मिल्टन कितना पढ़ा? इधर महीनों से तुमने एक कविता भी नहीं भेजी? और घर गिरस्ती?

क्यों जी, 'लोक और आलोक' बनारस पहुँच गया, यहां आगरे आने में ही संकोच है? हां, अब सन् सत्तावन की पोथी में जुट रहा हूं।

तु० रामविलास

बांदा
२-११-५७
११ बजे दिन

प्रिय डाक्टर,

आज अभी 'लोक और आलोक' की एक प्रति Reg. Parcel द्वारा तुम्हें डाक से भेजी है। वह २/४ दिन में मिल जायेगी। शरद को लिख दिया था पर उसने न भेजी। अब अपनी प्रति भेजता हूं। उसमें सस्नेह भेंट लिखना रह गया है। जल्दी में। तुम्हारा पत्र कल शाम मिला। ख़ूब मज़ेदार है। मेरा पत्र छाप लो, इसमें मुझे क्या उजुर होगा।

कल ही तमाम पुस्तकें छांट कर पढ़ने बैठा। रात १२ बजे। फिर सो गया। देखो कुछ लिख पाता हूं अथवा नहीं।

तुम्हारे 'समालोचक' से जरूर खूब खलबली मची होगी। यह अज्ञेय-भारती एंड को० ने भ्रमजाल फैला कर खूब मनमाना कीचड़ उछाला है। वह अब उलूक की तरह उड़े-उड़े फिरेंगे–रात के अंधेरे में। लेकिन ज़रा मेहनत से पत्र निकालना। चलताऊ काम न रहे।

मिल्टन बहुत ख़ूब है। अक्सर पढ़ता ही रहता हूं। Paradise Lost ही चल रहा है।

क्या नयी कविता के सम्बन्ध में सौन्दर्य बोध पर भी कोई लेख रहेगा। नरोत्तम नागर भी कुछ लिखेंगे अथवा नहीं। जी चाहता है कि आज ही आगरे उड़ आऊं और

उन सब पत्रों को देखूं जो दफ्तर में धड़ाधड़ आ रहे हैं। कौन कहता है कि साहित्य में अवसाद का डेरा हो गया है। बार-बार बधाई इस नये प्रकाशन कार्यक्रम के लिए।

सस्नेह तु० केदार

12, Ashok Nagar,
Agra
28-12-57

My dear Vakil Saheb,

इधर न आपने कृपा की, न मैंने। मैं तो सौ साल पीछे की दुनिया में घूम रहा था, पता नहीं आप कहां थे। जहां तक मुझे याद है, आपके संग्रह के बाद आपके प्रकाशक ने भी कृपा की थी। ज़रूरत हो तो एक प्रति भेज दूं, वर्ना एक आपके भतीजे की, एक मेरी।

माई डियर, पुस्तक[1] समाप्त हो गई। तुम्हें हफ्ते भर में—या दस दिन में मिल जाय गी। और मिलने पर किताब न पढ़ी तो याद रखना। सुना इलाहाबाद गए थे, कुछ अगंभीर, असाहित्यिक समाचार हमें भी भेजो।

तुमने एक पत्र में कमलेश्वर के उपन्यास की तारीफ की थी। दो एक और लेकर यदि एक लेख बना डालो तो कैसा रहे?

और कविता-माई का क्या हाल है? कुछ लिखा हो तो पढ़ने को भेजो, जरा फिर साहित्य की दुनिया की हवा लगे।

चंद्रबली ने लेख भेजने का वादा किया था, अभी तक नहीं भेजा। नरोत्तम ने सबसे पहले लिखने का वादा किया था, वह भी मौन है। प्रगतिशीलता-विहीन अंक जा रहा है।

तुम्हारा रामविलास

बांदा
१-१-५८
सवेरे पहर

प्रिय डाक्टर,

नये साल की बधाई लो। इस वक्त सवेरे का सूरज बादलों का लिहाफ ओढ़ कर अपने आसमानी घर में शायद चाय पी रहा है। वहां कोई पकौड़ी बनाने वाला या

---

1. पुस्तक—सन् सत्तावन की राज्यक्रान्ति।

मुंगौड़ा बनाने वाला नहीं है, इससे वह केवल चाय पी रहा होगा। अगर बादल जरा भी कटा तो वह फौरन धरती की ओर मुंगौड़ेवाली की दुकान तक आ जायेगा।

अपने राम ने चाय पी है। एक मठरी खायी है। रेडियो का आलाप सुनता रहा हूं। 'लीडर' पर निगाह डाल चुका हूं। घड़ी में चाभी भर चुका हूं। २० मिनट सुस्त थी, उमेठ कर रेडियो से मिला चुका हूं। बच्चे खेल रहे हैं। घर में औरतें चूल्हा को गरमाये खुद गरम हो रही हैं।

जनाब ने भी डटकर चाय पी होगी। अब तो पुस्तक लिख चुके हो इसलिए खाली-खाली महसूस कर रहे होगे। तभी बच्चू कविता की ललक से लहक रहे हो। मैं साफ कह दूं कि इधर मैंने एक पंक्ति भी नहीं लिखी। लिखूं कैसे? वह तो बेचारी इतना अवकाश ही नहीं पाती कि मेरे पास आ सके। देख नहीं रहे हो कि उसकी कितनी छीछालेदर हो रही है। साहित्यिक-तीर्थों के नये-पुराने पंडे उसे बलात पकड़ कर कमरों के अन्दर बन्द कर लेते हैं और उससे एक-न-एक नया घोषणा-पत्र लिखवा लेते हैं। वह उन बहसों के धुआंधार में कुछ ऐसी खो जाती है कि उसकी सम्पूर्ण सत्ता अंडाकार हो जाती है। न उसका कोई अंग दिखता है, न उसकी सांस चलती है, और न उसका सौन्दर्य-बोध मिलता है। साहित्यकार-सम्मेलन में मैं भी शरीक होने गया था। इस आशा से गया था कि वहां जा कर कविता की [को] विदा कर लाऊंगा, पर जनाब वह तो आने की जुर्रत ही नहीं करती। कहती थी, अब मैं हज़ारों की हूं। मैं नया-नया रूप संवार कर चलूंगी। अब मैं कभी गद्य की चाल चलूंगी....कभी भाषण की–कभी लड़खड़ा कर मज़ा दूंगी। मैंने भी कहा : देवी जी! डालडा खाने वालों का विश्वास न कीजिए। वह बीच राह में छोड़ देते हैं। अपनी रक्षा नहीं कर पाते, भला आपकी क्या रक्षा करेंगे?....वह चुप रह गयी। मुस्कराती रही। मैंने भी कह दिया : ख़ुदा हाफिज।

वहां (प्रयाग में) जो देखा तथा जो सुना वह सब बखान करने की ताकत के बाहर है। मतलब यह नहीं है कि वहां कुछ सार तत्व नहीं था, न यही मतलब है कि होहल्ला मात्र रहा। अजी, जनाब, आपकी गैरहाजिरी से वहां कोई कमी नहीं रही। बल्कि लोगों में [को] खुल कर बोलने की छूट थी। शायद तुम होते तो १८५७ का अपना कमाल दिखाते। बहरहाल, बहुतों को आपकी यानी तुम्हारी कमी महसूस होती रही। अच्छा-खासा भरत-मिलाप रहा। इसका यह तो महत्व है ही कि नये-नये सूत्र बंधे, नये-नये रास्ते खुले कि अपना-अपना बन्दर लेकर, सबको नाच दिखाते हुए, डुगडुगी बजाते चलो, ताकि साहित्य देवता प्रसन्न हो कर नयी-नयी पुस्तकों की बिक्री का क्षेत्र बढ़ाते रहें। ठोस काम तो ऐसे मेलों में कुछ हो ही नहीं सकता। ठेंगा दिखा-दिखा कर ठुमकना ही होता है। बाद को कुछ सोच विचार की प्रेरणा मिल जाती है। जो लेखादि वहां पढ़े गए वह छिछली रकाबियों से जैसे छलके-उछले पड़ रहे थे। मुझे समस्याएं तो, एक-से-एक, न जाने कितनी-कितनी वहां चलती-फिरती नज़र आयीं मगर ऐसे नौजवान के दर्शन नहीं हुए जो उन्हें रद्दा मार कर पानी कर दे और जीवन

और काव्य को सहज एक कर दे। एक बात बहुत बड़ी हुई। वह यह थी कि उस सारे सम्मेलन में श्री सुमित्रा-नन्दन ने ही (कवि गोष्ठी में) परशुराम को परास्त किया। वैसे तो वह बहुत शरीफ पड़ते हैं। लेकिन यार, वह इतने तमाचे दिखा कर सही बात बोल रहे थे कि अपने वकीलराम को बहुत मज़ा आया। हम तो कृतार्थ हो गए। उन्होंने सामाजिकता से बहिष्कृत काव्य और साहित्य की सत्ता को अस्वीकार किया। कविता और जीवन को समानान्तर ले चलने वालों पर तीखी चोट की उन्होंने। भारती-भुलावा कुछ यही था। मगर पंत ने उनकी पतंग काट दी। युग का साहित्य जंगल के कोने में रचा हुआ नहीं होता। और न वह अन्तर्मन से उगला हुआ वैयक्तिक विकार होता है। साहित्य को भी समाज के डाल की जरूरत है। यही था उनका सारगर्भित भाषण। अन्य गोष्ठियों में मैं था भी नहीं। जल्दी चला आया था।

अब अपनी १८५७ की पांडुलिपि भेजो प्रतीक्षा है। ज़रूर पढ़ूंगा। देखना है कि तुमने क्या और कितना लिखा है और वह कितना पल्ले पड़ता है। ख़्याल तो यही है कि तुमने जम कर कलम चलायी होगी। जल्दी भेजो। इन्तजार है।

मुंशी आये थे प्रयाग। वही दफ्तरी और सभाई बातचीत रही। न जाने क्यों सामने खुल कर नहीं उबल पड़ता। मुझे ऐसा लगा था कि जैसे वह अन्दर से नहीं बोल रहा। न जाने कहां—क्या हो गया है कि वह पहले सा इंसान नहीं मालुम हुआ। पर अभी उसे मेरी ओर से कुछ न कहना। उसे बुरा लगेगा।

श्री चन्द्रबली भी आये थे। वह तुम्हारे 'समालोचक' के लिए लेख लिखने को कह तो रहे थे। पर इधर कविताओं के अनुवाद में अधिक जुटे हैं। फिर तुमने उनसे ऐसा लेख मांगा था कि उनका कचूमर ही निकल जाता। बड़ा पढ़ना-सोचना पड़ता।

कमलेश्वर के उपन्यास पर कुछ लिखना अभी असम्भव है। समय कम अक़्ल थोड़ी है। फिर कभी। नागर जी बीमार हैं। मुंशी कह रहे थे। वरना वह तो सबसे पहले लिखते। मुझे खेद है कि प्रगतिशीलता विहीन अंक जा रहा है। कब तक छप कर आयेगा? देखना टकसाली रहे। पिलपिला न हो। अभी से बधाई। एक प्रति—मेरी पुस्तक की भतीजे को दे दो।

अरे हां, सब लड़कियों को मेरा बहुत-बहुत प्यार। सयाने बच्चों को भी सलाम। ललित साहब को आदाब।

तु०
केदार

१२, अशोक नगर,
आगरा
३०-१-५८

प्रिय वकील साहब,

आपका कार्ड मिला। आपकी उम्र सौ साल बढ़ी, यह जान कर परम प्रसन्नता हुई।

अब आप किस पन्ने तक पहुँचे? कचहरी फुर्सत लेने दे तो एक बार ज़रूर पढ़ कर अपनी राय लिखिये गा।

यहां २५ जनवरी को—बसंत पंचमी और निराली जी के जन्म दिवस पर—'समालोचक' का उद्‌घाटन-समारोह सफल सम्पन्न हुआ। वृन्दावनलाल जी वर्मा ने सभापतित्व किया। बाबू गुलाबराय ने उद्‌घाटन किया। आगरे के पत्रकार-प्रोफेसर-साहित्यकार, एम० पी०—सभी उपस्थित थे। उपस्थित सज्जनों को पत्र की एक-एक प्रति भेंट की गई। दो-एक दिन में तुम तक भी पहुँच जाय गा।

हां, जनाब कविता लिखूं गा लेकिन इस हाथ दे उस हाथ ले—का सौदा होना चाहिए। पहले आप 'समालोचक' के लिए किसी उम्दा से विषय पर लेख भेजिये। उसके बाद मैं आपको कविता भेजूं गा। पहले अंक में हमारे सभी बन्दा परवर दोस्त ख़ामोश रहे। नरोत्तम के अलावा किसी की खामोशी जायज़ न थी। आप भी अपनी नाजायज़ हरकत से बाज़ आइए और दिमाग़ को ज़रा जुम्बिश देकर Prose फर्माइये।

अबकी जाड़ा यों ही रहा। दो दिन हुए कुछ यूं ही बूंदाबांदी हुई थी। उससे ज़रा खनक पैदा हुई, धूप फिर अच्छी लगने लगी। धूप छांह में बैठे तुम्हें ख़त लिख रहे हैं।

बाल बच्चों को राम राम—

तुम्हारा
रामविलास

बांदा
८-३-५८
डियर,

इतना गुस्सा कि जैसे हम दुश्मन हों। ख़ैर, माफ करो न। जब कुछ लिख ही नहीं पा रहा तब कैसे कुछ भेजूं। फिर तुम्हारे पत्र के लिए कुछ परिश्रम से काम करना पड़ेगा। न तो यहां पुस्तकें हैं, न मेरे पास उतना 'भेजा' है। जैसा कहो वैसा करूं।

लेकिन धैर्य रखो। ज़रूर कुछ-न-कुछ भेजूंगा। विलम्ब है, अंधेर न होगी।

यह पत्र न लिखता मगर मारे डर के, कि कहीं और न खफ़ा हो जाओ, लिख, रहा हूं।

बन्दा परवर क्षमा बड़ेन को चाहिए। आप मौन तोड़ें। हम सिर झुकाये खड़े हैं।

कविताएं बन पड़ी हैं। भेज नहीं रहा कि कहीं आक्रोश में उन्हें भी बन्द ही न पड़े[1] रह जाना पड़े।

---

1. यह 'पड़े' बसावधानीवश लिख गया प्रतीत द्दोता है। [अ० त्रि०]

पत्नी पुत्रादि चैन से नहीं हैं। कोई न कोई कष्ट सबको है। मेरी तो मैं ही जानता हूं। एक पत्र भेज तो दो जल्दी से।

वह नुस्खा मेरे पास नहीं है जो तुम्हें प्रसन्न कर दे। वह तो चंद्रबली सिंह को मालूम था, उन्होंने उसी का प्रयोग किया है। तभी तुम पसीजे थे।

तु० सस्नेह
केदार

बांदा
१३-३-५८

मेरे डाक्टर,

पोस्टकार्ड आया। ख़ैर-ख़बर मिली। नाराज नहीं हो। यह विश्वास हो गया है।

'समालोचक' का दूसरा अंक नहीं मिला। शायद न मिले। आपके सह सम्पादक जी का पत्र लेख के लिए आया था। मैंने उत्तर तक नहीं दिया था। भला वे भी तो इंसान हैं। ज़रूर अनसाए होंगे। जब कलम कुंठित रहती है तब सभी अपने कुठार लेकर धमकाते हैं। पर यह तो फाग का छींटा है। 'बुरा न मानो होली है।'

अपनी कविताओं के अंग्रेजी अनुवाद भेजूंगा, टाइप करा कर। देखना क्या कमाल किया है उस अनुवादक ने जो मुझे २० वर्ष बाद बांदा के एक छोटे से घर में अज्ञात पड़ा मिल गया है। अभी तारीफ क्या करूं। स्वयं निर्णय करना। जो दो कविताएं तुमने सूरदास की भेजी थीं न उनका भी उन्होंने अनुवाद कर डाला। खूब बन पड़ी हैं। चन्द्रबली सिंह को भी भेजना है। तभी उन्हें भी भेजूंगा। याद है न, 'कारे भारे जूथ जलधर के' व 'नारि को आंचल लै लै पौंछत है श्रमकन।'

'निराला' गूंज रहे हैं[1] 'नील डोर का हिंडोर चढ़ी पैंग रहता'+'नाचता पलकों पर आलोक'+'उसी का नील-शयन यौवन'+'खुल गये गीतों के आकार' आदि-आदि। पत्र देना डियर।

तु० केदार

१२, अशोक नगर,
आगरा
८-४-५८

प्रिय केदार,

२० मार्च को मैं सपत्नीक दिल्ली जाने वाला था। अचानक पत्नी के अस्वस्थ हो जाने से दो दिन तक रुक गया और २२ मार्च को अकेले ही गया। वहां 'आज-कल' के

विशेषांक के लिए स्वर्गीय बरान्निकोव पर लेख लिखने का वादा करना पड़ा। उनके सम्बन्ध में सामग्री लाया। यहां मेरे छोटे भाई अवस्थी की पत्नी बी० ए० परीक्षा की तैयारी के लिए टिकी हुई थीं। २९ को लेख रवाना किया। ३१ को परीक्षार्थिनी ललित के साथ जयपुर गईं। ५ अप्रैल आगरा यूनिवर्सिटी की परीक्षा पुस्तकों के अंक भेजने का अन्तिम दिन था। कापियां निपटाईं। ६ ता० को मेरे साथ १५ वर्ष से काम करने वाले अंग्रेजी विभाग के सहयोगी तारा सिंह का सहसा हृदय पीड़ा से देहांत हो गया। कल उनका दाह कर्म हुआ। आज मैं लगभग महीने भर के पत्रों का उत्तर देने बैठा हूं। आगे से मैं तुम्हें इस तरह कैफियत न दूं गा और न तुम फिर कभी मेरे खफ़ा होने की बात लिखना।

अंग्रेजी अनुवाद मुझे अच्छी नहीं लगे। शायद मूल हिन्दी कविताओं की तुलना में न जँचते हों। तुम अपनी कविताएं भेजो। यहां परिवार स्वस्थ है। आशा है, तुम्हारी पत्नी और पुत्र अब ठीक हों गे।

तु० रामविलास

बांदा
११-४-५८
रात, ९ बजे

प्रिय डाक्टर,

पत्र मिला। हाथ में आते ही जैसे गुलाब खिल गया। क्या ख़ूबसूरत लिखावट है। लेकिन गुलाब की महक नहीं है। तुमने अपना दिल तो खोला ही नहीं। केवल शब्दों के पंख खुले हैं। भीतरी रंग और राग बोलते ही नहीं। अच्छा तो लो मैं ही कुछ काव्य-रस प्रवाहित करता हूं।

मुझे गर्व है उस केरल पर

पहली बार जहां खग्रासी तमचर हारे
भीति भार के अंधकार के ढहे कगारे
सूर्यमुखी आलोक-गरुण ने पंख पसारे
दहक उठे दाड़िम-विद्रुम-द्रष्टा अंगारे
उस केरल पर

वहां मुक्ति का केतन फहरा

धूसर धरती पर सोने का सागर लहरा
उस केतन-सा लहक रहा है जन-मन-जीवन
उस सागर-सा लहर रहा है जन-मन जीवन

मुझे गर्व है और हर्ष है उस केरल पर
आशा के अरविन्द खिले हैं जिस केरल पर

तुम कहोगे ही कि कविता बोझिल है। डियर, बोझिल है जरूर है। लेकिन शिल्प मं विषय-वस्तु जो भरपूर है। भाषा भी दुभाषिये द्वारा समझ में आने वाली है। पर यह तो मेरे संस्कारों का स्वरूप है। मैं करूं तो क्या करूं!

अब दूसरी चीज़ लो। यह तो बहुत सरल भाषा की कृति है।

तुम मेरी आवाज छीन लो
चाहे मेरा हृदय छीन लो
लेकिन इस धरती के
मेरे फूल न छीनो
जिन्हें देख कर मैं मनुष्य हूं
और चूम कर मैं आत्मा हूं–
खिली चांदनी रातों के
भीतर से निकली,
धुली, नहाई
हंसती, गाती और बोलती।

बस, हो गई। बहुत छोटी है। तुम भी कहोगे कि यह भी कोई कविता है। न हो, मेरी बला से। लेकिन ऐसा कोई अनुभव तो करे। मैं समझता हूं कि यह सीधी सादी कुदरती कविता है। जी हां आपको एतराज न होना चाहिए। ज़रा प्यार से इसे पढ़ो और फिर कुछ कहो-सुनो।

अच्छा लो एक तीसरी रचना। तुम भूखे होओगे। रोटी की ही बात सुनो।

रोटी के पैदा होते ही
बुझी आंख में जुगनू चमके
और थका दिल
फिर से हुलसा;
जी हाथों में आया,
और होठ मुसकाये,
घर में मेरा वीरान वीरान[1] पड़ा
आबाद हो गया।

कैसी है रोटी? बड़ी मज़ेदार है न! अब भी पेट न भरा होगा। अच्छा तो लो चौथी

1. यह 'वीरान' असावधानीवश लिख गया प्रतीत होता है। [अ० त्रि०]

सुनो–

तुम भी कुछ हो
लेकिन जो हो
वह प्रकाश में लगी गांठ हो
जिसको कलियां खोल रही हैं
पेड़ों के भीतर से निकलीं।

यह तुम्हें पसन्द न आई होगी। प्रकाश में गांठ लगने की बात गले से न धंसेगी। कलियां भी गांठ कैसे खोलेंगी? सब ठीक है। पर हम इसका उत्तर न देंगे। हम कवि हैं न? तुम लोगों ने सिर पर चढ़ा दिया है न? अब हमारी बेवकूफी भी देख लो। मगर जनाब समालोचक जी यह सच्ची कविता है। यह रोटी खाने के बाद, भरे पेट से निकली है। इसमें वह कविता है जो किसी कवि की कविता में नहीं है। और अगर यह कूड़ा भी हो तो हमें दाद दीजिए कि हम ऐसी चीज़ों की भी ख़ूब सराहना करा लेते हैं और नयी कविता वालों के सिर झुकवा लेते हैं।

मैं भूल गया कि तुम अवकाश से हो। इस समय तो empty mind is devil’s workshop की कहावत के शिकार होगे। मैं तुम्हें इसी devil’s workshop की कविता भेज रहा हूं। वह है–

कितना प्रिय है शशि का दर्पण
जो गिरि गन पर–
वन पर गिर कर,
और हाव के झोंके खा कर
कभी न टूटा
बना हुआ है पूर्ण अनूठा–
लिये हुए तसवीर हमारी
और तुम्हारी!

कैसा बचकाना ख़्याल है। रोमांटिक भी नहीं है। केवल कुलबुलाहट है। लेकिन देखो तो यार। अभी हम जवान हैं। इस अधेड़ उम्र में भी २४ के हैं। अगर यह भी बुरी लगे तो गाली न दे कर अपने इस बिगड़े दोस्त को सही रास्ता दिखा देना। क्या करूं, कलम तो है। बेक़ाबू हो जाती है।

अच्छा तो चलते-चलते एक और बेवकूफी देख लो। वह यों है–

हंस है आकाश,
धरती सेब है,
और यह दोनों सनातन सत्य हैं

आदि में थे और अब भी आज हैं
और आगे भी रहेंगे
शेष चाहे कुछ नहीं बाकी रहे।

यह बुद्धि-विपरीत हंस और सेब हैं। इन्हें देख कर, छूकर मजा लो। मगर ज्यादा अर्थ न भरना वरना हंस कुछ और हो जायगा और सेब मिल्टन का सेब हो जायेगा—पतन का कारण।

अब मज़ाक हो चुका।

अब बताओ कि यह कविताएं हैं भी या नहीं? और अगर हैं तो क्यों और अगर नहीं तो क्यों नहीं? फिर ऐसी कविताओं का मूल्य क्या है हमारे इस युगीन जीवन में? मुझे ये प्रश्न बहुत सताते हैं। जवाब दे लेता हूं परन्तु फिर भी यही प्रश्न उठते रहते हैं? सविस्तार उत्तर दोगे? बीबी [बीवी] प्रयाग गयी हैं। अकेले हैं। कचहरी है और कविता का चरखा है। जय हो विरस और सरस का यह योग और भोग।

समालोचक मिल गया है। लोगों की शिकायत है कि गेट अप नहीं सुन्दर। कुछ इन लोगों का भी ख़्याल रक्खो। त्रिलोचन पर लेख चन्द्रबली ने भेजने को कहा था। न भेजा क्या? अभी तक नहीं निकला। क्या कारण है?

अपने राम अमृतलाल नागर का व्यंग [व्यंग्य]-विनोद enjoy नहीं कर सके। न जाने हममें कुछ कमी है या उनमें। क्या घटिया माल ला कर सामने पटक दिया है। वह तो जानदार आदमी हैं। उन्हें लिखो कि कुछ करतबिया पैंतरे दिखायें। इस घिसिर-पिसिर [से] कुछ काम न चलेगा। इस बार तुम्हारा भी कोई ठोस लेख नहीं है। 'कला का माध्यम' जैसा देते चलो। मैं पढ़ कर अपनी अक़्ल दुरुस्त करता चलता हूं। पता नहीं वह दुरुस्त अक़्ल मेरी कविताओं से भी झलकती है या नहीं?

दिल्ली घूम आये। चलो अच्छा किया तुमने। हम तो भाड़ के चने हैं और उसी के लिए बने हैं। यहां कहां सैर-सपाटा बदा है। घर से कचहरी कचहरी से घर। फिर बिस्तर। यह भी ख़ूब सेट जीवन है। ज़रा भी तबदीली नहीं है। मगर यह, कोई अच्छा जीवन नहीं है। शायद इस तरह पड़े-पड़े मैं पुराना न पड़ जाऊं? पर किया भी क्या जाए? हम तो कील हैं कुरसी में लगे हैं। जब वह टूटेगी तब शायद फेंक दिये जायें। अभी तो भाग्य पलटने की कोई सूचना नहीं है।

'हाईपीरियन' के आगे कुछ नहीं सुहाता। बड़ी गजब की कविता है। वाह रे कीट्स! हजारों वर्ष तक यह दकदकाती रहेगी। कभी भी मैली न पड़ेगी। 'राम की शक्तिपूजा' कहीं नहीं ठहरती। यह अन्तर्द्वन्द्व और यह उसका निरूपण कमाल का है। निराली जी 'तुलसीदास' में कुछ टक्कर लेते हैं, मगर कल्पना के बल पर।

तु० केदार

१२ अशोक नगर,
आगरा,
१७-४-५८

डियर केदार,

तुम आदमी तो जीवट के हो, लेकिन साहित्यकार थर्डक्लास होते जा रहे हो। इस साल सरसों नहीं देखी क्या? कहां परसाल की तुम्हारी कविताएं और कहां ये!?

केरल वाली कविता—विषय वस्तु दिमाग़ी, इश्तहारपंथी, रूप—छायावादी।

तुम्हारे संस्कार दुरुस्त हैं। जैसे तुमने उम्दा कविताएं न लिखी हों!

आवाज छीन लो—यह तो बताओ, छीनने वाला कौन है? और जब हृदय छिन जायगा तो फूल और चांदनी का रस कौन लेगा? क्या बेतुकी हांकी है।

तुम्हारी रोटी वाली कविता अच्छी है लेकिन एक Dramatic motif मांगती है। तस्वीर बननी चाहिए, सूक्ति काफी नहीं है।

'तुम भी कुछ हो'—बढ़िया कविता बनते-बनते रह गई। कली की गांठ खोलता है प्रकाश, न कि विपरीत रति के नियम से कलियां प्रकाश की गांठ खोलती हैं। तुमने अपनी कमज़ोरी का ज़िक्र ख़ुद ही किया है—'प्रकाश में गांठ लगने की बात गले से न उतरे गी।' लेकिन कली के दिल में गन्ध की गांठ लगने और खुलने की उतरे गी, यह लिखना तुम भूल गये। हां, यह कविता कुछ पंक्तियां और चाहती है : चित्र पूरा करने के लिए।

चांद-दर्पण—आधी रीतिकालीन, आधी प्रयोगवादी। अधेड़ उम्र में २४ के न बनो, नहीं तो बच्चू बुढ़ापा ऐसा जल्दी दबाये गा कि अधेड़पन जवानी से जल्दी बीत जाय गा।

हंस है आकाश, धरती सेब है।

'नया पथ' है बत्तख़, 'समालोचक' फरेब है।

बहरहाल तुम लिखते जाओ। इससे जी हल्का हो जाय गा और किसी दिन धूप धरा पर उतरे गी। तुम बुनियादी तौर से शायर हो लेकिन आलोचना में कच्ची अकल के होने से भले बुरे की परख नहीं कर पाते।

हिन्दी के जिस पत्र का गेट अप तुम्हें पसन्द हो, लिखे [लिखो]; उसी के Artist से डिज़ाइन बनवायें। त्रिलोचन पर ठाकुर चन्द्रबली सिंह का लेख अगले अंक में आ जाय गा। 'कला का माध्यम' केवल तुम्हारे लिये ठीक है। यह पत्र तो साधारण पाठकों का है। सुसरे, राम की शक्तिपूजा के लिए लिखा है, हाइपीरियन के आगे कहीं नहीं ठहरती। तबियत होती है, बांदा आ कर तुम्हारे कान पकड़ कर दो तमाचे लगा दूं। चुगद। दुख की अभिव्यंजना दोनों में है, निराला में Tragic Sublimity है, Keats में विषाद से संघर्ष करने की निर्बल आकांक्षा मात्र। forest on forest की background से मिला लो—है अमानिशा....अप्रतिहत गरज रही पीछे अम्बुधि विशाल। तुम अपनी

Madam को तीर्थराज से जल्दी बुला लो। इस mood में नागर नायिकाभेदी[1] न जंचे तो आश्चर्य नहीं।

तु० रामविलास

इस अंक में दुष्यन्त पर तुम्हारा लघु निबन्ध दिया है। कुछ और गद्य फरमाओ न। Keats के चित्र सौन्दर्य पर ही सही। रा० वि०

बांदा
१८-४-५८
रात ८ बजे

प्रिय डाक्टर,

कई दिन की प्रतीक्षा के बाद लिफाफा [अंतर्देशीय] मिला। पत्र पढ कर अपनी पीठ सहलाने लगा। तुमने खूब कस कर घूंसे मारे हैं। मगर मुझे दु:ख कदापि नहीं हुआ। यह Schooling प्रिय हैं मुझ जैसे कूढ़मग्ज़ को इसकी हरदम जरूरत रहती है। केरल वाली कविता पर तुम्हारी बात पूरी ठीक है। लेकिन डियर, केवल 'दिमागी इश्तहारपंथी' है यह कविता ऐसा विश्वास नहीं होता। तुम्हें यह उसकी शब्दावली से आभास हुआ है। इस पर बहुत कुछ कहा जा सकता है। मैं प्रत्येक कविता में जूझता हूं और असफल हो कर ही कुछ सीख पाता हूं। यह मुझे कुछ-कुछ खटक रहा था कि शायद सरलता को छोड़ कर मैं ईमानदारी से दूर जा रहा हूं। मगर मेरा दिल इस कविता में भी साफ बोलता है। उसकी आवाज़ मेरे शब्दों के अन्दर घुट नहीं पायी। उससे स्पष्ट जाहिर हो जाता है कि मेरा माध्यम ठीक नहीं है। इश्तेहारबाजी न कहो मेरे दोस्त। दिल धक्क से हो जाता है।

'आवाज़' छीन लो वाली कविता पर भी तुम्हारी टिप्पणी तर्कसंगत है। आवाज़ तो दु:शासन ही छीन लिया करता है। अगर उसे भी न मानो तो अपने चारों ओर के विषाद से छीना जान सकते हो। तुम कहोगे कि 'विषाद' के लिए 'तुम' क्यों? केवल रूप खड़ा करने के लिए उसको ऐसा पुकारा है मैंने। जैसे वह कोई व्यक्ति हो। हां 'हृदय छीन लो' की बात खटकती है। हृदय के स्थान पर 'विभव' कर दो। 'आवाज़' की जगह 'अभिमान' कर दो। अब तो तर्क ठीक है न? यह विवेक से काम न लेने का दुष्परिणाम है। भावुकता बेवकूफी का रूप धारण कर लेती है। अब इस प्रकार पढ़ कर लिखना। कैसी रही?

'रोटी' वाली रचना में Dramatic Motif नहीं है। यह भी आफत है। अब इसे कहां से लाऊं? तस्वीर बनानी चाहिए। यह भी संकट है। फिर सोचूंगा। अभी सूक्ति का लांछन नहीं हटाये हटता।

---

1. नागर नायिकाभेदी—अमृतलाल नागर, 'समालोचक' में नायिका भेद पर लिख रहे थे।

'तुम भी कुछ हो' को मैंने यों कर दिया है।

तुम भी कुछ हो,
        लेकिन जो हो
वह कलियों में
        रूप-गंध की लगी गांठ हो
जिसे उजाला खोल रहा है
        सूरज के लोचन से निकला।

विपरीत रति वाली बात भी तुमने ख़ूब लिखी। मज़ा आ गया अपनी बेवकूफी पर। यह तो लिखो कि इसके चित्र [को] पूरा करने के लिए और क्या चाहिए।

चांद दर्पण–वाली रचना को तुमने यों ही धर पटका है। बेचारी कैसे जीतती। फिर भी वह अपनी जगह ठीक है।

'हंस है आकाश....धरती सेब है' का अगला बन्द तुमने उसी तरह पूरा कर दिया है जैसे आलम के दोहे की अगली पंक्ति शेख ने पूरी कर दी थी। कहो दोस्त कैसी कही?

हम यशपाल नहीं हैं कि घूंसों से डरें और तलवार लेकर निकल आयें। गलती को मानना पड़ेगा और उसे दूर करना पड़ेगा। आलोचक से खौफ किस बात का? वह तो गुरू [गुरु] है अपना।

निराला में Tragic Sublimity है। मगर दोस्त वह मार्के की अनेक पंक्तियां नहीं हैं जो Hyperian में हैं। देखो न। क्या काव्यात्मक वर्णन है आदि से लेकर अंत तक। अमानिशा वाली पंक्ति लेकर तुम Keats से आगे रखना चाहते हो निराला को। मैं इन पंक्तियों का पहले से कायल हूं। परन्तु इन्हीं के बल पर Hyperian के सौन्दर्य पर मुग्ध न होना वाजिब बात नहीं है। Keats में विषाद से संघर्ष करने की निर्बल आकांक्षा मात्र भले ही हो पर वह भी इतनी मूर्तिमती हो कर, गम्भीर हो कर, समस्या-मूलक हो कर उभरी है कि कुछ कहा नहीं जा सकता। Hyperian और Saturn के मनोवेगों को देखो। दोनों के चित्रण में Keats ने कितना साम्य रखते हुए भी कितना गहन अन्तर प्रकट किया है। Saturn पर स्वयं विपत्ति पड़ी है। वह अनुभूतियों से देखता सुनता और बोलता है। Hyperion केवल पर दु:ख कातर होकर और अपने शंकाकुल हृदय से एक दार्शनिक की तरह अनुभव करता है। चित्र देखो न : मारे गुस्से के Saturn का वस्त्र एड़ी से बाहर निकला जाता है। खूब है यह Suggestion, निराला जी की कविता में दार्शनिकता भले ही हो। वह कीट्स से टक्कर नहीं ले सकती। क्या राम का अपने तीर से अपने नयन निकालने की कल्पना केवल मात्र सूक्ति नहीं है और कोरी सतही बात नहीं है? जरा स्पष्ट लिखो कि वह कवि जो 'अमानिशा' जैसी पंक्ति लिखता है कैसे यह चलाऊ बात लिखता है? राजीव नयन से प्रेरित हो कर ही यह लिख सका है। मैं

अभी नहीं समझ पा सका कि Keats से निराला क्यों अधिक महान हैं। दोनों की वे दोनों रचनाएं तुलना में रख कर देखो। Keats बाजी मार ले जाता है। प्रारम्भ ही देखो दोनों का। Keats साकार कर देता है चित्र। निराला की रचना का प्रारम्भ कोई चित्र नहीं देता। वहां तो शब्दों का गर्जन-प्रहार है जो जीभ को दर्द देने लगता है।

कीट्स पर मैं ज़रूर लेख दूंगा। मेरा प्यारा कीट्स, परन्तु निराला कम महान नहीं है। यह न समझना कि मैं किसी गर्व से या गरूर से ऐसा कह रहा हूं कि कीट्स महान है निराला से। नहीं। केवल भावविभोर हो कर ही ऐसा कहने को बाध्य हूं। मैं तो चाहता हूं कि तुम बांदा आकर मेरे कान उमेठा। मगर आओ तब तो न? लो देखो निराला पर मेरी कविता :

स्वर समय के, विभव भर के
    दहे दव में दिये तुमने
नदी-नद-से अमृत-मधु के
    भरे-भव में, पिये हमने
अमर तुम हो, अमर कविता
    अमर हम हैं लिए सपने
मरण में भी हृदय झंकृत
    शीश उन्नत किए अपने

अब बोलो मुक्के महाराज शर्मा जी। है न उम्दा चीज़। अब दाद न दोगे। कहीं देखी है ऐसी सुन्दर रचना अपने कवि पर। एक तुमने लिखी थी न। बड़ी लम्बी चौड़ी। मार हाथी और सियार भर दिए थे। इस छोटी-सी चीज़ में देखो कितना बल नहीं है। मगर मैं जानता हूं कि अकल के पैने दांत मेरी इस रचना का भी पेट फाड़ देंगे। लेकिन कोई परवाह नहीं है। इससे बढ़िया फिर लिखूंगा। मेरी एक असफलता सफलता को लायेगी। यह विश्वास है।

दूसरे पत्र में कुछ वैसी ही उम्दा कविताएं भेजूंगा। परसाल की तरह की। अब तो यह कागज खतम हो रहा है। जगह नहीं है। मेरा दाहना हाथ भी कमज़ोर है जैसे मेरी अक़्ल। इसी से यहीं 'समापत' करता हूं।

मादाम अभी नहीं आने की। वहां मजे में हैं। यहां कष्ट होता। तकलीफ से बचना हरेक का जन्मसिद्ध अधिकार है। औरत तो इसकी सर्वप्रथम अधिकारिणी है। विशेष कर इस अवस्था में।

सस्नेह तु०
केदारनाथ

बांदा
३०-४-५८
प्रिय डाक्टर,

मैंने लिफाफा भेजा। उत्तर नहीं आया। आज तक इन्तजार करता रहा। जब मन न माना तब पत्र लिखने बैठ गया। उत्तर तो दे दो। तुमने लिखा था कि उत्तर जल्दी दोगे। उत्तर न देने का क्या कारण है?

'समालोचक' का इन्तजार है। घर में सब कुशल-मंगल है। मादाम प्रयाग हैं। बेटी परीक्षा दे कर घर आ गई है। मजे में है। उसका बेबी भी अच्छी तरह है। आजकल गायें और भैंसें दूध नहीं देतीं। गरमी भी खूब है। आगरा कम गरम न होगा। बनारस जाने का मन हो रहा है। तुम भी चलोगे? लिखो, कब तक? ललित का परीक्षाफल जरूर लिखना। बेटियों को प्यार। लड़कों को स्नेह।

तुम्हें यह पत्र, और कुछ नहीं।

तुम्हारा ही
केदार

बांदा
७-५-५८

प्रिय डाक्टर,

पोस्ट कार्ड मिला। यह मालुम हुआ कि श्रीमान लखनऊ आ रहे हैं १३/५ को। मैंने अपनी डायरी देखी तो उसने अपने सीने पर चढ़े तीन केस दिखा दिए। मैं धक्क से रह गया। मजबूरी है। हां, इतने निकट आकर यदि एक दिन को बांदा चले आओ तो भेंट-मुलाकात हो जायेगी फिर जैसी तुम्हारी सनक। बनारस भी जून के महीने में जाऊंगा। अभी नहीं। बांदा से तबियत ऊब रही है। यही कारण है।

यहां गरमी रानी दिन में धूप की जलेबी बनाने लगी हैं। ख़ूब मरण है।

प्रयाग गया था। वहां श्री नरेन्द्र शर्मा से भेंट हुई थी। पंत जी के यहां ठहरे थे। पंत जी भी थे। मौज में हैं। तुम्हारा भी नाम आया था।

सस्नेह तु०
केदार

बांदा
२७-५-५८
डियर,

पोस्ट कार्ड मिला। 'गदर के फूल'[1] पढ़ूंगा जब इलाहाबाद जाऊंगा और वहां से

1. गदर के फूल—अमृतलाल नागर की पुस्तक

खरीद लाऊंगा। यहां मिलना असम्भव है। तुम्हारी सलाह न मानूंगा तो क्या गधा बना रहूंगा।

ज़रूर लिखिए सन् सत्तावन की कहानियां। वह पी० पी० एच० से प्रकाशित होगी यह भी अजूबा अचरज है। क्या वह ऐसा ज़रूरी काम करने पर तत्पर हैं? पिछला इतिहास तो कुछ और ही कहता है। ख़ैर, बुद्धि आयी तो।

ज्यादा खर्च है। मास्को न जाओ, कोई बात नहीं है। यह तो फिर कभी भी हो जायेगा। जेब कतर कर केवल पत्नी ही, आज के युग में पायजेब पहनती हैं। हम कठिन कमाई करने के बाद यह ऐयाशी नहीं कर सकते कि घूमें। वह तो लेख लिख कर भी अपने विचार प्रकट कर लोगे। अल्मोड़ा तो जा ही सकते हो। वहां न जाना कंजूसी होगी। मगर हिस्टारिकल मैटीरियलिज़्म लिखने पर उतारू हो तो जरूर न जाओ। पुस्तक दोगे तो समझ का मसाला सबको पढ़ने को मिलेगा।

प्रिय ललित पास हो गए मैंने अखबार में देखा था। तुमने तो सूचना भी न दी। अपने पत्नी वाले गृह में अभी विरह जटायु है, इससे उनका दर्शन दुर्लभ है। बेटा भी प्रयाग है। हम नहीं लिख रहे।

तु० केदार

बांदा
२७-५-५८
डियर,

एक पोस्टकार्ड भर गया तब दूसरा लिख रहा हूं। जनाब को श्री केसनीप्रसाद चौरसिया ने लखनऊ में अपना अनूदित मेघदूत दिया था। उसे तुमने पढ़ा होगा ही। बेचारा सीधा-सादा आदमी है। जरा स्नेह और ममता से कलम चलाना। उसने मुझे पत्र भेजा है कि डाक्टर साहब को लिख दूं।

आखिर कैसा है अनुवाद? मैंने देखा तो नहीं।

मेघदूत जब बिल्कुल सरल भाषा में हो कर जन-कंठ में उतर जाये तब जानो। अभी अनेकों [अनेक] प्रयास होंगे अनुवाद के। मैं संस्कृत पढ़े भी नहीं हूं। इधर 'हिन्दी रिव्यू' (बनारस वाला) में ६ कविताएं अनूदित होकर छपी हैं। खजुराहो भी है। देखा ही होगा तुमने। तुम्हें अनुवाद अच्छे नहीं लगे थे। है न? अब छपे हैं देख लेना।

सस्नेह तु०
केदार

बांदा
१-७-५८
प्रिय डाक्टर,

मेरी पुत्री किरन आगरा यूनिवर्सिटी से इस साल हिस्ट्री में एम० ए० के प्रथम वर्ष की परीक्षा देना चाहती है। वह हिन्दी में उत्तर लिखना चाहती है क्योंकि अंग्रेजी में उत्तर लिखना उसके वश की बात नहीं है। अब तुम यह लिखो कि क्या वह ऐसा कर सकती है? साथ ही Detailed पत्र भी दो कि उसकी ओर से कब और कहां और कितना रुपया भेज कर फार्म इत्यादि मंगा लेना पड़ेगा। Prospectus भी मंगाना पड़ेगा। पुस्तकें कौन-सी होंगी? मैं उसे सब हाल तब लिखूंगा जब तुम्हारा पत्र आ जायेगा।

मैं एक दिन बनारस गया २८/६ को तो वहां चन्द्रबली सिंह न मिले इसलिए फिर बिना किसी से मिले लारी से उसी वक्त सबेरे प्रयाग को चल दिया। वह अपने घर गए थे। उन्होंने मुझे २७/६ के बाद बनारस आने को लिखा था। आशा है कि अब तुम लोग शांत मन होओगे।

सस्नेह तु० केदार

१२ अशोक नगर,
आगरा,
२१-७-५८

प्रिय केदार,

अब की चूक हुई। तुम्हारे कार्ड के बारे में समय पर न लिख सका।

हिस्ट्री के पर्चों का उत्तर हिन्दी में लिखा जा सकता है। फीस वगैरह कब भेजनी हो गी, इस बारे में राजनाथ तुम्हें शीघ्र ही लिखें गे। कल मैंने उन्हें और एक अध्यापक देवेन्द्र शर्मा को यह काम सौंप दिया है।

इस महीने कालेज के काम में बहुत समय लगा औसत ६-७ घंटे प्रतिदिन कालेज में। इधर अमृत नागर भी यहीं थे, इसलिए फालतू समय उनके साथ बीत जाता था। अब कार्य पद्धति नार्मल हुई है। यहां सब ठीक है। २६ जु० को दिल्ली जाऊं गा।

तु० रामविलास

बांदा
२३-७-५८
शाम ४ : २०

प्रिय डाक्टर,

याद कर सके यही क्या कम है। मुझे विश्वास था और है कि तुम पत्र भेजोगे—

चाहे देर हो या अबेर। आज मैं तुम्हारे पास कुछ अपनी कविताएं भेजता हूं। लो देखो कैसी हैं।

१. संगमरमर का सबेरा!–
    और उसकी मूर्तियां हम
 मूक जड़वत्!
    आह ! हमको
 शस्य श्यामा छुए, चूमे,
 और भेंटे !

२. मैं बादल हूं–
    आषाढ़ी जामुन के रंग का,
 लेकिन तप कर
    मैं बादल हो गया कनक का,
 और तुम्हारा क्षत्र हो गया।

३. यह जो नाग
    दिये के नीचे
 चुप बैठा है,
 इसने मुझको काट लिया है;
 इसे काटे का मंत्र
    तुम्हारे चुम्बन में है;
 तुम चुम्बन से मुझे जिलाओ!

४. लिपट गयी जो धूल पांव से
 वह गोरी है इसी गांव की
 जिसे उठाया नहीं किसी ने
    इस कुठांव से

५. मिट्टी का यह श्याम-हरित तन-तरुवर!
 इस पर बैठी नीले रंग की चिड़िया
 गाती है नीले समुद्र का गाना।
 मैं इस गाने में रहता हूं डूबा।
 दुनिया ऊबी, मैं तो कभी न ऊबा!!

६. न दिन–न रात
आयी याद जैसे लहर
और उस आइने को
—जिसमें तुम जरूर हो—
लेती है आह! ऐसे छाप
जैसे हम दोनों का
होता है मिलाप!

७. मेरे मन का सुआ घुमक्कड़ बागीचों का,
हरी डाल पर नहीं—ठूंठ पर आ बैठा है,—
जैसे पत्ता एक बचा हो गिर जाने से
पतझर में जो बोध कराता है सावन का
हरियाली जब फूट निकलती है पेड़ों से
बूढ़े वन में भी तरुणाई की उमंग से।
क्यों बैठा है?—क्या बिसूरता सुधि में खोया?
नहीं जानता है दुनिया का पंडित कोई।
उसके पंख हरे पत्ते हैं नहीं पेड़ के।
बाहर से वह सावन, भीतर से पतझर है॥

८. हे मेरी तुम!
बिना तुम्हारे—
जलता तो है दीपक मेरा
लेकिन ऐसे
जैसे आंसू की यमुना पर
छोटा-सा खद्योत टिमकता!

९. हे मेरी तुम!
इसी सड़क पर हम चलते हैं रोज सबेरे!
इसी सड़क पर चलते-चलते
हमें साल के साल हो गए,
तले हमारे जूते के बेहाल हो गए;
लेकिन चलना नहीं छूटता,
चलने का क्रम नहीं टूटता;

क्योंकि यहां के पेड़ वही–
पर फूल-पात की बनक नयी है
क्योंकि यहां की वायु वही–
पर बार-बार की छुअन नयी है!

१०. धूप नहीं, यह–
बैठा है खरगोश पलंग पर
उजला,
रोएंदार, मुलायम–
जिसको छू कर
ज्ञान हो गया है जीने का।

यह तो हुई कविताएं!

अब आप पढ़िये और अपने विचार लिखिये।

इधर इसी तरह की अन्य कविताएं भी लिखता रहा हूं। आज दांत में दर्द है। फिर भी जी नहीं माना। तुमसे बात करने को ललक उठा हूं। तभी कविताओं से तुम्हें वाक्-मुखर करने बैठा हूं। याद रहे कि पत्र का जवाब देने में चूक न हो। मैं जरा मोटी अकल का हूं इससे ख़ूब समझा कर लिखना। तुम्हारे निशाने अचूक हैं। अपनी कमजोरियों को जान कर उत्साह होता है कि उन्हें दूर करूं। लेकिन यह सब होते हुए भी बार-बार गलती कर ही बैठता हूं। कविता आती है तो जैसे रहा नहीं जाता। फिर जो लिख लो वही कई दिनों तक बहुत अच्छा लगता है। अपने मुंह मियां मिट्ठू बना रहता हूं। मगर काव्य के गुण दोष इतने अधिक हैं और इतने सूक्ष्म हैं कि सहज ही क्या, घूर-घूर कर खोजने पर भी मुझ अंधे को नहीं दिखते। तभी तुम्हारी शरण लेता हूं कि पारखी महोदय! मेरी चीज़ें भी परख कर राय दो।

मौसम ऐसा है कि धूप नहीं है। आसमान एक ही श्याम रंग से ढंका है। बादलों के हाथी-घोड़े, और बनते-बिगड़ते चित्र नदारद हैं। वह लोचदार लपक भी नहीं है जो कटाक्ष की तरह गज़ब ढा देती है प्रेमियों पर। अभी-अभी कुछ बूंदें झरी हैं। आंगन के पत्थरों पर उनके गीले स्वभाव व्यक्त हो गये हैं। वह छमाछम भी नहीं है। सामने नल चल रहा है। बालटी भर रही है। पानी बोल रहा है। आंगन के कच्चे कोने में पहले की कटी, रातरानी ने पत्तियां निकाल दी हैं। वह जरूर जियेगी और महकेगी। तुलसी थाले की तुलसी लम्बी हो गयी है जैसे सयानी कन्या। तार पर उतारे हुए कपड़े–ओलौती के नीचे-टंगे हैं। कोई काला है। कोई सफेद। कोई अचकन है। कोई पाजामा है। हां 'बनियाइनें' भी हैं–धुली, साफ, गोरी-गोरी। झझ्झर पर गिलास उल्टाया है। पता नहीं कि पानी ठंडा है या नहीं। अख़बार में पढ़ा था सबेरे कि रूसी बालिंटियर्स तयार हैं

नासिर के आदेश पर जाने को। क्या जाने क्या हो रहा है। स्वेज नहर के मामले में U.S.A. व U.K. चूक गये—मात खा गये थे। अब इस बार पहले ही पड़ाव डाल चुके हैं दोनों चौधरी। हम साधारण जन इसे देख कर गांव के लट्ठमारों की दलबंदी की याद करने लगते हैं। वहां भी विरोधी अपने पालतू शेरों को बुलाकर ख़ून चटाते हैं और मौक़े पर जान लेते हैं। क्या यही है न तरीका! कल युद्ध के समय लिखी गयी पहले की अंग्रेजी कविताएं पढ़ रहा था। ख़ूब हैं। मगर क्या उनका कुछ भी असर पड़ा वहां के तथाकथित शिक्षित सभ्य राजनीति के रहनुमों [रहनुमाओं] पर? शायद उन्होंने उन्हें पढ़ा भी नहीं। पढ़ते ही क्यों? वह ऐसी रचनाओं को देखते ही नहीं। शायद वे समझते हैं कि कविताएं तो बच्चों को अक्षर ज्ञान कराने के लिए तथा तीव्र बुद्धि बनाने के लिए पढ़ाई जाती हैं। वह आदमी को अच्छा आदमी बनाने के लिए नहीं पढ़वाते। क्या मूल्य है उन अमर रचनाओं का? बड़ा ही अफसोस होता है कि जब फिर युद्ध की आवाज गूंजने लगती है। सभ्यता और संस्कृति का सम्बन्ध राजनीति से अलग कर दिया गया है। प्रयास ज़रूर हो रहा है कि राजनीति छिनाला न करे पर बहुत ही कमजोरियां हैं इस प्रयास में। अच्छा तो सलाम।

तु० केदार

बांदा
२५-८-५८
प्रिय डाक्टर,

बहुत मौन हो। कारण क्या है? क्या पुस्तक लिखने में जुट गये हो?

मैंने 'रूप-तरंग' पर एक समीक्षा (१३ टाइप पेजी) लिखी है। उसे मैंने 'प्रतिकल्पा' में छपने को भेजी थी। किन्तु वह लम्बी होने के कारण वहां एक किश्त में नहीं निकल सकती। अतएव डा० महेन्द्र भटनागर ने उसे आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी के पास रजिस्ट्री [से] 'आलोचना' में प्रकाशनार्थ भेज दी है। मुझे भी इसकी सूचना दे दी है। मैंने भी आज आचार्य जी के पास इसी सम्बन्ध में एक पोस्टकार्ड डाला है कि वह उसे छाप सकें तो छाप लें अन्यथा आपके पास डाक से भेज दें। पता भी आगरे का लिख दिया है।

मैं उसे सीधे तुम्हारे ही पास भेजता मगर तुम्हें अचानक पढ़ कर ज्यादा मज़ा मिलता इससे उसे तुम तक अभी तक नहीं भेज सका।

जैसा भी हाल हो लिखो। समाचार तो एकाध लाइन लिख कर दे दो। चिन्ता है। हम कुशल से हैं।

सस्नेह तु० केदार

समालोचक

(हिन्दी का प्रतिनिधि आलोचनात्मक मासिक पत्र)

१२ Ashok Nagar, आगरा

ता० ५-९-[५८]

प्रिय केदार,

इस साल हर रोज़ सबेरे कालेज जाना पड़ता है। Postgraduate teaching का काम बढ़ गया है। ललित का M. A. Final है, शोभा का High School। इसलिए घर पर भी मदरसा लगता है। फक़त अध्यापक रह गया हूं। पी० पी० एच० के लिए निराला जी पर एक छोटी-सी पुस्तक बच्चों के लिए–लिख रहा हूं। Historical Materialism पर पुस्तक की तैयारी है। इस वर्ष भाषा वाली पुस्तक भी पूरी करने का विचार है। बीच में मथुरा और दिल्ली की–सपत्नीक–यात्रा भी की। कल शायद मुंशी और नागार्जुन यहां आयें।

'रूपतरंग' पर तुमने लिखा, अच्छा किया। वैसे तुम्हारा कार्ड मेरे लिए काफी था। इस वक्त ज़रूरत है 'समालोचक' में लिखने की, मुझ पर नहीं, हिन्दी की अनेक प्रमुख समस्याओं पर। इस पत्र को प्रयोगवाद और प्रतिक्रियावाद के विरुद्ध स्वस्थ राष्ट्रीय और जनवादी विचारधारा का प्रबल समर्थक बनना चाहिए। इसमें तुम सहायता दे सकते हो। हम लोग 'यथार्थवाद और साहित्य' पर विशेषांक निकालने जा रहे हैं। तुम Whitman पर, निराला जी के गद्य पर, रोमांटिक कविता में यथार्थवाद–किसी पर लिख सकते हो। हम यथार्थवाद के सैद्धान्तिक पक्ष और कलात्मक साहित्य में उसके विकास–दोनों पर लेख छापें गे। आशा है तुम एक महीने में कुछ न कुछ ज़रूर भेजो गे।

तु० रामविलास

C. B.[1] अस्वस्थ था; उसने तुम्हारे पत्र न लिखने की शिकायत की है।

रा० वि०

बांदा

१५-९-५८

डियर डाक्टर,

पत्र मिला था। ज़रूर कुछ लिखूंगा। विषय तुमने Suggest ही कर दिये हैं।

नागार्जुन का पत्र दिल्ली से आज आया है। मेरे बारे में खूब बातें हुई हैं, सुना। पर उन्होंने भी कुछ खास नहीं लिखा। हां मेरे कान उमेठने की बात उन्होंने की है।

---

1. चन्द्रबली सिंह [अ० त्रि०]

प्रयोगवादियों की ओर मेरा झुकाव हो रहा है, यह तुम सबको प्रतीत होता है। मेरी रचनाएं ऐसी हैं। यह जान कर अचरज नहीं हुआ। खेद ज़रूर हुआ है।

यह मेरी समझ का फेर है। 'प्रयोगवाद' जो है वह तो मैंने कभी भी जाने में अनजाने में अपनाया नहीं। मैं स्वयं उसको पहचानता हूं। मेरे भाव और विचार उनसे स्पष्ट ही विलग हैं। बिम्ब भी बहुत साफ हैं। पता नहीं कि मेरी शैली से कुछ भ्रम हो गया है। हां वस्तु-तत्व अवश्य ही बदला सा है। स्पष्ट लिखो कि क्या बात है। क्या कभी मिलने की व्यवस्था होगी।

हम सब अच्छे हैं।

शोभा और बेटियों को प्यार। बच्चों को आशीष। मलकिन को रामराम।

सस्नेह तु०
केदार

१२ अशोक नगर,
आगरा
३०-९-५८

प्रिय वकील साहब,

प्रयोगवाद का पहला लक्षण :

आप चन्द्रबली के यहां तक गये और बिना मिले लौट आये। सुना, भीतर विष्णु भगवान[1] आपके स्वागत के लिए बैठे ही रह गये।

दूसरा लक्षण : तुम्हें निराला जी से Keats ज्यादा अच्छा लगने लगा।

तीसरा लक्षण : तुम समालोचक के लिए लेख नहीं लिखते।

चौथा लक्षण : तुम्हारी कविताएं छोटी बहुत होती हैं, जिनमें कविता के बीज होते हैं, विकसित कविता नहीं। तुम्हारी संवेदनाओं का क्षेत्र सीमित हो गया है। परसाल सरसों देखी थी तो कुछ अच्छी कविताएं लिखी थीं। अब तुम्हें धरती सेब और आसमान चोंच दिखाई देता है। नयी और गहरी भावानुभूति के अभाव में आदमी इस तरह के Conceils से काम चलाता है। तुम्हारी कविताओं के Form का अनगढ़पन भी तुम्हें प्रयोगवादियों के निकट–खांमखां–घसीट ले जाता है।

हां, चन्द्रबली से पत्र व्यवहार होता है या नहीं।

तुम्हारा
रामविलास

---

1. चन्द्रबली सिंह।

पुनश्च :

लेकिन तुम्हारे गद्य पर यह सब लागू नहीं होता। अपने हर Common Friend के साथ हम तुम्हारे पत्र पढ़ कर तुम्हारे गद्य का रस लेते हैं। गद्य कवियों की कसौटी है– गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति–इस हिसाब से तुम्हारे सच्चे कवि होने में सन्देह नहीं है।

रा० वि०

बांदा
८-१०-५८

प्रिय भाई,

पत्र मिला। अपनी कमियां ज्ञात हुईं। Walt Whitman पर लिखा जा रहा है। कब तक अन्तिम तिथि है मेरे भेज सकने की? लिखो। वरना मेरी जिम्मेदारी नहीं है।

बीज हैं कविता के मुझमें। यह भी ख़ूब है। लेकिन वह बेल नहीं छोड़ते और न फूल-फल देते हैं। यह बीज भी क्या है। हो सकता है कि मैं उन्हें श्रमजल नहीं दे पाता। श्रम का अभाव भी है। छोटी कविताएं तो इसी से लिख पाता हूं कि अधिक समय नहीं रहता, अधिक विस्तार करने का।

'निराला' अच्छे लगते हैं। कीट्स भी अच्छा लगता है। पर जो प्रवाह और सहजता कीट्स में हैं वह मुझे नहीं मिलती निराला के छंदों में। परन्तु, मैं यह नहीं कहता कि निराला सर्वत्र प्रवाहहीन कठिन हैं। देखना है कि भाव और भाषा सर्वत्र किस सरलता और सहजता से खुलते चलते हैं। दोनों का यह अन्तर है और यह भुलाया नहीं जा सकता। निराला निराशा के कवि नहीं हैं इससे कीट्स से दर्शन में बड़े हैं। यह भी स्वीकार है। परन्तु कविता में कीट्स अवश्य बाज़ी मार ले जाता है। मेरा अधकचरा ज्ञान यही कहता है। समय साबित कर सकेगा।

सस्नेह
केदारनाथ अग्रवाल

बांदा
२१-१०-५८

प्रिय डाक्टर,

यह लो मेरा लेख। वाल्टह्विटमैन ने पेर डाला। न समय था। न शक्ति थी। फिर भी तुम्हारे कहने पर इतना लिख पाया हूं। अब छापो चाहे न छापो। यह तुम पर निर्भर है।

आशा है कि मौज में हो। हमारी वीबी [बीवी] Piles से परेशान हैं। और लोग अच्छी तरह से हैं। बेटियों को प्यार। बच्चों को स्नेह।

तु०
केदार

12, Ashok Nagar
Agra
6-11-58

प्रिय केदार,

तुम्हारा कार्ड मिला। लखनऊ से लौटने पर मेहमानों का तांता लगा रहा। कल से एक दूसरी उलझन है। हमारे सहयोगी राजनाथ की पत्नी बहुत बीमार हैं। बचने की आशा कम है। इस समय सबेरे के ग्यारह बजे हैं। मैं अभी अस्पताल से लौटा हूं। पत्नी को वहीं देखभाल के लिए छोड़ आया हूं। मेघदूत का अनुवाद देखा है। मतलब समझ में आता है लेकिन भाषा और छन्दों में कमज़ोरी है। आगे कभी उस पर लिखूं गा। सन् सत्तावन की कहानियां[1] पूरी करके भेज दीं।

तु०
रामविलास

बांदा
१४-११-५८

प्रिय डाक्टर,

दिल्ली गया। वहां आपकी पांडुलिपि 'निराला' देखी। 'पंत की चोरी' की बात हटा दीजिये। दूसरी बात जो खटकी वह यह थी कि आदि से अन्त तक प्रश्न और उत्तर के रूप में कथानक चलता है। रूप खटकने लगता है। मुंशी से मैंने यह कह दिया है। जल्दी लौटना था इससे आगरा नहीं गया। बुरा न मानना।

यह तो लिखो कि मेरा Walt Whitman का लेख तुम्हें डाक से मिल गया या नहीं। रजिस्ट्री की थी। कोई सूचना नहीं दी आपने। परेशानी है। कृपया मुझे एक ख़त डाल कर सूचित कर दो।

Wife और मुन्ना दिल्ली में हैं रूप नगर में। नागर जी के घर के पास ही में, लड़की के घर में। बच्चों को प्यार। बेटियों को प्यार।

तु० केदार

---

1. सन् सत्तावन की कहानियाँ—गदर सम्बन्धी घटनाओं पर आधारित। जन प्रकाशन गृह दिल्ली को भेजी थीं। प्रकाशित नहीं हुई।

SAMALOCHAK (The Critic)

A High Class Hindi Monthly Devoted to Literary Criticism

BAGH MUZAFFAR KHAN

Ref. No. Agra, १७-११-१९५८

प्रिय केदार,

तुम्हारा लेख मिल ही गया था। तबियत होती है कि तुम्हारे गिन गिन कर दस-बीस-तीस....और फिर शुरू से गिनूं। लेख पर नहीं; जनाब दिल्ली गये, आगरे से 'पास' हुए हों गे और यहां खबर ही नहीं। नरोत्तम के खत से पहले-पहल मालूम हुआ कि तुमने यह हरकत की थी!

तुम्हारा लेख संक्षिप्त करके छापें गे। तुम्हारे विचारों में पुनरावृत्ति, तारतम्य की कमी और खांमखां बहकने और अप्रासंगिक ढंग से उपदेश देने की प्रवृत्ति है। अन्तिम पृष्ठ बहुत अच्छा लिखा है जिससे पता चलता है तुम कितना अच्छा लिख सकते हो।

निराला जी पर अपनी बचकानी पुस्तक[1] पर मुंशी की सम्मति पहले सुन चुका था, तुम्हारे Via [तुम्हारी राय] भी प्राप्त हुई।

तुम्हारा—रामविलास

बांदा

२२-११-५८

प्रिय भाई,

पोस्टकार्ड मिला। मैं बहक जाता हूं। मगर रहता हूं सही घेरे में। मैं Conscious हूं अपनी कमजोरियों से। मगर 'नयी कविता' वालों को सीख देना [देनी] ही पड़ेगा [पड़ेगी]। तुम्हारी 'रूपतरंग' पर भी जो लेख है उसमें भी सीख दी है मैंने उन्हें। तुम तो जो कहते हो वह सोने की सुगंध होता है। मैं अपने को सुधारूंगा।

तुम्हारे आगरा न पहुंच सका। इसका मुझे खेद है। पर उधर से नहीं गया था। कानपुर होकर गया था। और २ दिन रह कर अकेले चला आया था। बुरा न मानना डियर! मिलना चाहता हूं जरूर। देखो कब मिल पाता हूं। Herzen का दर्शनग्रन्थ पढ़ रहा हूं। नागर ने मुन्ना के हाथ मेरे पास भेजा है। अपनी शंकाएं लिखूंगा—उत्तर देना।

---

1. बचकानी पुस्तक—बच्चों के लिए लिखी 'निराला' पुस्तक बाल जीवनी माला में जन प्रकाशन गृह, दिल्ली से प्रकाशित हुई थी। इस संस्था के हिन्दी प्रकाशन का काम मुंशी देखते थे। उन्हें और केदार को मेरी पुस्तक की वार्तालाप शैली पसन्द नहीं थी। पुस्तक मूलरूप में ही प्रकाशित हुई थी।

अभी पहली reading चल रही है।

शेष कुशल है। कब तक विशेषांक छपेगा? बच्चों को प्यार।

सस्नेह तु०
केदार

बांदा
२७-११-५८
प्रिय डाक्टर,

आजकल 'बोरिस पास्टनैक' [पास्तर्नाक] का मसला ले कर बड़ा होहल्ला मचा है। हमारे यहां का प्रेस और नेता वर्ग इस घटना से विक्षुब्ध हो उठा है। विदेशियों ने भी तमाम तूफान उठा रक्खा है। वैसे तो साधारण जन और साधारण लेखक-वर्ग के लिए इस घटना ने कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न सामने उभार कर रखे हैं। मगर वह प्रश्न तो वैसे भी बहस के द्वारा सोचे-समझे जा रहे थे। विशेषकर एक देश विशेष की विशेष परिस्थितियों में घटी हुई इस घटना का कहां तक क्या महत्व है, यह एक विचारणीय विषय है। इसी के आधार पर इस घटना पर विचार करना श्रेयस्कर होगा। परिवेश और ऐतिहासिक तथ्यों को बिसार कर पास्टनैक [पास्तर्नाक] की घटना पर सैद्धान्तिक स्तर पर विचार करना उचित न होगा। देखो न,

पास्टनैक [पास्तर्नाक] का देश एक तरफ हैं—वहां की तमाम परम्परा एक तरफ है—वहां के दर्शन एक तरफ हैं—वहां का विकास क्रम और वहां का नैतिक उत्तरदायित्व एक तरफ। इसके विरुद्ध तमाम दुनिया (कुछेक देशों को छोड़ कर) है—अन्य तमाम परम्पराएं है—विभिन्न दर्शन हैं—शोषण और शासन के कड़वे अनुभव हैं। स्वार्थपरता और अनैतिकता का प्रसार और प्रचार है। ऐसे में पोस्टरनैक (पास्तर्नाक) ने अपनी देश की जनता और अपने देश से कट कर एक व्यक्ति की इकाई को अपना कर उस इकाई के द्वारा अपने उपन्यास का ढांचा खड़ा किया है। क्या यह किसी लेखक को शोभा देता है? क्या यह किसी प्रकार भी उचित और नैतिक कहा जा सकता है? क्या यह वहां की साहित्यिक [साहित्य की] जीवित विरासत के तत्वों के विरुद्ध अपमानजनक प्रतिक्रिया नहीं है? क्या पास्टरनैक के लिए यह शर्म की बात नहीं है कि उसके देश के लेखकों ने उसके उपन्यास को वहां ही छपने से रोक दिया था, तब वह उसे विदेश में Smuggle कराकर छपाता (या वह छपता) और दूसरों का मान पाता। कम-से-कम मैं तो अपनी शान के खिलाफ समझता हूं कि मेरे देशवासी मेरी पुस्तक [का] को नाकारा समझें और मैं विदेशियों का अच्छत चंदन स्वीकार करूं। क्या पास्तरनैक के विरुद्ध सब रूसी लेखक हैं? क्या उसने कोई अपमानजनक कार्य नहीं किया है जिसके कारण वे सब उसके खिलाफ हैं? पता नहीं है मुझे इसका। लेकिन यह ज़रूर सोचता हूं कि रूस के

अन्य सब लेखक अकारण ही उसके खिलाफ न होंगे। तब हम या अन्य हमारे मित्र इस होहल्ला में नक्की का सुर क्यों मिला कर स्वनामधन्य हो रहे हैं? तुम मुझे इस विषय में अपने विचार लिख कर सन्तुष्ट कर सकते हो। क्या यह पुरष्कार [पुरस्कार] 'शीत युद्ध' का साहित्यिक आक्रमण नहीं है विदेशियों द्वारा रूस के—समस्त लेखकों पर? क्या यह अन्ततोगत्वा वहां के लेखकों की जमात को जड़ से हिला सकने की ओर किया गया प्रयास नहीं है? क्या 'डाक्टर जिवागो' वास्तव में इतनी बहुमूल्य पुस्तक है कि आज तक कभी भी वैसी कोई दूसरी पुस्तक वहां नहीं लिखी गयी जिसके लेखक को अब से पहले कभी पुरष्कृत [पुरस्कृत] किया गया होता? विज्ञान के क्षेत्र में तो यह शीत युद्धी आक्रमण कारगर सिद्ध ही नहीं हो सकता क्योंकि वहां धांधली की गुंजाइश नहीं रहती। अलावा इसके वहां तथ्यों पर अनुसंधान किये जाते हैं। यह तो साहित्य के क्षेत्र में ही सम्भव है। वही हुआ भी। 'कृति' मे ंइस बार इस घटना को लेकर नव-लेखन वालों ने भी ज़हर उगला है। मैं अभी सम्पूर्ण तथ्यों की जानकारी नहीं रखता इसलिए साधिकार कुछ भी कह सकने में असमर्थ हूं। फिर भी तुम जरूर जानते होगे मुझसे अधिक। इससे मुझे सन्तुष्ट कर सकते हो। अवश्य करो। मेरी प्रतिक्रिया है कि यह देशहित में—वहां के साहित्य के हित में—वहां की जनता के हित में—एक साहित्यिक कदम है। वहां के लेखक दमदार मालूम होते हैं। तभी तो उन्होंने पास्टरनैक[1] का सम्मान नहीं किया।

मैं पत्र लिखता कई दिन पहले। मगर सोच रहा था कि शायद मैं भी दूसरों की तरह सोच सकूं। पर मैं असमर्थ हूं वैसा सोच सकने में। मेरी प्रतिक्रिया भी वही हुई है जो पास्टरनैक के देश में हुई है।

मैं अपने नेताओं को क्या कहूं। वह भी तो ऊपर-ऊपर फिसलते फिसलते रहते हैं। उन्हें कुछ न कहना था। चुप रहते तभी अच्छा था।

मैं बता दूं कि मैं अपने ऐसे विचारों तक इसलिए नहीं पहुंचा कि मुझे उस देश से अपने देश के लेखकों से अधिक प्रेम है। यह तो मेरा तर्क है और ज्ञान है जो मुझे ऐसा विचार करने के लिए प्रेरित कर रहा है।

आशा है कि तुम सकुशल होगे। बच्चों को बेटियों को प्यार।

सस्नेह
तु० केदार

---

1. सन्दर्भ बोरिस पास्तेर्नाक के 'डाक्टर जिवागो' का है।

बांदा
२७-११-५८
शाम ७ बजे
प्रिय डाक्टर,

एक पत्र सबेरे लिख कर डाल चुका हूं। लो यह दूसरा भी।

'राम की शक्तिपूजा' में जो 'शतशेलसंम्वरणशील' [सम्वरणशील]–'भेद कौशल-समूह'–'बिच्छुरितवन्हि-राजीवनयन-हत-लक्ष्य'–'वाण-लोहित लोचन-रावण मदमोचन-महीयान'–'वारित-सौमित्र-मल्लयति-अगणित-मल्ल-रोध'–'गर्जित-प्रलयाब्धि-क्षुब्ध-हनुमत्-केवल-प्रबोध'–'उद्गीरित' से लेकर 'रावण सम्वर' का शाब्दिक अर्थ क्या है?

'देखते राम का जित-सरोज-मुख-श्याम-देश' से क्या मतलब है। [?] 'जित' के मतलब हैं जीता हुआ। अभी तो राम जीते नहीं थे। फिर सरोज-मुख के आगे 'जित' क्यों रक्खा है और क्या व्यक्त करता है?

इसी प्रकार 'एक भी, अयुत-लक्ष में रहा जो दुराक्रान्ता' का शाब्दिक अर्थ क्या है?

'ज्योति: प्रपात स्वर्गीय,–ज्ञात छवि प्रथम स्वीय,–जानकी-नयन-कमनीय प्रथम कम्पन तुरीय' का शाब्दिक अर्थ क्या है?

यह 'भीमा मूर्ति' कौन देवी हैं? 'महानिलय' क्या आसमान है? यदि नहीं तो क्या है?

'लख शंकाकुल हो गये अतुल-बल शेष-शयन',–से क्या अर्थ निकलता है? राम ही अतुल-बल हैं या कुछ और अर्थ है? 'शेष-शयन' से क्या बोध होता है? क्या राम को विष्णु के रूप में व्यक्त किया गया है और शेष-की शय्या पर सुलाया गया है? अथवा राम के अतुल बल सो गये?

इस प्रकार 'युग अस्ति-नास्ति' के एक-रूप, गुण-गण-अनिंद्य–साधना-मध्य भी साम्य'–को समझाओ। कुछ पल्ले नहीं पड़ रहा।

'जपते सभक्ति अजपा विभक्त हो राम-नाम' का शाब्दिक अर्थ भी पकड़ में नहीं आता। कुछ गूढ़ धर्म-दर्शन का हवाला जान पड़ता है।

'ये नहीं चरण राम के, बने श्यामा के शुभ',–यह क्या 'श्यामा' है जिसके चरण बन गये राम के चरण?

'शक्ति-खेल-सागर अपार' से क्या तात्पर्य है? 'प्रतिसन्ध धरा' का अर्थ भी नहीं समझ में आया। 'महाराव' क्या है? क्या ज़ोर का शोर है? 'बज्राङ्ग तेजघन बना पवन को' क्या है? क्या हवा वज्र की तरह और तेज के घन की तरह बना दी गयी है। यह कैसे हुआ है? लिखो।

'एकादश रुद्र क्षुब्ध कर अट्टहास' के क्या मतलब है?

'यह रुद्र राम-पूजन-प्रताप तेज:प्रसार' क्या है? 'रुद्र-वंदन' क्या है?

'श्यामा के पदतल भारधरण हर मन्द्रस्वर' को स्पष्ट करो। 'सम्बरो देवि।' से क्या मतलब है?

'नहीं हुआ शृंगार-युग्म-गत' से क्या मतलब निकलता है?

'ये एकादश रुद्र धन्य' फिर आ गया। राम जाने इससे क्या refrence है? कुछ तो लिखो।

'अंजना' कौन थीं? मां थीं हनुमान की न?

'क्या असम्भाव्य हो यह राघव के लिए धार्य'–न समझ में आया। अर्थ लिख भेजो।

'अप्रतिभट वही' कौन है? फिर आगे है–'एक-अर्बुद-सम' यह क्या बला है?

'भाव-प्रहर' क्या होता है?

'कल्मष-गताचार' भी क्या है?

'पारिषद-दल' क्या है?

'मैं बना किन्तु लङ्कापति धिक्, राघव, धिक् धिक्'–के मतलब भी गोल हैं।

'मैत्री की समनुरक्ति' क्या होती है?

'चमका लक्ष्मण-तेजः प्रचण्ड' क्या है?

'धंस गया धरा में कवि गह युग पद मसक दण्ड'–क्या है?

'मैं हुआ अपर'–क्या है? क्या मैं दूसरा हो गया?

'निशित' क्या है?

रावण को अंक में लेने वाली 'महाशक्ति'–कौन हैं? क्या नाम है इनका? 'संवृत करती' आदि आदि। और आगे भी पूछूंगा।

तु० केदार

समालोचक

हिन्दी का प्रतिनिधि आलोचनात्मक मासिक पत्र

प्रधान सम्पादक	१२, अशोक नगर
डा० रामविलास शर्मा, एम.ए., पी-एच.डी.	आगरा
सह-सम्पादक	दिनांक ११-१२-१९५८
राजनाथ शर्मा, एम.ए., विश्वम्भरनाथ उपाध्याय, एम.ए.	

क्रमांक....

माई डियर,

२८-२९-३० को हम झांसी में थे। वर्मा जी[1] के साथ किला देखा; उस्ताद आदिल

1. वृंदावनलाल शर्मा

खां का गाना सुना; अपने कलाकार उस्ताद स्वर्गीय रुद्रनारायण की बनाई हुई झांसी की रानी की मूर्ति देखी और कई जगह व्यर्थ के भाषण दिये। वर्मा जी से सम्बन्धित सामग्री लाये जो जनवरी अंक में छपे गी। कल सम्पादकीय लेख समाप्त किया और आज दोहरा कर प्रकाशक को दिया। इसी कारण उत्तर में विलम्ब हुआ। [वर्मा जी] सत्तर साल के हो रहे हैं। तुम्हें कभी depression हुआ करे तो झांसी की हवा खा आया करो। हां, जैसे दिल्ली के लिए टाइम निकाल लेते हो, वैसे कभी झांसी आगरे के लिए भी!

तुम्हारा लेख छपने पर और भी बढ़िया लगा। पता नहीं तुम्हें कैसा लगा। मेरे लेख में कोई इतनी काट छांट करता तो मुझे ज़रूर बुरा लगता। तो अब आगे तुम्हें लिखना है। हम सम्पादकीय तौर पर तुम्हें चन्द्रबली से श्रेष्ठ गद्य लेखक घोषित करते हैं। इसलिए आगे काहे पर लिखो गे? सूचित करो। Herzen पढ़ रहे हो? कुछ उसी पर लिखो न ? लेख में ही शंकाएं लिखो। विशेषांक प्रेस में जा रहा है—दो-एक दिन में ही। बाबू चन्द्रबली अभी लेख भेज ही रहे हैं।

राम की शक्तिपूजा के बारे में तुम्हारे प्रश्नों में मैं एक का भी जवाब न दूं गा। कारण यह है कि इसके लिए पूरा लेख लिखना पड़े गा। निवेदन है कि एक बार राम की शक्तिपूजा पर मेरा लेख पढ़ जाइये और इसके बाद विस्तृत विवेचन के लिये खुद तशरीफ लाइये।

आजकल की धूप बड़ी सुहानी है। इस समय (सवा पांच बजे) चुक गई है। इसलिए तुम्हें यह पत्र भी समाप्त करता हूं। गेंदा अब भी जैसे कुछ धूप चुराये हुए फूला है।

तुम्हारा

रामविलास

पास्तेरनाक के बारे में तुम्हारी प्रतिक्रिया ठीक है। इस पर आगे कभी लिखूं गा।

बांदा

१७-१२-५८

हे प्रथम–प्रिय; पुनः–निर्मम सम्पादक!

पत्र मिला। देर से। मैंने सोचा था कि लड़का गया था उसी के द्वारा पत्रोत्तर आयेगा। वह इलाहाबाद रह गया। पत्र पहले आ गया। बाद को बेटे राम खाली हाथ आते ही। मालुम हुआ कि वह मिल तो आया है।

झांसी २४/१२ को रहूंगा कमिश्नरी में। फिर अगर मौका लगा तो आगरा एक दिन को–पचीस के कुछ घंटे को या तो पुनः बांदा। इन्तज़ार कर सकते हो।

मेरा लेख बढ़िया था ही। छपने पर तो वह टाइप के हरूफ़ों में स्वच्छ ज़रूर हो

गया है। मैं तो अभी लेख लिखना सीख रहा हूं। मुझे कटाई-पिटाई बुरी नहीं लगती। न कभी लगी थी। तुम्हारी बात दूसरी है। दिग्गज हो फिर सम्पादक हो। पहलवान भी हो। शास्त्रार्थ करने में और शस्त्रास्त्र में पूरे पारंगत हो। कौन नहीं थरथराया तुमसे। एक हमीं हैं जो नहीं डरते। डियर हो न! बड़ी उदारता बरती है तुमने कि मुझे, सम्पादकीय रूप से, कलम के धनी श्री चन्द्रबली से श्रेष्ठ लेखक घोषित कर दिया है। मैं जाति का बनिया जरूर हूं पर फूल कर 'घी का कुप्पा' नहीं हो गया। इस प्रमाण-पत्र को पा कर कलेजा दहल गया है कि राम आगे बड़ी मेहनत करना [करनी] पड़ेगी। सारी मस्ती हर जायेगी। ऐसे वाक्य तो केवल उन्हीं को 'मगद का लड्डू' बनाते हैं जो कुछ भी नहीं करते और 'खामखाह' यश: प्रार्थी होते हैं। मैं तो अपने को खोजता रहा हूं कि कहां हूं और क्या सच है और मैं उसे पकड़ कर जी रहा हूं अथवा नहीं। मुझे काठ हो कर या रह कर मरने में दु:ख होगा। मरो तो इस शान से कि मौत भी एक ऐसे फूले-फले पेड़ को कंधे पर रख कर चले कि जिधर से निकले-रूप-रस और गंध बरस पड़े, हमें यश न चाहिए। हमें चाहिए पूर्ण विकसित मनुष्य की मौत।

हरजन[1] पढ़ रहा हूं। विचार स्पष्ट होते ही कुछ-न-कुछ लिखूंगा। लेकिन केचुए की चाल चलता हूं, देर लगेगी। कच्ची कलियां कैसे किसी को भेंट दूं। फिर तुम तो गले में बेला के खिले फूलों का और गेंदे का गजरा पहनते हो—भला मैं कैसे हिम्मत करूं कि नन्ही कच्ची कलियों की माला पहनाऊं जनाब को अपने लेख के द्वारा। यकीन रखो ज़रूर लिखूंगा।

'धूप चुराये गेंदा फूला है' गरीब के दरवाजे पर; शाम सांवरी सोने का कंठा पहने है बड़े चाव से; सम्पादक की आंख देखती है सोने के इस कंठे को, जिसे देख कर धरती का यौवन जीवन में छा जाता है।

कहो, है न यह अनूठी बात?

गेंदे पर एक कविता ही लिख डालो। लेख लिखना आसान है—कविता लिखना बड़ा कठिन है न! वरना क्या बात है कि कविता नहीं लिख आती।

'राम की शक्तिपूजा' के अर्थ हमने खुद ही निकाल लिए। परेशान न होना।

सस्नेह केदार

बांदा
३०-१२-५८
रात, ७ बजे

मेरे मस्त मौला डाक्टर,

तुम नहीं जानते जो मुझ पर गुजरी है तुम सब लोगों से काई की तरह फट कर

---

1. उन्नीसवीं सदी के रूसी जनवादी लेखक।

आगरे में बांदा के लिए चलते समय! मैं ही जानता हूं। मेरा चार दिन का निवास–तुम्हारे साथ का–मुझे अद्‌भुत शक्ति और प्रेरणा दे रहा है। वैसे पहले भी तुम्हारे साथ घुला-मिला हूं लेकिन जितना इस बार उतना शायद पहले कभी नहीं घुला-मिला था। इस बार तो तुम मेरा हृदय और मेरी आंखें हो गये हो। यही कारण है कि अधिक दिन जीने की आशा और उससे दुगना उत्साह ले कर आगरे से वापस लौटा हूं। जीवन के दृष्टिकोण में मौलिक अन्तर आ गया है। वह अन्तर बाहरी नहीं, आन्तरिक है। यदि कहूं कि मेरे 'भूत' का गुणात्मक परिवर्तन हो गया है तो अत्युक्ति न होगी।

रात १२ बजे पहुंच गया था। फिर सो गया। अभी तक श्रीमती जी से वहां की बातें नहीं हुई। आज रात डट कर मंत्रोच्चारण होगा। वह भी निश्चय ही प्रसन्न होंगी।

रास्ते में, झांसी तक एकासन से बैठा रहा था। कुछ पढ़ नहीं सका था। झांसी के बाद, बांदा के रास्ते में Dilectical Materialism का प्रथम भाग पढ़ने लगा। लगभग ८० पेज पढ़ गया। बढ़िया लिखा है मेरे यार ने। बधाई देने का मन होता है। ऐसा लगता है कि मारिस कार्नफोर्थ को, उसके घर जाकर, सलाम मारूं। जिन प्रश्नों पर हम-तुम रात को देर तक बात करते रहे थे उन प्रश्नों को लेकर इस लेखक ने विचार किया है। मुझे तो बेहद पसन्द है इसकी सरल, प्रकाश-किरण देने वाली शैली। विश्वास है कि तुम्हें भी अच्छी ही लगी होगी अन्यथा तुम मुझ खूसट के जेब से गाढ़ी कमाई के रूपये उस दुकान में न फेंकवाते। तुम्हें भी बधाई देता हूं कि तुमने मेरे मन की पुस्तक मुझे खरीदवा दी।

आज घर पर रहा। सबेरे सामान ठीक करता रहा। कमरों की धूल साफ की। कानून की किताबों की चुप्पी तोड़ी और उनकी गरदनों से मल छुड़ाता रहा। मेज पोंछी। बाद को एक मुअक्किल दस दे गया, एक नोटिस लिखा कर। फिर जूतों को अपने हाथ से चमाचम करता रहा। जानते हो न कि अपने जूतों को चमकाना (भाववादियों के दर्शन के मतानुसार) न चमकाने के बराबर है। मगर वह चमके हैं। उनकी यह चमक उन दार्शनिकों के ब्रह्म की निरपेक्ष चमक है जो शायद कहीं अदग्ग रहती है। अपने राम तो रास्ते में और भी भौतिकतावादी हो गये हैं। तभी तो जूतों की चमक मे ंअपने–'भूत' का गुणात्मक परिवर्तन देखते हैं और इसको अपने का कर्ता और भोक्ता दोनों मानते हैं। जय हो हमारे अपने स्वस्थ दार्शनिकों की।

दोपहर खाना खा कर विश्राम करता रहा। आज कचहरी जाने का मन ही न हुआ। मैंने भी काम न होने का बहाना पा कर कचहरी का मुंह नहीं देखा। जाता तो जूते मैले कर और रूखे धुले बालों में गर्द जमा कर खाली खीसा घर लौट आता। तब शायद कुछ उदास हो ही जाता। नहीं गया इसी से पूरे उत्साह में रहा। फिर शाम कहे-अनुसार अकेले टहलने गया। दूर तक। खेतों की ओर। देखा कि यहां तो हरियाली का अकाल है और सरसों का पता ही नहीं है। क्या कोई चुरा ले गया है? कुछ भी पता न चला कि यह क्या माजरा है। तुम्हारे यहां की धरती ने तो कलेजा चीर कर लहलहा कर

हरियाली और पीली सरसों चारों ओर फैला दी है। यह देख कर कुछ खिन्न भी हुआ अपने प्रदेश की भू-माता पर। पर यह विचार कर कि देर में ही सही हरियाली होगी और सरसों फूलेगी फरवरी के महीने तक, प्रसन्न हो गया। यह स्वभाव हमारे चटियल मटमैले प्रदेश का है कि योगिराज शिव की तरह रहते हैं और जब कामदेव वाण साधते हैं और पार्वती तपस्या करती हैं तब बड़ी मुश्किल से भावोद्रेक की अवस्था में आते हैं। न जाने कैसे तुलसी बाबा इस प्रदेश के हो कर भी तुम्हारे प्रदेश के राग रंग से जल्दी ही भर कर रत्नावली के लिए अपनी ससुराल दौड़े चले गए थे। वैसे मौसम अच्छा है। ठंड है। खपरैल के नीच कल भी सोया था—परदा लगा कर। आज फिर सोऊंगा वहीं। पहले तो बिस्तर बरफ रहता है फिर गरमा जाता है। औरों को तो कमरों में बन्द सोते देखता हूं यहां भी। बिल्कुल तुम्हारी तरह ही।

अच्छा तो लो एक कविता। सारंगी मुझे सदा मोह लेती है। 'युग की गंगा' में भी एक कविता थी। अब उस दिन तुम्हारे घर रेडियो से सारंगी बजती सुनी थी न। तभी भाव-विभोर हो गया था। आ कर मैंने यह कविता रची है। देखो न किस तरह किस-किस प्रकार से किस-किसके भाव यहां आ कर एक साथ फूट पड़े हैं।

सारंगी सुन कर

योगलीन शिव की मुद्रा में वादक बैठा
योग-भवानी की सारंगी लिये गोद में
मर्म-कुशल हाथों से उन्मद बजा रहा है
आदि भूत को राग बोध की परिसंज्ञा दे।

जो न कभी अब तक प्रकटे थे भाव भूमि में
वह अणु-अणु से अब प्रकटे हैं अंकुर जैसे
गजदंती, वैदूर्य-मुखी, कलहंस-शरीरी
लाखों की संख्या में सोने के प्रकाश में।

मैं भी रहा न पिंड पठारी, सिंधु हो गया,
सारंगी के स्वरारोह में लहरें लेता,
महाकाश की ओर उमंड़ता महावेग से,
शशि-शेखर के अभिनन्दन में गूंज उठा हूं।

महाकाल भी द्रवीभूत हो गया स्वरों से,—
भूल गया अपनी सारी दुर्दम लीलाएं;
कर से छोड़ कुठार, शरद के तरल ताल का,
शतदल खोले, गंध-राग में मग्न हो गया।

बजती रहे सुमुखि-सारंगी इसी भाव से
गलती रहे कुलिश जड़ता भी इसी भाव से

चेतनता फूले सरसों-सी इसी भाव से
शम्भु-भवानी मिलें कंठ से इसी भाव से

कहिए जनाब! है न कुछ काम की कविता। अगर अच्छी लगे तो अपनी पीठ ठोंक लेना मेरी समझ कर। न अच्छी लगे तो अपने गाल लाल कर लेना चपत लगा कर मेरे गाल समझ कर। इस प्रेरणा के तुम्हीं कारण हो। न जाने तुमने कितनी सुन्दर-सुन्दर रचनाएं इस बार सुनाई हैं। देखो कब तक यह रूप-राग-गंध का ख़ज़ाना मेरे मन के भीतर भरा रहता है। इस समय भी तुम्हारे घर में बैठा हूं जैसे। इतनी ताज़गी थी उन कविताओं में, इतना उदात्त स्पन्दन था उन सब रचनाओं में कि काल उन्हें मलिन नहीं कर सका और न कर सकेगा।

अभी कल भी कुछ काम नहीं है। दिन सूखे ही जायेंगे, कचहरी के। पर विचार है कि कल जाऊंगा। कुछ मिलेगा तो जेब में रख कर लौट आऊंगा, कुछ खुश-खुश। अन्यथा आंख नीची किए सरक आऊंगा अदेखा–जैसा।

अभी कविता गूंज रही है। वह निकले चाहे जैसी, लिखूंगा ज़रूर। भेजूंगा भी।

काश यह खत अभी ही तुम्हें मिल सकता और तुम अभी ही पढ़ सकते और अभी ही उत्तर दे सकते। पर जानता हूं कि ऐसा असम्भव है। अभी हम जैसों को समय और दूरी पर विजय पाना कतई नामुमकिन है।

अच्छा तो राम राम।

मैं उन्हें किस तरह धन्यवाद दूं जिन्होंने मेरे लिए चूल्हे की आंच में बैठ कर कई दिन तक खाना पकाया है और तकलीफ उठाई है। मैं तो खा कर स्वाद की सराहना ही कर सकता हूं। परन्तु उन्हें इस ममता के कोमल व्यवहार के लिए किन शब्दों में अपनी कृतज्ञता की अंजलि दूं मेरी समझ में नहीं आता। मैं यही कह सकता हूं कि मैं उनकी ममता से प्राणवान हो गया हूं और प्रदीप्त हूं।

ललित तो मेरे लिए महाबली हनुमान ही सिद्ध हुए। रेल में घुस ही न पाता। वह कैंट तक रेल में स्वयं आये। वह तुमसे भी अधिक मुझे स्नेह करता है। मैं भाग्यवान हूं ऐसे को अपना कर।

बेटियों को तटस्थता की दूरी से देखता रहा था। उनके साथ एक हो ही नहीं सका। अपने स्वभाव के कारण। मगर यह न समझो कि मैं उनसे प्रभावित नहीं हुआ। वे जीवन की खपरैली पर आ-आकर नाचने-गाने वाली गौरैया हैं। मैं उन्हें बहुत प्यार करता हूं।

कागज़ खत्म हो गया। कलम सोने जा रही है दराज में (मेज की) दंडवत, महाप्रभु।

सस्नेह, तु० केदार

१२, अशोक नगर
१२-१-५९

माई डियर,

तुम्हारी कविता के लिए फुर्सत से दाद देनी चाहिए थी—या जल्दी और दिल खोल कर। लेकिन इधर विशेषांक को प्रेस में देने का झंझट—शुक्ल जी वाली पुस्तक की भूमिका—अपना लेख—झांसी से भगवानदास जी माहौर रिसर्च के सिलसिले में यहाँ—और आज निराला जी से सम्बन्धित एक छोटी फिल्म के सिलसिले में सलाह-मशविरे के लिए लखनऊ जाना लेकिन तुम्हारी कविता तो बढ़िया है ही और बाकी पत्र उससे घट कर नहीं है। अभी बराम्दे में ही सोते हो?

रामविलास

समालोचक

हिन्दी का प्रतिनिधि आलोचनात्मक मासिक पत्र

प्रधान सम्पादक — १२१६, बाग मुजफ्फरखां
डा० रामविलास शर्मा, एम० ए०, पी-एच० डी० — आगरा
सह-सम्पादक— — दिनांक..........१९
राजनाथ शर्मा, एम० ए०, विश्वम्भरनाथ, उपाध्याय एम० ए०
क्रमांक :..................

माई डियर,

मैं चन्द्रबली को कार्ड लिखने जा ही रहा था कि गर्म चाय का प्याला आ गया और मैंने वह कार्ड हटा कर रख दिया, चाय पी और तुम्हें पत्र लिखने बैठ गया। आज सबेरे से बूँदाबाँदी हो रही है। कालेज देर से पहुँचा था। दोपहर को अपने प्रकाशक की दूकान पर था तब ओले भी पड़े। उसके बाद ऐसा अँधेरा रहा कि बिजली जला कर चिट्ठियाँ लिखता रहा। तुम कहो गे कि पहले मुझे क्यों न लिखी। इसलिए कि मैं चाय के प्याले की राह देख रहा था जिससे तृप्त हो कर तुम्हें प्रेम से पत्र लिखूं।

शायद तुम फिर कहो—इतने दिन बाद क्यों? जनाब, मैं लखनऊ गया। निराला जी से सम्बन्धित एक छोटी-सी फिल्म बन रही है, यू० पी० शिक्षा प्रसार विभाग की ओर से। उन्हें लखनऊ के वे स्थान दिखाये जहां निराला जी रहते थे। फिर अमृत नागर को ले कर इलाहाबाद गया। अब तुमसे क्या वर्णन करूं। कवि खाट पर बैठे थे। बाल काफी सफेद हो गए हैं लेकिन कितने घने हैं अब भी। और दाढ़ी भी कुछ respectable हो गयी है, पहले की एकदम हुमायूं जैसी नहीं है। आंखों की ज्योति भी अधिक स्पष्ट है। अब बुदबुदाते नहीं हैं, न उँगलियाँ चलाया करते हैं; न उठ कर घूमने लगते हैं। अपने

श्वेतवर्ण, अंग्रेजी ज्ञान, सम्पत्ति आदि की फैंटेसी रचने के बाद बोले कि लम्बे भाषण से तुम्हें परेशान किया। महा शुभ चिह्न! विक्षिप्त होने की पहली मंजिल में यही लक्षण थे। हमारा प्यारा कवि नरक-यात्रा करके फिर स्वर्ग की ओर उठ रहा है। कितनी बार Lear पढ़ते-पढ़ाते हुए मैंने उन्हें नहीं याद किया। लियर ने विक्षिप्त अवस्था के बाद जब पहली बार ज्ञान नयन खोले और सामने angel जैसी अपनी निर्दोष कन्या Cordelia को देखा तो कहा :

You do me wrong to take me out o' the grave.
Thou art a soal in bliss; but I am bound
Upon a wheel of fire, that mine own tears.
Do scald like molten lead. (IV, 7)

उस अग्निचक्र से निराला जी भी बँधे रह चुके हैं। अब मानो grave में एक पैर रहते हुए भी वे दुनिया को झाँक कर देख रहे हैं, उसे फिर पहचान रहे हैं।

हाँ, तो उन्होंने अमृत को और मुझे खाट पर बिठाया। पैरों पर रजाई डालने को कहा। जलेबियाँ आईं। अमृत ने चारपाई पर ही खाना शुरू किया। निराला जी ने कई बार कहा—तुम टपका दो गे लेकिन अमृत आश्वासन देते रहे कि रजाई खराब न हो गी। और निराला जी ने पैरों से रजाई खींच कर एक ओर रख दी। फिर मिल्टन पढ़ने को कहा। कुछ समय बाद उन्हें ख्याल आया कि उसमें फारसी की पहली किताब रखी थी। खोज शुरू हुई। पुस्तक (Milton) में तो थी ही नहीं। हम खाट छोड़ कर उठे। रजाई उठा कर देखी। फिर इधर-उधर की बात हुई। लेकिन ध्यान उसी किताब पर। जेबें देखने को कहा। हम लोगों ने अपनी जेबों की ख़ुद तलाशी ली। कमलाशंकर ने कहा कि दूसरी मँगा दें गे। फिर इधर-उधर की बातें हुईं। और बीच-बीच में तब भी उसी किताब का ज़िक्र। किसी बूढ़े बाबा को जैसे अपने नातियों से प्यार होता है, वैसे ही महाकवि को अपनी पुस्तकों का मोह है। उस अल्मारी में—जिसमें किवाड़ें नहीं है—उनकी सारी संपदा है। वैसे सामने की बड़ी कोठी उन्होंने अपने भक्तों के लिए अपनी रायल्टी से बनवा दी है।[1]

किस तन्मयता से उन्होंने 'सिरि रामचंद्र कृपालु भज मन', हारमोनियम ले कर गाया! एक बार '३४-'३६ का निराला फिर उदय हुआ। भारति जय विजय करे! टूटें सकल बन्ध! नयनों के डोरे लाल! बंगला के कई गीत, विवेकानन्द की एक बंगला कविता! लगभग दो-ढाई घंटे तक गाते रहे।

शाम को शिक्षाप्रसार विभाग के Studio आये। लेकिन वहां उन्होंने किसी को इंच भर भी lift न दिया। काली टोपी, काला बंद कालर का कोट, धोती, मोजे-जूते—खासे

1. यह पत्र 15 जनवरी और 30 जनवरी 1959 के बीच का लिखा हुआ है। पत्र में कोई तिथि अंकित नहीं है। [अ० त्रि०]

भले मानुस लगते थे। काश! ये इलाहाबादी गधे उन्हें उस गली से निकाल कर किसी बंगले में बसा पाते। दो महीने में निराला दूसरा हो जाता।...

बस तो तुम्हारी सारंगी का जवाब यहां ख़त्म होता है। गर्म पराठे सिंक रहे हैं और बन्दा उन्हें ठिकाने लगाने जाता है।

बराम्दे में ही सोते हो न?[1]

तुम्हारा
रामविलास

बांदा
२-२-५९

प्रिय भाई,

पहले पोस्ट कार्ड मिला था फिर लिफाफा मिला। दोनों मिला कर भी मेरे सारंगी वाले पत्र का जवाब नहीं देते। ज़रा और दिल खोल कर लिखते तो मजा आ जाता।

बड़ी खुशी हुई कि लखनऊ और इलाहाबाद तो आप चले गये। महाकवि का समाचार मालुम कर हृदय में सूर्योदय हुआ—कई साल के घने-घिरे कुहरे के बाद। बधाई है तुम्हें जो तुमने यह समाचार दिया।

ललित की परीक्षाएं होने वाली होंगी। खूब जुट कर पढ़ रहे होंगे। लड़कियों की भी पढ़ाई चालू होगी। बड़ा जाड़ा है। मगर हम तो वही खपरैल के नीचे। लिहाफ लिपटा रहता है। कमरे में तो दम घुटने-सा लगता है। बाहर सोने की आदत पड़ गई है न।

आज सबेरे बीबी [बीवी] तथा किरन लखनऊ गई हैं। अब रामराज्य है।

हां, मैं मार्च के प्रथम सप्ताह में मद्रास—भाई की शादी में—जा रहा हूं। चाचा के छोटे बच्चे की शादी है। कुछ पते वहां के—केरल के लिख दो। शायद उड़ जाऊं। देख-सुन आऊं। ख़तमशुद!

तु० केदार

बांदा
२४.२.५९

डियर,

पोस्ट कार्ड लिख चुका हूं, कई दिन हुए। उत्तर की प्रतीक्षा करते-करते थक गया तब अब यह दूसरा पत्र इसलिए लिख रहा हूं कि आप मेहरबानी करें और शांति-भंग करें—केवल एक पत्र लिख कर।

न जाने क्यों अब तक 'समालोचक' का विशेषांक इस बार नहीं आया। रोज़ डाक देखता हूं। प्रकाशक ने वी० पी० भेज दी होती तो उसे भी छुड़ा लेता। हो सकता है कि मेरा नाम उस मुफ्तखोरी के रजिस्टर से उसने काट दिया हो। कृपया भेजवा दो।

'नयी कविता' की समस्या दूसरे को स्पर्श न कर सकने की मूल समस्या है। इसी समस्या की पर्तों के कुरेदने पर अन्य समस्याएं भी सामने आ खड़ी होती हैं। प्रयाग विश्वविद्यालय में जयंती के समय हुए कवि सम्मेलन में नये कवि बिल्कुल नहीं जम सके थे। कोई सुनता ही नहीं था। अज्ञेय तक असफल रहे। बच्चन भी बोल गये थे। डाक्टर जगदीश इत्यादि का हाल भी बुरा था। जनता के सामने जमना कविता के लिए बहुत जरूरी है।

रेडियो में शायद इसलिए नये कवि बड़े प्रेम से कविता-पाठ कर लेते हैं क्योंकि वहां सामने जनता नहीं होती। शायद यही कारण है कि रेडियों में ही नये कवियों का जमाव जोर मारता है। प्रयाग में हुए १३/२ के रेडियो कवि सम्मेलन में तभी सब नये अपना कविता-पाठ कर सके। मैं भी था। कुछ भी मजा नहीं आया। आशा है कि सब लोग मजे में हैं। ललित को शुभाशीष। शोभा को भी। सेवा और स्वाती [स्वाति] को प्यार।

सस्नेह, तु०
केदार

बांदा
१६-३-५९
रात ९ बजे
प्रिय भाई,

१५/१६-३-५९ की रात की गाड़ी से, मद्रास से घर वापस आया। मेज पर रक्खा हुआ तुम्हारा बंद लिफाफा मेरी उगलियों से खुलने के लिए लालायित पड़ा था। मैंने उसे अपने दिल की तरह खोला। मैंने पढ़ा नहीं—वह खुद ही बोलने लगा। उसको सुनते-सुनते मैं बड़ी देर तक भाव-विभोर रहा। तुम्हारे इस पत्र की प्रत्येक पंक्ति ने मुझे इतना बल और विश्वास दिया है कि मैं फिर से खिल उठा हूं जैसे मैं कोई कदम्ब का पेड़ होऊं! तुम्हारी आलोचना को पढ़ कर मैं अपनी कमजोरियों को भली-भांति देख सका और यह समझ सका कि वास्तव में कविता फुलझड़ियां छुड़ाना नहीं है बल्कि योगाभ्यास करना है। तुमने ठीक ही लिखा है कि अनुभूतियों के स्तर-स्तर खुलने चाहिए। काम कठिन है—किन्तु अच्छी कविता तभी बनती है जब कवि उसी में डूब जाता है और आये हुए आषाढ़ी बादल की तरह बरस पड़ता है। मैं इतनी तन्मयता की अवस्था में—योगावस्था में—नहीं रह पाता। यह मेरे व्यक्तित्व की दुर्बलता है। मैंने अपने

जीवन को इतने गहरे जा कर आज तक कभी नहीं टटोला और उसके अतल में खिले हुए उस फूल को नहीं देखा है जिसका जिक्र तुमने आगरे में इस बार मुझसे किया था। याद है न! तुमने कहा था कि अतल में भी फूल खिला पाया जाता है। टनों पानी के बोझ के नीचे। वही फूल है सच्ची सुन्दर कविता। तुम वैसी ही कविता के देखने के अभिलाषी हो। मैं वह फूल वाली कविता नहीं दे पाता। यह शत-प्रतिशत सच है। पर निराश नहीं हूं डियर। लालसा तो वैसी ही कविता के लिखने की है।

मद्रास एक साफ-सुथरा नगर है। वहां शांति है—सौम्यता है। वहां नागरिक क्षुद्रता नहीं है। लोगों में फूलों का प्रेम है। औरत, मर्द, बच्चे सभी फूल पसंद करते हैं। सच पूछो तो मद्रास में फूलों की मुसकान में जीवन जागता जीता, और संवरता है। बड़ा ही भला लगता है जब जूड़ों में तुम्हारे धूप-चुराये गेंदें के फूल सुनहली लपट की तरह यहां-वहां आंखों के सामने लहक उठते हैं। फिर हीरे की चमक भी तो हृदय बेध देती है। लोग सांवले हैं—काले हैं। मगर उनके अन्दर यह जो फूलों का और हीरों का प्यार है वही उन्हें सुन्दर बनाये है। इस पर कमाल तो देखो नीले सागर का बालू के तट पर क्षण-प्रतिक्षण, ध्वनित होते रहना और श्वेतोज्ज्वल जल-बूंदों का रत्नहार देते रहना। बड़ा ही मनोहारी लगा मद्रास! अन्य बड़े नगरों में तो ऐसा लगता है कि जैसे वहां से कोई हृदय की फुलवाड़ी चुरा ले गया है और शेष रह गया [गयी] है वहां एक मात्र कृत्रिम सजावट। मद्रास में अब भी अक्षत यौवन का सौन्दर्य पूर्ण रूप से देदीप्यमान है। दिल्ली में तो मैं गुलगपाड़े में—मोटरों की तेजी में—विशाल भवनों के घेरे में—साड़ी सलवारों की सिलवटों में—छल्ले-उछाल छैलचिकनिया वातावरण में—जब भी वहां गया—खो गया। सिर चकराया। दिल दब गया। मैं मद्रास में प्राकृत रह सका। यही विशेषता मुझे पसंद है।

तुम्हारी कविता—'महाबलीपुरम का समुद्र तट' पढ़ ही चुका था। वहां भी मोटर से गया। नीला सागर हरहरा रहा था। झाग मार रहा था। तुम याद आये। तुम्हारी कविता याद आई। आंखों में, दिल में नस-नस में, वहां का समुद्र भर गया। पेवस्त हो गया। तुम्हारी भाषा में समुद्र मुझ में सीझ गया। तुमने लिखा है न कि गंगा का पानी बैसवाड़े की धरती में सीझ गया है। ठीक वही हाल मेरा हुआ। मैं समुद्र को सुनता रहा। उसकी भावभंगिमाएं देखता रहा। वह अहर्निशि का पहरुआ कभी पराजय [पराजित] नहीं होता। खूब है। आसमान क्या टक्कर लेगा उसकी ताकत से। वह तो धुपाया था। फीका था। कमज़ोर था। दुर्बल था—हारे हुए सैनिक की तरह। न जाने क्यों सागर की ध्वनियों में मुझे सीता की याद आ गयी जो परित्यक्त हो कर राम को आज तक वाल्मीकि के छंदों से उपालम्भ दे रही हैं। मुझे यही सुन पड़ता रहा कि राजा राम तुमने न्याय नहीं किया। तुम प्रजा पुजारी भले ही रहे हो लेकिन तुम धरती की साध्वी सीता के प्रति अनुदार थे। ऐसी मनोदशा में मैंने समुद्र को देखा सुना है। एक घंटे तक यही सुनता रहा। फिर चट्टानों में खुदी मूर्तियां देखीं। तुम्हारे वे वाक्य याद हो आये कि उत्तर दक्षिण की

संस्कृतियों का संगम है महाबलीपुरम। तुमने सच ही लिखा है। धन्य हो।

परन्तु अभी दिल नहीं भरा समुद्र देख कर। घंटों–पहरों उसे देखना चाहता हूं। यह सम्भव नहीं हो सका। समय की कमी थी। शादी में गया था–जल्दी थी। फिर कभी गया तो समुद्र की लहरों में, उसकी नीलिमा में बंध कर रह जाऊंगा–न निकलूंगा, न निकलूंगा उसके बाहर। देखो वह दिन कब आता है।

विनय की शादी हो गयी। खूब मिला भाई को। मगर जो मुझे मिला अपने दिलदार समुद्र से–पहाड़ पर खुदी मूर्तियों से–मद्रास के शांति सौम्य वातावरण से–वहां के फूलों से–वह मेरे भाई को भी नहीं मिला। गरीब हूं लेकिन अमीरों से अमीर हूं। दिल देख लो न। प्यारे, अच्छी रही यात्रा।

सस्नेह तु० केदार

समालोचक

हिन्दी का प्रतिनिधि आलोचनात्मक मासिक पत्र

प्रधान सम्पादक– १९-३-५९

डा० रामविलास शर्मा, एम० ए०, पी-एच० डी० १२१६, बाग मुज़फ्फर खां

सह-सम्पादक– आगरा

राजनाथ शर्मा, एम० ए०, विश्वम्भरनाथ उपाध्याय, एम० ए० दिनांक : १९

क्रमांक : .... सबेरे के पौने नौ बजे

जानते हो, इस लाल रोशनाई के [की] कलम से क्या कर रहा था? कापियाँ जाँच रहा था कि तभी सबेरे की डाक से जनाब आ टपके। अब साला मन कापियों में लगता नहीं। और रोज़ डाक देर से आती थी–दोपहर को एक बजे। आज वक्त से आ गई–पौने नौ बजे। दिमाग में महाबलिपुरम् घूम गया–नीला समुद्र जो आकाश की तरह मेरे मन पर छाया रहता है। उससे ज्यादा बेचैन किया तुम्हारे गद्य ने। तुम अगर पास होते तो तुम्हारे इतने तमाचे लगाता कि गाल लाल हो जाते। कहोगे क्यों? अबे, साधारण खुशी होती तो तुझे चूम कर रह जाता लेकिन जब हम आपे में नहीं हैं तब तुझे पीटने के सिवा क्या करें। यह भी ख्याल आया कि तारीफ़ लिखना ठीक नहीं–तुमने महाबलिपुरम् के पास मेरी कविता याद की–सुसरी सार्थक हो गई। लेकिन चूंकि मैं तुम्हारे पद्य का काफी सख्त आपरेशन करता हूँ–इसलिए आशा करता हूँ कि गद्य की तारीफ करना दोस्त को बिगाड़ना न हो गा। वैसे किसी के बर्बाद करने का सबसे अच्छा तरीका उसकी ज़रूरत से ज़्यादा तारीफ़ करना है। मतलब यह कि तुम्हारा यह ख़त–तुम्हारे ख़तों में भी–ख़ूबसूरत है जैसे वसन्त की सुन्दर ऋतु में सरसों। By the way, आज कल हमारी Favorite Walk वाली नहर के पास नीबू के फूलों की अरघानें उठ रही हैं। कल

उधर जाऊं गा–सूर्योदय से पहले। पुलिया पर बैठ कर तुम्हारा ख़त पढ़ूँ गा।

वाह प्यारे तुम कदंब की तरह खिले। स्फुरद्बाल कदम्बपुष्पै:। याद है? संस्कृत पढ़, सुसरे। कवि कुल गुरु ने लिखा है, पार्वती के लिये। खूब खिले। मेरा पत्र भी साला सार्थक हो गया–पंचबाण का काम कर गया।

लेकिन माई डियर–तेरे ख़त में एक दूसरा केदार भी बोलता है। कविता लिखना "योगाभ्यास करना है", "अनुभूतियों के स्तर-स्तर खुलने चाहिए"। (अब हम तुम इतने निकट हैं कि पता नहीं चलता कि यह वाक्य तुम्हारा है या मेरा) "अच्छी कविता तभी बनती है जब कवि उसी में डूब जाता है" (बात साधारन है लेकिन योग के संदर्भ में असाधारन), असाढ़ी बादल की तरह कवि बरसता है, "मैं इतनी तन्मयता की अवस्था में–योगावस्था में–नहीं रह पाता।" अबे, पहुँच गया पहली सीढ़ी तक, नहीं तो पता कैसे लगता कि तू किस अवस्था में है और तुझे किसमें रहना चाहिए। "अपने जीवन को इतने गहरे" जा कर नहीं टटोला, अतल में खिले हुए फूल को नहीं देखा।

तुम देखते हो उसे, उसकी खुशबू तुम्हें मस्त भी करती है। तभी तो गद्य में बेले महँक उठते हैं। लेकिन कविता कुछ और साधना माँगती है न? तुम्हारे मन की शक्ति बिखर जाती है। समेटो साली को। फिर ऐसा फायर करो गे कि पंक्तियों में महाबलिपुरम् का समुद्र लहराने लगे गा। तुम्हारे ख़त का पहला पैरा अद्भुत मनोयोग से लिखा गया है। शायद तुम ख़ुद उसके मधु से छके हो–इसीलिए प्रशंसा न माँग कर आत्मविश्वास की बात करते हो। कुछ दिन बाद–यह तार टूटा नहीं तो–पद्य लिखने के बाद तुम्हें दाद की चिन्ता न रहे गी–बस मुझे सुनाने के लिए तड़पो गे। मुझे क्यों? इसलिए कि मैं उस फूल के पास हूं जो तुम्हारे अतल में खिला हुआ है। टनों पानी के नीचे। जो पानी उसे दबाता है–लेकिन खिलने की नयी शक्ति भी देता है।

अब तक चार-पाँच कापियाँ और देखता सो जनाब आ टपके। बहरहाल अब दिमाग़ हल्का है। बिना जवाब लिखे दूसरा काम कर ही न सकता था। तमाचों से शुरुआत–दोनों गालों पर सहस्रों चुम्बनों से समाप्त। मैडम जेलस तो न हों गी।

रामविलास

Banda
31-3-59
Dear,

Are you reaching L.K.O. to preside over Kavi Sammelan on 20/4/59? Anyhow I am not going there. I have already wasted my valuable days at Madras. No more I can afford to remain out for a day even. You no my meagre earning.

I shall write you a detailed lettre after sometime when you would be free from manual labour—I mean free from examining the copies.

How has Lalit done his papers? How is Shobha doing in her exam.

Yours affectionately
Kedar Nath

[4.4.59]
(10-30 P.M.)

॥ श्री ॥

कहो योगभवानी, क्या हाल है? कहां तुम्हारे ३०-१-५८ के पत्र का उल्लास! और कहाँ पोस्टकार्डों में कुशल क्षेम वार्ता। इसमें दोष बाँदा [का] नहीं आगरे का है। इधर मैंने M.A. के छात्रों को पढ़ाने के लिये कई उपन्यास पढ़े जो पहले पढ़े न थे, कई नाटक इसी तरह पढ़े, कई कवियों पर भाषण दिये जिन पर पहले बोला न था। यानी जनवरी-फरवरी में यह आलम कि रात को पढ़ा और सबेरे लड़कों की नज़र कर आये। घर आते ही दूसरे दिन की तैयारी। फुर्सत में पुत्र-पुत्रियों की थोड़ी बहुत सहायता। अब की सरसों भी नहीं देखी; कैसी है। कल ज़रूर जाऊं गा देखने।

माई डियर, तुम्हारे सुन्दर पत्र के जवाब में मैंने इलाहाबाद का नशा पेश कर दिया था। लेकिन वह जमा नहीं। मैंने उसे तुम्हारी कविता की तारीफ़ में ही लिखा था। निराला जी के बारे में मेरे अन्तर्मन की बातें सुनने के हक़दार तुम्हीं तो थे। लेकिन तुम ठहरे वकील। तुम्हें उससे क्या तस्कीन होगी।

तुम्हारी कविता बहुत सुन्दर है। ''धूप धरा पर उतरी'' से ज़रा उन्नीस है। इस में आगरे के सुने हुए राग बोल रहे हैं। लेकिन केदार के लिए सुने हुए राग ज़रूरी नहीं हैं। वह जब स्वयं आदि भूत को रागबोध की संज्ञा देता है, तब वह किसी महाकवि से घट कर नहीं होता। Whitman के Dandelion जैसा विहँसता है। अब देखो, इस कविता की हर पंक्ति दोषपूर्ण है यद्यपि मैं इसका अर्थ Unheard melody की तरह सुनता हूँ और उस पर मुग्ध हूँ।

१. योगलीन शिव की मुद्रा में वादक : बैठ कर बजाये गा क्या? मन मस्त हुआ तब क्यों बोले?

२. योगलीन ऐसा कि भवानी को गोद में बिठा लिया? और योग भवानी गोद में है तो योगलीन कैसे? या भवानी में लीन?

३. मर्मकुशल हाथों से बजा रहा है—ठीक। लेकिन 'उन्मद' फालतू है—मर्मकुशल के बाद।

४. आदि भूत को द्रवीभूत किया–सुन्दर। परिसंज्ञा पुन: थोपथाप।

५. जो न कभी... जो क्या?

६. बड़ी सुन्दर पंक्ति है। काश–इस image पर ध्यान ज़रा और टिकता।

७. अनेक विशेषण–उलझन–

८. सोने के प्रकाश में? प्रकाश कहां का?

९. पिंड पठारी–भद्दा प्रयोग।

१०. लहरें लेता–हल्का मुहावरा

११. महाकाश–Echo of राम की शक्तिपूजा

१२. शशि शेखर–शिव तो सारंगी लिये सामने था। महाकाश की ओर उठने की आवश्यकता क्या थी?

१३. महाकाल .... मग्न हो गया–सुन्दर पंक्तियां हैं। लेकिन महाकाल की image व्याख्या माँगती है। शिव से वह भिन्न क्यों है–यह भी बताना आवश्यक। असल में शिव से वह lelescope [Telescope] कर जाती है। मिश्रित मूर्ति विधान हो गया है।

१४. अंतिम चार पंक्तियां–बहुत साधारण हैं। मानो कविता लिखते समय श्रीमती ने तुम्हें disturb कर दिया हो और तुमने इन्हें बाद में जोड़ा हो।

मैं फिर कहता हूं–जो तुम कहना चाहते हो–वह बहुत सुन्दर है।

But your prose in the lettre is amazingly beautiful, almost better than your verses.

प्यारे, कविता लिखना भी योगाभ्यास है। अपनी अनुभूति पर चित्त को और एकाग्र करो–अपनी मर्मभेदी दृष्टि से मूर्ति विधान के स्तर-स्तर को आलोकित कर दो–शब्दों को सारंगी के स्वरों की तरह निखार दो कि उनमें भर्ती का एक syllable दिखाई न दे। तब ही कविता एक classical piece बन जाय गी।

बन जाय गी न? क्योंकि हम कविताएँ लिखते नहीं! उपदेश देने में क्या लगता है! लेकिन हम कविताएँ पढ़ खूब रहे हैं। मिल्टन की एक पंक्ति आपकी नज़र है :

Like a fair flower, surcharged with dew, she weeps.

ज़रा सोचिये, कहां किसके बारे में नयनसुख जी लिख गये हैं?

Sercharged with dew— है जवाब इसका?

रामविलास

8.4.59

नहीं जनाब, हम लखनऊ नहीं जा रहे। यहां के काम से फुर्सत नहीं। तुमने लिखा है "I have already wasted my valuable days at Madras" ठीक है। कमा नहीं पाये। कविता के लिये जो पूँजी लाये थे वह भी खो गयी हो गी। बहरहाल तुम्हारे पिछले पत्र ने बता दिया था कि मद्रास में बिताये हुए दिन वास्तव में कितने 'Valuable' थे। हमारी manual Lobour चल रही है—साथ ही और काम भी—जैसे समालोचक के लिए संपादकीय या सिद्धेश्वरी बाई (अब देवी) का गाना सुनना (रेडियो पर)। ललित शोभा के पर्चे ठीक हुए हैं। तो अब अपना Detailed [पत्र] भेजो।

रामविलास

बांदा
१७.४.५९
मेरे दोस्त,

आप नाराज क्यों बैठे हैं? मैंने उत्तर देने में देरी की तो कोई अपराध तो नहीं कर बैठा। आज के उलट फेर के युग में ऐसी देर हो जाये तो कौन ठीक। देखो न, दलाई लामा अलंघ्य पर्वतमाला पार कर, देश-त्याग कर, हमारे देश आ गये हैं। हम स्वागत कर रहे हैं उन्हें बुद्धात्मा के रूप में। वाह रे! हमारा अतिथि-सत्कार! जनाब, उन्होंने शायद कोई बड़ा काम किया है अपने देश तिब्बत को छोड़ कर। हम तो यह नहीं समझ पाते। मालूम होता है कि धर्म दुर्बल था। उसे पालने में लिटा कर भारतीय श्वेत-श्याम गायों का दूध पिलाना जरूरी था। बेचारा वहां रहता तो सूख कर कांटा हो जाता। अच्छा हुआ कि ऐसे धर्म की रक्षा में लामा (महामहिम) ने अपनी मातृभूमि तक को त्याग दिया—जैसे बुद्ध ने घर छोड़ दिया हो। यह व्यंग [व्यंग्य] है। बहादुरी तो इसमें थी कि वहीं जमे रहते और धर्म को सबकी रक्षा में समर्पित कर देते। पर ख़ूब हैं, हम लोग भी कि स्वागत में और यशोगान में सबसे आगे हैं। यह हमारे समन्वयात्मक दर्शन का सबसे ताज़ा नमूना है। अगर प्राण रक्षा की दृष्टि से देखो तो श्री लामा का यह देश-त्याग सर्व-सम्मत से ईश्वरीय इच्छा का ही प्रतिफल है। हम इस पर कविता लिखना चाहते थे पर कलम दगा दे गयी। विवश हो कर यह पत्र ही लिखते हैं। और ख़ैरियत है। लम्बा खत नहीं है—मुंह न फुला लेना।

पुनश्च—

अब घर की नींव तो खुद गयी होगी—कब तक तयार होगा?

केदार

११ अशोक नगर,
आगरा
१.५.५९

प्रिय केदार बाबू,

फ़िलहाल यह कार्ड इसलिए है कि तुम से पूछा जाय कि लखनऊ तो नहीं जा रहे हो। चंद्रावली [चन्द्रबली सिंह] की चिट्ठी आई है जिसमें लिखा है, तुम वाराणसी पधारो गे। अपना जाना वहां हो नहीं सकता। लेकिन १३ मई को लखनऊ एक वार्ता Record कराने जाना है। अतः उधर जाओ तो लिखना।

तु०
रामविलास

समालोचक

हिन्दी का प्रतिनिधि आलोचनात्मक मासिक पत्र

प्रधान सम्पादक–
डा० रामविलास शर्मा, एम. ए., पी–एच. डी.
सह–सम्पादक–
राजनाथ शर्मा, एम. ए., विश्वम्भरनाथ उपाध्याय, एम. ए.

१२१६ बाग मुजफ़्फ़र खां
आगरा

क्रमांक–

दिनांक : २५–५–१९५९

प्रिय केदार,

''आप नाराज क्यों बैठे हैं?''–१७.४.५९ के कार्ड में! उसी दिन लिखे हुए 'अन्तर्देशीय' में–''डियर, एक पोस्टकार्ड अभी–अभी लिख कर रख ही चुका था कि कलम कुड़कुड़ाने लगी ....''

और यह २५ मई। लानत! हज़ार बार लानत!

कापियाँ खत्म हो गईं। जिन दिनों तुम्हारा पत्र आया, उन दिनों तो उनसे निपट ही रहा था। मई में इलाहाबाद की बी. ए. परीक्षा (प्रथम) के पर्चे हुए और उनसे अभी दो-चार दिन हुए निपटा हूँ। अमृतलाल नागर यहीं हैं। २० को उनके बड़े लड़के का ब्याह था। उसमें भी नहीं जा सका। समालोचक के लिए सम्पादकीय, पुस्तक–रिव्यू आदि लिखे। सन् सत्तावन का सैनिक इतिहास लिखने का विचार है। उसके लिये सामग्री एकत्र करने परसों कलकत्ते जा रहा हूँ। वहां का पता C/o कृष्णाचारी, हिंदी विभाग, नैशनल लायब्रेरी, कलकत्ता है। कुछ तैयारी यहाँ भी की है। इधर एक हफ्ते से भुवन को मलेरिया ने दबा रखा था। अब हालत सुधर रही है।

यह सब ख़त न लिखने की कैफ़ियत नहीं है। लानत–हज़ार बार लानत–अपनी जगह बरकरार है।

तुम्हारे बाँदा के वकील साहब योगेन्द्र सिंह हमारे लखनऊ के भूतपूर्व छात्र निकले। उनके छोटे भाई से हमारे स्वर्गीय सहयोगी-अध्यापक डॉ० तारा सिंह की लड़की का विवाह हुआ है। विवाह के दिन से ही तुम्हें पत्र लिखने की सोच रहा था लेकिन आज कल परसों, जम न पाई सरसों!

तो माई डियर, नाराज़ी की ऐसी तैसी। उत्तर देने में तुमसे अपराध हुआ तो हमसे, उससे बढ़ कर, क्राइम हुआ।

दलाई के बारे में तुम्हारी बातें ठीक ही हैं। बेचारा ढुलमुलयकीन है। पहले चीनियों को देश भक्ति का पत्र लिखा, फिर देश त्याग का फैसला किया। बहरहाल तिब्बत की काया पलट होने में अब विलंब नहीं है।

तुम्हारी कविता में ''हम ही'' की जगह हमीं होना चाहिए। यह कविता छन्द-बद्ध होती यानी सानुप्रास तो ज़्यादा जमती।

कुल मिलाकर व्यंग्य बढ़िया है।

अच्छा, समालोचक के लिए लिखो। कचूमर न निकालूं गा। लेख बड़ा लिखना जिससे काटने पर भी छपने लायक रह जाय।

अभी घर बनने की नौबत नहीं आई। Plot के ऊपर से टेलीफोन के तार नहीं हटे। इति०

तु० रामविलास

Banda
1.6.59
Dear Doctor,

On my return from LKO yesterday I got your letter. I read if from one end to the other. I could know that you are master of arts of apologies. You first delay the matter and then later on beg for mercy. I don't think you deserve any kindness from me. Any how my lordship will this time excuse you for late replying and issue a writ of mandmus that you be always prompt in letter writing else all your estate will be forfeited. I think you will stay at Calcutta for one or two months and will look towards none but the books. I appriciate your conduct which knows no derailment. Wife is out, Munna is out. I alone attend the parade of life and perspire with love.

Yours,
Kedar

Calcutta-29
२४. ६. ५९

Your Lordship,

It is a matter of gratification to know that you read letters from one end to the other. Be so kind as also to make it clear as to which end you start from. Your lordship is gracious enough to note that his humble servant is a master of arts of apologies and graceful enough to forget his own Ph. D. in this line.

Milord's writ of Mandamus has arrived on a 5 N.P. post card. May I hope that the order forfeiting my estate would arrive in a [10] NP inlander?

I look at books only in the library except when I am disturbed by the chattring or whispring of unscholarly maidens around. As you are attending the parade of life alone, you may be commanding the poet—Slope arms (= Take up the pen); Stand at Ease (= lie down); Fire (= write a poem). Your lordship perspires, here I sweat. I am leaving for Agra on 30th.

रामविलास
ब. खु.

बांदा
५.७.५९
प्रिय डाक्टर,

तुम्हारा २४/६ का कलकत्ते का लिखा, पत्र मुझे बांदा में मिल गया था। तभी मुझे अपनी पुत्री किरन के ब्याह के सम्बन्ध में बातचीत करने तथा उसके रूमानिया जाने के लिए पासपोर्ट के लिए दिल्ली जाना पड़ा। मैं यहां से २९/६ को शाम को गया। वहां दौड़-धूप करता रहा। सबने प्रयास किया। पर अपने मित्रों का प्रयत्न सार्थक न हुआ। अन्त में मेरे सम्बंधी का प्रयास ही सफल हुआ और हम Joint Secretary का प्रमाण पत्र पा सके कि मेरी पुत्री विदेश जाने के योग्य है और उसे पासपोर्ट मिल जाना चाहिए। कल यहां उसके लिए गारंटार से लिखा कर स्टांप भेजना हूं [है]। इसी सब में व्यस्त रहा। दिल्ली में पता चला था कि तुम मेरठ जाने के लिए, ४/७ को पहुंच रहे हो। तभी मैं व नागर जी जवाहर चौधरी के घर तुम्हारी प्रतीक्षा करता रहा। शाम को मजबूर होकर वापिस चला गया। तुम न आए, न आए। शायद रात को वहां पहुंचे होओगे। हाल तो जवाहर चौधरी की गृह-स्वामिनी ने बता ही दिया होगा। इन्हीं सब कारणों से दुनियादारी की झंझटों में फंसा रहा और तुम्हारी शब्दावली में "Slope arms", "Stand

at ease" तथा "Fire" न कर सका। कविता दिमागी शांति चाहती है। वही नसीब नहीं थी अत: कविता नहीं लिख सका। कोई चिन्ता न करना। सब ठीक ही होगा। हां मिलते तो गले से लग कर रो ज़रूर लेता। परेशान बहुत था। एक बात संक्षेप में कहूं। मैं इस दुनिया के लायक कतई नहीं हूं। यह तो सारा ख़ून चूस लेना चाहती है। ख़ैर छोड़ो भी।

मैडम इलाहाबाद हैं। शायद ३/४ दिन में आयें। बेटा इलाहाबाद यूनिवर्सिटी में Science में admission कराने के सम्बन्ध में वहीं है। देखो होता भी है कि नहीं।

मैंने डिस्ट्रिक्ट Govt. Counsel की post के लिए बांदा में apply कर रखा है। यह मसला भी समय और शक्ति ले रहा है। पता नहीं क्या हो। अभी कोई भी तैनात नहीं हुआ।

मौसम कुछ बेहतर है। कल शाम थोड़ा पानी पड़ा है।

मेरठ में शादी सकुशल सम्पन्न हो गयी होगी। मैं रुक जाता पर मुझे बांदा में ६/७ को अपनी दरख्वास्त देना है और किरन का Guarantee form भराना है इसी से चला आया। बड़ा अफसोस रहा न मिल सकने का।

ललित के मसले में अभी कुछ नहीं हो सका। पर ताक में हूं। जब भी कभी कुछ वश चलेगा–प्रयास करूंगा ही। कह देना।

बेटिओं को प्यार।

बेटों को प्यार।

मलकिन को नमस्ते

तुम्हें यह पत्र।

तु० सस्नेह
केदार

१२ अशोक नगर,
आगरा
२८.७.५९

प्रिय केदार,

तुम पर क्रोध तो बहुत आया लेकिन तुम्हारा पत्र पढ़ कर काफ़ूर हो गया। पौने पांच के करीब शाम को उस दिन स्टेशन से स्कूटर करके सीधा गली डकौतान पहुँचा। मालूम हुआ, माई लार्ड अभी तशरीफ ले गये हैं। उस वक्त पौने पांच ही बजे थे। क्रोध इस बात पर आया कि जनाब की गाड़ी सात बजे जाती थी लेकिन हुज़ूर बिना रुके ही– या और ज़्यादा रुके बिना ही–कहीं चल दिये। कुछ देर में शिवनारायण श्रीवास्तव आये; उन्हें नरोत्तम के यहाँ भेजा लेकिन आप कहाँ मिलने वाले थे।

मेरठ में ब्याह के समय हमने मेरठ कालेज की Library का मुआयना भी किया। चार किताबें Military Science पर लाये। अभी उन्हें आाधा पढ़ा है। कलकत्ते की बटोरी हुई सामग्री भी कापियों में बंद है। इधर कालेज में औसत छः घंटे बीतते थे। अब टाईम टेबल बन गया है, एक खाली जगह पर जो सज्जन नियुक्त हुए थे वह भी आ गए हैं। गाड़ी अपनी पुरानी रफ्तार से चलने लगी है। इस बीच पोस्टकार्ड लिखे; लिफाफा कहीं न भेजा। अब ज़रा फुर्सत है। इसलिए यह!

मैला आँचल पढ़ा। उसके बाद परती : परिकथा जबर्दस्ती पढ़ी। रेणु अपने पहले उपन्यास में नीम प्रयोगवादी था। दूसरे में सोलहों कलाएँ पूरी हो गई हैं। इन उपन्यासों पर अगस्त अंक के लिए लेख लिखा है।

जवाहर की नौकरी छूट गई हैं—उसी दिन जब हम वहाँ पहुँचे थे। लेकिन वह काफी उत्साह में था और बहादुरी से स्थिति का सामना कर रहा है।

तुमने लिखा है—कविता दिमागी शान्ति चाहती है। मुझे लगता है—शारीरिक शान्ति—यानी कामधाम से फुर्सत—और भी आवश्यक है। तुम वकालत करते हुए कविता लिख लेते हो, यह मेरे लिए सदा चमत्कार का विषय रहा है। मुझे मानसिक शान्ति तो प्राप्त है लेकिन सबेरे से शाम तक काम के मारे शरीर को एकाग्र नहीं कर पाता—जैसे लोग मन एकाग्र करते हैं। और कविता के लिए शरीर शान्त, संतुलित, दैनिक उत्तरदायित्व से मुक्त होना चाहिए। सो नौ मन तेल जुटता नहीं!

यह ठीक है कि तुम दुनिया के लायक नहीं हो। वह सारा खून चूस लेना चाहती है। यहीं इतिहास मदद करता है। जब से सन् सत्तावन पर पढ़ना शुरू किया है, लगता है, मेरी मुसीबत कुछ नहीं हैं। परेशान तो करती हैं मुसीबतें लेकिन उन लोगों की मुसीबतें जो जंगलों में भटकते फिरे, कभी खाना नसीब, कभी खाली पेट, और खाने से ज़्यादा कीमती गोली बारूद नहीं, उनके जाने-पहचाने मित्र पकड़े जाते हैं, फांसी के तख्ते से लटका दिये जाते हैं, या तोप से उड़ा दिये जाते हैं, लखनऊ गया, दिल्ली गयी, झांसी गयी लेकिन वाह री हिम्मत, ऐसे लड़ रहे हैं मानों इनकलाब अभी शुरू हुआ है!

अच्छा मेरी नयी किताब में सौ वर्ष पहले के भारतीय सूरमाओं के दाँवपेंच देखना।

ललित भोपाल में है नौकरी की तलाश में। शोभा ने Iyr में Science लिया है।

आशा है तुम्हारी श्रीमती जी प्रयाग यात्रा से वापस आ गई हों गी।

तुम्हारा
रामविलास

बांदा
११.८.५९

प्रिय डाक्टर,

'समालोचक' के लिए जब कोई लेख लिख भेजूंगा तब तुम्हारे, पिछले अंकों के,

लेख और विचार पढ़ूंगा। अभी तो वह इस ध्येय से मेरे पास नहीं आ रहा—जब से उसका विशेषांक फरवरी में निकला—कि मैं free copy लेने के [का] स्वभाव न डाल लूं। तुम्हारे प्रकाशक बड़े समझदार हैं और अपने समालोचक-मंडल के लेखकों से काफी सहानुभूति और उदारता से पेश आने के आदी जान पड़ते हैं। आखिर हैं भी तो मेरे [मेरी] जाति के। बेचारों ने पैसा कमाने के लिए पत्र निकाला है कि लेखकों को अपनी तेरही और वार्षकी खिलाने के लिए। सच पूछो तो डियर अखर गया है 'समालोचक' का तब से न आना और अगर आया भी तो शायद दो-एक बार ही। यह इसलिए नहीं लिख रहा कि तुम उसके कान पकड़ो। चलने दो उसको जैसे चले। हिन्दी के प्रकाशक तो निराला को चाभ बैठे, वही परम्परा है इधर भी। बस तुम बचे रहना। यह भी न सोचना डियर कि केवल ४/- रु० वार्षिक बचाने के लिए मैं इतना तूमार बांध रहा हूं। ऐसा भी नहीं है। तुम जानते हो कि जो प्रकाशक आत्मीयता स्थापित नहीं करता वह अपने पत्र के लिए किसी भी लेखक से अच्छे लेख नहीं लिखा सकता। क्योंकि हम तो व्यवसायी लेखक नहीं हैं। हम सभी लिखते हैं जब जनाब लिखवाते हैं। टके का लिहाज किया गया कि लुटिया डूबी प्रकाशक का [की]। बड़े धैर्य और सहयोग की भावना से पत्र चलते हैं और त्याग तो लागू ही रहना चाहिए।

रेणु मुझे कभी अच्छा न लगा। मैं तो उनकी दोनों पुस्तकें पढ़ ही नहीं पाता। गाड़ी आगे नहीं घसिटती। वैसे हम उन उपन्यास-सम्राट से अपनी इस कमजोरी की माफी मांगने को तैयार हैं। उनके उन गोलन्दाजों से भी क्षमा के प्रार्थी हैं जो उन्हें बलात् हिन्दी के महान कथाकार प्रेमचन्द के ऊपर, बैठाते हैं।

मैंने जवाहर को पत्र लिखा है। उसका भी पत्र आया है। वह उपन्यास चाहता है। बड़ी टेढ़ी खीर है। जम कर बैठना और कलम घिसना तब, जब कचहरी से चुस कर आओ, यह कैसे होगा। फिर भी दोस्त के लिए हड्डियों पर, दिल और दिमाग़ पर ज़ोर डालूंगा।

तुम शरीर एकाग्र नहीं कर पाते। मैं मन को एकाग्र नहीं कर पाता। तुम्हारा तन मजबूत है। हमारा मन घुमक्कड़ है ससुरा, फिरा करता है इधर-उधर।

गदर का इतिहास लिखते और पढ़ते रहने के कारण जनाब हमें भी जंगलों में भटकाना चाहते हैं और वीरों की परम्परा में तपाना चाहते हैं। लाजवाब बात है—डियर यह। मगर केचुआराम भिंभीरीराम, गतियल महाराज भला शेरबाज सिंह, समरजीत सिंह इत्यादि इत्यादि कैसे हो सकते हैं। हम बीसवीं सदी के—खासकर नेहरू-युग के और इंदिरा के कांग्रेसी-छाप-युग के—बतकही से बौरा कर रक्खे गये बूढ़े नौजवान हैं जो घर-गिरस्ती के चक्कर में छछूंदर बने चूं-चूं किया करते हैं। हम घोड़े पर चढ़ेंगे तो टांग टूट जायेगी। शायद घोड़ा भी हमें ले जाने से इनकार कर देगा। आख़िर वह भी तो स्वाभिमानी जीवधारी है। हम ठहरे कायर, निकम्मे, यह ठहरा उड़नबाज बहादुर चौपाया। बात बहुत बड़ी है। यहीं छोड़ता हूं। मगर तुम्हारी बात तो मान कर हिम्मत

बांधे रहता हूं। उन वीरों को याद करता हूं, सिर झुकाता हूं जो लड़े और वन-वन भटके। वह मेरे जीवन और प्राण के प्रेरणा-स्रोत हैं। तुम्हारी पुस्तक ज़रूर पढ़ूंगा जब छाप कर भेजोगे।

दो दिन से पानी छलाछल बरस रहा है। ख़ूब मजा है। हम भी छप्प छप्प हैं। सबको यथायोग्य।

सस्नेह तु० केदार

प्रिय केदार, [३१-८-५९]

तुम्हें ''समालोचक'' नहीं मिलता, इसी से ज़ाहिर है कि वह बन्द होने जा रहा है। दो दिन हुए अमृतलाल नागर आये थे। उन्होंने बताया उन्हें भी नहीं भेजा जाता। हमारे प्रकाशक ने राजामंडी में एक नयी दूकान खोल ली है। मासिक पत्र में क्या मुनाफा होता है? सो दूसरा वर्ष पूरा करके बन्द। बहरहाल बन्द होने के बाद एक बार तुम्हारे देखने के लिए दूसरे वर्ष के अंकों की व्यवस्था कर दूँ गा।

तुमने लिखा है कि ''हिन्दी के प्रकाशक तो निराला को चाप [चाभ] बैठे—बस तुम बचे रहना।'' यह बात निराला जी के दर्शन करने के पहले ही बहुत कुछ समझ चुका था। एम. ए. करने के बाद जब रिसर्च कार्य आरंभ किया और उनके सम्पर्क में आया तब बात और भी स्पष्ट हो गई। इसलिये साहित्य लिखने से पेट भरे गा, ऐसा कभी नहीं सोचा। हम अवैतनिक सम्पादक हैं। इसलिये प्रकाशक की धौंस में नहीं। लेख का पारिश्रमिक मात्र लेते हैं जैसे और लेखकों को मिलता है। इसलिये हमारे बचने का सवाल नहीं उठता। प्रौफेसरी की चाप दूसरे ढंग की है; उससे अवश्य नहीं बच सकते। लेकिन लगता है, अभी तक तो उसने मुझे ज़्यादा नहीं बिगाड़ा।

आजकल शरीर खूब स्वस्थ है। मन में उमंग है। ज़रा गर्मी कम हो तो कविताएं लिखूं। यह शिशिर-हेमन्त खाली न जायँगे। रेडियो से Indian Europian classical Music खूब सुनता हूँ। मन मस्त हो जाता है।

अपना हाल लिखो।

तुम्हारा रा० वि०
३१-८-५९

बांदा
१.९.५९
डियर,

अभी कचहरी से आया तो तुम्हारा बहुप्रतीक्षित पत्र मिला। तुम मस्त हो चोला चैन में हैं और मन [में] उमंग है—यह जान कर बेहद खुशी हुई और हम भी तुम्हारी तरह

रंग में हैं। अपनी मस्ती का सस्ता प्रभाव नीचे लिखी हुई कविताओं से तुम तक भेजता हूं।

१. श्यामकाय प्रभविष्णु मेघ जो प्राकृत नट हैं
धीर, वीर, गम्भीर और निःशंक निपट है
महाभूत उस पूर्ण पुरुष से विद्युत-बनिता
हेर-फेर मुख लिपटी-छूटी क्षण-क्षण चकिता

दूसरी रचना है :—

२. अपने घन हैं
यद्यपि ये तम-आवृत घन हैं
फिर भी ज्योति यही घन देंगे
जब बरसेंगे जल बरसेंगे
पर उपकारी
ये नभचारी प्राकृत घन हैं।
अपने जन हैं
यद्यपि ये अध-जागृत जन हैं
फिर भी दृष्टि यही जन देंगे
जब सिरजेंगे सुख सिरजेंगे
युग-अवतारी
ये थलचारी प्राकृत जन हैं।

कहो कैसी रहीं ये कविताएं? मिस्टर ये अभी की हैं। ताजा हैं।

यह जान कर अवश्य खेद हुआ कि समालोचक बंद होने जा रहा है। यह तो बज्रपात ही होगा। यह वह हथियार था जो सही माने में भ्रम को मार भगाता था और स्पष्ट दृष्टिकोण को सही अर्थ में प्रस्तुत करता था। वह दिन बड़ा ही बुरा होगा जब इसका प्रकाशन बंद कर दिया जायेगा। निश्चय ही आलोचना के मूल्यांकन से सम्बंधित साहित्य के विकास की सबसे मजबूत कड़ी टूट जायेगी। गुलेरी जी की आत्मा को अवश्य ही दुःख होगा। तुम कर ही क्या सकते हो, जब पेटू प्रकाशक पैसे की ओर पूरी तरह से घसिटते हैं और साहित्य की ओर बहुत कम। वे तो केवल साहित्य के क्षेत्र में प्रवेश पाने के लिए ऐसे प्रकाशन करते हैं और जब वह अध्याय पूरा हो जाता है और टके बटोरने का दरवाज़ा खुल जाता है तो साहित्य पर लात मार कर उसे देखते तक नहीं। मुझे तो याद हैं 'मतवाला' के महादेव सेठ। वाह रे दिलेर। खूब थे वह। खूब थी उनकी साहित्य-निष्ठा। अब के प्रकाशक उनकी श्रेणी में बैठने के क़ाबिल ही नहीं हैं।

नागार्जुन की 'सतरंगे पंखों वाली' आयी है। कुछ कविताएं आस्वाद बढ़िया देती

हैं। कहीं व्यंग [व्यंग्य] है कहीं छिपा हुआ स्नेह। कहीं आम की वौरों [बौरों] पर भौरें टूटते है तो कहीं सहजन की तुनुक डालियों के मुरुक न जाने का भय भी होता है। बहुत दिनों के बाद पकी सुनहरी फसल देखने पर जो उल्लास होता है वह अपनी सादगी में ही कमाल करता है। 'तन गयी रीढ़' भी उम्दा चीज़ें [चीज़] है। इसमें किसी की हथेली का स्पर्श, नाक की उष्ण सांस का कंधों पर प्रभाव डालना, निगाहों के जरिए अन्दर पैठना, अलकों की सुगंध के आते ही रग-रग में बिजली का दौड़ना और हर बार रीढ़ का तन जाना उस हृदय की रसिकता और शौर्य का परिचय देता है जो साहित्य के क्षेत्र में मरा-खपा जाता है। मुंह से गालियों का निकलना भी, कमल से, काले भौंरों का निकलना है—बढ़िया उक्ति है। पुस्तक बढ़िया गयी है। मिले तो पढ़ना।

दूसरी पुस्तक शमशेर की आयी है। नाम है 'कुछ कविताएं'। यह भी अपना मित्र अजीब कवि है। संग्रह समर्थ कवि नरेन्द्र को भेंट किया गया है। पहली कविता 'निराला के प्रति' है। अन्तिम कविता अज्ञेय को सम्बोधित की गयी है। देखा तुमने नरेन्द्र और निराला के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करके तथा निराला को, राह से भटकने पर, पथप्रदर्शक के रूप में देख कर, और अज्ञेय के प्रति आत्मीय हो कर मेरे इस प्यारे मित्र ने किस सफाई से इन सब की परम्पराओं की और उनके कृतित्व की दाद दे दी है। मगर अगर कोई यह सोचे कि मेरे यार ने उनकी खूबियों को अपनाया है तो उसे [इसमें] उसके कोई लक्षण न मिलेंगे। समूचा काव्य संग्रह 'शमशेरियन' है। एक कविता तो १.५ [डेढ़] साल में तैयार की गयी है। इसके मतलब हैं कि जनाब इन कविताओं पर कस कर मेहनत करते हैं और तब ऐसी चीज़ें देते हैं। कई बातें उठ खड़ी होती हैं इनके पढ़ने के बाद। शमशेर का कोई सम्बन्ध अपने पास के और दूर के कोलाहल पूर्ण और संघर्षरत जग से नहीं रह पाता। वह 'ग्वालियर कांड' से प्रभावित होते हैं तो जैसे शाम के उठते हुए धुआं को सुलगते देखते हैं। वे वहां की हवा को मजूर का हृदय सोखती पाते हैं। लाल निशान को चलते देखते हैं तो रोटियां टंगी हुई समझते हैं (यानी आंइदा वे रोटियां देंगे)। का० भारद्वाज की शहादत पर उनका कलाम भी ऐसा ही है। मेरा मतलब यह है कि हज़रत की कविताएं अपने 'स्वयंवाद में रह कर ही बाहर की बहुत खामोश आवाज़ सुनती हैं और कुछ-कुछ अपनी ही रेखाओं के रूप में सामने आती हैं। चांदनी के बेठोस महातल के मौन में चलने की कल्पना भी यही हमारे प्रिय बंधु कर सकते हैं। परन्तु कहीं कहीं उम्दा तरीके से बात कह दी गयी है। उषा की पानी में हिलती प्रतिच्छवि को किसी गौर देह का प्रतिबिम्ब कहा है, इस ऊंचे फकीर कवि ने। सूर्योदय को देख कर कहता है कि इस उषा का जादू टूट रहा है। रेडियो पर योरोपीय संगीत सुन कर कहता है यह कवि : ''परदों में—जल के—शांत / झिलमिल झिलमिल / कमल दल।''

व्यक्त करने का तरीका बहुत ही छोटा है। मगर कभी-कभी बात बन जाती है। कुछ ज़ोरदार पंक्तियां देखो :

''यह समंदर की पछाड़
तोड़ती है हाड़ तट का–
अति कठोर पहाड़।''

फिर हजरत मूसा कहते हैं :–

''पी गया हूं दृश्य वर्षा का :
हर्ष बादल का
हृदय में भर कर हुआ हूं हवा-सा हलका!''

देखा न तुमने कि प्रकृति भी इसे अनुभूतियों से भरती है। 'दिन' की खूबसूरती पर भी वह रीझा है मगर उसे 'किसमिसी गोरा रेशमी' देख सका है। उसकी पंखुड़ियों के तले मोतियों की आब छिपी है। 'एक सलोना जिस्म' साहित्यिक है और अनुभूति से भरी है। देखो,

''उसकी खुली अंगड़ाइयां हैं
कमल के लिपटे हुए दल
कसे भीनी गंध में बेहोश भौंरे।''

जहां स्त्री का स्पर्श हुआ कि मिस्टर घुल जाते हैं। बात कमल के दलों की और भौंरे की है मगर है मिस्टर कवि की।

मैं कह सकता हूं कि शमशेर सब से कटे हुए, इस भ्रम में हैं कि कविता का क्षेत्र और है और संसार और। कविता वहीं है जहां कवि अकेला हो कर हर पंखुड़ी पर सुबह की चोट देखता है। शायद यही विश्वास शमशेर को 'स्वयंवादी' रचनाएं लिखने में प्रगति और परम्परा दोनों से बरकाये रहता है। शमशेर की कविता सब की समझ में आयेगी ही नहीं और वह भी बहुत कम पढ़ी जायेगी। अच्छा तो, राम राम।

सस्नेह तुम्हारा
केदार

१२, अशोक नगर,
आगरा
१०-१०-५९

प्रिय केदार,

अभी ललित ने नागार्जुन के संग्रह से वह कविता पढ़ कर सुनानी शुरू की जिसमें तुम्हारे पके बालों का ज़िक्र है और हमें भी अपने पके बाल याद आ रहे हैं। क्योंकि आज ४७ पूरे हो रहे हैं और साथ में चाँद भी गंजी होती जा रही है।

रेडियो में शहनाई बज रही है। और श्रीमती चौके में सिवँइयाँ भून रही हैं। भूख

भी लग रही है। दूध–सिवँईयों के नाश्ते का इन्तज़ार है। सबेरे घूमने गये। कसरत की। उसके बाद पहला काम तुम्हें पत्र लिखने का कर रहे हैं।

२४ अक्तूबर को हम दिल्ली हों गे। तुम कभी-कभी असंभावित रूप से उधर आ जाते हो–इसलिये पहले से लिख रहा हूँ कि शायद ....। और नवंबर में तीन-चार दिन के लिये झांसी जाने का प्रोग्राम है। जब कालेज में परीक्षाएँ आरंभ हों गी तब छुट्टी लें गे। क्या तुम उधर...?

अगर आने की संभावना हो तो लिखना किन तारीखों में आ सको गे। वर्मा जी के साथ नदी-झील-वन-पर्वतों की यात्रा का कार्यक्रम है।

तुम्हारी ताज़ी कविताएं पढ़.कर परम प्रसन्नता हुई। वे इतनी ताज़ी हैं मानों बाग से किसी ने गुलमेंहदी के दो फूल तोड़ कर मेज पर रख दिये हों। लेकिन अपन को तो Quality के साथ Quantity भी चाहिये। हे तम-आवृत घन, नभचारी प्राकृत घन-बरसो।

'सतरंगे पंखों वाली' के बारे में तुमने सब कुछ ठीक-सटीक लिखा है, इतना कि हमने अपनी रिव्यू में तुम्हारा पूरा पैरा उद्धृत कर दिया है। बस।

मिलनोत्सुक
रामविलास

बांदा
२७-१०-५९
प्यारे डाक्टर,

१०/१० का पत्र सामने है। अड़तालिसवें साल में आ पहुंचने के लिए हम दोनों की बधाई। शरद का सिंगार और हास लेकर तुम्हें पुनीता प्रकृति ने उस दिन शुभाशीष दी होगी। इस चांदनी के [की] रितु [ऋतु] में पैदा हुए हो। तभी-तो जो कुछ लिखते हो वह प्रकाशमय, बुद्धि और विवेकमय और जीवनमय होता है।

चांद गंजी होने का तात्पर्य है कि बुजुर्ग बन रहे हो। बुजुर्ग बनने का मतलब है कि शीघ्र ही घर के बाहर खाट डाल दी जायेगी और आप वहीं आलू-चना चबाया करेंगे और घर में बाल-बच्चे मालपुआ खायेंगे। मगर मैं जानता हूं जैसी बुजुर्गी आप में है, बड़े-बड़े नौजवान [तुम्हारे] तेज और ताब के सामने हार मान जायेंगे। बाल तो बादल हैं और गंजी चांद सोने का उल्टा तवा जिस पर लक्ष्मी जी का नाच होता है या कि मंद स्पर्श से उंगलियां थिरकती हैं।

अभी हम गंजे होने से बचे हैं। बाल घने हैं।

हम दिल्ली नहीं पहुंचे और न आइन्दा जल्दी पहुंचेंगे। झांसी कब आओगे–तारीख की सूचना देना। तब मेरे पहुंचने की सम्भावना हो सकती है।

Quality के साथ Quantity भी चाहिए। ठीक है। लम्बोदर हो न। गन नायक हो न। हम हैं तिन्नी के पेड़ कि थोड़ा सा [सी] प्राकृतिक तिन्नी देकर धन्य हो जाते है वनवासियों को। फिर भी हवा खा कर जी लो डियर!

लम्बे पत्र की इच्छा थी मगर गड़बड़झाला है–घर में बिजली लग रही है। अब हम भी पत्रों में करेन्ट मारेंगे। सब को सनेह–

तु०
केदार

बांदा
११-१२-५९
प्रिय डाक्टर,

बहुत दिन हो गए कि कोई पत्र नहीं आया। झांसी हो आए होगे–वन-विहार ख़ूब हुआ होगा। लेकिन तुम हो कि उस आनंद की एक झलक भी तुमने हमें नहीं भेजी। ख़ैर।

हम इधर उलझनों में रहे। मगर कविताएं भी लिखते रहे। वैसी ही जैसी हमेशा लिखते रहे थे। कभी-कभी जी चाहा जरूर कि आगरा उड़ चलूं मगर टके की तरफ से कमजोर होने के कारण यहीं पंख समेट कर रह गया। बनारस जाना था वहां भी न गया–पितामह की मृत्यु हो गई थी तभी।

कभी निराशा से कुछ लिखा है कभी-कभी आशा से लिख सका हूं। दोनों व्यक्तित्व फूट पड़े हैं। वाल्मीकि पर एक व कालिदास पर एक-एक कविता समर्पित कर सका हूं। मगर कुछ लम्बी पड़ती हैं। इससे नहीं भेज रहा।

एक रचना यह है। देखो :

१. हम यहीं रहते हैं
न पूछो : कहां?
मनस्वी आकाश के नीचे,
नदिया पहाड़ों के बीच,
दुधार नदियों के साथ,
खेलते–
हंसते–
गाते–
जीते।

यह है हमारे यहां का यथार्थ फिर भी हम हंसते हैं।

दो और रचनाएं ये हैं :–

२. ओस के संवेद्य मौनाकाश में हो,
या सुगंधों की सुखावह सांस में हो,
हो–न–हो यह जिंदगी मेरी कहीं अटकी हुई है।
छोड़ता हूं–छोड़ती मुझको नहीं तलवार मेरी।
बह रही है धार मेरी–उठ रही ललकार मेरी॥

३. दल–बंधा मधु–कोष–गंधी फूल मंदिर मौन का है
रूप, जिसकी अंजली से,
काल की सांकल हटा कर खुल गया है।
रश्मिों का रथ वहीं पर रुक गया है।[1]
गंध पीने के लिए नभ भी यहीं पर झुक गया है।

४. टुइयां थी एक चतुर बोल गयी।
पतझर में छंद–अर्थ खोल गयी॥
सागर पर एक तड़ित तैर गयी।।
मिनटों में अंधकार पैर गयी॥
आया था संकट घन मार गया।
फूलों की छड़ियों से हार गया॥

अच्छा तो अब सलाम। अब मौन तोड़िये और कुछ लिख भेजिये।

आशा है कि मज़े में हो, सब लोगों सहित। हम वैसे ही हैं।

अब बिजली लग गयी है इससे पढ़ना–लिखना जम कर हो जाता है।

कहिए, कविताएं, लिखीं या नहीं? पत्र का बुरी तरह इन्तज़ार है। बच्चों को प्यार।

सस्नेह तु०
केदार

---

1. अब यह पंक्ति इस रूप में प्रकाशित है—'रश्मियों का राग–रंजित रथ यहीं पर रुक गया है'। [अ० त्रि०]

[१२ दिसम्बर ५९]

॥ श्री ॥

वे सूरतें इलाही किस मुल्क बसतियां हैं।
अब जिनके देखने को आंखें तरसतियां हैं।

माई डियर! आगरे से बाँदा उतनी दूर नहीं जितनी दूर गोकुल से मथुरा था। फिर भी मुलाकात क्यों नहीं होती? मैं २६ दिसम्बर के लगभग झांसी जाऊं गा। क्या तुम दो एक दिन को उधर आ सको गे? वर्मा जी के साथ घूमें गे। खेतों की सैर करें गे। जंगल की हवा खायें गे। एक बार फिर झांसी का किला देखें गे। और तुम्हें सौदा की कविताएं सुना यें गे। मालवे की चाँदनी रात देखी है? उसी से मिलती-जुलती ये कविताएँ हैं। अभी निगम नामक एक सज्जन आये थे। मालवी में बहुत अच्छी कविताएं लिखते हैं। उनके साथ गर्मियों में मालवा घूमने का प्रोग्राम बनाया है। सुना है, उधर मई-जून में लू नहीं चलती। क्या राय है? खैर, वह तो दूर की बात है। यह साल ख़त्म होने से पहले मिलना है ज़रूर। तुम्हारी कचहरी सुसरी ईसामसीह की शहादत के तुफैल में बंद होती है या नहीं? होती है तो कब, कितने दिन को—ज़रूर सूचित करना। और हां, मैं १८ दिसम्बर को दिल्ली जाऊं गा। उस दिन के आस-पास तुम तो उधर न आओ गे?

अब सौदा की हिन्दी देखो—

जिन्हों की छाती से पार बरछी
हुई है रन में वो सूरमा हैं
बड़ा वो सावंत मन में जिसके
बिरह का कांटा खटक रहा है
मुझे पसीना जो तेरे मुख पर
दिखाई दे है तो सोचता हूँ।
ये क्यों कि सूरज की जोत आगे
हर एक तारा छिटक रहा है।

प्यारे, इस तरह की हिन्दी लिखो तब कविता वैसे ही गांव-गांव में पढ़ी जाय जैसे ब्रजभाषा के कवित्त लोग पढ़ते हैं। और भी—

आवे गा वह चमन में तड़के ही मै कशी को।
शबनम से कह दे बुलबुल गुल के पियाले धो ले।
ऐसा ही जाऊं-जाऊं करते हो तो सिधारो।
इस दिल पै कल जो होनी सो आज ही वो हो ले।

लगता है ग़ालिब की ज़बान में भी इतनी मिठास नहीं है; पढ़ कर बंगाल के वैष्णव कवियों की या फिर अपने सूरदास की याद आती है।

एक सज्जन मुझसे तुम्हारा कविता संग्रह मांग ले गए थे। नई कविता उनकी समझ में नहीं आती। मेरी कविताओं को वह प्रयोगवादी समझते हैं। पढ़ कर बोले—यह एक ऐसी किताब मिली जिसकी कविताएं समझ में आती हैं। सो बधाई लो। और बांदा की रमणीयता का क्या हाल है?

तु० रामविलास

बांदा
२०.१२.५९

प्रिय डाक्टर,

मैं पत्र लिख ही चुका था। वह पहुंचा ही होगा। इधर जनाब का ख़त आ पहुंचा। तुरन्त ही उत्तर देता मगर सोचता रहा कि शायद मेरा पत्र आने पर फौरन दूसरा पत्र लिख मारो। इसी से अब कई दिन इन्तज़ार करने के बाद यह पत्र लिख रहा हूं।

यह लिखो कि किस तारीख को कै बजे तुम झांसी पहुंच रहे हो ताकि मैं भी उसी दिन वहां पहुंचू और यह भी सूचित करो कि कहां—किस पते पर मैं पहुंचूं। ज़ोर का इन्तज़ार है। वैसे कानपुर का [में] २७/१२ का [को] चक्र अभिनंदन के लिए बुलाया गया हूं पर झांसी का मोह अधिक है—तुम्हारा और वर्मा जी का साथ फिर नहीं मिल सकेगा। इससे कानपुर न जा कर झांसी पहुंचूगा। कानपुर में तो कोई-न-कोई कार्य-सम्पन्न कर ही देगा। दिल्ली तो हो आए होगे? वहां के हाल मिलने पर ही बताना। मैं तुम्हारे लिए और वर्मा जी के लिए ही Lawyer's Conference के लिए प्रयाग नहीं जा रहा। वैसे तो छुट्टी तुम्हारी कई दिन की होगी। झांसी पहले क्यों नहीं पहुंच रहे। अगर झांसी का प्रोग्राम ठीक न हो सके तो यहीं चले आओ, डियर। पर मिलो ज़रूर। सौदा की कविताएं हम ज़रूर सुनेंगे और झूमेंगे। मगर तुम सुनाना।

तु० केदार

१२, अशोक नगर,
आगरा
२६-१२-५९

प्रिय केदार,

हमने तुमने एक दूसरे को शायद एक साथ ही चिट्ठियाँ लिखी हों गी। इस बीच हम झांसी तो नहीं दिल्ली हो आये। टाक रिकार्ड कराने गए थे। विषय है—साहित्यिक अनुवाद की समस्या। ब्रौडकास्ट होगी २८ दिसम्बर को इन्दौर से। तुम्हारे मित्र दुष्यन्त कुमार से मुलाकात हुई। भारत भूषण, सत्येन्द्र शरद, राजेन्द्र यादव वगैरह का

प्रयोगवादी-प्रगतिशील जमघट आजकल दिल्ली में है। PPH से भाषा वाली[1] पुस्तक लिखने का कान्ट्रैक्ट हस्ताक्षरित हो गया है। सो उसे इस बार लिख ही डालें गे। और कविता के आसमान से उतर कर हम शब्दों की धरती पर रेंग रहे हैं।

'समालोचक' का अंतिम सम्पादकीय लिख कर ज़रा फुर्सत से अँगड़ाई ले रहे हैं। झांसी वालों ने १२ ता० तक बुलाया था[1] मैंने उन्हें २४ के बाद किसी दिन बुलाने को कहा था। वर्मा जी ने लिखा था कि वे (Students) शीघ्र ही लिखें गे कि कब आऊं लेकिन उनका कोई पत्र नहीं आया। इसलिए झांसी जाना स्थगित है। शायद अब मार्च में जाऊं। तब सर्दी भी कम हो गी।

इधर अमरकान्त का 'सूखा पत्ता' और भैरव प्रसाद का 'सती मैया का चौरा' –ये दो उपन्यास पढ़े। पहला बहुत बचकाना है। दूसरा थुलथुल लम्बोदर है–एकदम पोला।

तुम्हारी तीसरी चौथी कविताएं–'दल बंधा मधुकोष गंधी' और 'टुइयां थी एक चतुर'–बहुत अच्छी लगीं। लेकिन हमें इतने से सन्तोष नहीं। लंबी कविता भेजो जिस पर कुछ देर तक मन जमा रहे।

मैं झांसी न जा सका तो बांदा आऊं गा लेकिन ज़रा विलंब से। यह किताब का पूरा काम पूरा हो जाए।

तुम्हारा–रामविलास

Ashok Nagar
Agra
22.2.60

प्रिय केदार,

बहुत दिन से तुम्हारा समाचार नहीं मिला। क्या बात है?

२६ फर्वरी शुक्रवार को मेल से तीन बजे झांसी पहुँचूँ गा–भगवानदास माहौर, ६९/१ टौरिया नरसिंह राव, शहर के यहां या सत्यदेव वर्मा उर्फ सक्कन के यहां–मानिक चौक से थोड़ी दूर। २७ को हम कालेज में भाषण करें गे और २८ को ओरछा-बेतवा की सैर। २९ को वापस। कचहरी से नजात मिले तो आ टपको.... आनन्द रहे गा।

तुम्हारा
रामविलास

---

1. भाषा वाली पुस्तक—'भाषा और समाज'।

बांदा
२३.२.६०

प्रिय डाक्टर,

अब अधिक चुप नहीं रह सकता। तुम्हें जिंदगी भर किताबें लिखना है। जिंदगी भर तुम शब्दों के धरातल पर रेंगोगे। मैंने सोचा कि पत्र भेज कर तुम्हें न छेड़ूं और अब तक चुप रहा। मगर तुम अपना काम छोड़ोगे नहीं और मैं हूं कि अब मौन नहीं रह सकता। कैसे मनहूस हो कि बंद कमरे में शब्दों के साथ खेलते-कूदते हो और बाहर के मैदान में आकाशी छलांग नहीं लगाते। देखो मौसम की मुसकान और रंगीन जामा। मस्त हो जाओगे। दिन गरम होने लगे। जैसे तुम्हारे घर का गरम हलुआ। शामें दिल पर उतर आती है पंखों के रंग फड़फड़ा कर बसेरा लेने के लिए। सुबहें बड़े शर्म से लाल रहती हैं, रात कहीं बसी रहने के कारण। हवा में और पानी में जो शीतलता रहती है वह बड़ी ही प्रिय है। काश मैं भी आगरे में होता तो तुम्हें घसीट ले जाता धूप के पास। अच्छा महाशय जी, अब किताब लिखना बंद कीजिए हम ऊब रहे हैं।

सस्नेह तु०
केदार

१३.४[६०]

प्रिय वकील साहब,

किसी कारणवश दिल्ली तो नहीं जा रहे हो? मैं १९/४ को पहुँचूं गा—शाम के ४-५ बजे। २३ तक रहूं गा। आ जाओ तो क्या कहने हैं?

आजकल आधा दिन पुस्तक लेखन में आधा दिन कापियाँ जाँचने में लगता है।

तु०—रामविलास

बांदा
१५.४.६०

हां जी जनाब प्रोफेसर साहब,

तो आप १९/४ को दिल्ली पहुंच रहे हैं। हम यही कह सकते हैं कि बहुत ख़ूब। आप वहां २३/४ तक ठहरेंगे भी। यह और भी बहुत ख़ूब है। आप चाहते हैं कि हम भी वहां हाज़िर हों सो यह नामुमकिन है। हम कचहरी की ख़ाक छानने वाले भला दिल्ली की धूल क्या फांकेंगे। इस धूल में बड़े-बड़ों का धर्म-ईमान मिलता है। वहां तो ख़ाक में ख़ैरात बंटती है। हमें आप सुस्त न समझें, हम चुस्त हैं। वजह न आने की है। माकूल है। यही कि हम डैमफूल नहीं बनना चाहते। मगर आप यह न समझें कि आप भी यही बन जायेंगे। आप आगरे के हैं। आग ले कर शुद्ध हो जायेंगे। हम बांदे से दौड़ेंगे

तो कचर जायेंगे। बड़ी लम्बी राह है जैसे किसी नेता के चौड़े कपार का विस्तार और उसमें पड़ी रेखाओं में दौड़ रहा सारा देश।

आपने दिन को दो कर दिया। पुस्तक लेखन भी ज़रूरी है—कापियां जाचना भी। समय व्यस्त है न। हम तो कुछ नहीं करते। धैर्यधन की तरह किसी मुअक्किल के आगमन में आंखें फैलाए रहते हैं। अच्छा राम-राम। सबसे नमस्ते कहना डियर।

तु०
केदार

बांदा
१४.५.६०
प्रिय डाक्टर,

कल कचहरी से लौटा तो प्रिय ललित की शादी का सुन्दर-सा निमंत्रण पत्र मिला। पढ़ कर पढ़ते ही रह गया। बहुत ही खुशी हुई। मैं चलूं तो कैसे जब मुझे बम्बई जाने के लिए रोज़ पत्र या तार का इन्तज़ार है क्योंकि बेटी किरन के भावी पति रूमानिया से शायद १८ मई तक आने वाले हैं। तार मिलते ही बम्बई जाऊंगा। मुझे अफसोस है कि बारात में न जा पाऊंगा वरना तुम्हारा रोब-दाब देखता [।] चिरंजीव ललित और आयुष्मती दया शर्मा को मेरी और मेरे कुटुम्ब के सदस्यों की बधाई और मंगल कामना।

वहां से लौट कर बारात के हाल-चाल लिखना। अब तो बहू के आ जाने पर जनाब का डेरा बाहर ही रहेगा?

सस्नेह तु०
केदार

बांदा
२४.७.६०
प्रिय डाक्टर,

बेटी किरन का व्याह [ब्याह] दिनांक ८.८.६० को किसी समय दोपहर के पूर्व Special Marriage Act के अन्तर्गत हो रहा है। तुम्हारी उपस्थिति अनिवार्य तथा वांछनीय है। यह आग्रह विशेष है।

शेष सब वैसा ही है जैसा था। मैं २ दिन हुए २ दिन दिल्ली रह कर वहां से लौटा हूं। मुंशी से भेंट की थी। नागर जी भी मिले थे। हालचाल मालूम हुए थे। तुम्हारी पुस्तक वाप्स्तरोव की कविताओं का अनुवाद, देखा था।

आशा है कि आनंद सहित हो।

सस्नेह तुम्हारा
केदार

१२, अशोक नगर,
आगरा,
३०.७.६०

प्रिय केदार,

बेटी किरन के ब्याह का समाचार सुन कर प्रसन्नता हुई।

यहां पर लड़के नहीं हैं, केवल लड़कियां हैं और उनकी मां हैं। हमारी कॉलोनी में दो-तीन जगह अभी हाल में चोरियाँ हुई हैं। सब लोग आतंकित हैं। इस समय इनको छोड़ कर कहीं जाना उचित न हो गा। आशा है, परिस्थिति की यह विवशता समझ कर मुझे क्षमा करो गे।

तुम्हारा
रामविलास

बांदा
३.८.६०
प्रिय डाक्टर

पत्र मिला। धक् से रह गया कि तुम नहीं आ रहे। समझ में नहीं आता कि क्या करूं फिर आने को कहूं या नहीं। एक बात है कि तुम आ जाते तो फूल कर कुप्पा हो जाता और ऐसा लगता कि जीवन जीत लिया है। न आओगे तो मुरदार ही रहूंगा। ब्याह तो होगा ही। घर की मालकिन से और बेटियों से प्रार्थना है कि वे तुम्हें ढकेल कर बांदा भेज दें। मैं उनका आजन्म आभारी रहूंगा।

सस्नेह तु०
केदार

१२, अशोक नगर,
आगरा
१५.९.६०

प्रिय केदार,

बहुत दिनों से तुम्हें पत्र नहीं लिखा। पत्नी की अस्वस्थता और अपनी पुस्तक दोनों को सँवारने में समय बीता।

नागार्जुन ने एक ख़ुश खबरी भेजी है कि हम लोगों के एक मित्र ओंप्रकाश आर्य ने एक प्रकाशन संस्था खोली है। नागार्जुन की पुस्तक वही छापें गे। नागार्जुन ने उन्हें सुझाया है कि वह तुम्हारी कविताएँ भी छापें । मेरी समझ में युग की गंगा से ले कर

अब तक की रचनाओं में से सौ डेढ़ सौ महा-बढ़िया कविताएँ चुन कर एक संकलन निकालना चाहिए।

नागार्जुन का पता—भिखना पहाड़ी, पटना है।

अपने समाचार देना।

तु०
रामविलास

बांदा
१८.९.६०

डियर डाक्टर,

दिनांक १५ का पोस्टकार्ड सामने है। इस पत्र के लिए धन्यवाद। तुमने याद तो किया। मैं [मैंने] तो समझा कि जनाब मुझे जमींदोज़ कर चुके हैं और अब मेरा कब्र से निकलना मुश्किल है। शुक्रिया कि तुमने फिर जिंदा कर दिया। बड़े चालाक हो मिस्टर, कि नागार्जुन की खुशखबरी के बहाने मेरे पास आने का साहस कर सके। वैसे आते तो जानता। जब तुम मौन रहते हो तो अपने मौन से मेरे शरीर में वल्लम [बल्लम] मारते रहते हो। दरअसल में तुम्हारी चुप्पी बड़ी घातक होती है।

मुझे विश्वास नहीं है कि अब मेरा संग्रह प्रकाशित होगा। अगर हो तो तुम्हीं चुनना कविताओं को? यह काम मेरे से न होगा। अपना काव्यबोध कमज़ोर है तीनों पुस्तकों से कविताओं के क्रम तैयार कर दो, छांट कर। फिर लिख मैं दूंगा। नयी कविताएं तो मैं स्वयं चुन लूंगा। उनके बारे में तुम्हारी पसंद का सवाल ही नहीं उठता। भला तुम उन्हें क्यों चाहोगे?

मुझे तो डर है कि कहीं हमारा प्रकाशन करके बेचारे प्रकाशक को काम न बंद कर देना पड़े। युग की गंगा का प्रकाशक तो उसके बाद ठप्प ही हो गया था न।

अब मलकिन कैसी हैं। [?] उन्हें नमस्कार। पुस्तक कब तक छपेगी और हमें मिलेगी?

ललित कहां हैं और कैसे हैं।[?]

तु०
केदार

बांदा
१३.१०.६०

प्रिय डाक्टर राम,

अब नागार्जुन भी चले गये होंगे और घूमने-घामने का क्रम बंद होगा। तभी ख़त

भेजने से हाथ रोके रहा कि कहीं रस-भंग न कर दे। कवि-सम्मेलन मैंने भी सुना था। मेरे नाम का प्रभाव ही ऐसा है कि सब कुछ बोर कर देता है। मगर कवित्त तो था उस बेचारे में। पहले तो उसे कोई पूछता ही नहीं था। अब दिल्ली तक दौड़ जाता है। शायद बिहारी होने के नाते प्रेसीडेंट का सहारा मिल गया है। राव साहब कब के तीसमार खां हैं। वह समतल पर सदैव सरके हैं। भाषा का बल होते हुए भी काव्य-पक्ष से वे दुर्बल हैं। डियर, बहुत कम लोग अच्छी कविता देते हैं। हम लोग तो कभी बुलबुले उड़ाते हैं, कभी कबूतर, कभी पतंग, कभी औरतों के माथे की नयी-चली 'तिलकित', टिकुलियां और कभी साबुन के इन्द्रधनुषी बुलबुले और इस तरह पर नयी चेतना को प्रकाश में लाते हैं। गिरजा ने तो Hollowman को हिन्दी में 'हम पोले हैं' से बचा कर अपनी प्रतिभा से उसे 'हम बौने हैं' कर दिया था और शान तो देखिये कि पाठ के समय मंच से उछल पड़ रहे थे, जो लखनऊ में अपने घर में रात को अकेले सोने से डरते थे—वही तब जब साम्प्रदायिक झगड़े हुए थे। पंत पर तुम्हारी कविता ऐसी है कि यदि वे सुन लें तो फिर भूमि पर पांव रख कर चलने लगें। आजकल तो उनका मान सम्मान हो रहा है। 'रूपाम्बरा' में हमने भी सहयोग दिया है।

दिवाली आ रही है। कई दिन की छुट्टी है। कम-से-कम चार दिन की तो है ही जजी में। मन होता है कि गाड़ी पर चढ़ बैठूं और पहुंचूं तुम्हारे यहां। पर लगाम खींच लेता हूं। देखो जैसा मन चाहा वैसा करूंगा। कहीं तुम न मिले तो ग़ज़ब हो जायेगा।

पिकासो का एक चित्र 'कृति' में देखा कि दो नंगी औरतें पास-पास बैठी हैं। सिवाय अंगों के यथार्थ चित्रण के और कुछ नहीं पल्ले पड़ा। हां ब्रश में माहिर वह कलाकार रेखाओं को ही मिटा चुका है। दोनों के शरीर में मांसलता सपाट पर है। दूसरा चित्र है उसी का। सम्भोग की क्रिया में नर और नारी खड़े हैं। पार्श्व में भी कुछ यही हो रहा है। यह भी निरावरण झांकी है। राम जाने क्यों यह सब ऊंची कला है? केवल निर्भीकता और दुस्साहस ही कला नहीं है। पिकासो कुछ और है। अमृता शेरगिल का एक चित्र Illustrated Weekly में आया है—देहाती युवती, काली-कलूटी, कमर में सिर्फ एक चीथड़ा लगाये, निरावरण खड़ी—दाहिनें हाथ की गदोरी में एक लट लिए। हथेली लाल है जैसे दहक रही है। आंखें अंधेरी चमड़ी को भेद कर कुछ-कुछ मुलमुला रही हैं। इसके अतिरिक्त पीछे से कुछ लाली अंधेरा फोड़ कर झलक दे रही है। यथार्थ की यह कृति अपनी गठन में अच्छी है। मालूम होता है कि मौन अंधेरे की नदी बह रही है, भोर होने से पहले, झिलमिलाती आ रही लाली में, अपने दो कठोर द्वीपों को घेरे, जंघाओं से नीचे जाती। सूरज, चांद, सितारे, जुगनू और बिजली की किरणें सब डूब गयीं हैं उसके तम में।

मुंशी ने जनाब को भी बीच चौराहे में खड़ा करके खरी चोट की है। प्यार से

सहलाया भी है हज़रत ने। है न? जो भी हो संस्मरण[1] उम्दा है। उसकी कलम तो खुरखुरायी। बहुत खर्राटा ले रही थी सालों से। मलकिन को नमस्कार। बेटियों को प्यार।

अब तो मलकिन अच्छी हो गयी होंगी!

तु०
केदार

बांदा
३१.१२.६०

प्रिय डाक्टर,

बहुत मौन हो—शायद पुस्तक लिख रहे हो। परन्तु फौरन ही हमारी चुनी हुई कविताओं का नाम और पुस्तक का नाम व पृष्ठ संख्या लिख भेजो कि हम उन्हें नकल कर लें और पांडुलिपि तयार कर लें। विश्वास है कि यह काम अधिक समय न लेगा। शायद अब तक आपने कर ही डाला होगा, मेरे पहले के पत्र के आधार पर।

मुंशी आजकल डट कर लिख रहे हैं।

नये साल का हर्ष और बधाई।

बेटियों को प्यार।

तुम्हारी मालकिन को नमस्कार, तुम्हें भी।

हम अच्छी तरह हैं। तुम भी अच्छी तरह से होओगे।

इधर क्या लिखा-पढ़ा जा रहा है!

'नवांकुर' में क्या भेजा है जनाब ने?

बहुत दिनों से नहीं मिले हो। कब मिल सकोगे?

सस्नेह
तु० केदार

आगरा
४.१.६१

दोस्त,

मकान बनवाने में लगा हूँ। स्टेशन के पास। तांगे-रिक्शे की भी ज़रूरत न पड़े; बस गाड़ी से उतरे और ...

---

1. नरोत्तम नागर संपादित, 'हिन्दी टाइम्स' (दिल्ली) में मुंशी का लेख।

यानी मकान बनवाने में मैं कुछ नहीं कर रहा हूँ। श्रीमती जी जाती हैं, सुबह की गई शाम को आती हैं। मैं पैसे जुटाने की चिन्ता में रहता हूं। भाषा वाली पुस्तक समाप्त; अब एक पुस्तक का अनुवाद कर रहा हूँ।

तुम्हारी चुनी हुई कविताओं का नाम 'फौरन' भेज दूँ? बहुत सी तो अप्रकाशित हैं न? मेरे पास नींद के बादल और तुम्हारा अंतिम संग्रह है। युग की गंगा नहीं है। फिर कैसे? पृष्ठ संख्या? बड़े से बड़ा संग्रह हो जितना प्रकाशक छापने को तैयार हो। नाम कुछ ऐसा हो जिसका बाँदा के अंचल से निकट संबंध हो—जैसे 'चंदगहना' या 'केन-किनारे'।

नवांकुर में 'आलोचक की डायरी' लिखी है यानी दो तीन किताबों पर यों ही कुछ चलते-फिरते। ऊपर कैफियत दे ही चुकी हूँ, आजकल दम मारने को फुर्सत नहीं है।

मिलना? कालेज बंद होने तक निकल न पाऊं गा। उसके बाद लू चले गी। मौसम अच्छा आये गा तब घर में बीवी अकेली हो गी। बच्चे बाहर। कहे गी—घर किस पर छोड़ कर जाओ गे?

तुम बाँदा हम आगरे, किस विध मिलना होय?

तुम्हारा
रामविलास

१२, अशोक नगर,
आगरा
२६.२.६१

प्यारे,

होली आई। बधाई लो। दरसन दै मुसकइयो को याद करके तुम्हारे दरसन पा लेते हैं। निराला जी पर तुम्हारी चिट्ठी ज़ोरदार थी। उनके दिये हुए काम की एक किस्त पूरी हो गई है। मई में उधर आने का विचार है। क्या तुम इलाहाबाद आओ गे? या मैं पहले बाँदा आऊँ? आजकल अमृत नागर यहीं हैं। रोज़ शाम को 'अनर्गल' साहित्य-चर्चा का रस लेते हैं।

तुम्हारा
रामविलास

बांदा (उ० प्र०)
४.३.६१
हे गलत नाम के सही आदमी!

राम राम॥

देखो न अपना नाम। 'राम' से आगे 'विलास' का सम्बन्ध; यह सरासर सब तरह से

असंगत। बेचारा राम तो 'विलास' से लाखों कोस दूर रहा। सीता मिलीं। वह भी तड़पती रह गयीं। बिछुड़ गयीं। ज़मीन में समा गयीं। ठीक वैसे ही तुम। तुम्हारा नामकरण भी तुम्हारे जीवन-गुण के सर्वथा विरुद्ध है।

होली है!
'उड़त गुलाल–लाल भये बादर
करत कटाक्ष काल भये काजर
हम बैठे खोदित हैं गाजर–
रामविलास लिखत हैं आखर।
अर र र र र कबीर–
खाओ दूध-मखाना खीर॥

मौसम मस्ती का है। उम्र यों तो ५० के पास सरक आयी है। पर अपने हिन्दुस्तान की मिट्‌टी-पानी में रहते-रहते अभी भी जवान होने का दम बाक़ी है। कहते हैं कि अपने भगवान शंकर जी फागुन में 'फगुनाय' गये थे और पार्वती को रसभरी समझ कर ललचा उठे थे। हम तो आदमी हैं। हमारी [हमारे] क्या कहने हैं। पत्थर होते तो असर न होता। दिल है। उसके कारण उसका जाल बड़ा विशाल है और फैलता ही रहता है। मगर फंसती एक भी मछली नहीं। वैसे हम मछली नहीं फंसाते। हम उसके व्यापारी नहीं है। न हम मांसाहारी हैं। अपने राम शाकाहारी हैं। अत: हम हैं कि अपना जाल हवा में फेंकते हैं और कविताएं पकड़ते हैं–वह भी बहुत कम फंसती हैं और फंसती भी हैं तो जुए के दांव में रात दिन मथने के बाद कभी एक बार नक्की की तरह फंसती हैं। अच्छा हुआ कि आपने इस तरह का रोग नहीं पाला। ख़ूब हंसो हम लोगों पर। पूरा अधिकार है।

आजकल भैरवी सुनने के दिन हैं। सबेरे-सबेरे उसकी नशीली रागिनी मिल जाय तो दरअसल में एक महीने के लिए पूरा नशा चढ़ जाय। अभाग्य मेरी कि कहीं भी नहीं सुन सका। काश खुद ही गा सकता और खुद ही नशे में चूर हो जाता। इस कमी को पूरा करने के लिए जिगर का संग्रह उठाया। इधर-उधर पन्न पलटे। है नाज़-अंदाज का रसिया कवि। मगर हम हैं कि उनका एक शेर देख कर वहीं अड़ गए और लगे उससे मल्ल युद्ध करने। अभी तक लड़ाई चल रही है। देखो कौन किस सिम्त गिरता है। वह शेर है–

तसवीर उमीदों की आईन: मलालों का,
इंसा जिसे कहते है महशर है ख़यालों का।

पढ़ कर लगा कि जैसे मियां जी कुछ बड़ी बात कह रहे हैं। शेर के पंजे गहरे तक धंसे। खून निकला। मैं लाल हुआ। मगर वह शेर जंगल का नहीं शहरी तहज़ीब का पालतू चाट खाने वाला शेर है। कवि जी कहते हैं कि इन्सान विचारों का प्रलय-क्षेत्र है।

मजे में हूं। लोगों ने विरोध में तूफान उठा रखा है यहां। मुझे साम्यवादी दल का कह कर पैनल से अलग करा रहे हैं। मैं भी दुनिया देख रहा हूं–असली मोहरे पहचान रहा हूं। प्यादों से फरजी हुओं की तिरछी चालें देख रहा हूं। बिगाड़ कर भी मेरा बिगाड़ न होगा। दूसरा केस वर्क करूंगा। अब तो बात फैल गयी जाने सब कोई। पर हमारे राजा को सच्चाई पसन्द नहीं है। यही नतीजा निकलता है।

घर बना रहे हो। मैं भी आऊंगा तब उसका एक पखेरू हो कर कुछ क्षण टिकूंगा। घर बनवाना भी वैसा ही कठिन काम है जैसा नौ महीने तक गर्भ धारण किये रह कर बच्चा जनना। मेरा मतलब तुमसे नहीं है। तुम तो असमर्थ हो। मेरा मतलब उनसे है जो घर बनवाते हैं।

बड़ी गरमी है। हम तो भुरता हो गए। सबको स्नेह,

तु०
केदार

30, New Rajamandi
Agra
20-6-61

प्रिय केदार,

तुम्हारा कार्ड मिला।

आजकल मेरी दूसरी बिटिया सेवा की तबियत खराब है। उसी की तीमारदारी में समय जाता है और किसी काम में जी नहीं लगता।

तु०
रामविलास

२१-६- ६१

बांदा
१०-७-६१

प्रिय भाई,

तुम्हारा पोस्टकार्ड आया तो बहुत पहले ही होगा परन्तु मिला मुझे बहुत देर से। घर के किसी आदमी ने कहीं रख दिया। मिलने में देरी हुई। जवाब भी देरी से, इसी से दे रहा हूं।

प्रिय सेवा की बीमारी की बात पढ़ कर यह हुआ कि मैं भी आगरा पहुंचूं और

उसकी तीमारदारी में तुम्हारी मदद करूं। परन्तु मन चाहे जैसी अच्छी बात कहे दुनिया उसे पूरा नहीं करने देती। मजबूरन दिल दबा कर रह गया हूं। अब तो बेटी ठीक होगी। उसके कपार पर आशीष का हाथ फेरना और जब कोई न देखे तब झट से प्यार कर लेना। मेरी बड़ी बिटिया जब बहुत पहले यहां बीमार थी तब मैं रात दिन सेवा में लगा रहता था। सबके सामने नहीं छिप कर चूम लेता था। वह इससे कि दूसरे स्नेह को नज़र लगा देते हैं। हालांकि लगती नहीं। पर हम ऐसा समझने के आदी हैं। और बिटिया के Results क्या रहे। प्रिय ललित तो रतलाम ही होंगे। यहां से कब गये? मजें में तो हैं। इधर मुंशी दिखते नहीं 'हिन्दी टाइम्स' में। कालेज खुल गया होगा। व्यस्त होगे। घर बना या अभी बन रहा है? अच्छा तो सलाम।

केदार

प्रिय केदार—पता नहीं तुम्हें इधर पत्र लिखा या नहीं। दिमाग परेशान रहा। मेरी दूसरी लड़की सेवा को T. B. हो गया [गयी] है। उसकी तीमारदारी—और इससे अधिक हर तरह की चिन्ताओं—में किसी काम का ध्यान नहीं रहता।

आशा है तुम सकुशल और प्रसन्न हो।

तु० रामविलास

30 New Rajamandi
Agra
11-7-61

प्रिय केदार,

अभी तुम्हें कार्ड डाला था? उसके बाद तुम्हारा १०/७ का कार्ड मिला।

सेवा पहले से बहुत अच्छी है और आशा है कुछ दिन में ठीक हो जाय गी। जरूरत हुई तो एक बार दिल्ली में दिखा लें गे। सेवा ने High School II Div. में पास कर लिया है और अब कालेज जाने को व्याकुल है। वैसा [वैसे] उसका admission करा दिया है। ललित अभी मंदसौर में हैं। शायद कुछ दिन में दूसरी जगह के लिए ट्रान्सफर हो जायं। घर बनता जा रहा है, हमने उसमें पहले से ही रहना शुरू कर दिया है।

तु०
रामविलास

बांदा
१४-७-६१

प्रिय डाक्टर,

दोनों पोस्टकार्ड मिले। बीमारी का समाचार जान कर बहुत अफसोस हुआ। पर अच्छी हो रही है, यह मालुम करके ज़रा कम हुआ। आश्चर्य है कि यह कैसे हो गयी? वह शीघ्र ही अच्छी हो, यही चाहता हूं। बेचारी को बधाई भी पास होने की देते कचोट होती है।

आज ख़ूब पानी बरस रहा है। पूरी बरसात है। कल रात भी आसमान बादलों से भरा था—नाम को भी तारे नहीं थे। हवा सरसराती रही है। सूरदास की कविता 'कारे भारे–'याद आती रही।

दिल्ली ज़रूर आओ और बेटी को ज़रूर दिखाओ। मुझे भी सूचना देना कि वहां doctors ने क्या है।

मेरे लायक काम लिखना।

आजकल नागा बाबा इलाहाबाद में किराये का घर ले कर वहीं गद्य के क्षेत्र में है।

और हम सब लोग ठीक हैं।

तुम्हारा
केदार

बांदा
२८-७-६१
प्रिय डाक्टर,

मुझे और मेरी बीवी को यह जान कर खुशी हुई कि सेवा अब पहले से अच्छी हो रही है। वह शीघ्र अच्छी हो हमारी कामना यही है।

निराला जी की हालत चिन्ताजनक है। ऐसा मालुम हुआ है। मैं भी इधर नहीं पहुंच सका और न अभी पहुंच पाऊंगा। दिल्ली जा रहा हूं ३१/७ को। जयपुर तक जाना है। प्रोग्राम बन चुका है। ६/७ दिन लगेंगे।

सपरिवार प्रसन्न हूं। इसमें कोई परिवर्तन नहीं होने का। द्रव्य देवता आते रहें—वहां सब ठीक रहता है।

श्री नर्मदेश्वर उपाध्याय का पत्र इलाहाबाद से आया है कि वह वहां से दिल्ली को भेज दिए गए हैं। रेडियो में हैं। वह तुम्हें वहां बुलायेंगे ही। तुम ज़रूर जाना। मस्त आदमी हैं। आवाज़ तो बड़ी ही बढ़िया है। उसी ने लिखा कि इधर जनाब ने रेडियो से

भाषा पर कुछ कहा था। हमें पता ही नहीं था। हम नहीं सुन सके। पुस्तक तो निकल ही गयी होगी। यही नहीं मिली। ख़ैर।

सस्नेह तुम्हारा
केदार

30, New Rajamandi

Agra
२२.८.६१

प्रिय केदार,

सेवा का स्वास्थ्य पहले से अच्छा है। ज्वर, खांसी आदि कुछ नहीं है। दिन भर आराम करती है, गाना सुनती है। Cavities का भरना शुरू हो गया है।

सुना है कि निराला जी बहुत अस्वस्थ हैं। यहां से निकलना नहीं हो पाता।

आशा है तुम सपरिवार प्रसन्न हो।

तुम्हारा
रामविलास शर्मा

बांदा
५-९-६१
८ बजे रात

प्रिय डाक्टर,

मैं २/९ को इलाहाबाद में था। सबेरे ही वहां पहुंचा जहां निराला जी थे। वह अपने छोटे से कमरे की दीवार की तरफ मुंह किये–तहमत लपेटे–उघारे बदन लेटे थे। पता नहीं कि सो रहे थे या जग रहे थे। हो सकता है कि शिथिलता वश मौन लेटे रहे हों। मैंने उन्हें बखोरना उचित नहीं समझा। अतएव मैं श्री रामकृष्ण के घर गया। वहां उनसे मिला। निराला जी के हाल-चाल पूछता रहा। पता चला कि कुछ दिनों पूर्व वह डांवाडोल हालत में थे। तमाम सूजन आ गयी थी। आशंका उत्पन्न हो गयी थी। दवा डाक्टर दास करते थे। परन्तु कवि ने उनसे दवा कराना स्वीकार नहीं किया। तब फिर दूसरे डाक्टर शायद डाक्टर ब्रजबिहारी से वही दवा कराने पर राजी हुए जो दवा उन्हें पिछले [पिछली] बार दी जाया करती थी। मालुम हुआ कि उससे लाभ भी हुआ। फिर मैं श्री रामकृष्ण के साथ निराला जी के कमरे में आया। तब तक वह हमारी तरफ हो रहे थे। हम लोग बैठे। मैंने देखा कि हमारे महाकवि के चेहरे की चमक उड़ गयी है। गाल पिचक गये हैं। चमड़ा सांवला पड़ गया है। दाढ़ी लटक गयी है। वह लेटे थे। पेट लम्बोदर के पेट की तरह हो गया है। पेडू के नीचे ही तहमत काफी उठी हुई लगी।

पूछने पर पता चला कि अपेन्डीसाइटिस का बड़ा सा झोंझ निकल आया है। यह बात तब तक आ गए श्री जयगोपाल मिश्र ने बताई। वह निराला जी को चांपते रहे। पावों में सूजन कम हो गयी है। और सूजन कहीं न दिखी। बीमारी का हाल पूछ ही रहा था कि कवि ने स्वयं बताया कि पेशाब काफी मात्रा में होने लगा [लगी] है। यह लक्षण अच्छा है। केवल दूध और फलों का रस पीते हैं। पर मानते नहीं। इतवार के दिन–कुछ दिन पहले उन्होंने गोश्त खुद ही पकाया था और जल गये थे। वहीं मालूम हुआ कि ठर्रा की बोतल मंगायी थी। छनी थी। यह कुतर्क भी होते चलते हैं। मुझे पहचान गए थे। हालांकि मिश्र जी ने मेरा नाम बता दिया था। बांदा का हाल पूछते रहे। किसी मिथिलेश कुमारी का नाम ले कर उसका हाल पूछा। पर मैं उसे नहीं जानता था। एक सुन्दर स्त्री को जानता था। मैंने कह दिया कि वह अब बांदा में नहीं है। कहीं और है। मिश्र जी से धीरे चांपने को कहा तो मिश्र जी ने हास्य में कहा : अब वह निराला कहां है कि ज़ोर से चापूं।–कलकत्ते की चर्चा चल पड़ी। मिश्र जी ने ही बताया कि जिस घर में कवि और वह लोग ठहरे थे वहां ही खूब छनी थी। वह बेचारा वैष्णव था। घबरा गया था। उसी दिन उसके बच्चा भी पैदा हो गया था। मिश्र जी ने कहा कि कवि अस्पताल जाने को तयार नहीं हुए क्योंकि उन्होंने कहा कि बहुत लोग बीमार हैं। पहले उनका इलाज हो। देखा तुमने। निराला संघर्ष कर रहा है शासकीय व्यवस्था के ख़िलाफ़। उसका रोग असहनीय बातों के कारण ही इतना उग्र रूप धारण कर लेता है। वह नेता नहीं है कि जुलूस निकाले। आवाज़ बुलन्द करे। अब वह इस दशा में है कि पड़े-पड़े सब कष्ट अपने जर्जर शरीर पर ही झेल जाना चाहता है। मेरे सामने उनका सारा जीवन झलक मार गया। मैं उन्हें देखता था और देख कर मन में गुनने लगता था कि उनकी बीमारी के मूल में असंगतियों का बड़ा जबरदस्त तनाव हुआ होगा और है तभी वह इतना उग्र रूप ले लेती है। ऐसे रोग का उपचार दवा से नहीं हो सकता। मुझसे इसी हालत में कविता सुनाने की बात कही। पर मैं तयार नहीं था। कापी न ले गया था जबानी याद भी न थी। मैं इनकार कर गया। कोई मौक़ा न था न मन था। तभी फिर बोले कि सनेही जी आये थे। मैंने उनका शिमला में अपमान नहीं किया था। उन्होंने उस दिन प्रयाग में गाना गाया था। कविता सुनाई थी। खूब रस मिला था। दाद दे रहे थे। और अपने शिमला के व्यवहार की सफाई दे रहे थे। मैंने पूछा कि पंत जी भी आते हैं या नहीं। मालुम हुआ कि एक दिन आये थे। जी छौंक-खा गया। उन्हें तो दिन-प्रतिदिन आना चाहिए। अपनों से स्नेह पा कर बीमारी हल्की हो जाती है। निराला को यह भी नसीब नहीं है। इलाहाबाद के वातावरण में अजीब बेरहमी और ममत्वहीनता व्याप गयी है। फिर हम चले। पान मंगा कर कवि ने खिलवाये थे। वहां से हमें मिश्र जी श्री नारायण चतुर्वेदी जी के पास ले गए। वहीं दारागंज में हैं। उसी घर में जिसमें एक बार मैं तुम्हारे साथ कई साल पहले गया था। निराला की बीमारी की चर्चा वहां भी चली। उन्होंने अपने सफेद बालों की परिपक्वता के स्वर में कहा कि निराला के भक्त ही उनकी बीमारी के कारण

हैं क्योंकि वह ही हल्ला मचा-मचा कर उत्पात खड़ा किये रहते हैं। एक बात उन्होंने यह भी कही कि यह गलत है कि निराला को लोगों ने ठुकराया है—चपत मारे हैं और तभी वह इस दशा को प्राप्त हुए हैं। अपनी दलील के समर्थन में उन्होंने नजीर दी कि तब मतवाला में निराला तो खुद ही दूसरों को कस-कस कर कोड़े मारते थे। वह फिर अपने साथ क्यों अच्छे व्यवहार की कल्पना के अधिकारी हैं। मैं चुप सुनता रहा। मुझे उनकी दलील कुछ भी न जंची। निराला तो एक Super Sensitive कवि था और वह जो दे रहा था अपनी जान से निकाल कर अच्छे-से-अच्छा नवीन-से-नवीन काव्य दे रहा था। उसका विरोध अनुचित था। तब के साहित्यिकों को समझ बूझ कर काम करना था। ख़ैर जो हुआ सो हुआ। सच तो यही है कि कुछ निराला के अपने निजी स्वभाव ने और कुछ दूसरों के स्वभाव ने उन्हें इस दशा में पहुंचाया है। वह असंतुलित तो हो ही जाते। जिस एक लगन से—सब कुछ त्याग कर—केवल कविता को अपना कर वह हिन्दी का पक्ष ऊपर उठा रहे थे वह उन्हें कैसे दुनियादार रहने देती। वही हुआ कि वह दुनिया का सब कुछ खोते चले गये। अपना स्वास्थ्य भी खो चले। इसके बदले में उन्होंने कमाई कविता और उसे दिया। दूसरों ने—उनके सहयोगियों ने दुनिया की कमाई भी की और कविता की बेड़ भी लगाई। वह लोग संतुलन का पल्ला अपनाए रहे। परिणाम वही कि वह भद्र बने—समाज में स्थान पा सके। पुरस्कार भी पा सके—नाम भी बरसा और कविता भी देते रहे। लेकिन वह कविता भी वैसी ही भद्र बनी जैसे भद्र वह लोग बने। सच बात तो यह है कि उनकी वाणी में वह आलोक नहीं आया जो दिल को उजाले से भर दे। जब मैं श्री नारायण जी के यहां से चला और रास्ते में था तो मैंने पूछा कि आखिर सरकार हमारे कवि को सम्मानित करने और पुरस्कृत करने में क्यों कोताही कर रही है तो मिश्र जी से मालूम हुआ कि निराला जी का वही हाल हुआ जो टंडन जी का हुआ। मुझे खीझ हुई। मैं रोष से भर गया। मैं ऐसी सरकार की भर्त्सना करता हूं जो योग्य कवि का सम्मान करने में अड़ियल टट्टू की तरह आगे बढ़ने से इनकार कर देती है। वाह रे सरकारी नीति। क्या कभी सरकार समझेगी या नहीं। हां तो, मैं दिल्ली-जयपुर न गया। तुम्हारे पत्र के पाने पर मैंने इलाहाबाद जाना ही ठीक समझा। निराली जी को देख कर चिन्ता हुई परन्तु हालत में कुछ-कुछ सुधार देख कर जी कुछ-कुछ चैन में आया। तुम्हें ख़बर दे रहा हूं कि फिलहाल ख़तरा नहीं है। पर रोग की गति कौन जाने।

अच्छा तो यह लिखो कि अब बेटी की तबियत कैसी चल रही है? दोस्त, चिन्ता न करना। सब ठीक होगा। तुम तो गम्भीर हृदय हो। निराला की बीमारी हिन्दी की बीमारी है—कविता की बीमारी है....युग की बीमारी है....हिन्दी के अन्य कवियों की बीमारी है।[1]

तु० केदार

---

1. यह पूरा पत्र दो अन्तर्देशीय पत्रों में लिखा गया था। [अ० त्रि०]

30, New Raja Mandi
Agra
७.९.६१

प्रिय केदार,

मेरे घर का नम्बर ३० है, ८०[1] नहीं। तुम्हारे पत्र की दूसरी किस्त सबेरे मिली। पहली वाली शाम को। कुछ घंटों तक मन ही मन तुम्हें गद्य काव्य सुनाता रहा।

लोग कहते हैं कि युद्ध निकट होने पर भूकम्प आदि अपशकुन होते हैं। निराला जी की बीमारी, अमृत नागर का टायफायड ऐसी ही प्राकृतिक दुर्घटनाओं के समान हैं।

तुमने बहुत अच्छा किया जो इलाहाबाद हो आए। मुझे ऐसा लगा मानों तुम आगरे आकर गले मिल गये। तुम्हारे साथ निराला जी के दारागंजी कमरे में मैं भी घूम आया।

बेशक निराला जी की आचोलना की जा सकती है लेकिन आलोचना वे करें जिन्होंने निराला से अधिक साधना की हो और जीवन में उनसे अधिक संयम बरता हो। ऐसे लोग नज़र नहीं आ रहे। फिर दारागंज में 'वन्य जन्तुओं का रोदन कराल' तो सुना जा सकता है, साधकों की मर्मवाणी नहीं।

इधर मैं Vesrhigora की पुस्तक Men with a Clear Conscience फिर पढ़ रहा था। उसके बाद War & Peace पढ़ना शुरू किया और युद्ध सम्बन्धी अंश पढ़ गया। तोल्स्तोय ने इतिहासकारों की खूब मरम्मत की है। वे रूस-फ्रांस का युद्ध वैसे ही नहीं समझ पाये जैसे हमारे यहां के बुद्धिजीवी १८५७ का महत्व नहीं समझे। किस शान से बूढ़े ने जन-प्रतिरोध के बारे में लिखा है : युद्ध विशेषज्ञ कहते ही रहे कि युद्ध शास्त्र के नियमों का उल्लंघन किया जा रहा है किन्तु

The cudgel of the people's war was lifted with all its menacing & majestic strength, & without consulting any one's tastes or rules, & regardless of anything else, it rose & fell with stupid simplicity, but consistantly, & belaboared the french till the whole invasion had perished.

सेवा का दूसरी बार Xray कराया है। Infected area काफी कम हो गया है। डाक्टर प्रगति सन्तोषजनक बतलाते हैं।

मेरी किताब निकल गई है। न मिली हो तो मुंशी को Remind कर देना।

तुम्हारा—रामविलास शर्मा

---

1. केदारजी ने पिछले पत्र में घर का नं० 80 लिखा था। [अ० त्रि०]

बांदा
२४-९-६१
प्रिय डाक्टर,

मैं जानता था कि घर का नम्बर ३० है ८० नहीं। पर जो मोहर की छाप लगाते हो वह भ्रम उत्पन्न करती है। मेहरबानी करके हाथ से मकान का नम्बर लिखा करो। गद्य काव्य का यह युग है भी। तुम भी उसे सुनाते रहे तो कोई नयी बात नहीं हुई। अफसोस है कि मैं नहीं था। वरना मैं बेतुके खींचतान के छन्दों की छड़ियों से जनाब के गद्य काव्य की पीठ छील देता। ,ौर।

ना बाबा ना। युद्ध का नाम सुन कर रोंगटे खड़े हो जाते हैं। अपशकुन हो रहे हैं। दिल डरता है। निराला तो शायद बीमार ही चल रहे हैं। कुछ पता ही नहीं चला। अमृत नागर अच्छे हो गये। Leader में लखीमपुर खीरी का समाचार पढ़ कर यह जान सका कि वह वहां गये थे—वहां बड़ी-बड़ी जगहों में बोले हैं। हमने तो तुम्हारे खत से जाना कि अपना पुराना खुसकैट दोस्त टाइफाइड में पड़ा था।

बूढ़े टालस्टाय का मर्म-बल देख कर प्रसन्न हो गया। तुम्हारी किताब तो नहीं सच्चिदा[1] का पत्र आया है। लिखते हैं कि पुस्तक खतम हो गयी थी—अब भेजते हैं। सो पत्र आये भी कई दिन ढरक गये। आयेगी ही।

आजकल हमारी मेहरार बवासीर से तंग है। दुर्बल से दुर्बलतर हो गयी हैं। सेवा को प्यार।

तु० केदार

बांदा
२६-९-६१

प्रिय डाक्टर,

कल ही पुस्तक[2] डाक से आयी। कल ही रात तक ८६ पेज तक पढ़ गया। विषय शुष्क और नीरस है मगर तुमने उसके प्रतिपादन में बीच-बीच में जो हास्य और व्यंग्य [व्यंग्य] के छींटे मारे हैं वह उसे सरस और सुन्दर बनाये हैं। मूल भ्रांतियों को, एक-एक ले कर, तुमने हरेक को तर्क और बुद्धि से ध्वस्त किया है। वैज्ञानिक विवेचन की तुम्हारी यह सहज-सरल शैली विषय को निखारती तो है ही पाठक को भी प्रकाश से भर देती है। मैं तो पुस्तक पढ़ कर और उनमें अन्य लेखकों के उद्धरण देख कर ही यही सोचने लग जाता हूं कि तुम्हें कितना पढ़ना पड़ा होगा और कितना विचारना पड़ा

1. सच्चिदानन्द शर्मा—जन प्रकाशन गृह के हिन्दी प्रकाशन अधिकारी।
2. भाषा और समाज! (जन प्रकाशन गृह, दिल्ली)।

होगा। मुझे विश्वास है कि इस पुस्तक का प्रकाशन एक और महत्वपूर्ण घटना है। तुम्हें यश तो मिलेगा ही दूसरों की बुद्धि साफ होगी और विचारकों को बल मिलेगा। बधाई लो।

सच्चिदा को मैंने एक पोस्टकार्ड बड़ा कटु होकर लिखा था—उनके पत्र के मिलने पर। अभी दूसरा लिखा है प्रकाशक [प्रकाशन] के लिए बधाई भेजते हुए। आशा है कि सेवा ठीक हो रही है।

तु० केदार

काम की बात....

पं० रामकृष्ण त्रिपाठी का पता लिख भेजो।

मैंने निराला जी को पुस्तक भिजवाई थी, लेकिन महाकवि कलम उठाते नहीं। पार्सल वापस दिल्ली पहुंच गई [गया]। इसलिए....

नरोत्तम, अमृत नागर, मुंशी—सब पधारे। दो दिन यथेष्ट आनन्द रहा लेकिन कविता पाठ का मज़ा तो तुम्हारे साथ ही आता है। नागा दिल्ली हैं लेकिन व्यस्त होने से आये नहीं। इधर कम्बख़्त फ्लू ने दवा लिया था। अब ठीक हूं। शुष्क होने पर तुम ८६ पन्ने एक साथ पढ़ गये कहीं विषय सरस होता तो रात भर जागते! जो कुछ तुमने पुस्तक के बारे में लिखा वह मेरे लिए और सभी आलोचकों की राय से कीमती है। निराला जी के बारे में तुमने जो लिखा, उससे मन दुख में डूब गया। लड़ो, प्यारे लड़ो जिससे अपने कवि इस नरकत्रास में न पड़ें।

रामविलास ३-११-६१
[३-१०-६१][1]

बांदा
५-१०-६१
रात ८ बजे

प्रिय भाई,

गांधी-जयन्ती के दिन शाम के समाप्त होने पर, लालटेन की रोशनी में कुछ देर के बाद, तुम्हारी पुस्तक को पूरा पढ़ सका। यह पुस्तक नहीं ग्रन्थ है। ग्रन्थ नहीं गौरव ग्रन्थ है। यह तुम्हारे विवेक की अनूठी उपलब्धि है। तुमने इतिहास के युगों में जा कर वहां ध्वनियों को पाया और उनकी उत्पत्ति का और विकास का सामाजिक धरातल खोजा और स्वर और व्यंजनों के सामान्य रूपों और उनकी भाव प्रकृति का पता लगाया। मूल शब्द भंडार के आधार पर अनेकानेक सर्वमान्य भ्रांतियों को तुम्हीं ने तोड़ा। बोलियों के

1. इस पत्र की तिथि 3-10-61 है। [अ० त्रि०]

सम्बन्ध में भी तुमने कमाल किया है। उनके योग का महत्व कहां और कब किस तरह प्रकट हुआ, इसे भी तुमने अच्छे ढंग से रक्खा है। लघु जातियों और महाजातियों के निर्माण की क्रिया का स्वरूप भी तुमने सही ही बतलाया है। परिनिष्ठत [परिनिष्ठित] भाषा की व्याख्या भी खूब है। आद्य भाषा की थ्योरी तो फट से फूट गयी। अब तक बहुत से भाषा वैज्ञानिक पहाड़ की तरह खड़े थे। सब तुम्हारे विवेक के नीचे हो गये। कारकों की बारकों में भी तुमने पहुंच कर उनका भी भेद लिया है। यह भी सुन्दर है। सर्वनाम संज्ञा का प्रतिनिधित्व करते-करते थक गए थे। कोई उन्हें महत्व ही नहीं देता था। तुमने उन्हें भी उठा कर सफल किया। धातुएं अपना असली हिन्दी रूप खोये बैठी थीं। तुमने उन्हें उबारा। अब बेचारी वे धातुएं जो परम पूजिता थीं मंद पड़ गयी हैं। 'ने' का महत्व मैं न जानता था तुमने बताया। न जाने तुमने कितना नहीं और क्या नहीं लिखा। पढ़ कर दिमाग़ साफ हो जाता है। मालूम होता है कि अब तक इस विशेष क्षेत्र में उल्लू ही बोलते थे। अब तो वहां मर्द बोला है। हमारी भाषा हिन्दी तुम पर गर्व कर रही है। विषय बड़ा ही सरस है। हिन्दी से प्रेम हो तो यह ग्रन्थ भी अनुपम है। जिस शैली में तुमने लिखा है वह सहज बोधगम्य है। तर्क से भरपूर है। उदाहरणों से प्रमाणित है। हास-परिहास और व्यंगों [व्यंग्यों] से नाटकीय है। भोजपुरी और पंजाबी के सम्बन्ध में तुम्हारे दोनों दृष्टिकोण स्वच्छ और माननीय हैं। अंग्रेजी के हिमायतों की तुमने ख़ूब ख़बर ली है। रविन्द्रनाथ को शेली आदि पाश्चात्य कवियों से प्रभावित कहने वालों की बखिया भी तुमने ऐसी उखाड़ी है कि तोपें टिपटिप करके रह जायेंगी। आदि से अन्त तक कहीं भी दृष्टिदोष नहीं आया। तुमने यथार्थ के धरातल पर शब्दों, स्वरों, बोलियों, भाषाओं, जातियों, व्याकरण, इत्यादि इत्यादि का उद्धार किया है। तुम सबसे बड़े विचारक हो। मैं तो समझता हूं कि यह ग्रन्थ तुम्हें अमर रखेगा। बधाई लो। सौ बार बधाई लो। हजार बार लो। इस पुस्तक को छापकर P. P. H. धन्य हो गया है।

'निराला' पर सनेही जी का लेख छपा है। हिन्दुस्तान साप्ताहिक में। दो पत्र भी छपे हैं, जो निराला ने तुम्हें लिखे थे। आज पढ़ता रहा और विवश रोता रहा। वाह रे हमारा हिन्दी प्रेम। प्रयाग के बड़े-बड़े कवि-साहित्यिक कोई भी उसके पास नहीं पहुंचते। अपने मान-सम्मान की जगहों में सभी जाते हैं। दोस्त P. P. H. उनकी पुस्तकें छाप कर घर-घर में पहुंचाये तभी कल्याण है।

रामकृष्ण त्रिपाठी, दारागंज, संगीत शिक्षक—यही पता होगा। मकान नं० नहीं जानता। सेवा को प्यार।

तु० केदार

बांदा १५-१०-६१ रात ९-१/२ [साढ़े नौ] बजे

भाई,

वही हुआ जिसकी आशंका आज सबेरे से थी। 'लीडर' में पढ़ा था कि उन्हें

आक्सीजन दिया जा रहा है। दिन-भर अधीर ही रहा। रेडियो ने सूचित किया कि वह नहीं रहे। हिन्दी का 'गरगज'....कविता का दिग्गज उठ गया। क्या कहूं। मैं तो दुखी हूं ही। तुम भी विचलित पड़े होओगे। धैर्य धरो दोस्त। तुमने तो उन्हें अपनी सर्वश्रेष्ठ कृति 'भाषा और समाज' समर्पित करके अपना ऋण चुकाया। मगर सौजन्यप्रिय सरकार उन्हें मान-सम्मान न दे सकी। कितनी विदग्धता है इस व्यवहार में। काश तुम गये होते और महाकवि को देख आये होते।

बेचारा जयविशाल[1] तड़प गया होगा। मैंने उसे महाकवि के इस महासंकट के काल में, उनके पांव चापते और उन्हें मुग्ध करते देखा है, अभी कुछ दिन पूर्व।

तु० केदार

३०, नयी राजामंडी
आगरा
२०-१०-६१

हाँ प्यारे, निराला जी अब नहीं रहे। न रोता हूँ, न हँसी आती है। कोलरिज के शब्दों में A grief without pang, void, dark and drear का अनुभव करता हूँ। बीच-बीच में एक लम्बी साँस ले लेता हूं। बस।

इस बात का अफसोस नहीं है कि उन्हें इन दिनों देख न पाया। उन्हें जितना पहले देखा था, वही दिल कचोटने के लिए काफी है। जिस निराला ने मेरी आंखों के सामने गीतिका के गीत, राम की शक्तिपूजा, तुलसीदास, कुल्लीभाट, बिल्लेसुर बकरिहा की रचना की थी, वह जीते जी ही मिट गया था। अन्तिम बार जब मैंने देखा था तब कुछ घंटों के लिए मानों वह निराला लौट आया था। उस दिन कवि ने रवि ठाकुर के अपने प्रिय परिचित गीत गाये, अपनी रचनाओं को भी गाया, सुनाया, कालिदास काव्य चर्चा की, मुझसे मिल्टन पढ़वा कर सुना। उनके ओठों पर उस दिन वही पुरानी मुस्कान थी, आंखों में वही आत्मीयता का भाव था।

दोस्त, यहां ७५ वर्ष के एक ठाकुर टीकमसिंह हैं। उनका लड़का तारा सिंह हमारे साथ अध्यापक था। उम्र में मुझसे कम, उस इकलौते की अकाल मृत्यु हो गई। शव पड़ा था। लोग रो रहे थे। बूढ़ा गाँव से आया। सब को ढाढ़स बँधाने लगा। किसी ने कहा—चादर हटा कर बेटे का मुँह देख लो। बोले—इस मुँह को क्या देखना? वह हँसता-बोलता चेहरा मन में बना है, वही बना रहे।

प्यारे, अपने मन की भी वही हालत है। उस दिन वह जो गीतिका और तुलसीदास का निराला लौट आया था उसी को, अन्तिम स्मृति की तरह, मैं सुरक्षित रखूँ गा।

---

1. जयगोपाल मिश्र [अ० त्रि०]

मुक्ति मिली, विलम्ब से। पूर्ण नरकत्रास उन्हें यहाँ मिल गया। लेकिन वीर आखीर तक लड़ा। पूर्ण विजयी हो कर गया–रोग पर विजयी हो कर नहीं, विरोध पर विजयी हो कर, सबको अपना बना कर।

मृत्यु पर उन्होंने बहुत सोचा, बहुत लिखा। सन् २४ से ५६ तक लिखा। मृत्यु को जीवन में देखा, और जो किसी ने नहीं देखा, वह देख कर उन्होंने उस पर गीत रचे। वे अपनी वेदना और दु:ख को कच्चे माल की तरह काव्य कृतियों के लिए काम में लाते रहे।

प्यारे, तुलसीदास के बाद अब तक ऐसी अमोघ प्रतिभा का साहित्यकार हिन्दी में न आया था। वाल्मीकि, तुलसीदास, निराला–तीनों तीन तरह के, लेकिन तीनों गरल पीने वाले वीर थे, दुख पर रोने वाले नहीं; ओज गुण की सृष्टि करने वाले, सच्चे अर्थों में वीर रस के कवि।

मुझे उनका साहचर्य प्राप्त हुआ, यह मेरे जीवन का सबसे बड़ा पुण्य था।

रामविलास शर्मा

३०, नयी [राजा] मंडी, आगरा

१-१२-६१

प्रिय केदार,

घड़ी तेज़–पता नहीं कितनी–शोभा और हम बहस कर रहे हैं कि सुबह के साढ़े पाँच बजे हैं या पाँच। हमारे कंपाउंड में गेंदे खूब खिल रहे हैं। धूप में तो खुश रहते ही हैं, पर चादनी [चाँदनी] रातों में भी ख़ूब मुस्कराते हैं।

इधर खूब कविताएं पढ़ीं–ज़्यादातर अंग्रेज़ी की। एक किताब शेली-कीट्स आदि पर पूरी हो गई है। पखवारे में तुम्हारे दर्शन करने आये गी। कविता तो प्यारे यूनान वाले लिखते थे या फिर हमारे देश वालों ने लिखी है। लेकिन कितनी चीज़ों पर लोगों ने नहीं लिखा है जिन पर लिखना चाहिए था! वास्तव में भवभूति ने ठीक लिखा था, काल निरवधि है और पृथ्वी विपुल है। कविता लिखने का मूड कुछ-कुछ लौटा है। एक लिखी है लेकिन तसल्ली नहीं हुई। दो दिन को अमृत नागर आये थे। निराला जी के बारे में गुनते रहे। अपने हाल देना।

रामविलास

पांच ही बजे हैं। घंटे सुनाई दिये।

बांदा

५-१२-६१

प्रिय डाक्टर,

एक पत्र पहले भी आया था। उत्तर न दे सका। व्यस्त था इधर-उधर के कामों में। एक दूसरा पत्र पा कर अब जवाब देना ही पड़ रहा है। न आता तो शायद अभी और समय बीत जाता बिना पत्र लिखे। तुमने खटखटा दिया, यह अच्छा ही हुआ। मुझे विश्वास है कि शोभा की बहस में तुम जरूर हारे होगे। लेकिन वह हार भी अच्छी ही रही होगी। बिस्तर पर पड़े-पड़े बात बनाने के लिए और कुछ और मजा मारने के लिए। गेंदे तो धूप पी कर बड़े गुदगुदे हो जाते हैं। बरबस आंखों में उछलते रहते हैं। डियर, जी-भर देखो और जियो। 'चांदनी रातों में खूब मुस्कराते हैं।' क्यों नहीं दल-बल से खूब कसे जो रहते हैं और ढीले नहीं पड़ते। यूनान वालों की एकाध कविता मेरे पास भी भेज दो। अकेले रस लेते हो। मुझे वंचित रख कर अपराध करते हो। सज़ा मिलेगी। अवकाश होता तो छलांग मार कर अचानक तुम्हारे घर पहुंच न जाता। पर दुनिया का चक्कर-मक्कर जकड़े है। काम कचहरी का साला बड़ा समय-खाऊ और जीवन लेवा है। मजबूर हूं।

यार, कविता लिखो। मूड आया है तो कलम चलाओ और स्वरों से व्यंजनों को निहाल करो। जो लिखी है उसे ही भेजो। तुम तो तभी सन्तुष्ट होगे जब अपना कचूमर निकाल लोगे।

निराला-निराला—सब पर छाया है निराला। सबके मन को अब बहुत भाया है निराला।

पुस्तक की प्रतीक्षा है। लिफाफा नहीं है। रात है। अतएव पोस्टकार्ड।

तुम्हारा—केदारनाथ

३० नयी राजामंडी,
आगरा
२१-१२-६१

प्रिय केदार,

बकौल अमृत नागर के मौसम एकदम फौक्स है। आज तीन बजे तक कुहरा रहा। सबेरे-बेहद ठंढ। अपन को सात बजे से क्लास लेना होता है। दस बजे वापस चलते हैं तो और ठंढ लगती है। कमरे में आग जला कर हाथ सेंकते हैं। रजाई ओस से भीगी हुई-सी लगती है। ऐसे में बिल्ली ने बच्चे दिये हैं और अभी देती जा रही है—किस्तों में। कूं-कूं-कूं—बच्चों को पेट के नीचे छिपाये जाड़ा झेलती है। है न भारती एण्ड कं० से ज्यादा आस्थावान! सेवा उसे खीर खिलाने जा रही है। मोहल्ले के बच्चे उसकी खोज-खबर ले गये हैं।

मेरी 19th Century Poets पर किताब निकल गई है अभी प्रतियां प्राप्त नहीं हुईं। तुम्हारे पास भिजवाऊं गा। १७ दिसम्बर को जनयुग निराला अंक निकालने वाला था, पता नहीं क्या हुआ। आजकल निराला जी के ध्यान में डूबा रहता हूँ। मेरे पुराने पत्रों में तुम्हें कहीं कुछ मिल जाय जिसमें उनके हालचाल लिखे हों तो भेज देना। उन पर एक नयी पुस्तक लिखने की तैयारी में हूँ।

कविता लिखी है लेकिन सन्तोष नहीं है। लेकिन बसन्त तक लिखूं गा–ज़रूर Mood है ज़रा सर्दी छाटे [छटे]। तुम्हें भेजूं गा भी। John Dickson Carr की जासूसी कहानी The Wrong Problem में यह वाक्य बड़ा कवित्वपूर्ण लगा–Those days after the funeral were too warm & suspicioun acted like wollen underwear under the heat.

बांदा में ठंढ के क्या हाल हैं?

तुम्हारा
रामविलास शर्मा

बांदा : २५-१२-६१

प्रिय डाक्टर,

मौसम आगरे में ही फौक्स नहीं है। यहां भी डबल निमोनिया के वजन पर डबल फौक्स है। ठंढक के साथ-साथ ठरन है। ढेर कपड़े पहने हूं, फिर भी डोला जाता हूं। मेरुदंड बेईमान की नियत [नीयत] की तरह डोल रहा है। सीने में ठंढ की हिमानी मुट्ठी रखी है। ऐसे में बहुत संभाल कर–दस्ताने पहने हाथ से–यह पत्र लिख रहा हूं। मेरा तो वही हाल है जो आर्कटिक सागर में चल रहे जहाज का। सिर पर स्तूपाकार कनटोपा चढ़ा बैठा है। मैं हूं कि शीतकाल के शीतयुद्ध से बचने के लिए बुद्ध भगवान की शान्ति का आश्रय लिये बैठा हूं। ऐसे में तुम्हारा लम्बे डग की लेखनी का पत्र मिला। चश्मा चढ़ा कर सपाटे से पढ़ गया। मालुम हुआ कि पहलवान 'राम' रावण से युद्ध कर रहे हैं। निराला के शब्दों में शक्ति का सामना शक्ति से करो। तुम तो इधर निराला पढ़ भी रहे हो। हम तो उनके मरने के कुछ महीने पहले से उन्हें समझ रहे हैं। उनके गीतों के अर्थ खोल रहे हैं। कहीं-कहीं खूब खुल जाते हैं। कहीं-कहीं शब्द ही बजते रहते हैं। अर्थ छिपे के छिपे रहते हैं। बड़ी मेहनत की यह खेती है–निराला के गीतों का अर्थ समझना। पट्ठा ऐसे-ऐसे दांव लगाता है कि पंडित लड़खड़ा कर भूलुंठित हो जायें। शब्द भी वहां नये-नये मोरचे पर लड़ते हैं। चारों तरफ गरदन फेरते हैं। कभी पहचानी चाल से मार करते हैं तो कभी अजानी चाल से पैर पटकते रहते हैं और दिल पर हाथ नहीं धरने देते। निराला ने कुल्ली भाट को तो भीतर-बाहर दिखा दिया पर करामात से ऐसा कुछ कर गये हैं कि उनकी वाणी में भरा भाव गीतों से सहज ही नहीं

प्राप्त होता। बड़े गंभीर मौन के साथ निराला की कला गीतों में गहरी हुई है। पहले तो वह, शुरू में, कला को दिखाते थे भाव के साथ। बाद को तो वह भाव को भी और कला को भी छिपाते थे। वह जहां तक आये थे वहां तक पक गये थे। डाल में लगे बेल की तरह उनके गीत हैं। ऊपर से कठोर। उरोजों की उपमा लिए। पर हैं शिव के उस अर्द्धांग के गीत जो तपस्या से शुद्ध हुआ है। एक बहुत बड़ा अचरज है कि निराला के गीतों में शिव और पार्वती दोनों के दर्शन होते हैं। शिव की अनासक्ति, शिव का योग, शिव की चेतना, शिव की सिद्धियां, तथा शिव का शरीर–सब कुछ है इन गीतों में। साथ ही इन गीतों में पार्वती भी हैं। वह निष्कलुष जरा मरण विहीन तपस्वी सौन्दर्य है कि वह दिव्य क्षणों में ही आभास देता है। देखो न :–हाथ वीणा समासीना–विशद वादन रत प्रवीणा–घिरे बादल गगन मंडल–तरल तारक नयन अविचल–तार के झंकृत सुकोमल कराहत करका सुखीना–राग सावन मनोभावन–भामिनी के भवन पाषन–दीप्ति नयनों की सुहावन–नाक का हिल रहा मीना। इसकी कला देखो ऊपर से नीचे तक ठोस। महाकवि ने अपनी काव्य-साधना को, सरस्वती की आराधना को अपने जीवन चरित को और युग के साहित्यिक जीवन चरित को एक ही धरातल [पर] उतार कर संवार दिया है। पहले तो सरस्वती को बराबर पर बिठा लिया है। अपने को उस देवी के समकक्ष रखने का भाव है। अपनी कविता का भरोसा व्यक्त किया है कवि ने। उधर सरस्वती भी उसके घर आयी हैं। वह भी कवि को श्रेष्ठ समझती हैं। तभी तो सुपात्र के पास बैठ कर वीणा बजातीं हैं। बादल घिरे हैं। कवि के जीवन में और काव्य के जीवन में और सरस्वती के जीवन में। तीनों तरफ आकाश आच्छादित है। सावन जो है। तारे भी छिपे हैं। परन्तु देवी के तारने वाले तरल नयन तो हैं। वह चमक रहे हैं। तरल से सहृदयता और सन्तोष की तृप्ति का भाव है। दुख में भी कविता, संगीत और जीवन एक [साथ] चल रहे हैं। यह खूबी है। ओले पड़ते हैं। वैसा ही संगीत भी बज रहा है। वेदना का बोध अव्यक्त से व्यक्त होता है। वह भी सुख देने वाला है। वेदना में सुख की अनुभूति व्याप्त है। गीत नहीं बन्द होता। सरस्वती चल नहीं देती। कवि भग [भाग] खड़ा नहीं होता। क्रम चलता ही रहता है। सरस्वती की आंखों की ज्योति देखता है कवि। अपनी काव्य-साधना पर प्रसन्न देखता है देवी को। तभी मीना के हिलने में स्वीकार का भाव है। यह है कला और यह है कविता। एक दूसरा गीत है :– ‘जावक जय चरणों पर छाई’ वसन्त का गीत है। ‘पलक पलास डाल कलियाई’ कहा है। पैर से सिर तक का सर्वांग दर्शन है। लक्ष्मी बसन्त के चरणों पर अपनी जय का जावक समपर्ण कर चुकी है। वाह रे महाकवि! ‘थोक अशोक कोकनद फूले–मधु के मद भौंरे दिक भूले’–यहां रवीन्द्र की याद आयी। वह वधू में कहते हैं ‘केरबी थोलो थोलो रपेछे फुटि।’ वहां कनेर फूलते हैं–परन्तु थोलो-थोलो की ध्वनि से सौन्दर्य थुलथुला जाता है। मारवाड़िन का खुला पेट दिखने लगता है। यहां निराला का ‘थोक अशोक’ चैलेंज देता है दीनता को, दारिद्र [दारिद्र्य] को अरूप को और दम्भ और अहंकार को।

फिर मधु पीकर मस्त हुए भौंरों का दिक् भूल जाना भी सुगन्ध की अतिशयता का बोध देता है। तमाम तरह की खुशबू–तमाम तरह के इन्द्रिय बोध–चेतना हरण का भाव–खूशबू के परदे जैसे पड़ गये हों। और चलो। कवि कहता है : 'पावक पाश दिगन्त बंधा है।' यह एक पंक्ति ही जीवन और दर्शन, ज्ञान और विज्ञान का रहस्य प्रकट करती है। बड़ी बढ़िया अमर पंक्ति हैं। सौन्दर्य देखो, धूप का जैसा चित्र है। 'अग-जग जैसे अडग सधा है।' इसी पर सधने का भाव भी खूब है। आग से बंध कर ही सृष्टि क्षय नहीं होती–चिर विकसित है। फिर अन्त में कवि कहता है कि इतना सौन्दर्य है कि आंखों को देखते-देखते थक जाना पड़ता है। कहता है कि 'नभ में नयन मुक्ति मंडलाई।' यह है धरती का वास्तविक सौन्दर्य। शायद कवि कालिदास इतने कम में इतना भरपूर सौन्दर्य और रस नहीं भर सके। अर्थ निर्वाह कमाल का है।

बहुत हो चुका दोस्त। अब कलम नहीं चलती। फिर दूसरे पत्र में। सेवा को गरमागरम प्यार+पकौड़ा।

तु० केदार

पुनश्च :–

पत्र पाते ही फिर लिखूंगा निराला पर ही। 'जनयुग' निराला अंक फिर निकालेगा।

तु० केदार

30, New Rajamandi
Agra
17-1-62

प्रिय केदार,

सबेरे के साढ़े तीन बजे हैं। यानी अभी रात खूब है। बाहर खूब कोहरा पड़ रहा है। सर्दी काफी है। कहीं ज़ोरों से बर्फ गिरी है। मैं जल्दी सो गया था। उठ कर तुम्हें पत्र लिख रहा हूँ।

निराला जी के जितने पत्र थे, तुम्हारे, अमृत नागर तथा थोड़े-बहुत अन्य मित्रों के जो पत्र थे, सब को एक सिरे से पढ़ गया हूँ। बड़ा विचित्र अनुभव होता है। दोस्तों के साथ अपने को भी देखता हूँ मानो वर्षों के [की] पर्त उघड़ते [उघड़ती] जाते [जाती] हैं [है] और मैं अपने से, तुम से, निराला जी से फिर मिलता हूँ। मन पर उदासी नहीं छाती, न तो यह भाव जागता है कि फिर नौ जवान हो जायँ (जवान तो अब भी हैं) और न भाव पैदा होता है कि हाय वे दिन बीत गये, फिर कभी न लौटें गे।

इसके विपरीत पुराने संघर्षों की झलक देख कर सन्तोष होता है कि वृथा नहीं जिये, भरसक भाषा और साहित्य के लिए काम किया। ख़ासकर तुमने और नागर ने बड़ी विषम परिस्थितियों में काम किया है। नागर की मां का दिमाग सही नहीं है। और

भी पारिवारिक झंझट रहे हैं। किसी साहित्यिक को ऐसी पत्नी मिले जो उनके धन न कमाने पर न खीझे तो यह उसके जीवन का सबसे बड़ा पुण्य समझो। समझ गये न? मुझे इस बात पर बड़ी प्रसन्नता है कि साहित्यिक जीवन के आरम्भ से ही तुम से और अमृत नागर से मेरी दोस्ती बराबर बनी हुई है और सन्देह, कटुता या ईर्ष्या-द्वेष की हल्की छाया भी इस मैत्री पर इस लम्बी अवधि में एक बार भी नहीं पड़ी।

मेरा विचार बहुत जल्दी संस्मरण लिखने का है जिनमें तुम्हारी और अमृत नागर की स्वभावत: विस्तृत चर्चा रहे गी। ज़रा निराला जी की जीवनी समाप्त कर लूं। अभी लिखना शुरू नहीं किया किन्तु सामग्री काफी बटोर ली है।

तुमसे दो काम हैं।

एक तो यह बताओ कि रामलाल गर्ग कर्वी में हैं या नहीं, उन्हें तुम जानते हो या नहीं, उनके परिवार के कोई अन्य लोग हैं या नहीं, इत्यादि। यदि रामलाल जी हों तो मैं उनसे मिलने आना चाहूँ गा। उनसे निराला जी के बारे में बहुत सी बातें मालूम हों गी और शायद उनके पास निराला जी के पत्र भी हों।

दूसरी बात यह कि तुम मेरे, नागार्जुन के पत्रों को—यदि सुरक्षित हों, तो—टटोलो, उनमें जहां निराला जी की चर्चा हो—काव्य चर्चा नहीं वरन् उनके रहन-सहन की कोई झलक मालूम हो—उन्हें मेरे पास भेज दो। यह कार्य कष्ट-साध्य है। इसलिए तुम उन सब पत्रों की रजिस्ट्री करके मुझे भेज सकते हो या फिर मैं ही बाँदा आ सकता हूँ, उन्हें और तुम्हें देखने के लिये।

गर्मियों में मैं बिहार जाऊं गा—जानकीवल्लभ और शिवपूजन सहाय जी का खजाना टटोलने के लिये। उसके पहले अब तक प्राप्त सामग्री का उपयोग करके पुस्तक की मोटी रूपरेखा तैयार कर लेना चाहता हूँ।

तुम अभी बिस्तर में हो गे। राम करे जब उठो तब चमकते सूर्य का मुँह देखो और मुवक्किल तुम्हारे ऊपर नोटों की वर्षा करें।

तुम्हारा—रामविलास

३०, नयी राजामंडी,
आगरा
२२-२-६२

प्रिय केदार,

क्या बात है? एकदम चुप! ख़त का जवाब न दो, ख़त तो लिखो। सब लोग कुशल से तो हैं न?

निराला जी का राष्ट्रपति-भवन में सम्मान हो रहा है! कैसा लगता है? 'निराला' पत्रिका में राष्ट्रपति और Ex मुख्यमंत्री के चित्र कितने भव्य हैं। यहां का समाचार ठीक

है। तुरन्त पत्र दो। अमृत नागर निराला जी के गांव गढ़ाकोला गये थे। दिनकर की उर्वशी देखी? मैंने उस पर हि० टाइम्स को लेख भेजा है।

तुम्हारा
रामविलास शर्मा

बाँदा (उ. प्र.)
२३-२-६२

प्रिय डाक्टर

मैं जानबूझ कर चुप था। लम्बा पत्र लिखना चाहता था। तब तक कलम न चला सका कि आज शाम को जनाब आ धमके। अब लिखता हूं कि देरी हुई, कान पकड़ता हूं।

'निराला' पत्रिका आयी। देखी। अन्तिम कविता भी पढ़ी। निराला की यह कविता मुझे वैसी प्रिय लगी जैसी 'जावक जय चरणों पर छाई'—'हाथ वीणा समासीना' इत्यादि इत्यादि लगी थीं। शायद यह रचना भी तुम्हें नहीं भाई। भाषा बोलती है। बल बोलता है। जीवन बोलता है। समस्त इतिहास बोलता है।

पत्रिका का कवर चित्र निराला को नहीं, साधू वेश को अधिक व्यक्त करता है। गालों की यह लाली उस साधु के मुखड़े की लाली है जिसने न सिद्धि पायी है न समाधि पायी है। केवल मालपुए उड़ाये हैं। भला वह संघर्षरत निराला इसमें कहाँ है। दूसरा चित्र देखा हुआ है। आंखों से संजीवनी शक्ति मिलती है। ओठों से स्मिति के साथ-साथ आत्मविश्वास की शान्ति मिलती है। नाक भी दृष्टि और शब्दों के बीच की दूरी को उसी चाव से पा गयी है जिस चाव से आंख और अधर एक दूसरे के स्वभाव को व्यक्त करते हैं।

यह व्यंग [व्यंग्य] है कि मरने के बाद राष्ट्रपति के यहां समारोह हुआ और तभी डा० सम्पूर्णानन्द ने अपना नाम निराला के साथ नत्थी किया।

पहला नामधारी पदत्याग के तट पर है। दूसरा राजनीति का निष्काषित अपदस्थ बनारसी है। साहित्य को इनकी छाया का प्रशमन मिला तो हमारा विलयन नमन में हो जायेगा। निराला का स्वभाव इन जैसा न था। फिर भी यह लोग जीते-जी उस पर सवारी न कर सके। अब मरे पर उसे श्मशान में जिला रहे हैं। भूत जगाना होता है न। तांत्रिक लाश पर चढ़ कर सिद्धि पाते हैं। क्या यही हो रहा है? ख़ैर छोड़ो। यह तो समय के साथ होता ही रहेगा।

डा० बच्चन का एक लेख निराला पर निकला है। तीन किश्तों में। हिन्दुस्तान साप्ताहिक में। मैंने पढ़ा है। उन्होंने स्नेह से नहीं, दिल में दाग़ रख कर लिखा है। पंत उन्हें प्रिय हैं। शायद उनके लिखने में पंत-प्रियता का प्रभाव है। निराला की कला को

उन्होंने ठुकरा दिया है। जीवन को लेकर निराला की कविता को कसने का उनका यह प्रयास संधि का नहीं विग्रह का द्योतक है। निराला ने कला जगायी है। जीवन जिया है। जीने और जमाने में अटूट अविच्छिन्न सम्बन्ध है। वाणी समतल भूमि से उठ कर वलाका की तरह ऊपर उड़ी और अंधेरे को चीरती हुई देवदार के वन को वेध गयी है— पंखों के झपाटे से। निराली में जीवन बोला है मगर रहीम की तरह नहीं, न कबीर की तरह। वह शब्द और अर्थ की गरिमा लेकर बोला है। बच्चन 'समतल' काव्य को ही जीवन का काव्य कहते हैं। समतल से ऊपर वही उठता है जो काव्य में सीझा है, जो शब्दों की पकड़ जानता है, और जो अर्थ के इंगित पर जीवन निसार करने पर तुला बैठा है। मैं यह नहीं कहता कि निराला की सब कविताएं श्रेष्ठ हैं। असम्भव है। पर मुख्य स्वर सफल है। मुक्तछंद पर भी चोट की है बच्चन ने। मैंने उन्हें एक पत्र आज ही लिखा है। अपने विचार व्यक्त किये हैं। उनका आप्रेशन ५ मार्च को होगा दिल्ली में। हरनिया हो गयी है। तुमने भी तो पढ़ा होगा उनका लेख। कैसा लगा? इतना मौन धारण किये हो कि कुछ कहते नहीं बनता। क्या पुस्तक में पिल पड़े हो। 'निराला' पत्रिका में ही कुछ दो। ज़रूर। वहिष्कार से परिष्कार न होगा। निराला को उन पर्तों में जाने से बचाना होगा जिनमें लोग ले जाना चाहेंगे। कहीं लोग-बाग उन्हें संत बना कर स्वाहा न कर दें। पंत को संत बना कर डाक्टर बच्चन ने कोई बड़ा काम नहीं किया।

चुनाव चल रहा है। शोर ज़ोर पर है। आसमान गूंज रहा होगा। अच्छा तो सलाम।

सस्नेह तु० केदार

पुनश्च :—

आज डा० बाबूराम सक्सेना की भाषा की पुस्तक देख रहा था। पढ़ने में सिर चकरा गया। वह सत्य का स्वर, वह तर्क, वह चिन्तन—वह स्पष्टता नहीं मिली। बड़ी उलझनें हैं।

केदार

३० नयी राजामंडी
आगरा
२६-२-६२

प्रिय केदार,

अभी शाम को कालेज से लौटने पर तुम्हारा पत्र मिला और मैं तुम्हें तुरन्त ही उत्तर लिखने बैठ गया।

मैंने तुम्हें अपने पहले पत्र में लिखा—जिसका जवाब लिखने में तुम्हें विलम्ब हो रहा था—कि मैं निराला जी की जीवनी लिखने की तैयारी कर रहा हूँ। तुम यह देख कर लिखना कि मेरे पत्र तुम्हारे पास सुरक्षित हैं या नहीं। हों गे तो उनमें सम्भव है मैंने

निराला जी से मिलने के बाद तुम्हें उनकी स्थिति लिखी हो। यदि तुम्हें फुरसत हो तो ऐसे पत्र छाँट कर मुझे भेज दो या मैं उन्हें छाँटने आ जाऊं। इस बात का उत्तर देना न भूलना।

तुम्हारे पत्र तो मेरे पास हैं ही। मैं उन्हें पढ़ गया हूँ। आज कल कालेज के काम के अलावा महाकवि के ध्यान में ही रहता हूँ। चाहता हूँ पुस्तक का पहला मसौदा जल्दी तैयार हो जाय, काट-छांट बाद में करता रहूँ गा। पहले दोस्तों को सुना कर पास करा लूं गा, फिर छापने को दूँ गा।

निराला जी पर जम कर केवल New Age के लिए लिखा था। शेष चार-पाँच लेख छोटे और जल्दी में लिखे हैं। पूरी बात लेख में कह नहीं सकता। विशेषांक इतने निकल रहे हैं कि किस-किस को लेख भेजूँ?

गर्मियों में लखनऊ-प्रयाग-काशी-पटना घूमने का विचार है—इसी पुस्तक के सिलसिले में।

तुमने निराला जी के बारे में जो कुछ लिखा है, सब ठीक है। उनकी मृत्यु हिन्दी में नये संघर्ष का सूत्रपात है। इस संघर्ष में हम लोगों को केवल प्रत्यालोचना से संतोष नहीं करना है। निराला की काव्य-परम्परा पर आगे बढ़ना है। बच्चन ने जो कुछ लिखा है उसका उत्तर केदार की नयी कविताएँ हों—पहले से भी जोरदार, सधी हुई, बच्चन-कृतियों से इतनी ऊंची कि लोग एक साथ कहें, हाँ, ऊँची है। तभी निराला का शिष्यत्व और सामीप्य सार्थक है। मैं अपनी ओर से निराला जी की जीवनी इस संघर्ष के निपटारे के लिए प्रस्तुत करूं गा। आशा है उससे उनके अपने जीवन-संघर्ष का सही चित्र लोगों के सामने आये गा।

जो कुछ जिस ढंग से हो रहा है उससे घोर घृणा होती है। किन्तु निराला जी की पंक्ति याद आती है—

लांछना इन्धन हृदयतल जले अनल। इस अग्नि से नयी कविता का सुवर्ण निकालो प्यारे कवि केदार।

तुम्हारे यहां त्रिलोचन आए थे। तुमने पत्रों में इसका उल्लेख भी नहीं किया, क्या बात है?

सकुशल—तुम्हारा—

रामविलास

चिट्ठी डाक में डाल रहे हैं आज एक हफ्ते बाद ३-३-६२ को।

कल हंस में तुम्हारे कैमासिन [कमासिन] गांव वाली कविता का सानन्द

स्वाध्याय किया—रा० वि०

बांदा
१६-३-६२
प्रिय डाक्टर,

अफसोस है कि उत्तर में विलम्ब हुआ। कारण थे। मेरे पिता जी के गांव के घर में डाका पड़ गया है। परेशान हूँ। वह न थे। नौकर तथा घर मालकिन मारे गए हैं। चोटें हैं पर जान नहीं जाने पायी। विशेष समाचार की प्रतीक्षा है। पिता जी वहां गये हैं। हम लोग शादी में इलाहाबाद गये हुए थे।

निराला जी के ३/४ पत्र हैं। छांट चुका हूं। तुम्हारे पत्र भी छंटे रखे हैं। चाहो तो आ कर देख लो, चाहो तो भेज दूं। मुझे इनकार कभी नहीं है। विशेष सामग्री नहीं है।

हां त्रिलोचन आए थे। शायद तुम्हें सूचना देना भूल गया होऊंगा। दो दिन ठीक से गुजरे थे।

जी मिलने को ललक रहा है। उर्वशी पर जनाब का लेख देना—दोनों किश्तों में। हम ऐसे लेखों से कुछ भी प्रभावित नहीं हुए। पुस्तक खरीद ली है। बड़े प्रश्न उठते हैं। कला के नाम पर मैथिलीशरण शैली का निर्वाह है। टकसाली माल न है न हो सकता है। इस पर लम्बा पत्र लिखूंगा। तुमने तो रस्म अदायगी की है। कुछ भी नहीं लिखा।

सस्नेह तु०
केदार

अरे लाला,

कहां मैथलीशरण और कहां दिनकर! तुमने तो सारे बाज़ार डाँड़ी मार दी! टकसाली माल नहीं है? पल्लव, कामायनी और राम की शक्तिपूजा के बाद किसने टकसाली माल दिया है? चारों तरफ नई कविता के झाड़-झंखाड़ देखो, फिर उर्वशी के कवि की पीठ ठोंको। कम से कम उसकी मेहनत तो सराहो। तुम्हारे लम्बे पत्र का इन्तज़ार है। तुमने जो चिट्ठयाँ छाँटी हैं, रजिस्ट्री करके भेज दो। मैं आऊं गा—पर तब तक सब्र नहीं है। फुर्सत होने पर पता लगा कर लिखना कि कर्वी में श्री रामलाल गर्ग हैं या नहीं। मिलना है। डाके की बात से अफसोस हुआ। कुछ पता चला कौन थे?

तु० रामविलास
२४-३-६२

आगरा,
दिनांक २६-३-६२
रात १० बजे

केदार नाथ अग्रवाल
एडवोकेट,
बांदा (उ० प्र०)

श्रीपत्री जोग लिखी बांदा से लाला केदारनाथ की जै गोपाल पहलवान श्री

रामविलास आगरा वाले को पहुंचे। चिट्ठी आपकी आई। समाचार जाना। आपका पोस्टकार्ड नारद महाराज की तरह आ धमका। हम ठहरे लाला। सो हमने उसका हृदय से सुआगत किया। डर गए कहीं दिनकर का हिमायती पहलवान न इसके अन्दर से पेट फाड़ कर निकल आये। यही हमारी कमज़ोरी थी। वरना हम तो ऐसे-वैसे को गिनते कब हैं। हमारे बटखरे छोटे हों तो भी बड़ा काम करते हैं। बड़े-बड़े पहलवानों के राशन को कम तौलते हैं। हम उर्वशी पढ़ चुके। पर पहलवान जी आपकी तरह नहीं। आपने तो वैसे ही इसे पढ़ा है जैसे हमारे डी० जी० सी० (सरकारी वकील) जल्दी-जल्दी में हनुमान चालीसा पढ़ते हैं। आप नयी कविता की झाड़-झंखाड़ से ऊबे थे। तभी तो आपको उर्वशी में मज़ा आ गया। किताब नशीली है। ज़मीन से आसमान की ओर ले जाती है। शून्य में सपने दिखाती है। ऐसे-ऐसे प्रश्न और उत्तर सुनती-सुनाती है जैसे न कोई आदमी करता है न कोई स्त्री करती है। न कोई अप्सरा करती है। आप कहेंगे कि तृतीय अंक शिखर अंक है। ज़रूर है। कारण भी बहुत साफ है। पहला तो यही है कि न पुरुरुवा ने कोई कसर उठा रक्खी है, न उर्वशी ने। मेरा मतलब बोर करने से। दोनों एक-दूसरे से लम्बी बात करने में एक-दूसरे के कान काटते हैं। अजीब हैं दोनों कि संतुलन जानते ही नहीं। जीभ है कि कैंची। खचाखच चली तो चलती ही गयी। रुकती ही नहीं। यानि कि दोनों एक दूसरे को ख़ूब फौक्स बनाते हैं। भाई, प्रेमी और प्रेमिका भी तो हैं कि एक दूसरे को चाव से सुनते भी रहते हैं। हम हों तो घोड़ी की लगाम खींच दें। ऐसा लगता है कि दो दार्शनिक–दो वकील–दो बौझक–दो बकवासी–दो मंत्री–एक-दूसरे से बाजी मार ले जाना चाहते हैं। तर्क भी तंत्र-मंत्र की तरह कहीं-कहीं तान तुक पर चलते हैं। ज़्यादातर तो वही पुराना 'धोबियापछार' किया गया है। यह सब रूप और प्रेम के नाम पर सदा से होता आया है और जनाब बड़े अदीब साहब दिनकर ने भी यही किया है। हम दाद देते हैं कि उन्होंने आपको मौका दिया कि आपने उर्वशी को भुजाओं में भर लिया। मालूम होता है कि दिनकर की [के] ८ वर्ष की [के] परिश्रम से जो उर्वशी जन्मी वह जनाब की प्रेयसी हो गयी। पल्लव तो पल्लव ही था। झर गया। कामायिनी कोर्स में लग गयी है मानो सारा भारत उसे पढ़ चुका। राम की शक्तिपूजा अकेली है। वही जनता के साथ जीवन में जीती है। हम उसका लोहा मानते हैं। उसके साथ कहां उर्वशी ठहरेगी। वह तो ख़्याल की रंगीनियों की छलना है जो स्वस्थ सौन्दर्य के साथ घर-बाहर हाट-बाट में ठहर ही नहीं सकती। मालुम होता है, जी जनाब पहलवान साहब, कि उर्वशी नहीं कोई उरवशा बोल रहा है। पुरुरुवा नहीं, टहलुवा बोल रहा है। हमने भी इस काव्य का रस लिया है। दाम १२) खर्च किये हैं। उसका आनन्द तो ले ही लेंगे। मालूम है कि न कि १२) में इससे भी अच्छी-अच्छी चीजें मिलतीं हैं। मगर रस लेना और बात है और अक्ल से बात समझना और बात। आपने रस तो लिया। मगर अक्ल से काम नहीं लिया। भला यह तो बताइए कि यह काव्य हमारे देश के किस आदमी के जीवन में पैठेगा। यह तो कहीं भी नहीं खप

सकता। केवल प्रोफेसरान ज़रूर खपा सकेंगे। घंटों भाषण दे सकेंगे। लड़कों पर रोब भी पड़ेगा।

हम तो जब पढ़ने लगे तो पहले ही 'नीचे' धरती 'ऊपर' आसमान पढ़ कर कवि के ऊपर दया आयी। उसकी कलम और कला पर क्षोभ हुआ। जब 'धरती' वहां है और 'आसमान' वहां है तब नीचे-ऊपर कैसा? सूत्रधार भी तो धरती पर है। 'फोड़' का प्रयोग प्रारम्भ से अन्त तक है। दोनों अंक (पहले दो) उसी मैथिलीशरनिया भाषा में हैं। बड़े फीके। बड़े भौंड़े। न कलात्मक हैं। न बुद्धिमत्ता के प्रतीक। फिर से पढ़ो। चौकड़ी न भरो। औशीनरी का जो परिचय मिलता है वह बड़ी [बड़ा] ही निम्न कोटि का है। दुर्बल नारी पिनपिनाती रहती है। निपुणिका और मदनिका उसे सहानुभूति और साहस देती हैं। सहजन्या और रम्भा की बातें सुन कर तो ऐसा लगा कि जीवन में बस यही यही है। सबको वही एक बात सूझती रहती है। कहीं तो ऐसा भी प्रयोग है कि तंद्रा 'फट' गयी। 'फोड़' कर द्वीप निकल आये। खूब फोड़ा जल आपके दूसरे पहलवान जी ने। और आगे सुनिये।

निभेद्य गगन में चन्द्रमा मंद मंद चलता है। बताइए आप ही यह कैसा अनूठा चित्रण है। जब बादल होता है तभी वह चलता है और तभी चन्द्रमा चलता प्रतीत होता है। अन्यथा नहीं। यह अकल का दोष है। जरा और देखिए। चित्र कितना वीभत्स है। सूत्रधार कहता है पहले ही पृष्ठ में गगन खोल कर बांह विसुध वसुधा पर झुका हुआ है। अब आप लेटी हुई पृथ्वी पर वैसे ही झुकिये जैसे गगन झुका था। क्या रूप बनेगा इस चित्र का। आपको गाली देने का मन करेगा। क्या यही है कला? छठें पृष्ठ पर नटी का बयान पढ़िये। कनक प्रतिमाएं—कुसुम बल्लियां—वीणा की रागिनियां—कविता की नूतन पंक्तियां—समाधि पर रोते दिये की सूरतें—? यह क्या बिम्ब-बोध देते हैं? कुछ भी नहीं। सपनों की तसवीरें। यह क्या रूप वर्णना है? ३१ पृष्ठ पर फिर 'फोड़' आया है। हृदय के साथ-साथ। ३०वें पृष्ठ पर निपुणिका ने अनिपुण ढंग से कहा है—'अभी-अभी जल से निकला उत्फुल्ल कमल था'। खूब निकला साहब। जी पहलवान जी, पानी के भीतर से ही वह फूल कर खिला हुआ निकला। देखा तुमने यह अजूबा सौन्दर्य-बोध। शक्ति के साथ 'हांक' का प्रयोग भी ३०वें पृष्ठ पर नीचे से दो पंक्तियां बाद है। वह भी श्रेष्ठ कला की निशानी है। ३१वें पृष्ठ पर है गोदी में उठा कर उसे बांहों में भर लिया। सो यह कैसे? गोदी में उठाया तो बांहों में भरना कैसा? हम नहीं समझे। आप खूब समझे। ३३वें पृष्ठ पर एक प्रयोग है 'भ्रमा' का। यह भी खूब जमा। है न मैथिलीशरणी प्रयोग। ३८वें पृष्ठ की पहली ही पंक्ति देखिए। पुरुष के विषय में अर्द्धसत्य घोषणा मिलेगी। ऐसी ही न जाने कितनी बातें हैं जो इस पुस्तक में भरी पड़ी हैं। लिखना दुश्वार है। अभी तो हमने इस काव्य के विचारों के सम्बन्ध में कुछ कहा ही नहीं। उसे ले कर तो बड़ा बवंडर होगा। हमें तो लगता है कि हमारे एम० पी० महोदय ने इसकी पांडुलिपि किसी पान वाले को भी नहीं दिखाई वरना वह भी बता देता कि जरा कत्था

चूना के मेल-मिलाप की सही मात्रा तो सीख लीजिए और तब दुकान खोल कर बीड़ा बेचिये। नहीं सीख सकने वाला व्यक्ति यदि पान लगायेगा तो खाने वाले का मुंह कटेगा ही। वही हुआ।

हमने तो पहले लिखा था कि इस पुस्तक की शुरुआत ही ऐसे ढंग से की गयी है– ऐसी भाषा अपनायी गयी है कि हम बिचक गये। वैसे ही जैसे ख्रुश्चेव आइसनहावर के सामने। उर्वशी ने जो अपनी तारीफ की है वह अपने मुंह मियां मिट्‌ठू बनने की साध पूरी ज़रूर करती है। यह है भारतीय काव्य की श्रेष्ठ परम्परा में लिखा गया क्लासकीय काव्य। स्वाभाविक भी है। औरतें अपनी तारीफ करती भी हैं। ज़माना बदल गया है। प्रेमी के सामने लाज से नज़र नीची नहीं करतीं वरन सिर उठा कर खूब ठाठ से अपना बखान करती हैं। शायद यह नयी कविता का आदर्श है।

'निष्काम काम-सुख' का सिद्धान्त 'निष्काम कर्म' के भारतीय तराजू पर बड़ा सटीक बैठता है। यह भी सिद्धान्त सही है न कि 'प्रकृति नित्य आनन्दमयी है।' हम क्या कहें इस वाक्-स्फुरण को?

पृष्ठ ८९ पर देखिए। यहां टहनी चीर दी गयी है। आपने टांगे चीरना–लट्ठा चीरना सुना होगा। यह नया प्रयोग है। खास दिल्ली का। यदि वहां का न होगा तो बिहार का होगा। यदि वहां का न होगा तो अपर लोक का होगा। आप जानें–वह जानें।

आपने अपने लेख में अंधेरे पक्ष को लिया मगर बस सपाट दौड़ गये। हम आशा करते थे कि आप दोषों का विवेचन इसलिए और करेंगे कि यह काव्य एक वयस [वयस्क] कवि का है। उससे ऐसी भूलों की आशा नहीं की जा सकती थी। वह महज़ इसलिए सराहे जाने का पात्र नहीं है कि उसने कुछ ऐसी मनबहलाव की बातें की है जो थोड़ी देर तक नशे का सुरूर देती हैं।

उर्वशी और पुरुरुवा की कथा इस युग में किन्हीं दूसरे स्तरों पर खुलनी चाहिए थी। इस कथा में बड़े प्रौढ़ तत्व हैं। उन्हें ग्रहण करना चाहिए था। यह चंद्रमा में पहुँचने का युग है। यह धरती और आकाश की दूरी मिटाने का युग है। इस दृष्टि से भी नये तत्वों को उठाना चाहिए था। दिनकर साहब ने बहुत साधारण समस्या को उठाया है। भरत का श्राप [शाप] सफल होता है। उर्वशी पति-पुत्र दोनों को छोड़ कर चली जाती है। हां एक बात बड़ी मजे की यह है कि हमारी हिन्दी जो राष्ट्र के कोने में अभी तक राष्ट्र-भाषा न बन सकी वह इस काव्य में अप्सराओं की बड़ी प्रौढ़ भाषा बन सकी। बधाई है कवि को। अब फिर।

श्री रामलाल जी का स्वर्गवास हो चुका है। मैं पहले भी लिख चुका हूं। मुझे मालुम है।

पत्र भेज दूंगा कुछ समय के भीतर। रजिस्ट्री द्वारा। आशा है कि सब ठीक होगा।

डाके के अपराधी पकड़े गये हैं। वह सब काम चल ही रहा है। मैं उसमें दखल

नहीं दे रहा। वे पास के गांव के बदमाश लोग थे। डकैत हैं। सब पूर्ववत हो जायेगा। चिन्ता न करना।

प्रिय सेवा का क्या हाल है? और सब बच्चे अच्छी तरह तो है? इंजीनियर साहब कहां हैं? पढ़ तो चुके या पढ़ ही रहे हैं?

सस्नेह पहलवान जी की नाक का बाल,

केदार

पुनश्च :–लम्बा पत्र तो पढ़ चुके। अब अविलम्ब हमें भी लम्बे पत्र से कृतज्ञ करोगे या नहीं?

Dr. Ram Bilas Sharma
M. A., Ph. D. (Luck)

30 New Raja Mandi
Agra 18-8-1962

माई डियर

ढेर की ढेर कापियाँ अल्मारी में बन्द हैं। जँचने की राह देख रही हैं। मैंने भी कहा, आज चिट्ठियाँ लिख ही डालूँ गा। इधर मेरठ गया। बाघपत [बागपत] तहसील के लोकगीत सुने। बड़े ही सरस। खड़ी बोली का भदेस लोच उन्हीं में देखने को मिलता है। दिल्ली में मुंशी के कान मले। जयपुर में कुछ डाक्टरों से Abnormal Psychology से सम्बन्धित शास्त्र चर्चा की। भरतपुर में पुराने दोस्तों के बीच गप्पें मारीं। वहां प्रभा के पुराने अंक हैं जिनमें निराला जी की प्रथम कविता छपी है। अभी दर्शन नहीं हुए–ढूँढ़ने का काम सौंप आया हूँ। श्रीमती जी दिल्ली में सत्कार लाभ कर रहीं हैं। एक हफ्ता हो गया–हम समझते थे, हमारे बिना उनका दो दिन जी न लगे गा–सो न पत्री भेजी न बहुरने का नाम लिया। ख़ैर, हम भी उनके ग़म में हलवा खा रहे हैं। शोभा बनाने जा रही है और यह पत्र समाप्त करने तक तैयार हो जाये गा। दो कौर तुम्हारे नाम के सबसे पहले खाऊँगा।

तन से मुझको कसे हुए अपने दृढ़ आलिंगन में,
मन से, किन्तु, विषण्ण दूर तुम कहाँ चले जाते हो?

मोपासाँ ने एक उपन्यास लिखा है। कलाप्रेमी विधवा, चारों ओर मंडलाने वाले कलाकार, वह सब से खेलती है, अन्त में मिलता है एक पुरुष जो कलाकार नहीं है। बड़ी साधना के बाद बेचारा उसे प्राप्त करता है लेकिन प्राप्ति के बाद उसे, घोर निराशा होती है क्योंकि रमणी तन से बँध कर भी मन से दूर रहती है। तुमने इस भाव को प्रकट करने वाली जो कविता पढ़ी हो, उसका नाम लिखना।

और सुनो। ज्ञान भौतिकता में है या उससे परे? Spirit और matter को Primary

और Secondary कहने से उनका भेद मिट जाता है या बना रहता है। समस्या को पेश करना भी एक सफलता है :

रक्त की उत्तप्त लहरों की परिधि के पार
कोई सत्य हो तो,
चाहता हूं, भेद उसका जान लूं।
पंथ हो सौन्दर्य की आराधना का व्योम में यदि
शून्य की उस रेख को पहचान लूं।

भगवान कसम, तुम ये पंक्तियां लिखते तो तुम्हारे मुखचुम्बन के लिए हलवा छोड ़कर तुरन्त बाँदा चल पड़ता। खैर, इस वक़्त हलवे से ही–तुम्हारे और श्रीमती जी के अभाव का ग़म ग़लत करता हूँ।

बाकी फिर।

तुम्हारा
रामविलास

बांदा,
१६-४-६२
प्रिय भाई,

लिफाफा मिला। पढ़ गया। कई दिन तक सोचता रहा था कि आखिर मौन क्यों हो। मालूम हुआ कि आगरे से बाहर विचरण पर गये हुए थे। यात्रा सदैव ही सुखकर नहीं होती परन्तु तुम अच्छी तरह कर आये, यह अच्छाई है। कुछ उमंग-उत्साह ले कर आये होगे। तभी पत्र में कुछ ताज़गी है।

पुरुरवा [पुरुरुवा] से उर्वशी का कथन जिसे तुमने उद्धृत किया है, वह उस नारी के हृदय की बात है जो आज कल इस सड़े गले समाज में हर जगह–हर घर में पायी जाती है। यहां भी तो प्रेम नहीं होता। केवल शारीरिक भोग-विलास होता है। दो हृदय उसी से कुछ दिनों बाद ऐसी अनुभूति के शिकार हो जाते हैं। जो व्यक्ति प्रेम करता है, एक उद्देश्य और कर्म के आदर्श को हृदय में लेकर वह व्यक्ति अपनी प्रेमिका को इस तरह आलिंगन आबद्ध नहीं करता और न उसकी प्रेमिका इस तरह अपने प्रेमी से कहने के लिए प्रेरित होती है। दोनों का प्रेम लोक-कल्याण में फलता-फूलता है और एक का स्पर्श दूसरे के स्पर्श से द्विगुणित हो जाता है। उर्वशी आकाश की है। पुरुरवा [पुरुरुवा] पृथ्वी का है। वही अनमेल परिस्थितियां हैं। दोनों उन्हीं तौर-तरीकों के शिकार हैं जिनके शिकार आज अधिकांश प्रेमी-प्रेमिका हैं। फिर दिनकर ने [,] ऐसी अनुभूति के पीछे जो विवशता है [,] उसका उद्घाटन नहीं किया। मुझे इसी से ऐसी अनुभूति से रस-ग्रहण करने में दिक्कत होती है।

इसी प्रकार पुरुरवा [पुरुरुवा] की वाणी भी है। उसे भी अपने प्रश्न का उत्तर नहीं मिलता। वह आकाश में उड़ता है। यही तो गलती कि दिनकर ने कि वह घर के पास संसार में नहीं विचरे बल्कि कुछ ऊंची चीज की पकड़ में कुछ भी न पकड़ पाए। ऐसी अभिव्यक्ति तो उन्हीं लोगों की जबान से निकलती है—जो नारी को सहधर्मिणी नहीं मानते। वास्तव में कुछ तो दिनकर के अस्पष्ट चिन्तन का फल है और कुछ उर्वशी और पुरुरवा [पुरुरुवा] की काया [कथा] [?] का फल है कि जो प्रश्न इन दोनों के सम्बन्ध को लेकर उठे हैं वह प्रश्न कर्मठ व्यक्तियों के दिलों में नहीं उठता। यह तो स्पष्ट ही मनोविनोद एवं वाक्-विलास के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। मोपांसा की कला प्रेमी विधवा का केस ठोस धरातल पर है। उसकी अनुभूति सत्य से और यथार्थ से उद्‌भूत है। वहां वह अपनी जगह ठीक ही है। समस्या का [को] पेश करना कला और कविता नहीं है जनाब। आदमी को सही दिशा में ले जाना भी कला और कविता का धर्म है।

मुझे तो मालूम होता है कि यह काव्य केवल बकवास है। शुरू से आख़िर तक। अच्छी दिलचस्प गुफ्तगू है। दोनों एक-दूसरे को जानना चाहते हैं और अपने को जानना चाहते हैं। पर न जानने में ही मज़ा लेते रहते हैं। ऐसी बातें कामकाजी आदमी को शोभा नहीं देतीं। मज़ा जब आता कि प्रेमिका प्रेमी के साथ कुछ श्रम करती और फिर दोनों एक-दूसरे से लिपट कर एक-दूसरे पर न्यौछावर हो जाते, उस काम की कृतज्ञता में। तब जब प्रेमी प्रेमिका की आंखों में आंखें डालता वह एक नया स्वर्ग देखता, एक नया आकाश देखता, एक नयी सृष्टि देखता। उर्वशी और पुरुरवा [पुरुरुवा] तो रटे-रटाये सूत्रों में बात करते हैं। मैंने ऐसी बहुत बातें पढ़ी हैं। उनका विस्तार इस काव्य में है। मैं तो ऐसी बातें लिख ही नहीं पाता। मेरा 'प्रेम तीरथ' मेरे हृदय का चित्रण कर ही चुका है। अब तो हमारा प्रेम बोझ ढो रहा है। फिर भी आस्था के साथ जी रहा है। कम नहीं हुआ—न होगा। प्रेम Spirit है। मैटर नहीं। वह मैटर को छू कर—उसमें जान फूंकता है।

मेरी राय है कि तुम मुझे विस्तार से लिख कर समझाओ वरना बात का भ्रम मुझे मथे रहेगा। मैं साफ-सही निष्कर्ष चाहता हूं। तुम पूर्ण रूप से मेरे विचारों का विवेचन करो और लिखो ताकि सन्तोष हो। कहां गलती है। पत्र की प्रतीक्षा में।

सस्नेह तु० केदारनाथ अग्रवाल

३०, नयी राजामंडी,
आगरा,
१०-५-६२

प्रिय केदार,

तुम लखनऊ के रामप्रसाद उर्फ लल्लू को तो जानते हो गे। इस महीने वह संसार से विदा हुए। वह लखनऊ के मेरे पहले और सबसे गहरे दोस्त थे। निराला जी कुछ

दिन उसी ११२, Maqboolganj में रहे थे जिसमें मैं रहा था। वह उग्र-निराला के सत्संगी और भक्त थे। बड़े भैया का पत्र आया कि Brain Paralysis जैसी कोई चीज़ लल्लू को हुई है। फिर दो दिन बाद समाचार मिला, अब नहीं हैं।

अनुकूल परिस्थितियों में लल्लू बहुत अच्छे लेखक होते। साहित्य और कला की समझ अच्छी थी। दो-एक कहानियां लिखी भी थीं। लल्लू के न रहने से लखनऊ से एक पुराना नाता सा टूट गया।

रांगेय राघव का समाचार सुना है? केन्सर हो गया है। खून में जो Red [Blood] Corpsules होते हैं वे बदल कर श्वेत हो जाते हैं। रोग घातक है। उन्हें विदेश भेजने का प्रबन्ध हो रहा है। राहुल जी दार्जिलिंग में दिन गिन रहे हैं। यशपाल की आंखें खराब हैं। घनश्याम अस्थाना—कवि, आगरे के, जानते हो न?—इधर काफी अस्वस्थ हो गये। परसाल शादी, इस साल सब करम हो गये। जिगर ख़राब, मेदा ख़राब, दिल की धड़कन, पैदल चलने की मनाही, चेहरा निर्बल, निस्तेज।

उर्वशी के बारे में तुमसे आकर ही बातें करूँ गा। लिखना, तुम्हारी कचहरी कभी बन्द होती है या नहीं। सुमन से भी मिलने जाना चाहता हूँ। उसे भी चिट्ठियों के लिए लिखा था, सो उसने भेजी नहीं। शिवपूजन जी ने निराला जी की आठ चिट्ठियाँ भेजी हैं जिनकी नकल करके वापस भेजँ गा। चाहता हूं कि बाँदा, इन्दौर, काशी, प्रयाग की यात्रा एक ही साथ कर डालूं।

आशा है, तुम प्रसन्न हो।

तुम्हारा
रामविलास शर्मा

बांदा
१९-५-६२
प्रिय भाई,

पत्र सामने है। उत्तर देने में विलम्ब हुआ। कोर्ट के काम [में] व्यस्त था। शनीचर है। अब उत्तर दे रहा हूं। अदालत से १ बजे धूप में लौटा हूं।

मैं लल्लू[1] को खूब जानता हूं। उनके देहावसान का समाचार सुन कर मुझे भी हार्दिक शोक हुआ है। खूब आदमी थे वह। श्री रांगेय राघव को मैंने स्वयं देखा नहीं है। परन्तु उन्हें उनकी कृतियों से जानता हूं। उनका मर्ज तो घातक है ही। उनके प्रति मेरी शुभकामनाएं हैं। वे शीघ्र ही अच्छे हों। राहुल जी के विषय में समाचार पत्रों में भी

---

1. लल्लू—मेरे छात्र जीवन के घनिष्ठ मित्र; ११२ मकबूलगंज, लखनऊ में निराला जी के और मेरे मकान मालिक।

पढ़ चुका हूं। महादेव साहा दार्जिलिंग हैं। 'स्वाधीनता' से उनके समाचार ज्ञात हुए हैं। वह भी चंगे हों, यही कामना है। श्री यशपाल की आंखें खराब हैं। यह भी दुखद समाचार है। श्री घनश्याम अस्थाना से तो तुमने परिचय कराया था। शायद उन्होंने एक पुस्तक भी अपनी कविताओं की दी थी। उनकी हालत पढ़ कर मुझे अफसोस हुआ। वह कैसे बीमार पड़ गये? क्या यह वर्ष लेखकों-कवियों के संकट का वर्ष है?

कब आ रहे हो? पहले से लिख देना। तभी 'उर्वशी' पर विचार जानूंगा।

बीबी [बीवी] प्रयाग हैं। आने वाली हैं। जब आ जायें। २२ से २४ तक महोबा रहना है। शान्ति कमेटी से मास्को जाने की बात है। न जाऊंगा। इनकारी लिख रहा हूं।

सस्नेह तु० केदार

30, New Rajamandi
Agra
24-5-62

प्रिय केदार,

आज कलकत्ते जा रहा हूँ। लौटते काशी–प्रयाग आऊं गा। समय मिला तो प्रयाग से बाँदा आऊं गा–नहीं तो छुट्टियों बाद। जैसा होगा लिखूं गा।

तुम्हारा
रामविलास शर्मा

कलकत्ते में ३० May तक c/o स्वाधीनता [३३] Alimuddin street Cal. [Calcutta] और काशी में १० जून तक c/o C. B. Singh 47/1A Ramapura Banaras.

बांदा
२९-६-६२
प्रिय भाई,

लम्बे दौरे के बाद अब आगरे पहुंच गये होगे। बनारस तक का समाचार पत्रों से मालूम हुआ था। फिर बाद का हाल नहीं ज्ञात हुआ। कार्य सम्पन्न हुआ होगा और यात्रा सफल रही होगी। मैंने कोई पत्र नहीं भेजे कि तुम्हें मेरी ओर ध्यान न बंटाना पड़ जाये और तुम्हारे काम में बाधा पहुंचे।

तुम तो बांदा न आये। मैं आगरे आ रहा हूं। शायद १० या ११ जुलाई को एक बारात में आना है। बारात इलाहाबाद से आ रही है। मिलूंगा। पर फिर यह न करना कि तुम बांदा आना स्थतित कर दो। इधर अकारण वार हो रहे हैं हिन्दी पर। वाह रे नेतागण। वाह रे हम लोग।

यहां गरमी पैंतरे बदल-बदल कर जोम पर आती है और आज तो जलाये डाल रही है। नल में पानी नाम को आता है, हालांकि नदी से नल लग गया है। बड़ी परेशानी है सबको। कहार न होता तो मर गये होते।

आशा है कि तुम सब लोग आनन्द से हो। सबको यथायोग्य।

सस्नेह तु० केदार

३०, नया राजामंडी,
आगरा,
८-७-६२

प्रिय केदार,

२९/६ का कार्ड मिला। मैं ५/७ को लौटा। मनाता हूँ कि बरात देर से चले और तुम्हें यह कार्ड पहले मिल जाय। हो सके तो मेरे पत्र लेते आना; मैं यहाँ देख-दाख कर तुम्हें वापस कर दूँ गा। इससे बाँदा-ट्रिप केंसिल न हो गी। लखनऊ में अमृत के यहां से कुछ पत्र लाया हूँ। कलकत्ता, पटना, बनारस, वगैरह स्थानों से मालामाल हो कर लौटा हूँ। केवल दुलारेलाल के यहाँ सफलता न मिलने का सख्त सदमा है। बूंदा बांदी हुई है। गर्मी कुछ थमी है। मेरा मकान राजामंडी स्टेशन के पास पश्चिम की ओर है।

रामविलास

केदार नाथ अग्रवाल
एडवोकेट
बांदा (उ० प्र०) दिनांक १७-३-६३

प्रिय डाक्टर,

१६/३ के 'हिन्दी टाइम्स' में कल पढ़ कर मालुम हुआ कि दाहिना हाथ घायल[1] हो गया है और उसके बेकार होने की सम्भावना है। विनायक जी यदि यह ख़बर न छपाते तो हम तो यह हाल जान ही न पाते। अब कैसी हालत है? मैं आज ही भर फ़ुरसत में हूं—कल से कई दिन तक कचहरी में व्यस्त हूं। इसलिए अभी न आ पाऊंगा। शायद हवाई जहाज होता तो ज़रूर उड़ कर देख आता। वह सुविधा लेखकों के भाग्य में कहां है? दिल कचोट कर रह गया है। खैर। न पहुंचने पर भी मैं तुम्हारे पास हूं। तुम्हें देख रहा हूं। तुम्हारे साथ—सामने बैठा मौन ही बात कर रहा हूं। तुम रात को सो रहे हो, मैं आंखें खोल-खोल कर तुम्हारे हृदय की धड़कनें और उस घायल हृदय की

1. घायल हाथ—साइकिल से गिरने पर कंधे के पास दाहिने हाथ की हड्डी टूट गयी थी; कुछ दिन प्लास्टर चढ़ा रहा, फिर धीरे-धीरे ठीक हो गयी। घटना का विवरण मेरे १९-३-६३ के पत्र में है।

दृढ़ता को देख-सुन रहा हूं। यह न समझो कि कान ही सुनते हैं। आंखें भी ऐसे क्षणों में सुनने लगती हैं। कान तो दिन-भर के कोलाहल से सुन्न पड़ जाते हैं। तुम हंस भी रहें हो। यही जानदार आदमी की सबसे बड़ी पहचान है, मेरी तरह रो नहीं देते....ज़रूर कहीं-न-कहीं मेरे दिल पर कुछ आक्रान्त होकर बैठ गया है और अपनी (दिल की) स्थिरता गंवा चुका है। सब घर के लोग परेशान होंगे। व्याकुल होंगे। यह बड़ा घर जैसे स्वयं भी पट्टी बांधे पड़ा होगा। चारों तरफ, बाहर, दुनिया का चक्कर चलता होगा। मैं जैसे यहां मक्कर के फेर में निष्फल हो रहा हूं। ऐसी भी विवशता क्या कि मेरे पैर यहां से आगरा की ओर नहीं जा पा सकते।

तुम खातिर जमा रक्खो कि मैं समय पाते ही भाग आऊंगा। बैठ कर, बोल कर, कविता की पुस्तकें पढ़ कर, निराला पर बात कर, मैं तुम्हें तलवार की तरह चालू कर दूंगा। हाथ म्यान से बाहर निकल आयेगा जैसे तलवार। आज सबेरे ५ बजे निराला की वनबेला पढ़ रहा था। बड़ी मार्मिकता के साथ लिख सके हैं। आज के भारत का राजनीतिक नक्शा उभर आता है। सधे शब्दों से—फूलों की नोकों से—निराला ने दिल कुरेदा है—अपना-हमारा-नेताओं का [—] और हमारे देश की संध्या के बाद भी उषा ले आने में कमाल किया है। वह सुगन्ध का सिद्धि की तरह अन्तर से उठ कर छहरना मन मोह लेता है। इधर २ दिन हुए शायद....शुक्र की रात को इलाहाबाद से १० बजे रात आकाशवाणी से निराला की 'राम की शक्तिपूजा' की संगीतिका प्रसारित हुई थी। मैंने सुना। कई कलाकार पाठ कर रहे थे—स्त्री-पुरुष अलग-अलग। कंठों में आस्था, बल, विश्वास और महाकवि के प्रति ममत्व था। पर उस महान कविता को ग्रहण कर-कर के भी उसे वह पूरी तरह क्या अधूरी तरह भी अपने-अपने कंठों से बाहर नहीं निकाल पा रहे थे। कविता जैसे बदल कर—चोला बदल कर—आ रही थी। वह तो अपने असली रूप में तेज़, तराशी हुई, गंगा की तरह आकाश से पृथ्वी पर उतरती है, पूरे नाद और भाव-नृत्य के साथ। बल वेग भरा पड़ा है वहां। परन्तु यहां आकाशवाणी के प्रयोग में पड़ कर उसे कोई भगीरथ नहीं मिल सका—मिले तो अधकचरे कंठ के उत्साही युवक और युवतियां। उन्होंने प्रयत्न तो किया पर सम्हाल पाते तो कैसे कि लोच और लहर नाच जाती शब्दों के संग्राम में। प्रयास सराहनीय है। सफलता न्यून भी नहीं कह सकता। वह गायी गयी। ऐसी अदा से जैसे साधारण गीत गा कर कर्ण-मधुर बनाये जाते हैं। मधुरता की जरूरत नहीं थी, इस महान कविता के पाठ में। दो-एक स्थल ज़रूर हैं जहां वह हृदय चाहती है, स्नेह के अवसर पर खिलने के लिए। 'लतान्तराल का मिलन' वाली घटना की अदायगी कालिदास का वही 'मेघदूत' कर सकता है—ऐसे पिपिहरी बजाने वाले नहीं।

जिन्दा में तो किसी ने 'निराला' को आकाशवाणी में घुसने नहीं दिया। अब मरणोपरान्त वहां उनको प्रवेश कराया गया है। यह है हमारा छिपा द्वेष। धन्य है आकाशवाणी। पर इस सब पर भी बधाई देता हूं उन्हें जिन्होंने अपना कंठ और स्वर

दोनों दे कर उस कविता के [का] पाठ करने का साहस तो किया। उन्हें चाहिए कि एक महीने तक उसे घंटों अकेले में और समूह में बैठ कर डट-डट कर पाठ करें और जब-जब उसका जितना-जितना अंश अच्छा बन पड़े उस-उस अंश को रेकार्ड करते चलें। तभी उस कविता की अदायगी पूरे तौर से सम्भव है। १/२ [आधा] घंटे में उसका समग्र पाठ एक समय में पाठ करने वालों को, कई स्थलों पर पराजित कर देता है। अब इस कविता के बारे में ऐसा ही पाठ तैयार करना होगा।

मैं बहुत अर्से के बाद पत्र लिख रहा हूं। वह भी दुर्घटना के बाद लिख रहा हूं। मैंने मौन इसलिए धारण किया था कि तुम पुस्तक लिखने में एकाग्र चित्त रह सको और उस कार्य में बाधा न पड़े। अब तो विवश हो गया हूं इसलिए लिख रहा हूं।

मुझे पूरा विश्वास है कि तुम बायें हाथ का प्रयोग उसी बल और वेग से कर सकोगे जिस बल और वेग से दाहिने का प्रयोग करते रहे हो। मैं तो अब दाहिने से ही लिखता हूं। वह बेचारा साथ देता ही है। अब तक ठीक हुआ ही नहीं।

घर में मेरा सलाम सबको देना। हां, उस नाई को भी जो तुम्हारे घर मिला था और अब तुम्हें आराम देने आ जाता होगा।

इधर 'हिन्दी टाइम्स' में दिनकर के 'परशुराम' पर जो लेख छपा था वह मैंने पढ़ा था। इसमें खुलकर सच्चाई निकली है। इधर उर्वशी फिर पढ़ी थी। उसके लम्बे संवाद Tape Recorded से हैं। पता नहीं क्यों ऊंचे स्वर पर नहीं पहुंचती।

नागार्जुन बम्बई से पटना पहुंच गये हैं। पत्र आया है। उन्हें भी तुम्हारी हालत की सूचना दे रहा हूं। उन्होंने 'धर्मयुग' में मेरी कविताएं यहां से मांग कर, दी थीं और तब छपी हैं। तुम्हारे लेख भी उसमें आ रहे हैं। सब पढ़ रहा हूं। 'सारिका' में नागा बाबा आइने के सामने आपरेशन करने में सफल हुए हैं। रंगीन चित्र छपा है। हरे रंग में है। इधर वह बहुत तीखे हुए हैं। कुछ तो यह तीखापन चीन के आक्रमण के कारण है, कुछ बम्बई के कारण।

पार्वती[1] भी चिन्तित है। वह तुम्हें अपनी हमदर्दी भेजती है। कल उसने भी हाल पढ़ा। रात में बात होती रही। बार-बार मेरी ओर देखती रह जाती थी। जानती है न कि रामविलास मुझे बहुत मेरे हैं। मैं समझ गया था। मैंने कहा भी। हंस पड़ी। मगर उसके चेहरे पर भी मेरी तरह की चिन्ता व्याप गयी है। उसका भी तुम सबको सलाम है।

बेटियों को प्यार। मालकिन को नमस्कार।

सस्नेह, तुम्हारा
केदार

---

1. केदारजी की पत्नी। अब दिवंगत। [अ० त्रि०]

30, New Rajamandi
AGRA
19-3-63

प्रिय केदार,

कल दोपहर को तुम्हारा पत्र मिला। हिन्दी टाइम्स में अपना समाचार देखकर मैं तुरन्त समझ गया था कि इससे लोगों को मेरी स्थिति के बारे में भ्रम होगा। मैंने उसका प्रतिवाद लिख भेजा है। विनायक जी को गलतफहमी हुई। साइकिल से गिरने के पहले मैं यह सोचता जा रहा था कि केदार के संस्मरण लिखना चाहिए और मुझे तुम्हारे वे पत्र याद आये जो तुमने कभी बाँये हाथ से लिखे थे। यह सब परिवर्तित होकर समाचार में यों छपा है मानो तुम अब भी बाँये हाथ से लिखते हो और मेरे भी दाहिने से लिखने की कोई आशा न रही हो। ऐसी कोई बात नहीं, मेरा हाथ गौतम बुद्ध की अभय मुद्रा में प्लास्टर के कारण बराबर ऊपर उठा रहता है वरना दस्तखत तो मैं अब भी कर सकता हूँ।

चार तारीख को 'सुधा' की फाइलें देखने में बेलनगंज जा रहा था। उस दिन रात को और सबेरे कुछ वर्षा हुई थी। एक जगह एक लड़का साइकिल पर अपनी side छोड़कर कैंची काटता हुआ मेरे सामने आ गया। उसे बचाने के लिए मैंने जो ब्रेक लगाया तो कीचड़ में पहिया फिसल गया और मैं नीचे गिर पड़ा। रिक्शा करके मैं घर आ गया। पड़ोस के एक डाक्टर ने प्राथमिक चिकित्सा की। हाथ उठाया, तो उठ गया, इसलिए फ्रैक्चर का सन्देह नहीं था। दूसरे दिन X-Ray कराया तो कंधे के पास फ्रैक्चर निकला। ६ तारीख को प्लास्टर चढ़ा दिया गया। सम्भवत: ८-९ दिन में उतार दिया जायेगा। चिन्ता की कोई भी बात नहीं है।

नागरी प्रचारिणी सभा से सुधा की कुछ फाइलें मैंने मँगवा ली हैं। इनमें निराला जी के सम्पादकीय ढूँढ़ा करता हूँ। मिलने वालों की वजह से भी वक्त आसानी से कट जाता है। तुम यहाँ न आ सकने के कारण परेशान न हो। हमारे यहाँ आजकल गुलाब खूब खिल रहे हैं। एक पौधे में करीब २० फूल एक साथ खिले हैं और विजय के अनुसार उसमें ७२-७५ कलियाँ और लगी हैं। दिन में दो-तीन बार बरामदे में टहल कर फूलों का मुआयना कर आता हूँ।

लखनऊ से अमृतलाल नागर का पत्र आया है, जिससे पता चला है कि उनके लड़के शरद के भी काफी चोट आई है। होली पूजन के लिए जाते समय फिसल कर गिर पड़े थे। एक दिन मुंशी ने फोन पर सूचित किया कि होली खेलने को घर से निकलते समय वह भी गिरे और कमर के नीचे चोट आई है। X-Ray न कराने से पता नहीं कि चोट कैसी है।

मालकिन तुम्हारी श्रीमती जी को भेंट-भेंट कहती हैं। आशा है, सपरिवार सकुशल होगे।

तुम्हार
रामविलास शर्मा
(बकलम–विजय)[1]

बांदा
१९-४-६३
५ बजे शाम

प्यारे दोस्त,

अब तो काफी दिन ढरक कर चले गये–हाथ की पट्टी उतर गयी होगी–चोट ठीक हो गयी होगी। निश्चय ही अब अच्छी तरह से लेट सकते होओगे। कुछ समाचार तो लिखवा भेजो। जी हल्का हो।

डा० गुलाब राय नहीं रहे। उधर राहुल जी चल बसे। कल पढ़ा कि गोपाल सिंह नेपाली भी उठ गये। यह बड़े ख़राब समाचार आ रहे हैं। हिन्दी का हित नष्ट हो रहा है। फिर [भी] बल और विश्वास से हम सब को काम करते चलना है चाहे जितनी गाज गिरे और अहित हो रहा हो।

घर में सब लोग आनन्द पूर्वक होंगे ही। यहां भी ठीक-ठाक है। बच्चे बीमार चल रहे हैं। दवा हो रही है। ठीक हो जायेंगे। चिन्ता कुछ भी नहीं है। हमने भी सरकारी वकील बनने की दरख्वास्त दी है। मसला पेचीदा है। देखो क्या होता है? जो पहले थे वह अब वहां नहीं रहे। सरकार ने उन्हें हटा दिया है। मौसम माकूल जा रहा है यहां तो। ऊपर जा कर चाहे जैसा रहे।

मेमसाहब का सलाम। बेटियों को प्यार।

सस्नेह, तुम्हारा
केदार

आगरा
२१-४-६३

प्रिय केदार,

अब हमारा हाथ कागज़ पर सरकने लगा है। खाना खा लेते हैं, उससे हजामत भी

---

1. कंधे में फ्रैक्टर के कारण यह पत्र रामविलासजी ने अपने बेटे श्री वियजमोहन शर्मा से लिखवाया था। [अ. त्रि.]

बना लेते हैं। प्लास्टर के कारण जोड़ जकड़ गये थे और पेशियाँ ठिठुर गई थीं। हाथ को मोड़ने, उठाने आदि में कभी-कभी हड्डियाँ यों तड़तड़ टकराती हैं कि सत्य हरिश्चन्द्र की पिशाच-लीला का मज़ा आ जाता है। अभी दूर से देखने में भी दायाँ बायें से कमज़ोर मालूम पड़ता है। महीने-दो-महीने में बराबर आ जाये गा।

तुम्हारा
रामविलास

बांदा
२७-५-६३

प्रिय डाक्टर,

कल निमंत्रण पत्र[1] मिला। न भी मिलता तो पहले तो कह ही चुके थे।

मैं सम्मिलित न हो सकूंगा क्योंकि किरण को भेजने मुझे ही जाना है। मुझे हार्दिक खेद है कि इस शुभ अवसर पर पहुंच कर सबसे मिल न पाऊंगा।

मैं हृदय से अपनी शुभकामनाएं भेजता हूं।

सस्नेह, तुम्हारा
केदारनाथ अग्रवाल

२०-६-६३

प्रिय केदार,

मई में सेवा के अपेंडीसाइटिस का पता लगा था। ११ जून को फिर दर्द हुआ। उसका आपरेशन हो गया है। अभी अस्पताल में है। दो-चार दिन में घर आ जाये गी। हालत सन्तोषजनक है। अपने समाचार देना।

तुम्हारा
रामविलास शर्मा

बांदा
२६-६-६३

प्रिय डाक्टर,

पोस्टकार्ड कल मिला।

सेवा के आपरेशन की बात मालुम [हुई]। वह ठीक हो जायेगी—मेरा दृढ़ विश्वास है। जब घर जाये तब सूचना ज़रूर देना कि कैसी तबियत है?

1. निमंत्रण पत्र—मेरे मझले बेटे भुवन के व्याह का।

हम ठीक ही हैं। अब सरकारी वकील D.G.C. (फौजदारी) का हो गया हूं। उसी में व्यस्त रहता हूं।

गरमी बेहद पड़ रही है। कल बेटा और बीवी आ गये हैं। प्रयाग में थे।

तुम्हारी पुस्तक कैसी चल रही है? निराला जी पर कहां तक पहुंचे?

अपने हाथ का हाल लिख देते तो क्या कुछ बिगड़ जाता?

सस्नेह तुम्हारा
केदार

३०, नयी राजामंडी,
आगरा
८-७-६३

प्रिय वकील साहब,

पहले आप महज़ वकील थे, अब सरकारी वकील हुए; इस पर दिलोजान से बधाई!

सेवा चलने-फिरने लगी है और धीरे-धीरे कालेज भी जाने लगे गी। मेरा हाथ ठीक है, सिर्फ पीछे की तरफ़ मुड़ता कम है। जनाब पिछले हफ्ते वह गर्मी पड़ी कि मानो मई जून का सत निकाल लिया हो। बूँदी बादर का नाम नहीं। निराला जी वाली पोथी अभी सामग्री संग्रह की मंजिल से आगे नहीं बढ़ी। आज कल सुधा की फाइलें पलट रहा हूँ। ज़रा दौंगरा गिरे तो लिखना शुरू करें। आज से कालेज खुल रहा है। हमारा सेशन इजलास शुरू।

तु०
रामविलास

बांदा
५-११-६३

प्रिय डाक्टर,

इधर काफी अर्से से कोई समाचार नहीं मिला। आशा है कि सब ठीक है। अब तो चोट चल बसी होगी। पत्र देना और सूचित करना।

कल नागार्जुन आने वाले थे—दो दिन ठहरने के लिए। पर न कल आये—न आज।

हम लोग ठीक हैं।

कचहरी के काम में व्यस्त रहता हूं। पर्याप्त परिश्रम करना पड़ता है। लेकिन मुकदमें ऐसे सड़ियल आते हैं कि छूट जाते हैं। कहीं गवाह टूट जाते हैं—कहीं डाक्टर

चौपट किये रहते हैं। कहीं तफतीश कारिंदा बंटाधार किये रहते हैं। हम हैं कि अपनी मेहनत करते रहते हैं। बड़ा कठिन है न्याय सफल हो।

बेटा अशोक मद्रास गया है। ३ वर्ष के कोर्स के लिए। Technical Institute में पढ़ने। Film Photograhpy के लिए। अभी दशहरे में आया था। लौट गया। देखो वह किस राह पर चलता है।

बच्चों को प्यार।

सस्नेह तु०
केदार

परिशिष्ट

साहित्य-भण्डार के इस पहले संस्करण के लिए मित्रों ने सलाह दी कि 'मित्र-संवाद' की योजना से लेकर संपादन-प्रकाशन के दौरान केदारजी और रामविलासजी से सुझाव, निर्देश और शंका-समाधान या स्पष्टीकरण के लिए जो पत्राचार हुआ है, उसे भी इसमें शामिल किया जाय, ताकि इस ऐतिहासिक काम की पूरी प्रक्रिया पाठकों के सामने प्रस्तुत हो सके।

मित्रों की इसी सलाह का सम्मान करते हुए, 'मित्र-संवाद' की योजना से लेकर 'मित्र-संवाद' के लोकार्पण तक के पत्र इसमें प्रकाशित किये जा रहे हैं।

मैंने जो पत्र केदारजी और रामविलासजी को लिखे थे—स्पष्टीकरण या शंका-समाधान के लिए—वे मुझे उपलब्ध नहीं हो सके। इसलिए केदारजी और रामविलासजी ने मेरी जिज्ञासाओं के शमन के लिए या फिर 'मित्र संवाद' की सामग्री के संकलन या 'मित्र-संवाद' के लोकार्पण समारोह के सिलसिले में जो पत्र मुझे लिखे थे, उन्हें ही यहाँ तिथिवार दिया जा रहा है। इसमें रामविलासजी के 14 पत्र और केदारजी के 08 पत्र शामिल हैं।

रामविलासजी के पत्रों से यह साफ ज़ाहिर होता है कि वह इस पुस्तक को लेकर कितने सजग और संज़ीदा थे। जब भी कोई बात उन्हें सूझती थी, तुरन्त मुझे निर्देश देते थे। वह नहीं चाहते थे कि इसमें किसी तरह की गफ़लत हो। क्योंकि वह जानते थे कि 'मित्र-संवाद' एक अनूठा और ऐतिहासिक दस्तावेज़ है—न भूतो न भविष्यति।

14 जनवरी, 2010 **–अशोक त्रिपाठी**

सी-३५८, विकासपुरी
नयी दिल्ली-११००१८
दिनांक १४-५-९०

प्रिय अशोक,

मैं चाहता हूं केदार जी के ८०वें जन्म दिवस तक उनका और मेरा पत्र व्यवहार छप जाये। इस सम्बन्ध में मैंने शिवकुमार सहाय जी को लिखा है। तुम भी बात कर लेना। मैं सारे पत्रों की फोटो कापी करा लूं गा। इनके साथ जहां आवश्यक हुआ टिप्पणी दे दूं गा। आरम्भ में एक भूमिका हो गी। केदारजी के कुछ पत्र शायद कंपोज़ीटर न पढ़ पायें। उन्हें टाइप करा सकते हो। शेष सामग्री सीधे प्रेस में दी जा सकती है। पाण्डुलिपि मिलने के बाद उसे छापने के लिए चार महीने काफी हों गे या अधिक समय चाहिए? जैसा ठीक समझो, लिखना।

सप्रेम
रामविलास शर्मा

दिनांक ६-६-९१

प्रिय अशोक

इस लिफाफे में पत्र संग्रह की भूमिका है। उसके साथ तारीखवार कार्डों और पत्रों की सूची है। कार्डों की प्रतिलिपियां एक लिफाफे में हैं, पत्रों की दूसरे में। इन्हें टाइप करा लेना। फिर कार्डों और पत्रों को मिला कर सब को एक जगह व्यवस्थित कर देना।

कार्डों और पत्रों में जिन व्यक्तियों, रचनाओं, आदि की ओर संकेत हैं, उन पर मैंने संक्षिप्त पाद टिप्पणियां लिखी हैं। ये सब पत्रों के साथ नहीं हैं, अलग से कागजों पर एक साथ लिखी हैं। पत्र लेखक का नाम और तारीख इधर है, नीचे टिप्पणी है। जब पत्र टाइप कराओ, तब पत्र के नीचे यथास्थान टिप्पणी दे देना। तुम जहाँ आवश्यक समझो, अपनी ओर से टिप्पणी दे सकते हो टिप्पणी के बाद अ० लिख देना जिससे तुम्हारा योगदान पहचाना जा सके।

कुछ पत्र मैं बांदा ले गया था, मित्रों को सुनाने के लिए। बहुत ढूंढ़ने पर भी वे मिले

नहीं। जब मैं पत्र सुना रहा था, तब कुबेरदत्त ने सारी बातचीत रिकार्ड कर ली थी। उनसे उसे प्राप्त करके साधारण कैसेट पर उतार लेना। फिर उसे लिपिबद्ध कर लेना। पूरी बातचीत के साथ पढ़े गये पत्रों के अंश परिशिष्ट में दे देना।

जहां अपनी ओर से तारीख देना हो, कोई शब्द जोड़ना हो या गलती सुधारनी हो तो यह काम [ ] बड़े कोष्टकों में करना चाहिए। बड़े कोष्टक देने में प्रेस को कठिनाई हो तो छोटे कोष्टकों ( ) से काम लेना।

संग्रह का नाम मित्र संवाद रखा है। चाहो तो उसके नीचे यह इबारत दे सकते हो : केदारनाथ अग्रवाल और रामविलास शर्मा का पत्र व्यवहार। हर पत्र के ऊपर बायीं तरफ लेखक का नाम दे देना। पूरा नाम लिखना जरूरी नहीं है केदार और रा० वि० से काम चलेगा। कार्ड या लिफाफे पर पत्र पाने वाले का पता लिखा रहता है। उसे देना जरूरी नहीं है। पत्र लेखक स्वयं जहां अपना पता लिखता है वह दे देना। कहीं चकल्लस, चिंतन आदि के लेटर हेड पर चिट्ठी लिखी गयी हैं। उन पत्रों, संस्थाओं आदि का नाम वैसा ही छपा देना।

सप्रेम

रा० वि० शर्मा

प्रिय अशोक

जो पत्र मैं बांदा ले गया था, उनके अतिरिक्त भी कुछ और पत्र मिले हैं। सारी सामग्री भेज रहा हूं। साथ में यह पत्र सूची है और कुछ पत्रों पर पाद टिप्पणियां। भूमिका जहां समाप्त होती है वहां पुनश्च जोड़ देना। जिन्हें देखने तुम अस्पताल गये थे, उनके समाचार देना।

सप्रेम

रा० वि० शर्मा

१८-६-९१

पाद टिप्पणियां

5-11-43 नाटक-शायद जनयुग में प्रकाशित मेरा कोई नाटक।

10-11-43 छमाही प्रकाशन-योजना कार्यान्वित नहीं हुई।

दिसंबर 56 बिटिया का आपरेशन—मझली बेटी सेवा के अपेन्डीसाइटिस का आपरेशन।

24-3-57 संस्मरण—निराला के।

17-12-58 हर्जन—उन्नीसवीं सदी के रूसी जनवादी लेखक।

8-9-64 पानी गिरने से इस पत्र के कुछ शब्द मिट गये।

1-8-65 शमशेर पर लेख—'धर्मयुग' में प्रकाशित।

4-1-68 धोखार-जानवरों को धोखा देने के लिए खेत में आदमी का पुतला।

19-11-73 कार्ड में कमल का फूल बनाया था पर शायद वह पहचान में न आता था।

30-9-56 मेरे पत्र पर उत्तर देने की तारीख केदार ने लिख दी थी।

न० दि० १८

२३-६-९१

प्रिय अशोक

'मित्र संवाद' की भूमिका में जहां मुंशी से केदार के अलग वेवलेन्थ पर बात करने की चर्चा है। वहां मैंने लिखा है : दोनों ने उपन्यास अधूरे लिखे और वे प्रकाशित नहीं हुए; वहां नीचे यह पाद टिप्पणी दे दो :

केदार का पतिया उपन्यास १९८५ में प्रकाशित हुआ था। इसके प्रकाशकीय वक्तव्य के अनुसार उनका अधूरा उपन्यास बैल बाजी मार ले गया शीघ्र प्रकाशित होगा। मुंशी का अधूरा उपन्यास दीनू की दुनिया हमारे पारिवारिक पत्र 'सचेतक' में छप रहा है। पर जिस समय केदार मुंशी से उपन्यासों की चर्चा कर रहे थे, उस समय उनके उपन्यास अप्रकाशित थे।

सप्रेम

रा० वि० शर्मा

न० दि० १८

१७-७-९१

प्रिय अशोक

तुम्हारा १२/७ का पत्र मिल गया। पत्र यों छपने चाहिए कि पढ़ने वाले को लगे, पत्र मूल रूप में उसके सामने हैं। अंग्रेजी का जहां जैसा प्रयोग हुआ है, तिथि जहां जैसे लिखी गयी है, सब वैसे ही दो। जहां तिथि अपनी ओर से दी हो, वहां ब्रैकेट में उसे दो। वर्तनी की या तिथि संबंधी गलती हो तो उसे भी वैसे ही छापो। ब्रैकेट में शुद्ध रूप दे दो। लेटर पैड की अंग्रेजी या हिन्दी भी ज्यों की त्यों दो। पता अंग्रेजी में हो तो उसे वैसा ही दो। नाटक में संवाद होते हैं, संवाद के साथ पात्रों के नाम होते हैं, वैसे ही पत्र के ऊपर भेजने वाले का नाम देना उचित है, पर यहां दो जनों का ही संवाद है इसलिए नाम दिये बिना काम चलेगा। पत्र संग्रह के साथ तुम जो परिश्रम कर रहे हो, पत्र पढ़ते

समय तुम्हारी जो प्रतिक्रिया हुई, उस पर अपना वक्तव्य पुस्तक में दे दो। अक्टूबर की जगह नवंबर की तिथि वाले पत्र का ब्यौरा भेजो। पहला वाक्य और अंत में पड़ी तिथि। पुनश्च वाले अंश में 'इति' के बाद ये वाक्य जोड़ दो 'शिवकुमार सहाय हिन्दी प्रकाशकों में परम सौभाग्यशाली हैं कि केदारनाथ अग्रवाल की सारी पुस्तकें उन्होंने छापी हैं। यह प्रसन्नता की बात है कि यह पत्र संग्रह भी वही छाप रहे हैं। मै उनके प्रकाशन कार्य की सफलता के लिए मंगल कामना करता हूं।' सहाय सम्बन्धी वाक्यों के पहले पुनश्च नहीं लिखना।

सप्रेम

रा० वि० शर्मा

नयी दिल्ली

१-८-९१

प्रिय अशोक

कल दोपहर की डाक से तुम्हारा २७/७ को डबल कार्ड मिला। आज सबेरे की डाक से उत्तर भेज रहा हूं।

१. १०-२-४३/४६ का मेरा पत्र। मेरे पत्रों में यह नहीं है। यह उन पत्रों में तो नहीं है जिनकी फोटो प्रतियां तुमने भेजी थीं? जो भी हो इसकी फोटो कापी भेजो तब कुछ कहूं।

२. २२-८-५६ के मेरे पत्र में फ्रान्सीसी कवि का नाम RONSARD .

३. २१-५-४० के मेरे पत्र में 'समर्पण' की पंक्ति : क्रुद्ध जब ज्येष्ठ प्रभंजन, स्रस्त पत्र, संत्रस्त धरित्री धूलिभरा आकाश [स्र = स् + र]

४. मेरे पत्र-१०-९-४२ में

'अमरुद' सा criticism [सा = जैसा]

५. केदार के ५-१-४३ में अशोक = रामविलास शर्मा

६. कान्ता पित्ती की पुत्री ही होंगी। 'सुनहरे शैवाल' पुस्तक केदार को भेजी हो गी। उन्हें ज्यादा मालूम हो गा।

७. १३-४-४५ के मेरे पत्र में पुस्तकों के नाम :

14. Congress and Communists

19. OREL (Defence of Soviet city. Illustrated)

20. REMINISCENCES of K. Marx

21. MARX : Wage, Labour and Capital

29. A New Germany in Birth

32. ARMY OF HEROES

८. 17.4 (44) का मेरा कार्ड। तुम्हारा आशय 12.10. (44) से होगा। I wanted your MSS [= manuscript) only for suggestions re [= regariding] language & [= and] metre. So glad, you are sending it. Lucknow meeting dates are now 28-29 can you come?

९. केदार के 18.10.47 के पत्र में लाला साहब = केदारनाथ अग्रवाल ठाकुर साहब = वीरेश्वर सिंह ('भारतेन्दु युग' केदार को समर्पित थी)

१०. मुंशी के नाम केदार का 26.8.47 का पत्र। अंत में हस्ताक्षर नहीं है। संभवत: अगला पृष्ठ खो गया है।

११. मेरे 6.9.38 के पत्र के अंत में मेरा हस्ताक्षर नहीं है।

१२. केदार के 1.2.57 के पत्र में Ode to a Nightingale ही है।

सप्रेम

रा० वि० शर्मा

१.८.९१

पुनश्च

(१) तुमने केदार के ५.१.४३ के पत्र का हवाला देकर अशोक के बारे मे पूछा है। यह पत्र ५.१२.४३ का है फाइल में लगाने के लिये छेद किया। (२) का अंक कट गया। पृ० २ पर है। घोखा। पृ० ३ पर (घोटते)।

पृ० ४ पर। (उस भदेस में।; (और)।

पृ० ५ पर (तुम्हारे) : (सकता) पृ० ६ पर (नागर); (आओगे)।

(२) केदार का एक पत्र १०.?.४४ का है। फोटो कापी में शायद महीने की संख्या लिख दी हो। अनुमानत: पत्र १०.११.४४ का है। १०.११ (?)४४/– ऐसे छाप सकते हो। पत्र के पृ० २ पर कटा अंश (प्रयाग) है।

(३) केदार के २६.८.४७ के पत्र के सिलसिले में तुमने पूछा है : 'चित्त प्रसाद (चित्रकार) कौन हैं?' चित्तप्रसाद चित्रकार हैं, और कौन हैं? उस समय कम्युनिस्ट पार्टी के पत्रों में इनके बनाये चित्र खूब छपते थे। और जहां कठिनाई हो, निस्संकोच लिख देना।

सप्रेम

रा० वि० शर्मा

७.८.९१

प्रिय अशोक

तुम्हारा ३/८ का पत्र आज दोपहर की डाक से मिला। केदार का ५.१२.४३ का पत्र : तुम्हारा अनुमानित 'घोखते' सही हो सकता है। मुझे उस समय 'घोटते' ही सूझा था।

केदार का 10.11.44 का पत्र। कापी में 10.2.44 है तो उसे ही ठीक मानो।

अशोक नाम से दो तीन कविताएं लिखी थीं, ज्यादा नहीं। 'एक भूल शायद मुझसे आपको पत्र भेजते समय हो गयी। दरअसल 10.2.46 की जगह 10.2.43 के पत्र के बारे में मेरी जिज्ञासा थी।' शायद का अनिश्चय दरअसल से निरस्त हो गया है। दूसरे पृष्ठ पर नीचे से बारहवीं पंक्ति में 'सत्यशट' नहीं 'सत्यशूल' है।

6.10.(44) के मेरे कार्ड में दूसरी ओर : Send the Mss to me if possible before sending to press. Take suggestions from as many friends as possible. I offer myself as one, yours.

जिस कार्ड के अंत में मैंने 3.11.61 तारीख लिखी है, वह 3.10.61 का है। आगरे और बांदा की डाकमुहरों में 3 OCT. और 5 OCT. स्पष्ट हैं।

मेरे 31.8.38 के पत्र के अंत में 'मुर्गा' इस शीर्षक से केदार का लेख है। तुम इस इतवार को अंग्रेजी में लिखे सारे पत्र पढ़ जाओ। ज्यादा न होंगे। घंटे भर में देख लो गे। यदि कहीं-कहीं अस्पष्ट लगें तो उन स्थानों के बारे में पूछ लो। बहुत जगह अस्पष्टता हो तो पत्र की तारीख लिख दो, मैं पूरा पत्र नकल करके भेज दूं गा। कुछ कार्डों की नकल अग्रिम भेज रहा हूं।

16.2.45

I Shall send you the Photograph & [= and] books Trans. next week. I am leaving for Allahabad tomorrow to see Nirala ji. I had a very disturbing letter from Narottam. Meet me there Sunday morning if possible. Do try to come. Yours.

Agra
7.3.45

Nirale ji is here for a few days. Come this Saturday if poosible. I have called SUMAN also. We will go to Surdas's Runakta on Sat. Do come. Yours [हम लोग रुनक्ता सूरदास का स्थान देखने गये नहीं]

28.3.45

I am busy with examination so, I shouldn't be able to leave Agra. Narottam will come here in Easter. Why not you also? Do come. If you do, bring the books for which you have not paid or send me money for them. You will also get books for translation here. Do come. Yours.

569, Wright Town Jubbulpore
5.5.45

I have over stayed here. I have to go to Allahabad & Lucknow. Then if I find time, I shall come to Banda It is likely. I may have to postpone this visit. Hope you will by excuse Leaving here on 9th.

[आगरा]
20.12.48

Kindly drop me a line about your writing work, since we last met.

If possible come to LKO on 27th.

Calcutta-29
२४-६-५९

Your Lordship,

It is a matter of gratification to know that you read letter from one end to the other. Be so kind as also to make it clear as to which end you start from. Your Lordship is gracious enough to note that his humble servant is a master of arts of apologies and graceful enough to forget his own Ph. D. is this line.

Mi. Lord's writ of mandamus has arrived on a 5 N.P. post card. May I hope that the order forfeiting my estate would arrive in a [10] N.P. inlander? I look at books only in the library except when I am disturbed by the chattering or whispering of unscholarly maidens around.

नयी दिल्ली-१८

९.८.९१

प्रिय अशोक,

कल तुम्हें एक लिफाफा पोस्ट किया है। बाद को मुझे ध्यान आया, 3.11.61 वाले पत्र को 3.10.61 का बनाने के लिए ही तुम्हें प्रेस न भागना पड़े। इसलिए मेरा सुझाव है, जहां ऐसे परिवर्तन हों, उन्हें एक जगह नोट करते जाओ। पुस्तक के अंत में अपनी टिप्पणी दे देना और उसमें उन सब का उल्लेख कर देना, पाठक यथास्थान संशोधन कर लेंगे—आवश्यक समझें गे तो वैसे शायद 3.11.61 तक अभी न पहुँचे होंगे। तब कार्ड के अंत में 3.11.61 के बाद ब्रैकेट में 3.10.61 दे देना।

विजय दिसंबर में बाहर जा रहे हैं। 2 अक्टूबर को लौटेंगे। उसके बाद मुझे यहां से निकलने में सुविधा होगी। मुझे तीन हफ्ते बनारस रहना है, केदार समारोह से पहले या बाद को। इस बात का ध्यान रखते हुए समारोह की तिथि निश्चित करो तो अच्छा हो गा, समारोह बांदा में हो गा या प्रयाग, इसके बारे में पक्की बात लिखो। रिजर्वेशन में समय लगता है, इसलिए तारीख की जानकारी काफी पहले हो जानी चाहिए।

सप्रेम

रा० वि० शर्मा

नयी दिल्ली-१८

१३.८.९१

प्रिय अशोक

दोहपर को तुम्हारा ११/८ का पत्र मिला। तुम्हारी 'जिज्ञासाएं'

1. विष्णु भगवान = चंद्रबली सिंह (मेरे 30.9.58 के पत्र में)

2. केदार के 1.6.59 के कार्ड की अंतिम पंक्तियां

that you be always prompt in letter writing [,] else all your estate will be forfeited.

(बताना, एक ही पंक्ति छूटी थी या कई छूटी थीं।)

3. मेरा पत्र 12.5.72 का Love at 60 ही है या और कुछ?' और कुछ कैसे हो सकता है जब मैं 72 में साठ का हो रहा हूं?

4. 'आपके 2.5.90 के पत्र पर स्याही गिर गयी है' यह कार्ड मेरे पास नहीं है। फाइल में अंतिम कार्ड ५.४.९० का है, इसके बाद के और कोई कार्ड हों तो लिखना ढूंढूं गा, शायद और कहीं रख दिये हों। वैसे स्याही गिरने से मूल पत्र भी अपाठ्य हो गा। जितना समझ में आये, उतना दे देना।

5. केदार का पत्र।

Banda
13.4.45

My dear Sharma,

Excuse me for being late in giving your reply. I shall wright to you later on in full detail. At present I am very busy with a murder case which is to last for a fortnight.

Where is Nagar? Has he gone to Bombay for the job? I am sorry to have failed in seeing you there at Agra as I could not reach there.

What news? Where will you go in Summer Holidays ? Reply soon.

Your
Kedar

पुस्तक के कुछ अंश कहीं छपाना चाहते हो, छपा दो। मुझे कोई आपत्ति नहीं है। पिछले पत्र में लिखना भूल गया था। 28.3.45 और 20.12.48 के मेरे कार्ड पुस्तक में देना जरूरी नहीं है।

'दल बंधा मधुकोश गंधी' [1]जब सुनने को मिले तब है। इधर केदार का पत्र नहीं आया।

संभव है मेरी पुत्रवधू भी अगले महीने बाहर जायें। तब मैं १५ सितंबर तक बनारस पहुंच जाऊं गा।

सप्रेम
रा० वि० शर्मा

न० दि० 18.
दिनांक 30.8.91

प्रिय अशोक,

२५/८ का पत्र परसों मिला। तुम्हारे लौटने तक यह उत्तर पहुंच जाये गा।

मैंने सब अलमारियों के कागज पत्र देखे, ५.४.९० के बाद के मेरे पत्र मेरे पास नहीं

1. केदारजी का यह गीत पंडित जसराज ने संगीतबद्ध किया है।

हैं'। एक संभावना यह है कि विजय ने जेरौक्स प्रतियाँ दी हों, मूल पत्र उन्हीं के पास रह गये हों। पर वह तो विदेश गये हैं। १.८.६५ के पत्र की प्रतिलिपि के ऊपर है 'स्वाधीनता' का पता 33 अलीमुद्दीन स्ट्रीट कलकत्ता। सेवा का आपरेशन एक ही बार हुआ था पर उसे और कष्ट भी थे। 'अवतार' प्रबंध काव्य की एक पंक्ति नहीं लिखी। स्व० महावीर प्रसाद मालवीय, पेशे से क्लर्क, बड़े साहित्य प्रेमी, हम सब लोगों के बुजुर्ग मित्र थे। 'मोटे' के बारे में कुछ याद नहीं।

मैं १७/९ को लखनऊ जाऊं गा। दस दिन बाद वहां से बनारस। पत्रों के बारे में और जो कुछ पूछना हो, १५/९ तक पूछ लो।

सप्रेम

रा० वि० शर्मा

नयी दिल्ली-१८

१२.९.९१

प्रिय अशोक

९/९ का पत्र मिला।

१. संपादक के रूप में अपना नाम अवश्य दो यह तो उचित ही है, मुझे प्रसन्नता हो गी।

२. विजय यहां नहीं हैं। अपना चित्र भेजना कठिन है। सुझाव: आवरण के पूरे पृष्ठ पर केदार का चित्र दो; पीछे की ओर पूरे पृष्ठ पर मेरा वह चित्र दो जो पहल में छपा था। न मिले तो लिखना, कोई और व्यवस्था करें गे।

३. पुस्तक के भीतर या बाहर मेरे नाम के साथ 'डॉ०' मत लगाना।

४. चौबे, मुंशी, अवस्थी—मुझसे क्रमश: छोटे भाइयों के नाम हैं, बड़े भाई के दिये हुए।

५. १८, १९, २० की तारीखें [1]ठीक हैं। तुम बनारस से मुझे ले जाना, वहीं छोड़ आना।

६. १५-१६/९ को जनकपुरी (सी-१ए/४३बी) में रहूँ गा, १७-२८/९ को २९ अलकापुरी अलीगंज, लखनऊ; २९/९ से ६/१० तक : न्यू जी ३३, हैदराबाद, बी० एच० यू० वाराणसी में।

तुम इस समय काफी परेशानी में हो गे। आगे के दिन कुशल पूर्वक बीतें, मेरी मंगल कामना है।

सप्रेम

रा० वि० शर्मा

---

1. 'मित्र-सवांद' के प्रकाशनोत्सव की प्रस्तावित तारीखें।

काशी २२१००५

७.१०.९१

प्रिय अशोक

३/१० का पत्र आज मिला। शुभ कामनाओं के लिए धन्यवाद। तुम्हारी परेशानियों का कुछ अनुमान पहले से था, पत्र से जाना, वे अनुमान से बहुत ज्यादा थीं। पुस्तक के लिए स्वास्थ्य की बलि देना उचित नहीं। दिवाली तक तो मैं यहां रहूं गा ही। तुम्हारी जिज्ञासाएं : (१) व्यास; संभवत: एच० के० व्यास; जयपुर निवासी; जनयुग संपादक, जन प्रकाशन गृह (पी०पी० एच०) का कार्य भी देखते थे। (2) रणधीर सिन्हा, दिल्लीवासी लेखक, अब स्वर्गीय। मुझ से संबंधित पुस्तक प्रकाशित नहीं हुई, (३) मालकिन का देहान्त १४ अगस्त को प्रात: काल यहीं काशी में सन् १९८४ में हुआ था। केदार के पत्र में 17.8 ठीक है। 74 की जगह 84 होना चाहिए।

(4) 'अन्य पुस्तकों का विमोचन तो आप करेंगे'। बहुत ख़ूब मैं इस विमोचन प्रथा का सख़्त विरोधी हूं। तुम चाहे जिससे विमोचन कराना; 'मित्र संवाद' का विमोचन न हो गा, मैं केवल उसकी एक प्रति केदार को भेंट कर दूं गा। बस। (५) मैं किसी विषय पर न बोलूं गा, पहले लिख चुका हूं।

सप्रेम

रा० वि० शर्मा

काशी २२१००३

११.१०.९१

प्रिय अशोक

८/१० का पत्र मिला। हमने चंद्रबली सिंह से बात कर ली है। उन्हें तुम्हारा पत्र भी दे दिया है। तुम २५/१० की रात के बदले शाम को बनारस पहुंचो। होटल में ठहरने के बदले तुम सीधे चंद्रबली के यहां आओ। रात को वहीं रहो, वहीं खाना खाओ, सबेरे पांच बजे उन्हें लेकर मेरे यहां आ जाओ। मैं सवा पांच बजे तैयार मिलूं गा। यहां से भुवन को साथ लेकर इलाहाबाद चलें गे। नित्य कर्मवाला प्रात: कालीन कार्यक्रम वहीं संपन्न हो गा।

वाराणसी स्टेशन के पास इंग्लीशिया लाइन त्रिमुहानी; वहां से लहुराबीर की तरफ बढ़ो; गोल चक्कर वाला चौराहा पार करते हुए ४०० गज फासले पर बड़ा होटल; आगे चौमुहानी; बायीं तरफ की सड़क मलदहिया जाती है। १५० गज पर मोड़; यहां से दायीं तरफ सड़क विवेकानंद नगर को। वहां मकान नंबर ९० के आगे नारियल का पेड़ है। यहीं श्री चंद्रबली रहते हैं। घर के आगे सड़क है, गाड़ी पहुंच जाये गी।

मलदहिया मशहूर कालोनी है, स्टेशन के पास है। वहां किसी से भी विवेकानंद नगर पूछ सकते हो। चंद्रबली को सबेरे समय से साथ ले चलने का एक ही तरीका है–रात को उन्हीं के यहां रहो।

सप्रेम

रा० वि० शर्मा

बांदा/20-6-91/ पिन- 21000

प्रिय भाई,

पत्र मिल गया—उत्तर विलम्ब से दे रहा हूं। पुंडरीक को कल डा० R. V. Sharma के 15 पोस्टकार्ड दे दिये थे। वे नकलें + मूल आपके पास भेज देंगे। अब कोई पत्र मेरे पास नहीं है।

अब TV[1] में काम मिल गया तो डटकर काम करना चाहिए। वैसे इधर की याद तो आयेगी ही। दिल्ली के अभ्यस्त नहीं हो, इससे कुछ दिनों ऊब लगेगी। मुझे विश्वास है कि इससे उबर सकोगे।

- दूरियां तो होंगी ही, सब पर विजय पा लोगे।
- डा० शर्मा ठीक ही होंगे। मैं ठीक हूं।
- आवारा साहब[2] कल अपील के फैसले से जुर्म से छूट गये। अब चैन मिली। कल दोपहर अदालत के फैसले के बाद मेरे घर आकर मुझे सूचित कर गये। शाम नमकीन भी खाने को दे गये।
- मद्रास से कोई पत्र नहीं आया कि वहां क्या हाल है?
- सहाय सा० का पत्र आया था। ठीक हैं।
- यहां पंडित जी वगैरह + सभी परिचित मित्रगण सकुशल हैं।

सस्नेह तुम्हारा
केदार

1. मैंने 19.4.1991 को दूरदर्शन महानिदेशालय, दिल्ली में सहायक नियंत्रक (कार्यक्रम) का पदभार ग्रहण किया था।
2. एहसान कुरैशी आवारा—उर्दू के शायर केदारजी के शुभचिंतक। सोवियत लैण्ड नेहरू सम्मान से सम्मानित। अब स्वर्गीय।

बांदा/ उ० प्र०/ पिन- 21001

दिनांक 27-6-91 10.00 A.M.

प्रिय भाई,

पत्र के साथ 'मित्र-संवाद' की भूमिका की प्रतिलिपि २५/६ को मिली। एक पोस्टकार्ड भी अलग से मिला। सहाय साहब का एक पत्र भी मिला। जयपुर से लौटकर वह तुमसे २२-२३/६ को मिले होंगे। पुस्तक दिल्ली से ही छपाने की बात लिखी है। मैंने अभी डॉ० शर्मा को भी भूमिका पाने की सूचना दे दी है—उसकी रुचिकर होने की बात भी संक्षेप में लिख दी है। बड़े धैर्य से साफ शब्दों में ९/१० पृष्ठ लिखे हैं। छपेगी तो महत्व की पुस्तक होगी।

मैंने 17 पत्र (Dr. शर्मा) पुण्डरीक को दे दिये थे। उन्होंने कश्यप से उनकी प्रतिलिपियां कराईं और सब सामग्री Reg. डाक से तुम्हें भेज दी हैं। मिल गई होगी। मैं ठीक हूं चिन्ता न करो। डॉ० शर्मा को भी पत्र लिख कर अपने ठीक होने की इत्तला दे दी है।

वर्तमान साहित्य में (जून में) सत्य प्रकाश मिश्र का लेख मेरे बारे में छपा है। बढ़िया है। पढ़ना।

सस्नेह तुम्हारा

केदार

बांदा (उ० प्र०) 21001

दिनांक ८-७-९१

प्रिय भाई,

3/7 को राष्ट्रीय प्रसारण सेवा में 'अनहारी हरियाली'[1] की समीक्षा प्रसारित न हुई। मैंने इन्दु जैन को कार्यक्रम करते सुना। हो सकता है फिर कभी प्रसारित हो। हो सकता है मेरे सुनने से पहले प्रसारित हो गयी हो। कोई बात नहीं है।

- पुंडरीक ने पत्र की प्रतिलिपियां और पत्र तुम्हारे पास भेजे थे मिले होंगे।
- ठीक हूं बड़ी गरमी है। मेघ महाराज ने कृपा दृष्टि नहीं की। धरती और हम लोग तड़प रहे हैं।
- आशा है कि तुम अपने काम में पूरे मनोयोग से लगे होओगे।

---

1. केदारजी की कविता पुस्तक

- सहाय साहब पहुंचे थे या नहीं। मुझे तुम्हारे पास पहुंचने की बात लिखी थी। क्या कर गये? कहां से पुस्तक छपेगी।

सस्नेह तुम्हारा

केदारनाथ अग्रवाल

बांदा (उ० प्र०) पिन- 21001

दिनांक 24-7-91

प्रिय भाई

- 16/7 का पोस्टकार्ड मिल गया था। अब उत्तर दे रहा हूं।
- श्री इंदरराज वैद्य का तबादला मद्रास हो गया—वह वहां पहुंच गये होंगे।
- मैंने 17/7 को Radio नहीं सुना। सो गया था। प्रसारित होगी ही चाहे जब हो।
- 'मित्र संवाद' की भूमिका का 'पुनश्च' भाग भी डा० शर्मा ने तुम्हें दे दिया। पत्रों को भी दे दिया—चलो अच्छा रहा।
- तुम्हें रोमांच हो जाता है, यह भी बड़ा सुखद समाचार है। पाठक भी ऐसे ही पत्र पढ़ कर रोमांचित हों। 'पोल खुले'—डर नहीं है।
- अभी इतनी कविताएं नहीं हुईं कि नया संकलन तैयार कर सकूं और सहाय साहब को भेज सकूं।
- इलाहाबाद के घर में सब ठीक होगा।
- कुछ कमी हुई गरमी में।
- पानी बरसा [लेकिन] झमाझम नहीं। बादल आये-छाये-गड़गड़ाये-थोड़ा बरस कर रह गये।
- सभी लोग ठीक हैं।

सस्नेह तुम्हारा

केदारनाथ अग्रवाल

बांदा 5-8-91 - 3 PM

प्रिय भाई

३०/७ का पत्र मिला, अभी 1 P.M.। मैंने अंग्रेजी का वह शब्द बार-बार पढ़ने का प्रयास (किया) पर वह क्या है, मैं नहीं समझ सका। डायरी भी 1956 की खोज

निकाली। पर वहां भी 13-11-56 के आसपास कुछ नोट नहीं है कि लखनऊ में किसलिए जाना था। वही प्रगतिशील लेखकों की कोई बैठक होगी। याद नहीं आता कि कैसी बैठक थी। जैसा लिखा है वैसा ही जाने दो। ठहरो वह PROJECT है।

- मैंने 17/7 को नहीं सुना समीक्षा।
- मैं दिल्ली नहीं आ सकूंगा। विजेन्द्र जी व सहाय जी यहीं आयें। एक पत्र उनका मेरे पास भी आया था। उत्तर दे दिया था। राजेश जोशी को देने की बात भी मैंने लिख दी थी। अब जैसा उचित हो वैसा निर्णय तुम्हारी राय के बाद लिया जाये। जब वे लोग आयेंगे तब बात फिर होगी।
- पुंडरीक से कह दूंगा कि वे मेरी कविताएं लिखकर भेज दें, अगर न भेजी हों।
- मेरा नया संकलन अभी इतनी कविताओं का नहीं है कि पुस्तक के रूप में छप सके।
- आवारा को पत्र मिल गया था—कह रहे थे। उत्तर दिया होगा। ठीक हूं। वह शब्द अवश्य ही PROJECT होगा।

सस्नेह तु०
केदारनाथ अग्रवाल

बांदा ९-८-९१
11 बजे दिन
प्रिय भाई,

- 12 कविताएं कल डाक से लिफाफे में भेज चुका हूं—मिल जायेंगी। हाल भी लिखे।
- आज अभी डाक से पत्र व 'पुनश्च' मिला।
- 'कान्ता' —यह कल्पना वाले बद्रीविशाल पित्ती की सगी बहन हैं। कविता लिखती थी 'कृति' नाम का मासिक पत्र दिल्ली से नरेश मेहता—श्रीकांत वर्मा के साथ निकालती थीं। वह कविता लिखती थीं। उनके काव्य-संकलन दो हैं—
  1. जो कुछ भी देखती हूं (1960)
  2. समयातीत (1964)

  दिल्ली में ग्रेटर कैलाश में रहती थीं। वह बम्बई के अस्पताल में दिवंगत हुईं। मुझे उनकी कविताएं बहुत प्रिय लगती थीं। डा० शर्मा 'अशोक' नाम से लिखते थे या नहीं याद नहीं। उन्हीं से पूछो। किस और नाम से लिखते थे राजनीतिक कविताएं—वह बतायेंगे।

'पुनश्च' पढ़ लिया।

'सुनहरे शैवाल' यह अज्ञेय का काव्य-संकलन है। मैंने पढ़ना चाहा तो कान्ता को लिखा कि एक प्रति भेजवायें। उन्होंने अपने दाम से मुझे भेजा था —अब भी मेरे पास है।

जब रूस जा रहा था तब मुझे अपने घर में खिलाया था।

- मित्रों से हाल बोल दूंगा—आवारा से कह दूंगा।
  कविताएं भेजी हैं। शायद बाद को सुधार करूं।

सस्नेह तु०

केदारनाथ अग्रवाल

बांदा

८-११-९१

प्रिय भाई,

- अब तुम अपने काम में लग गये होओगे। इलाहाबाद का आयोजन[1] खूब अच्छा रहा।
- मैं यहां सकुशल सबके साथ चम्बल से दिन के 1 बजे पहुंच गया था—रास्ते में कोई कष्ट नहीं हुआ।
- कल 'मित्र-संवाद' में तुम्हारी बात पढ़ी। ख़ूब लिखा है तुमने। गद्य गमक उठा है। बधाई।
- तुमने घनघोर परिश्रम किया, तभी यह आयोजन सफल हो सका।
- रामविलास जी का पत्र आया है कि आत्मकथा लिखूं—करूंगा प्रयास।
- यहां मित्रगण प्रसन्न हैं। पुंडरीक भी खूब खुश हैं।
- सहाय साहब को भी पत्र लिख रहा हूं।
- बेटे ने फोन किया कि वह और गीत बम्बई से रेकार्ड करा लाया है। भेजेगा। बुलाता है; पर अभी तो भोपाल में न जाने कब तक जाना पड़े। शायद दिसम्बर में वहां आयोजन हो।
- एक बार फिर बधाई।

सस्नेह तु०

केदारनाथ अग्रवाल

---

1. 'मित्र संवाद' के लोकार्पण का आयोजन। उसमें रामविलासजी, डॉ० नामवर सिंह तथा डॉ० चन्द्रबली सिंह भी शरीक हुए थे। आयोजन 26 अक्टूबर, 1991 को इलाहाबाद में सम्पन्न हुआ था।

'मित्र संवाद' का पहला संस्करण अक्टूबर, 1991 में प्रकाशित हुआ था। **साहित्य भण्डार,** इलाहाबाद से यह नया संस्करण 18 वर्ष बाद जनवरी, 2010 में प्रकाशित हो रहा है। 1991 के संस्करण में उस समय उपलब्ध 25.4.1991 तक के पत्र प्रकाशित हैं। 2010 के इस नये संस्करण में 25.4.1991 के पहले के 28 पत्र और शामिल किये गये हैं जो उस समय उपलब्ध नहीं हो सके थे। इन २८ पत्रों में रामविलासजी के 16 पत्र हैं और केदारजी के 08 पत्र। इनके प्रकाशन से संवाद में कहीं-कहीं जो गतिरोध था उसमें काफी हद तक गतिशीलता आ गयी है। रामशरण शर्मा 'मुंशी' के 04 पत्र हैं। मुंशीजी के इन 04 पत्रों के प्रकाशन से, इनके साथ केदारजी का एकालाप कुछ हद तक संवाद में तब्दील हो गया है। 25.4.1991 के बाद के 97 पत्र इसमें और संकलित हैं। इनमें से रामविलासजी के 60 पत्र हैं और केदारजी के 37 पत्र।

'मित्र संवाद' के 2010 के संस्करण में एक नया अध्याय 'परिशिष्ट' जोड़ा गया है। इसमें रामविलासजी और केदारजी के उन पत्रों को संकलित किया गया है, जो 'मित्र संवाद' के 1991 के संस्करण के प्रकाशन के दौरान मेरी शंकाओं के समाधान या स्पष्टीकरण के लिए दोनों मित्रों ने मुझे लिखे थे। मैंने जो पत्र दोनों मित्रों को लिखे थे, प्रयास के बावज़ूद, वे मुझे नहीं मिल सके। इसलिए 'परिशिष्ट' में केवल समाधान या सुझावपरक पत्र ही हैं— शंकापरक नहीं। इन पत्रों की संख्या-22 है—14 रामविलासजी के तथा 08 केदारजी के। इस तरह नये संस्करण में कुल 147 पत्र ऐसे हैं जो 1991 के संस्करण में नहीं थे।

- अशोक त्रिपाठी